भारत सरकार

विधि, न्याय और कंपनी कार्य मंत्रालय

GOVERNMENT OF INDIA

MINISTRY OF LAW, JUSTICE AND COMPANY AFFAIRS

भारत संहिता

(जिल्द 5)

कालानुक्रम रूप में अनिरसित केन्द्रीय अधिनियमों का संकलन
(1 जुलाई, 1995 को यथाविद्यमान)

INDIA CODE

(VOLUME V)

Being a compilation of unrepealed Central Acts
arranged chronologically

(As on the 1st July, 1995)

1995

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908

धाराओं का क्रम

धाराएं		पृष्ठ
	प्रारम्भिक	
1.	संक्षिप्त नाम, प्रारम्भ और विस्तार	1
2.	परिभाषाएं	2
3.	न्यायालयों की अधीनस्थता	4
4.	व्यावृत्तियां	5
5.	संहिता का राजस्व न्यायालयों को लागू होना	5
6.	धन-संबंधी अधिकारिता	5
7.	प्रान्तीय लघुवाद न्यायालय	5
8.	प्रेसिडेन्सी लघुवाद न्यायालय	6
	भाग 1	
	साधारणतः वादों के विषय में	
	न्यायालयों की अधिकारिता और पूर्व-न्याय	
9.	जब तक कि वर्जित न हो, न्यायालय सभी सिविल वादों का विचारण करेंगे	6
10.	वाद का रोक दिया जाना	7
11.	पूर्व-न्याय	7
12.	अतिरिक्त वाद का वर्जन	8
13.	विदेशी निर्णय कब निश्चायक नहीं होगा	8
14.	विदेशी निर्णयों के बारे में उपधारणा	8
	वाद करने का स्थान	
15.	वह न्यायालय जिसमें वाद संस्थित किया जाए	8
16.	वादों का वहां संस्थित किया जाना जहां विषय-वस्तु स्थित है	8
17.	विभिन्न न्यायालयों की अधिकारिता के भीतर स्थित स्थावर सम्पत्ति के लिए वाद	9
18.	जहां न्यायालयों की अधिकारिता की स्थानीय सीमाएं अनिश्चित हैं वहां वाद के संस्थित किए जाने का स्थान	9
19.	शरीर या जंगम सम्पत्ति के प्रति किए गए दोषों के लिए प्रतिकर के लिए वाद	9
20.	अन्य वाद वहां संस्थित किए जा सकेंगे जहां प्रतिवादी निवास करते हैं या वाद-हेतुक पैदा होता है	9
21.	अधिकारिता के बारे में आक्षेप	10
21क.	वाद लाने के स्थान में बारे में आक्षेप पर डिक्री को अपास्त करने के लिए वाद का वर्जन	11
22.	जो वाद एक से अधिक न्यायालयों में संस्थित किए जा सकते हैं उनको अन्तरित करने की शक्ति	11
23.	किस न्यायालय में आवेदन किया जाए	11
24.	अन्तरण और प्रत्याहरण की साधारण शक्ति	11
25.	वादों आदि के अन्तरण करने की उच्चतम न्यायालय की शक्ति	12
	वादों का संस्थित किया जाना	
26.	वादों का संस्थित किया जाना	12

धाराएं पृष्ठ

समन और प्रकटीकरण

27. प्रतिवादियों को समन 12
28. जहां प्रतिवादी किसी अन्य राज्य में निवास करता है वहां समन की तामील 12
29. विदेशी समनों की तामील 13
30. प्रकटीकरण और उसके सदृश बातों के लिए आदेश करने की शक्ति 13
31. साक्षी को समन 13
32. व्यतिक्रम के लिए शास्ति 13

निर्णय और डिक्री

33. निर्णय और डिक्री 13

ब्याज

34. ब्याज 13

खर्चे

35. खर्चे 14
35क. मिथ्या या तंग करने वाले दावों या प्रतिरक्षाओं के लिए प्रतिकरात्मक खर्चे 14
35ख. विलम्ब कारित करने के लिए खर्चा 15

भाग 2

निष्पादन

साधारण

36. आदेशों को लागू होना 16
37. डिक्री पारित करने वाले न्यायालय की परिभाषा 16

वे न्यायालय जिनके द्वारा डिक्रियां निष्पादित की जा सकेंगी

38. वह न्यायालय जिसके द्वारा डिक्री निष्पादित की जा सकेगी 16
39. डिक्री का अन्तरण 16
40. किसी अन्य राज्य के न्यायालय को डिक्री का अन्तरण 17
41. निष्पादन कार्यवाहियों के परिणाम का प्रमाणित किया जाना 17
42. अन्तरित डिक्री के निष्पादन में न्यायालय की शक्तियां 17
43. जिन स्थानों पर इस संहिता का विस्तार नहीं है, वहां के सिविल न्यायालयों द्वारा पारित डिक्रियों का निष्पादन . . 17
44. जिन स्थानों पर इस संहिता का विस्तार नहीं है, वहां के राजस्व न्यायालयों द्वारा पारित डिक्रियों का निष्पादन . . 18
44क. व्यतिकारी राज्यक्षेत्रों के न्यायालयों द्वारा पारित डिक्रियों का निष्पादन 18
45. भारत के बाहर डिक्रियों का निष्पादन 18
46. आज्ञापत्र 18

प्रश्न जिनका अवधारण डिक्री का निष्पादन करने वाला न्यायालय करेगा

47. प्रश्न जिनका अवधारण डिक्री का निष्पादन करने वाला न्यायालय करेगा 19

निष्पादन के लिए समय की सीमा

48. [निरसित।] 19

अंतरिती और विधिक प्रतिनिधि

49. अन्तरिती 19
50. विधिक प्रतिनिधि 19

धाराएं पृष्ठ

निष्पादन-प्रक्रिया

51. निष्पादन कराने की न्यायालय की शक्तियां 19
52. विधिक प्रतिनिधि के विरुद्ध डिक्री का प्रवर्तन 20
53. पैतृक सम्पत्ति का दायित्व 20
54. सम्पदा का विभाजन या अंश का पृथक्करण 20

गिरफ्तारी और निरोध

55. गिरफ्तारी और निरोध 21
56. धन की डिक्री के निष्पादन में स्त्रियों की गिरफ्तारी या निरोध का निषेध 21
57. जीवन-निर्वाह भत्ता 22
58. निरोध और छोड़ा जाना 22
59. रुग्णता के आधार पर छोड़ा जाना 22

कुर्की

60. वह सम्पत्ति, जो डिक्री के निष्पादन में कुर्क और विक्रय की जा सकेगी 23
61. कृषि-उपज को भागतः छूट 25
62. निवास-गृह में सम्पत्ति का अभिग्रहण 25
63. कई न्यायालयों की डिक्रियों के निष्पादन में कुर्क की गई सम्पत्ति 26
64. कुर्की के पश्चात् सम्पत्ति के प्राइवेट अन्य संक्रामण का शून्य होना 26

विक्रय

65. क्रेता का हक 26
66. [निरसित ।] 26
67. धन के संदाय की डिक्रियों के निष्पादन में भूमि के विक्रय के बारे में नियम बनाने की राज्य सरकार की शक्ति 26

स्थावर सम्पत्ति के विरुद्ध डिक्रियों का निष्पादन करने की शक्ति का कलक्टर को प्रत्यायोजन

68—72. [निरसित ।] 27

आस्तियों का वितरण

73. निष्पादन-विक्रय के आगमों का डिक्रीदारों के बीच आनुपातिक रूप से वितरित किया जाना 27

निष्पादन का प्रतिरोध

74. निष्पादन का प्रतिरोध 28

भाग 3

आनुषंगिक कार्यवाहियां

कमीशन

75. कमीशन निकालने की न्यायालय की शक्ति 28
76. अन्य न्यायालय को कमीशन 28
77. अनुरोध-पत्र 28
78. विदेशी न्यायालयों द्वारा निकाले गए कमीशन 28

धाराएं पृष्ठ

भाग 4
विशिष्ट मामलों में वाद

सरकार द्वारा या उसके विरुद्ध वाद या अपनी पदीय हैसियत में लोक अधिकारी द्वारा या उसके विरुद्ध वाद

79. सरकार द्वारा या उसके विरुद्ध वाद 29
80. सूचना 29
81. गिरफ्तारी और स्वीय उपसंजाति से छूट 30
82. डिक्री का निष्पादन 30

अन्य देशियों द्वारा और विदेशी शासकों, राजदूतों और दूतों द्वारा या उनके विरुद्ध वाद

83. अन्य देशीय कब वाद ला सकेंगे 31
84. विदेशी राज्य कब वाद ला सकेंगे 31
85. विदेशी शासकों की ओर से अभियोजन या प्रतिरक्षा करने के लिए सरकार द्वारा विशेष रूप से नियुक्त किए गए व्यक्ति 31
86. विदेशी राज्यों, राजदूतों और दूतों के विरुद्ध वाद 31
87. विदेशी शासकों का वादों के पक्षकारों के रूप में अभिधान 32
87क. "विदेशी राज्य" और "शासक" की परिभाषाएं 32

भूतपूर्व भारतीय राज्यों के शासकों के विरुद्ध वाद

87ख. भूतपूर्व भारतीय राज्यों के शासकों को धारा 85 और धारा 86 का लागू होना 33

अन्तराभिवाची

88. अन्तराभिवाची वाद कहां संस्थित किया जा सकेगा 33

भाग 5
विशेष कार्यवाहियां

माध्यस्थम्

89. [निरसित।] 33

विशेष मामला

90. न्यायालय की राय के लिए मामले का कथन करने की शक्ति 33

लोक न्यूसेन्स और लोक पर प्रभाव डालने वाले अन्य दोषपूर्ण कार्य

91. लोक न्यूसेन्स और लोक पर प्रभाव डालने वाले अन्य दोषपूर्ण कार्य 34
92. लोक पूर्त कार्य 34
93. प्रसिडेन्सी नगरों से बाहर महाधिवक्ता की शक्तियों का प्रयोग 35

भाग 6
अनुपूरक कार्यवाहियां

94. अनुपूरक कार्यवाहियां 35
95. अपर्याप्त आधारों पर गिरफ्तारी, कुर्की या व्यादेश अभिप्राप्त करने के लिए प्रतिकर 36

भाग 7
अपीलें

मूल डिक्रियों की अपीलें

96. मूल डिक्री की अपील 36
97. जहां प्रारम्भिक डिक्री की अपील नहीं की गई है वहां अन्तिम डिक्री की अपील 36

धाराएं पृष्ठ

98. जहां कोई अपील दो या अधिक न्यायाधीशों द्वारा सुनी जाए वहां विनिश्चय 36

99. कोई भी डिक्री ऐसी गलती या अनियमितता के कारण जिससे गुणागुण या अधिकारिता पर प्रभाव नहीं पड़ता है न तो उलटी जाएगी और न उपान्तरित की जाएगी 37

99क. धारा 47 के अधीन तब तक किसी आदेश को उलटा न जाना या उपान्तरित न किया जाना जब तक मामले के विनिश्चय पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता है 37

अपीली डिक्रियों की अपीलें

100. द्वितीय अपील 37

100क. कुछ मामलों में आगे अपील का न होना 38

101. द्वितीय अपील का किसी भी अन्य आधार पर न होना 38

102. कतिपय वादों में द्वितीय अपील का न होना 38

103. तथ्य-विवाद्यकों का अवधारण करने की उच्च न्यायालय की शक्ति 38

आदेशों की अपील

104. वे आदेश जिनकी अपील होगी 38

105. अन्य आदेश 39

106. कौन से न्यायालय अपील सुनेंगे 39

अपील संबंधी साधारण उपबंध

107. अपील न्यायालय की शक्तियां 39

108. अपीली डिक्रियों और आदेशों की अपीलों में प्रक्रिया 39

उच्चतम न्यायालय में अपीलें

109. उच्चतम न्यायालय में अपीलें कब होंगी 39

110.—111क. [निरसित।] . . . . . 39—40

112. व्यावृत्तियां 40

भाग 8

निर्देश, पुनर्विलोकन और पुनरीक्षण

113. उच्च न्यायालय को निर्देश 40

114. पुनर्विलोकन 40

115. पुनरीक्षण 40

भाग 9

ऐसे उच्च न्यायालयों के संबंध में विशेष उपबंध जो न्यायिक आयुक्त के न्यायालय नहीं हैं

116. इस भाग का कुछ उच्च न्यायालयों को ही लागू होना 41

117. संहिता का उच्च न्यायालयों का लागू होना 41

118. खर्चों के अभिनिश्चय के पूर्व डिक्री का निष्पादन 41

119. अप्राधिकृत व्यक्ति न्यायालय को सम्बोधित नहीं कर सकेंगे 41

120. आरंभिक सिविल अधिकारिता में उच्च न्यायालयों को उपबंधों का लागू न होना 42

भाग 10

नियम

121. प्रथम अनुसूची में के नियमों का प्रभाव 42

122. नियम बनाने की कुछ उच्च न्यायालयों की शक्ति 42

123. कुछ राज्यों में नियम-समितियों का गठन 42

धाराएं पृष्ठ

124. समिति उच्च न्यायालय को रिपोर्ट करेगी 43
125. नियम बनाने की अन्य उच्च न्यायालयों की शक्ति 43
126. नियमों का अनुमोदन के अधीन होना 43
127. नियमों का प्रकाशन 43
128. वे विषय जिनके लिए नियम उपबन्ध कर सकेंगे 43
129. अपनी आरंभिक सिविल प्रक्रिया के संबंध में नियम बनाने की उच्च न्यायालयों की शक्ति 44
130. प्रक्रिया से भिन्न विषयों के संबंध में नियम बनाने की अन्य उच्च न्यायालयों की शक्ति 44
131. नियमों का प्रकाशन 45

भाग 11
प्रकीर्ण

132. कुछ स्त्रियों को स्वीय उपसंजाति से छूट 45
133. अन्य व्यक्तियों को छूट 45
134. डिक्री के निष्पादन में की जाने से अन्यथा गिरफ्तारी 45
135. सिविल आदेशिका के अधीन गिरफ्तारी से छूट 45
135क. विधायी निकायों के सदस्यों को सिविल आदेशिका के अधीन गिरफ्तार किए जाने और निरुद्ध किए जाने से छूट 46
136. जहां गिरफ्तार किया जाने वाला व्यक्ति या कुर्क की जाने वाली सम्पत्ति जिले से बाहर है वहां प्रक्रिया . . . 46
137. अधीनस्थ न्यायालयों की भाषा 47
138. साक्ष्य के अंग्रेजी में अभिलिखित किए जाने की अपेक्षा करने की उच्च न्यायालय की शक्ति 47
139. शपथ-पत्र के लिए शपथ किसके द्वारा दिलाई जाएगी 47
140. उद्धारण, आदि के मामलों में असेसर 48
141. प्रकीर्ण कार्यवाहियां 48
142. आदेशों और सूचनाओं का लिखित होना 48
143. डाक महसूल 48
144. प्रत्यास्थापन के लिए आवेदन 48
145. प्रतिभू के दायित्व का प्रवर्तन 49
146. प्रतिनिधियों द्वारा या उनके विरुद्ध कार्यवाहियां 49
147. निर्योग्यता के अधीन व्यक्तियों द्वारा सहमति या करार 49
148. समय का बढ़ाया जाना 49
148क. केविएट दायर करने का अधिकार 49
149. न्यायालय-फीस की कमी को पूरा करने की शक्ति 50
150. कारबार का अन्तरण 50
151. न्यायालय की अन्तर्निहित शक्तियों की व्यावृत्ति 50
152. निर्णयों, डिक्रियों या आदेशों का संशोधन 50
153. संशोधन करने की साधारण शक्ति 50
153क. जहां अपील संक्षेपतः खारिज की जाती है वहां डिक्री या आदेश का संशोधन करने की शक्ति 50
153ख. विचारण के स्थान को खुला न्यायालय समझा जाना 50
154— 156. [निरसित।] 51
157. निरसित अधिनियमितियों के अधीन आदेशों का चालू रहना 51
158. सिविल प्रक्रिया संहिता और अन्य निरसित अधिनियमितियों के प्रति निर्देश 51

पृष्ठ

पहली अनुसूची — प्रक्रिया के नियम 51
परिशिष्ट क — अभिवचन
परिशिष्ट ख — आदेशिका
परिशिष्ट ग — प्रकटीकरण, निरीक्षण और स्वीकृति
परिशिष्ट घ — डिक्रियां
परिशिष्ट ङ — निष्पादन
परिशिष्ट च — अनुपूरक कार्यवाहियां
परिशिष्ट छ — अपील, निर्देश और पुनर्विलोकन
परिशिष्ट ज — प्रकीर्ण
दूसरी अनुसूची — [निरसित।] 334
तीसरी अनुसूची — [निरसित।] 334
चौथी अनुसूची — [निरसित।] 334
पांचवीं अनुसूची — [निरसित।] 334
उपाबन्ध 335

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908

(1908 का अधिनियम संख्यांक 5)[1]

[21 मार्च, 1908]

सिविल न्यायालयों की प्रक्रिया से सम्बन्धित विधियों का समेकन और संशोधन करने के लिए अधिनियम

यह समीचीन है कि सिविल न्यायालयों की प्रक्रिया से सम्बन्धित विधियों का समेकन और संशोधन किया जाए; अतः एतद्द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित किया जाता है:—

प्रारम्भिक

1. संक्षिप्त नाम, प्रारम्भ और विस्तार—(1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 है।

---

1. इसका विस्तार बरार लाज ऐक्ट, 1941 (1941 का 4) द्वारा और शेड्यूल्ड डिस्ट्रिक्ट्स ऐक्ट, 1874 (1874 का 14) की धारा 5 और धारा 5क के अधीन जारी की गई अधिसूचना द्वारा बरार पर और निम्नलिखित अधिसूचित जिलों पर भी किया गया है:—

(1) जलपाईगुड़ी, कछार (उत्तरी कछार पहाड़ियों को छोड़कर), गोलपाड़ा (पूर्वी द्वार को सम्मिलित करते हुए), कामरूप, दारंग, नौगांव (मिकिर पहाड़ी क्षेत्रों को छोड़कर), सिबसागर (मिकिर पहाड़ी क्षेत्रों को छोड़कर), और लखीमपुर (डिब्रूगढ़ सीमांत क्षेत्रों को छोड़कर) के जिलों पर: भारत का राजपत्र (अंग्रेजी), 1909, भाग 1, पृष्ठ 5 और भारत का राजपत्र (अंग्रेजी), 1914, भाग 1, पृष्ठ 1690।

(2) दार्जिलिंग जिले और हजारीबाग, रांची, पालामाऊ और छोटा नागपुर में मानभूम जिले पर; कलकत्ता राजपत्र (अंग्रेजी), 1909, भाग 1, पृष्ठ 25 और भारत का राजपत्र (अंग्रेजी), 1909, भाग 1, पृष्ठ 33।

(3) कुमाऊं तथा गढ़वाल प्रदेश और तराई परगना पर (उपान्तरण सहित): संयुक्त प्रान्त राजपत्र (अंग्रेजी), 1909 भाग 1, पृष्ठ 3 और भारत का राजपत्र (अंग्रेजी), 1909, भाग 1, पृष्ठ 31।

(4) देहरादून में जौनसर-बावर का परगना और मिर्जापुर जिले के अधिसूचित भाग पर: संयुक्त प्रान्त राजपत्र (अंग्रेजी), 1909, भाग 1, पृष्ठ 4 और भारत का राजपत्र (अंग्रेजी), 1909, भाग 1, पृष्ठ 32।

(5) कुर्ग पर : भारत का राजपत्र (अंग्रेजी), 1909, भाग 1, पृष्ठ 32।

(6) पंजाब के अधिसूचित जिलों पर : भारत का राजपत्र (अंग्रेजी), 1909 भाग 1, पृष्ठ 33।

(7) मद्रास के सभी अधिसूचित जिलों पर धारा 36 से धारा 43 तक : भारत का राजपत्र (अंग्रेजी), 1909, भाग 1, पृष्ठ 152।

(8) मध्य प्रान्त के अधिसूचित जिलों पर इस अधिनियम के पहले से ही प्रवृत्त भाग को और उस भाग को छोड़कर जितना डिक्री के निष्पादन में स्थावर सम्पत्ति की कुर्की और विक्रय को प्राधिकृत करता है किन्तु इसमें सम्पत्ति के विक्रय का निदेश देने वाली डिक्री नहीं है : भारत का राजपत्र (अंग्रेजी), 1909, भाग 1, पृष्ठ 239।

(9) अजमेर-मेरवाड़ा पर धारा 1 और धारा 155 से धारा 158 तक को छोड़कर : भारत का राजपत्र (अंग्रेजी), 1909, भाग 2, पृष्ठ 480।

(10) परगना डालभूम, कल्लान में चाईबासा की नगरपालिका और सिंहभूम जिले में पोरहट संपदा पर : कलकत्ता राजपत्र (अंग्रेजी), 1909, भाग 1, पृष्ठ 453 और भारत का राजपत्र (अंग्रेजी), 1909, भाग 1, पृष्ठ 443।

संथाल परगनाज सेटिलमेन्ट रेग्यूलेशन (1872 का 3) की धारा 3(3)(क) के अधीन, धारा 38 से धारा 42 तक तथा धारा 156 और पहली अनुसूची के आदेश 21 के नियम 4 से 9 तक को संथाल परगनों में और शेष संहिता को संथाल परगनाज जस्टिस रेग्यूलेशन, 1893 (1893 का 5) की धारा 10 में निर्दिष्ट वाद के विचारण के लिए प्रवृत्त घोषित कर दिया गया है : कलकत्ता राजपत्र (अंग्रेजी), 1909, भाग 1, पृष्ठ 45 देखिए।

इसे पैथ पीपलोदा लाज रेग्यूलेशन, 1929 (1929 का 1) की धारा 2 द्वारा पंथ पीपलोदा में; खोण्डमाल लाज रेग्यूलेशन, 1936 (1936 का 4) की धारा 3 और अनुसूची द्वारा खोण्डमाल जिले में, और आंगुल लाज रेग्यूलेशन, 1936 (1936 का 5) की धारा 3 और अनुसूची द्वारा आंगुल जिले में प्रवृत्त घोषित किया गया है।

इसका विस्तार उड़ीसा रेग्यूलेशन (1951 का 5) की धारा 2 द्वारा कोरापुट और गंजाम एजेंसी जिलों पर किया गया है।

इसका विस्तार 1965 के विनियम सं॰ 8 की धारा 3 और अनुसूची द्वारा (1-10-1967 से) लक्षद्वीप, मिनीकाय और अमीनदीवी द्वीपसमूह पर और 1965 के अधिनियम सं॰ 30 की धारा 3 द्वारा (15-6-1966 से) गोवा, दमण और दीव पर उपान्तरणों के साथ किया गया।

इसका विस्तार 1950 के अधिनियम सं॰ 30 की धारा 3 द्वारा, (1-1-1957 से) मणिपुर राज्य पर किया गया और प्रवृत्त किया गया है।

(2) यह सन् 1909 की जनवरी के प्रथम दिन को प्रवृत्त होगा।

[1][(3) इसका विस्तार—

(क) जम्मू-कश्मीर राज्य;

(ख) नागालैण्ड राज्य और जनजाति क्षेत्रों,

के सिवाय सम्पूर्ण भारत पर है;

परन्तु संबंधित राज्य सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, इस संहिता के उपबंधों का या उनमें से किसी का विस्तार, यथास्थिति, सम्पूर्ण नागालैण्ड राज्य या ऐसे जनजाति क्षेत्रों या उनके किसी भाग पर ऐसे अनुपूरक, आनुषंगिक या पारिणामिक उपान्तरों सहित कर सकेगी जो अधिसूचना में विनिर्दिष्ट किए जाएं।

स्पष्टीकरण—इस खण्ड में, "जनजाति क्षेत्र" से वे राज्यक्षेत्र अभिप्रेत हैं जो 21 जनवरी, 1972 के ठीक पहले संविधान की छठी अनुसूची के पैरा 20 में यथानिर्दिष्ट असम के जनजाति क्षेत्र में सम्मिलित थे।

(4) अमीनदीवी द्वीपसमूह और आन्ध्र प्रदेश राज्य में पूर्वी गोदावरी, पश्चिमी गोदावरी और विशाखापत्तनम् अभिकरणों और लक्षद्वीप संघ राज्यक्षेत्र के सम्बन्ध में, इस संहिता के लागू होने का कोई प्रतिकूल प्रभाव, यथास्थिति, ऐसे द्वीपसमूह, अभिकरणों या ऐसे संघ राज्यक्षेत्र में इस संहिता के लागू होने के सम्बन्ध में तत्समय प्रवृत्त किसी नियम या विनियम के लागू होने पर नहीं पड़ेगा।]

2. परिभाषाएं—इस अधिनियम में, जब तक कि विषय या संदर्भ में कोई बात विरुद्ध न हो,—

(1) "संहिता" के अन्तर्गत नियम आते हैं;

(2) "डिक्री" से ऐसे न्यायनिर्णयन की प्ररूपिक अभिव्यक्ति अभिप्रेत है जो, जहां तक कि वह उसे अभिव्यक्त करने वाले न्यायालय से सम्बन्धित है, वाद में के सभी या किन्हीं विवादग्रस्त विषयों के सम्बन्ध में पक्षकारों के अधिकारों का निश्चायक रूप से अवधारण करता है और वह या तो प्रारम्भिक या अन्तिम हो सकेगी। यह समझा जाएगा कि इसके अन्तर्गत वादपत्र का नामंजूर किया जाना और [2]*** धारा 144 के भीतर के किसी प्रश्न का अवधारण आता है किन्तु इसके अन्तर्गत—

(क) न तो कोई ऐसा न्यायनिर्णयन आएगा जिसकी अपील, आदेश की अपील की भांति होती है; और

(ख) न व्यतिक्रम के लिए खारिज करने का कोई आदेश आएगा।

स्पष्टीकरण—डिक्री तब प्रारंभिक होती है जब वाद के पूर्ण रूप से निपटा दिये जा सकने से पहले आगे और कार्यवाहियां की जानी हैं। वह तब अंतिम होती है जब कि ऐसा न्यायनिर्णयन वाद को पूर्ण रूप से निपटा देता है। वह भागतः प्रारम्भिक और भागतः अंतिम हो सकेगी;

(3) "डिक्रीदार" से कोई ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है जिसके पक्ष में कोई डिक्री पारित की गई है या कोई निष्पादन-योग्य आदेश किया गया है;

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 2 द्वारा (1-2-1977 से) उपधारा (3) के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 3 द्वारा (1-2-1977 से) "धारा 47 या" शब्दों और अंकों का लोप किया गया।

(4) "जिला" से आरम्भिक अधिकारिता वाले प्रधान सिविल न्यायालय को (जिसे इसमें इसके पश्चात् "जिला न्यायालय" कहा गया है) अधिकारिता की स्थानीय सीमाएं अभिप्रेत हैं और इसके अन्तर्गत उच्च न्यायालय की मामूली आरम्भिक सिविल अधिकारिता की स्थानीय सीमाएं आती हैं;

[1][(5) "विदेशी न्यायालय" से ऐसा न्यायालय अभिप्रेत है जो भारत के बाहर स्थित है और केन्द्रीय सरकार के प्राधिकार से न तो स्थापित किया गया है और न चालू रखा गया है;]

(6) "विदेशी निर्णय" से किसी विदेशी न्यायालय का निर्णय अभिप्रेत है;

(7) "सरकारी प्लीडर" के अन्तर्गत ऐसा कोई अधिकारी आता है जो सरकारी प्लीडर पर इस संहिता द्वारा अभिव्यक्त रूप से अधिरोपित कृत्यों का या उनमें से किन्हीं का पालन करने के लिए राज्य सरकार द्वारा नियुक्त किया गया है और ऐसा कोई प्लीडर भी आता है जो सरकारी प्लीडर के निदेशों के अधीन कार्य करता है;

[2][(7क) अंदमान और निकोबार द्वीपसमूह के सम्बन्ध में "उच्च न्यायालय" से कलकत्ता उच्च न्यायालय अभिप्रेत है;

(7ख) धारा 1, 29, 43, 44, [3][44क,] 78, 79, 82, 83 और 87क में के सिवाय "भारत" से जम्मू-कश्मीर राज्य के सिवाय भारत का राज्यक्षेत्र अभिप्रेत है;]

(8) "न्यायाधीश" से सिविल न्यायालय का पीठासीन अधिकारी अभिप्रेत है;

(9) "निर्णय" से न्यायाधीश द्वारा डिक्री या आदेश के आधारों का कथन अभिप्रेत है;

(10) "निर्णीत-ऋणी" से वह व्यक्ति अभिप्रेत है जिसके विरुद्ध कोई डिक्री पारित की गई है या निष्पादन-योग्य कोई आदेश किया गया है;

(11) "विधिक प्रतिनिधि" से वह व्यक्ति अभिप्रेत है जो मृत व्यक्ति की सम्पदा का विधि की दृष्टि से प्रतिनिधित्व करता है और इसके अन्तर्गत कोई ऐसा व्यक्ति आता है जो मृतक की सम्पदा से दखलंदाजी करता है और जहां कोई पक्षकार प्रतिनिधि रूप में वाद लाता है या जहां किसी पक्षकार पर प्रतिनिधि रूप में वाद लाया जाता है वहां वह व्यक्ति इसके अन्तर्गत आता है जिसे वह सम्पदा उस पक्षकार के मरने पर न्यागत होती है जो इस प्रकार वाद लाया है या जिस पर इस प्रकार वाद लाया गया है;

(12) सम्पत्ति के "अन्तःकालीन लाभ" से ऐसे लाभों पर ब्याज सहित वे लाभ अभिप्रेत हैं जो ऐसी सम्पत्ति पर सदोष कब्जा रखने वाले व्यक्ति को उससे वस्तुतः प्राप्त हुए हों या जिन्हें वह मामूली तत्परता से उससे प्राप्त कर सकता था, किन्तु सदोष कब्जा रखने वाले व्यक्ति द्वारा की गई अभिवृद्धियों के कारण हुए लाभ इसके अन्तर्गत नहीं आएंगे;

(13) "जंगम सम्पत्ति" के अंतर्गत उगती फसलें आती हैं;

(14) "आदेश" से सिविल न्यायालय के किसी विनिश्चय की प्ररूपिक अभिव्यक्ति अभिप्रेत है जो डिक्री नहीं है;

(15) "प्लीडर" से न्यायालय में किसी अन्य व्यक्ति के लिए उपसंजात होने और अभिवचन करने का हकदार कोई व्यक्ति अभिप्रेत है और इसके अन्तर्गत अधिवक्ता, वकील और किसी उच्च न्यायालय का अटर्नी आता है;

---

1. 1951 के अधिनियम सं० 2 की धारा 4 द्वारा मूल खण्ड के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2 1951 के अधिनियम सं० 2 की धारा 4 द्वारा अन्तःस्थापित।
3. 1953 के अधिनियम सं० 42 की धारा 4 और अनुसूची 3 द्वारा अन्तःस्थापित।

(16) "विहित" से नियमों द्वारा विहित अभिप्रेत है;

(17) "लोक अधिकारी" से वह व्यक्ति अभिप्रेत है जो निम्नलिखित वर्णनों में से किसी वर्णन के अधीन आता है, अर्थात्:—

(क) हर न्यायाधीश;

(ख) [1][अखिल भारतीय सेवा] का हर सदस्य;

(ग) [2][संघ] की सेना, [3][नौसेना या वायु सेना] का [4]*** हर आयुक्त आफिसर या राजपत्रित आफिसर, जब तक कि वह सरकार के अधीन सेवा करता रहे;

(घ) न्यायालय का हर अधिकारी जिसका ऐसे अधिकारी के नाते यह कर्तव्य है कि वह विधि या तथ्य के किसी मामले में अन्वेषण या रिपोर्ट करे, या कोई दस्तावेज बनाए, अधिप्रमाणित करे, या रखे, या किसी सम्पत्ति का भार सम्भाले या उस सम्पत्ति का व्ययन करे, या किसी न्यायिक आदेशिका का निष्पादन करे, या कोई शपथ ग्रहण कराए, या निर्वचन करे, या न्यायालय में व्यवस्था बनाए रखे और हर व्यक्ति, जिसे ऐसे कर्तव्यों में से किन्हीं का पालन करने का प्राधिकार न्यायालय द्वारा विशेष रूप से दिया गया है;

(ङ) हर व्यक्ति जो किसी ऐसे पद को धारण करता है जिसके आधार पर वह किसी व्यक्ति को परिरोध में करने या रखने के लिए सशक्त है;

(च) सरकार का हर अधिकारी जिसका ऐसे अधिकारी के नाते यह कर्तव्य है कि वह अपराधों का निवारण करे, अपराधों की इत्तिला दे, अपराधियों को न्याय के लिए उपस्थित करे, या लोक के स्वास्थ्य, क्षेम या सुविधा की संरक्षा करे;

(छ) हर अधिकारी जिसका ऐसे अधिकारी के नाते यह कर्तव्य है कि वह सरकार की ओर से किसी सम्पत्ति को ग्रहण करे, प्राप्त करे, रखे या व्यय करे, या सरकार की ओर से कोई सर्वेक्षण, निर्धारण या संविदा करे, या किसी राजस्व आदेशिका का निष्पादन करे, या सरकार के धन-सम्बन्धी हितों पर प्रभाव डालने वाले किसी मामले में अन्वेषण या रिपोर्ट करे, या सरकार के धन-सम्बन्धी हितों से सम्बन्धित किसी दस्तावेज को बनाए, अधिप्रमाणित करे या रखे, या सरकार के धन-सम्बन्धी हितों की संरक्षा के लिए किसी विधि के व्यतिक्रम को रोके; तथा

(ज) हर अधिकारी, जो सरकार की सेवा में है, या उससे वेतन प्राप्त करता है, या किसी लोक कर्तव्य के पालन के लिए फीस या कमीशन के रूप में पारिश्रमिक पाता है;

(18) "नियम" से पहली अनुसूची में अन्तर्विष्ट अथवा धारा 122 या धारा 125 के अधीन निर्मित नियम और प्ररूप अभिप्रेत हैं;

(19) "निगम-अंश" के बारे में समझा जाएगा कि उसके अन्तर्गत स्टाक, डिबेंचर स्टाक, डिबेंचर या बन्धपत्र आते हैं; तथा

(20) निर्णय या डिक्री की दशा के सिवाय "हस्ताक्षरित" के अन्तर्गत स्टाम्पित आता है।

[5]* * * *

3. न्यायालयों की अधीनस्थता—इस संहिता के प्रयोजनों के लिए, जिला न्यायालय उच्च न्यायालय के अधीनस्थ है और जिला न्यायालय से अवर श्रेणी का हर सिविल न्यायालय और हर लघुवाद न्यायालय, उच्च न्यायालय और जिला न्यायालय के अधीनस्थ है।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 3 द्वारा (1-2-1977 से) "भारतीय सिविल सेवा" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. विधि अनुकूलन आदेश, 1950 द्वारा "हिज मैजेस्टी" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. 1934 के अधिनियम सं० 35 की धारा 2 और अनुसूची द्वारा "या नौसेना" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
4. 1934 के अधिनियम सं० 35 की धारा 2 द्वारा "जिनमें हिज मैजेस्टी की भारतीय समुद्री सेवा भी सम्मिलित है," शब्दों का लोप किया गया।
5. विधि अनुकूलन आदेश, 1950 द्वारा अन्तःस्थापित खण्ड (21) का 1951 के अधिनियम सं० 2 की धारा 4 द्वारा लोप किया गया।

4. **व्यावृत्तियां**—(1) इसके प्रतिकूल किसी विनिर्दिष्ट उपबन्ध के अभाव में, इस संहिता की किसी भी बात के बारे में यह नहीं समझा जाएगा कि वह किसी विशेष या स्थानीय विधि को, जो अब प्रवृत्त है या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि द्वारा या उसके अधीन प्रदत्त किसी विशेष अधिकारिता या शक्ति को या विहित प्रक्रिया के किसी विशेष रूप को परिसीमित करती है या उस पर अन्यथा प्रभाव डालती है।

(2) विशिष्टतया और उपधारा (1) में अन्तर्विष्ट प्रतिपादना की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, इस संहिता की किसी भी बात के बारे में यह नहीं समझा जाएगा कि वह किसी ऐसे उपचार को परिसीमित करती है या उस पर अन्यथा प्रभाव डालती है, जिसे भू-धारक या भू-स्वामी कृषि-भूमि के भाटक की वसूली ऐसी भूमि की उपज से करने के लिए तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अधीन रखता है।

5. **संहिता का राजस्व न्यायालयों को लागू होना**—(1) जहां कोई राजस्व न्यायालय प्रक्रिया सम्बन्धी ऐसी बातों में जिन पर ऐसे न्यायालयों को लागू कोई विशेष अधिनियमिति मौन है, इस संहिता के उपबन्धों द्वारा शासित हैं वहां राज्य सरकार [1]*** राजपत्र में अधिसूचना द्वारा यह घोषणा कर सकेगी कि उन उपबन्धों के कोई भी प्रभाव, जो इस संहिता द्वारा अभिव्यक्त रूप से लागू नहीं किए गए हैं, उन न्यायालयों को लागू नहीं होंगे या उन्हें केवल ऐसे उपान्तरों के साथ लागू होंगे जैसे राज्य सरकार [2]*** विहित करे।

(2) उपधारा (1) में "राजस्व न्यायालय" से ऐसा न्यायालय अभिप्रेत है जो कृषि प्रयोजनों के लिए प्रयुक्त भूमि के भाटक, राजस्व या लाभों से सम्बन्धित वादों या अन्य कार्यवाहियों को ग्रहण करने की अधिकारिता किसी स्थानीय विधि के अधीन रखता है किन्तु ऐसे वादों या कार्यवाहियों का विचारण सिविल प्रकृति के वादों या कार्यवाहियों के रूप में करने के लिए इस संहिता के अधीन आरम्भिक अधिकारिता रखने वाला सिविल न्यायालय इसके अन्तर्गत नहीं आता।

6. **धन-संबंधी अधिकारिता**—अभिव्यक्त रूप में जैसा उपबन्धित है उसके सिवाय, इसकी किसी बात का प्रभाव ऐसा नहीं होगा कि वह किसी न्यायालय को उन वादों पर अधिकारिता दे दे जिनकी रकम या जिनकी विषय-वस्तु का मूल्य उसकी मामूली अधिकारिता की धन-सम्बन्धी सीमाओं से (यदि कोई हों) अधिक है।

7. **प्रान्तीय लघुवाद न्यायालय**—उन न्यायालयों पर, जो प्रान्तीय लघुवाद न्यायालय अधिनियम, 1887 (1887 का 9) के अधीन [3][या बरार लघुवाद न्यायालय विधि, 1905 के अधीन] गठित हैं, या उन न्यायालयों पर, जो लघुवाद न्यायालय की अधिकारिता का प्रयोग [4][उक्त अधिनियम या विधि के अधीन] करते हैं [5][या [6][भारत के किसी ऐसे भाग] के, [6][जिस पर उक्त अधिनियम का विस्तार नहीं है] उन न्यायालयों पर, जो समरूपी अधिकारिता का प्रयोग करते हैं,] निम्नलिखित उपबन्धों का विस्तार नहीं होगा, अर्थात्—

(क) इस संहिता के पाठ के उतने अंश का, जो—

(i) उन वादों से सम्बन्धित है जो लघुवाद न्यायालय के संज्ञान से अपवादित है,

(ii) ऐसे वादों में की डिक्रियों के निष्पादन से संबंधित है,

(iii) स्थावर सम्पत्ति के विरुद्ध डिक्रियों के निष्पादन से संबंधित है, तथा

---

1. 1920 के अधिनियम सं॰ 38 की धारा 2 और अनुसूची 1 के भाग 1 द्वारा "सपरिषद् गवर्नर जनरल की पूर्व मंजूरी से" शब्दों का लोप किया गया।
2. 1920 के अधिनियम सं॰ 38 की धारा 2 और अनुसूची 1 के भाग 1 द्वारा "पूर्वोक्त मंजूरी से" शब्दों का लोप किया गया।
3. 1941 के अधिनियम सं॰ 4 की धारा 2 और अनुसूची 3 द्वारा अन्तःस्थापित।
4. 1941 के अधिनियम सं॰ 4 की धारा 2 और अनुसूची 3 द्वारा "उस अधिनियम के अधीन" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
5. 1951 के अधिनियम सं॰ 2 की धारा 5 द्वारा अन्तःस्थापित।
6. विधि अनुकूलन (सं॰ 2) आदेश, 1956 द्वारा "भाग ख राज्यों" के स्थान पर प्रतिस्थापित।

(ख) निम्नलिखित धाराओं का, अर्थात्:—

धारा 9 का,
धारा 91 और धारा 92 का,
धारा 94 और धारा 95 का [1][जहां तक कि वे—

(i) स्थावर सम्पत्ति की कुर्की के लिए आदेशों,

(ii) व्यादेशों,

(iii) स्थावर संपत्ति के रिसीवर की नियुक्ति, अथवा

(iv) धारा 94 के खण्ड (ङ) में निर्दिष्ट अन्तर्वर्ती आदेशों, को प्राधिकृत करती है या उनसे सम्बन्धित हैं], तथा धारा 96 से धारा 112 तक की धाराओं और धारा 115 का।

8. प्रेसिडेन्सी लघुवाद न्यायालय—धारा 24, धारा 38 से धारा 41 तक की धाराओं, धारा 75 के खण्ड (क), (ख) और (ग), धारा 76, [2][धारा 77, धारा 157 और धारा 158] में तथा प्रेसिडेन्सी लघुवाद न्यायालय अधिनियम, 1882 (1882 का 15) द्वारा यथा उपबन्धित के सिवाय, इस संहिता के पाठ के उपबन्धों का विस्तार कलकत्ता, मद्रास और मुम्बई नगरों में स्थापित किसी लघुवाद न्यायालय में के किसी भी वाद या कार्यवाही पर नहीं होगा:

[3][परन्तु—

(1) यथास्थिति, फोर्ट विलियम, मद्रास और मुम्बई के उच्च न्यायालय समय-समय पर राजपत्र में अधिसूचना द्वारा निदेश दे सकेंगे कि ऐसे किन्हीं भी उपबन्धों का विस्तार, जो प्रेसिडेन्सी लघुवाद न्यायालय अधिनियम, 1882 (1882 का 15) के अभिव्यक्त उपबन्धों से असंगत न हों और ऐसे उपान्तरों और अनुकूलनों सहित, जो उस अधिसूचना में विनिर्दिष्ट किए जाएं, ऐसे न्यायालय में के वादों या कार्यवाहियों पर या वादों या कार्यवाहियों के किसी वर्ग पर होगा।

(2) उक्त उच्च न्यायालयों में से किसी के भी द्वारा प्रेसिडेन्सी लघुवाद न्यायालय अधिनियम, 1882 (1882 का 15) की धारा 9 के अधीन इसके पहले बनाए गए सभी नियम विधिमान्यतः बनाए गए समझे जाएंगे।]

भाग 1

साधारणतः वादों के विषय में

न्यायालयों की अधिकारिता और पूर्व-न्याय

9. जब तक कि वर्जित न हो, न्यायालय सभी सिविल वादों का विचारण करेंगे—न्यायालयों को (इसमें अन्तर्विष्ट उपबन्धों के अधीन रहते हुए) उन वादों के सिवाय, जिनका उनके द्वारा संज्ञान अभिव्यक्त या विवक्षित रूप से वर्जित है, सिविल प्रकृति के सभी वादों के विचारण की अधिकारिता होगी।

[4][स्पष्टीकरण 1]—वह वाद, जिसमें सम्पत्ति-सम्बन्धी या पद-सम्बन्धी अधिकार प्रतिवादित है, इस बात के होते हुए भी कि ऐसा अधिकार धार्मिक कृत्यों या कर्मों सम्बन्धी प्रश्नों के विनिश्चय पर पूर्ण रूप से अवलम्बित है, सिविल प्रकृति का वाद है।

[5][स्पष्टीकरण 2—इस धारा के प्रयोजनों के लिए, यह बात तात्विक नहीं है कि स्पष्टीकरण 1 में निर्दिष्ट पद के लिए कोई फीस है या नहीं अथवा ऐसा पद किसी विशिष्ट स्थान से जुड़ा है या नहीं।]

---

1. 1926 के अधिनियम सं० 1 की धारा 3 द्वारा "जहां तक कि वे आदेशों और अन्तर्वर्ती आदेशों से संबंधित हैं" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 4 द्वारा (1-2-1977 से) "धारा 77 और 155 से लेकर 158 तक की धाराओं" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. 1914 के अधिनियम सं० 1 की धारा 2 द्वारा जोड़ा गया।
4. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 5 द्वारा (1-2-1977 से) पुनर्संख्यांकित।
5. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 5 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

10. वाद को रोक दिया जाना—कोई न्यायालय ऐसे किसी भी वाद के विचारण में जिसमें विवाद्य-विषय उसी के अधीन मुकदमा करने वाले किन्हीं पक्षकारों के बीच के या ऐसे पक्षकारों के बीच के, जिनसे व्युत्पन्न अधिकार के अधीन वे या उनमें से कोई दावा करते हैं, किसी पूर्वतन संस्थित वाद में भी प्रत्यक्षतः और सारतः विवाद्य है, आगे कार्यवाही नहीं करेगा जहां ऐसा वाद उसी न्यायालय में या [1][भारत] में के किसी अन्य ऐसे न्यायालय में, जो दावा किया गया अनुतोष देने की अधिकारिता रखता है या [1][भारत] की सीमाओं के परे वाले किसी ऐसे न्यायालय में, जो [2][केन्द्रीय सरकार [3]***] द्वारा स्थापित किया गया है या चालू रखा गया है और, वैसी ही अधिकारिता रखता है, या [4][उच्चतम न्यायालय] के समक्ष लम्बित है।

स्पष्टीकरण—विदेशी न्यायालय में किसी वाद का लम्बित होना उसी वाद-हेतुक पर आधारित किसी वाद का विचारण करने से [1][भारत] में के न्यायालयों को प्रवारित नहीं करता।

11. पूर्व-न्याय—कोई भी न्यायालय किसी ऐसे वाद या विवाद्यक का विचारण नहीं करेगा जिसमें प्रत्यक्षतः और सारतः विवाद्य-विषय उसी हक के अधीन मुकदमा करने वाले उन्हीं पक्षकारों के बीच के या ऐसे पक्षकारों के बीच के, जिनसे व्युत्पन्न अधिकार के अधीन वे या उनमें से कोई दावा करते हैं, किसी पूर्ववर्ती वाद में भी ऐसे न्यायालय में प्रत्यक्षतः और सारतः विवाद्य रहा है, जो ऐसे पश्चात्वर्ती वाद का या उस वाद का, जिसमें ऐसा विवाद्यक वाद में उठाया गया है, विचारण करने के लिए सक्षम था और ऐसे न्यायालय द्वारा सुना जा चुका है और अन्तिम रूप से विनिश्चित किया जा चुका है।

स्पष्टीकरण 1—"पूर्ववर्ती वाद" पद ऐसे वाद का द्योतक है जो प्रश्नगत वाद के पूर्व ही विनिश्चित किया जा चुका है चाहे वह उससे पूर्व संस्थित किया गया हो या नहीं।

स्पष्टीकरण 2—इस धारा के प्रयोजनों के लिए, न्यायालय की सक्षमता का अवधारण ऐसे न्यायालय के विनिश्चय से अपील करने के अधिकार विषयक किन्हीं उपबंधों का विचार किए बिना किया जाएगा।

स्पष्टीकरण 3—ऊपर निर्देशित विषय का पूर्ववर्ती वाद में एक पक्षकार द्वारा अभिकथन और दूसरे द्वारा अभिव्यक्त या विवक्षित रूप से प्रत्याख्यान या स्वीकृति आवश्यक है।

स्पष्टीकरण 4—ऐसे किसी भी विषय के बारे में, जो ऐसे पूर्ववर्ती वाद में प्रतिरक्षा या आक्रमण का आधार बनाया जा सकता था और बनाया जाना चाहिए था, यह समझा जाएगा कि वह ऐसे वाद में प्रत्यक्षतः और सारतः विवाद्य रहा है।

स्पष्टीकरण 5—वाद-पत्र में दावा किया गया कोई अनुतोष, जो डिक्री द्वारा अभिव्यक्त रूप से नहीं दिया गया है, इस धारा के प्रयोजनों के लिए नामंजूर कर दिया गया समझा जाएगा।

स्पष्टीकरण 6—जहां कोई व्यक्ति किसी लोक अधिकार के या किसी ऐसे प्राइवेट अधिकार के लिए सद्भावपूर्वक मुकदमा करते हैं जिसका वे अपने लिए और अन्य व्यक्तियों के लिए सामान्यतः दावा करते हैं वहां ऐसे अधिकार से हितबद्ध सभी व्यक्तियों के बारे में इस धारा के प्रयोजनों के लिए यह समझा जाएगा कि वे ऐसे मुकदमा करने वाले व्यक्तियों से व्युत्पन्न अधिकार के अधीन दावा करते हैं।

[5][**स्पष्टीकरण 7**—इस धारा के उपबन्ध किसी डिक्री के निष्पादन के लिए कार्यवाही को लागू होंगे और इस धारा में किसी वाद, विवाद्यक या पूर्ववर्ती वाद के प्रति निर्देशों का अर्थ क्रमशः उस डिक्री के निष्पादन के लिए कार्यवाही, ऐसी कार्यवाही में उठने वाले प्रश्न और उस डिक्री के निष्पादन के लिए पूर्ववर्ती कार्यवाही के प्रति निर्देशों के रूप में लगाया जाएगा।

स्पष्टीकरण 8—कोई विवाद्यक जो सीमित अधिकारिता वाले किसी न्यायालय द्वारा, जो ऐसा विवाद्यक विनिश्चित करने के लिए सक्षम है, सुना गया है और अन्तिम रूप से विनिश्चित किया जा चुका है, किसी पश्चात्वर्ती वाद में पूर्व-न्याय के रूप में इस बात के होते हुए भी प्रवृत्त होगा कि सीमित अधिकारिता वाला ऐसा न्यायालय ऐसे पश्चात्वर्ती वाद का या उस वाद का जिसमें ऐसा विवाद्यक वाद में उठाया गया है, विचारण करने के लिए, सक्षम नहीं था।]

---

1. 1951 के अधिनियम सं० 2 की धारा 3 द्वारा "राज्यों" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. भारत शासन (भारतीय विधि अनुकूलन) आदेश, 1937 द्वारा "सपरिषद् गवर्नर जनरल" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. भारतीय स्वतंत्रता (केन्द्रीय अधिनियम और अध्यादेश अनुकूलन) आदेश, 1948 द्वारा "या क्राउन रिप्रेजेन्टेटिव" शब्दों का लोप किया गया।
4. विधि अनुकूलन आदेश, 1950 द्वारा "हिज मैजेस्टी इन काउन्सिल" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
5. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 6 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

12. अतिरिक्त वाद का वर्जन—जहां वादी किसी विशिष्ट वाद-हेतुक के सम्बन्ध में अतिरिक्त वाद संस्थित करने से नियमों द्वारा प्रवारित है वहां वह किसी ऐसे न्यायालय में जिसे यह संहिता लागू है, कोई वाद ऐसे वाद-हेतुक के सम्बन्ध में संस्थित करने का हकदार नहीं होगा।

13. विदेशी निर्णय कब निश्चायक नहीं होगा—विदेशी निर्णय उसके द्वारा उन्हीं पक्षकारों के बीच या उसी हक के अधीन मुकदमा करने वाले ऐसे पक्षकारों के बीच, जिनसे व्युत्पन्न अधिकार के अधीन वे या उनमें से कोई दावा करते हैं, प्रत्यक्षतः न्यायनिर्णीत किसी विषय के बारे में वहां के सिवाय निश्चायक होगा जहां—

(क) वह सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय द्वारा नहीं सुनाया गया है,

(ख) वह मामले के गुणागुण के आधार पर नहीं दिया गया है,

(ग) कार्यवाहियों के सकृत दर्शन स्पष्ट है कि वह अन्तरराष्ट्रीय विधि के अशुद्ध बोध पर या [1][भारत] की विधि को उन मामलों में जिनको वह लागू है, मान्यता देने से इंकार करने पर आधारित है,

(घ) वे कार्यवाहियां, जिनमें वह निर्णय अभिप्राप्त किया गया था, नैसर्गिक न्याय के विरुद्ध हैं,

(ङ) वह कपट द्वारा अभिप्राप्त किया गया है,

(च) वह [1][भारत] में प्रवृत्त किसी विधि के भंग पर आधारित दावे को ठीक ठहराता है।

14. विदेशी निर्णयों के बारे में उपधारणा—न्यायालय किसी ऐसे दस्तावेज के पेश किए जाने पर जो विदेशी निर्णय की प्रमाणित प्रति होना तात्पर्यित है यदि अभिलेख से इसके प्रतिकूल प्रतीत नहीं होता है तो यह उपधारणा करेगा कि ऐसा निर्णय सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय द्वारा सुनाया गया था किन्तु ऐसी उपधारणा को अधिकारिता का अभाव साबित करके विस्थापित किया जा सकेगा।

वाद करने का स्थान

15. वह न्यायालय जिसमें वाद संस्थित किया जाए—हर वाद उस निम्नतम श्रेणी के न्यायालय में संस्थित किया जाएगा जो उसका विचारण करने के लिए सक्षम है।

16. वादों का वहां संस्थित किया जाना जहां विषय-वस्तु स्थित है—किसी विधि द्वारा विहित धन-सम्बन्धी या अन्य परिसीमाओं के अधीन रहते हुए, वे वाद जो—

(क) भाटक या लाभों के सहित या रहित स्थावर सम्पत्ति के प्रत्युद्धरण के लिए,

(ख) स्थावर सम्पत्ति के विभाजन के लिए,

(ग) स्थावर सम्पत्ति के बन्धक की या उस पर के भार की दशा में पुरोबन्ध, विक्रय या मोचन के लिए,

(घ) स्थावर सम्पत्ति में के किसी अन्य अधिकार या हित के अवधारण के लिए,

(ङ) स्थावर सम्पत्ति के प्रति किए गए दोष के लिए प्रतिकर के लिए,

(च) करस्थम् या कुर्की के वस्तुतः अधीन जंगम सम्पत्ति के प्रत्युद्धरण के लिए,

हैं, उस न्यायालय में संस्थित किए जाएंगे जिसकी अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर वह सम्पत्ति स्थित है:

परन्तु प्रतिवादी के द्वारा या निमित्त धारित स्थावर सम्पत्ति के सम्बन्ध में अनुतोष की या ऐसी सम्पत्ति के प्रति किए गए दोष के लिए प्रतिकर की अभिप्राप्ति के लिए वाद, जहां चाहा गया अनुतोष उसके स्वीय आज्ञानुवर्तन के द्वारा पूर्ण रूप से अभिप्राप्त किया जा सकता है, उस न्यायालय में जिसकी अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर सम्पत्ति स्थित है या उस न्यायालय में जिसकी

---

1. 1951 के अधिनियम सं० 2 की धारा 3 द्वारा "राज्यों" के स्थान पर प्रतिस्थापित।

अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर प्रतिवादी वास्तव में और स्वेच्छा से निवास करता है या कारबार करता है या अभिलाभ के लिए स्वयं काम करता है, संस्थित किया जा सकेगा।

स्पष्टीकरण—इस धारा में "संपत्ति" से [1][भारत] में स्थित संपत्ति अभिप्रेत है।

17. विभिन्न न्यायालयों की अधिकारिता के भीतर स्थित स्थावर सम्पत्ति के लिए वाद—जहां वाद विभिन्न न्यायालयों की अधिकारिता के भीतर स्थित स्थावर सम्पत्ति के सम्बन्ध में अनुतोष की या ऐसी सम्पत्ति के प्रति किए गए दोष के लिए प्रतिकर की अभिप्राप्ति के लिए है वहां वह वाद किसी भी ऐसे न्यायालय में संस्थित किया जा सकेगा जिसकी अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर सम्पत्ति का कोई भाग स्थित है:

परन्तु यह तब जब कि पूरा दावा उस वाद की विषय-वस्तु के मूल्य की दृष्टि से ऐसे न्यायालय द्वारा संज्ञेय है।

18. जहां न्यायालयों की अधिकारिता की स्थानीय सीमाएं अनिश्चित हैं वहां वाद के संस्थित किए जाने का स्थान—(1) जहां यह अभिकथन किया जाता है कि यह अनिश्चित है कि कोई स्थावर सम्पत्ति दो या अधिक न्यायालयों में से किस न्यायालय की अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर स्थित है वहां उन न्यायालयों में से कोई भी एक न्यायालय, यदि उसका समाधान हो जाता है कि अभिकथित अनिश्चितता के लिए आधार है, इस भाव का कथन अभिलिखित कर सकेगा और तब उस सम्पत्ति से सम्बन्धित किसी भी वाद को ग्रहण करने और उसका निपटारा करने के लिए आगे कार्यवाही कर सकेगा, और उस वाद में उसकी डिक्री का वही प्रभाव होगा मानो वह सम्पत्ति उसकी अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर स्थित हो:

परन्तु यह तब जब कि वह वाद ऐसा है जिसके सम्बन्ध में न्यायालय उस वाद की प्रकृति और मूल्य की दृष्टि से अधिकारिता का प्रयोग करने के लिए सक्षम है।

(2) जहां कथन उपधारा (1) के अधीन अभिलिखित नहीं किया गया है और किसी अपील या पुनरीक्षण न्यायालय के सामने यह आक्षेप किया जाता है कि ऐसी सम्पत्ति से सम्बन्धित वाद में डिक्री या आदेश ऐसे न्यायालय द्वारा किया गया था जिसकी वहां अधिकारिता नहीं थी जहां सम्पत्ति स्थित है वहां अपील या पुनरीक्षण न्यायालय उस आक्षेप को तब तक अनुज्ञात नहीं करेगा जब तक कि उसकी राय न हो कि वाद के संस्थित किए जाने के समय उसके सम्बन्ध में अधिकारिता रखने वाले न्यायालय के बारे में अनिश्चितता के लिए कोई युक्तियुक्त आधार नहीं था उसके परिणामस्वरूप न्याय की निष्फलता हुई है।

19. शरीर या जंगम सम्पत्ति के प्रति किए गए दोषों के लिए प्रतिकर के लिए वाद—जहां वाद शरीर या जंगम सम्पत्ति के प्रति किए गए दोष के लिए प्रतिकर के लिए है वहां यदि दोष एक न्यायालय की अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर किया गया था और प्रतिवादी किसी अन्य न्यायालय की अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर निवास करता है या कारबार करता है या अभिलाभ के लिए स्वयं काम करता है तो वाद वादी के विकल्प पर उक्त न्यायालयों में से किसी भी न्यायालय में संस्थित किया जा सकेगा।

दृष्टांत

(क) दिल्ली में निवास करने वाला क कलकत्ते में ख को पीटता है। ख कलकत्ते में या दिल्ली में क पर वाद ला सकेगा।

(ख) ख की मानहानि करने वाले कथन दिल्ली में निवास करने वाला क कलकत्ते में प्रकाशित करता है। ख कलकत्ते में या दिल्ली में क पर वाद ला सकेगा।

20. अन्य वाद वहां संस्थित किए जा सकेंगे जहां प्रतिवादी निवास करते हैं या आद-हेतुक पैदा होता है— पूर्वोक्त परिसीमाओं के अधीन रहते हुए, हर वाद ऐसे न्यायालय में संस्थित किया जाएगा जिसकी अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर—

(क) प्रतिवादी, या जहां एक से अधिक प्रतिवादी हैं वहां प्रतिवादियों में से हर एक वाद के प्रारम्भ के समय वास्तव में और

---

1. 1951 के अधिनियम सं० 2 की धारा 3 द्वारा "राज्यों" के स्थान पर प्रतिस्थापित।

स्वेच्छा से निवास करता है या कारबार करता है या अभिलाभ के लिए स्वयं काम करता है; अथवा

(ख) जहां एक से अधिक प्रतिवादी हैं वहां प्रतिवादियों में से कोई भी प्रतिवादी वाद के प्रारम्भ के समय वास्तव में और स्वेच्छा से निवास करता है या कारबार करता है या अभिलाभ के लिए स्वयं काम करता है, परन्तु यह तब जब कि ऐसी अवस्था में या तो न्यायालय की इजाजत दे दी गई है या जो प्रतिवादी पूर्वोक्त रूप में निवास नहीं करते या कारबार नहीं करते या अभिलाभ के लिए स्वयं काम नहीं करते, वे ऐसे संस्थित किए जाने के लिए उपमत हो गए हैं; अथवा

(ग) वाद-हेतुक पूर्णतः या भागतः पैदा होता है।

1* * * * *

[2][स्पष्टीकरण]—निगम के बारे में यह समझा जाएगा कि वह [3][भारत] में के अपने एकमात्र या प्रधान कार्यालय में या किसी ऐसे वाद-हेतुक की बाबत, जो ऐसे किसी स्थान में पैदा हुआ है जहां उसका अधीनस्थ कार्यालय भी है, ऐसे स्थान में कारबार करता है।

दृष्टांत

(क) क कलकत्ते में एक व्यापारी है। ख दिल्ली में कारबार करता है। ख कलकत्ते के अपने अभिकर्ता के द्वारा क से माल खरीदता है और ईस्ट इण्डिया रेल कम्पनी को उनका परिदान करने को क से प्रार्थना करता है। क तदनुसार माल का परिदान कलकत्ते में करता है। क माल की कीमत के लिए ख के विरुद्ध वाद या तो कलकत्ते में जहां वाद-हेतुक पैदा हुआ है, या दिल्ली में जहां ख कारबार करता है, ला सकेगा।

(ख) क शिमला में, ख कलकत्ते में और ग दिल्ली में निवास करता है। क, ख और ग एक साथ बनारस में हैं जहां ख और ग मांग पर देय एक संयुक्त वचनपत्र तैयार करके उसे क को परिदत्त कर देते हैं। ख और ग पर क बनारस में वाद ला सकेगा, जहां वाद-हेतुक पैदा हुआ। वह उन पर कलकत्ते में भी, जहां ख निवास करता है, या दिल्ली में भी, जहां ग निवास करता है, वाद ला सकेगा, किन्तु इन अवस्थाओं में से हर एक में यदि अनिवासी प्रतिवादी आक्षेप करे, तो वाद न्यायालय की इजाजत के बिना नहीं चल सकता।

21. अधिकारिता के बारे में आक्षेप—[4][(1)] वाद लाने के स्थान के सम्बन्ध में कोई भी आक्षेप किसी भी अपील या पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा तब तक अनुज्ञात नहीं किया जाएगा जब तक कि ऐसा आक्षेप प्रथम बार के न्यायालय में यथासंभव सर्वप्रथम अवसर पर और उन सभी मामलों में, जिनमें विवाधक स्थिर किए जाते हैं, ऐसे स्थिरीकरण के समय या उसके पहले न किया गया हो और जब तक कि उसके परिणामस्वरूप न्याय की निष्फलता न हुई हो।

[5][(2) किसी न्यायालय की अधिकारिता की धन-सम्बन्धी परिसीमा के आधार पर उसकी सक्षमता के बारे में कोई आक्षेप किसी अपील या पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा तब तक अनुज्ञात नहीं किया जाएगा जब तक कि ऐसा आक्षेप प्रथम बार के न्यायालय में यथासंभव सर्वप्रथम अवसर पर और उन सभी मामलों में, जिनमें विवाधक स्थिर किए जाते हैं, ऐसे स्थिरीकरण के समय या उसके पहले न किया गया हो और जब तक कि उसके परिणामस्वरूप न्याय की निष्फलता न हुई हो।

(3) किसी निष्पादन-न्यायालय की अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के आधार पर उसकी सक्षमता के बारे में कोई आक्षेप अपील या पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा तब तक अनुज्ञात नहीं किया जाएगा जब तक कि ऐसा आक्षेप निष्पादन-न्यायालय में यथासंभव सर्वप्रथम अवसर पर न किया गया हो और जब तक कि उसके परिणामस्वरूप न्याय की निष्फलता न हुई हो।]

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 7 द्वारा (1-2-1977 से) स्पष्टीकरण 1 का लोप किया गया।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 7 द्वारा (1-2-1977 से) "स्पष्टीकरण 2" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. 1951 के अधिनियम सं० 2 की धारा 3 द्वारा "एज्यों" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
4. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 8 द्वारा (1-2-1977 से) उपधारा (1) के रूप में पुनःसंख्यांकित।
5. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 8 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

[1][21क. **वाद लाने के स्थान के बारे में आक्षेप पर डिक्री को अपास्त करने के लिए वाद का वर्जन**—उसी हक के अधीन मुकदमा करने वाले उन्हीं पक्षकारों के बीच या ऐसे पक्षकारों के बीच जिनसे व्युत्पन्न अधिकार के अधीन वे या उनमें से कोई दावा करते हैं, किसी पूर्ववर्ती वाद में पारित डिक्री की विधिमान्यता को वाद लाने के बारे में किसी आक्षेप के आधार पर प्रश्नगत करने वाला कोई वाद नहीं लाया जाएगा।

स्पष्टीकरण—"पूर्ववर्ती वाद" पद से वह वाद अभिप्रेत है तो उस वाद के विनिश्चय के पहले विनिश्चित हो चुका है जिसमें डिक्री की विधिमान्यता का प्रश्न उठाया गया है, चाहे पूर्वतन विनिश्चित वाद उस वाद से पहले संस्थित किया गया हो या बाद में जिसमें डिक्री की विधिमान्यता का प्रश्न उठाया गया है।]

22. जो वाद एक से अधिक न्यायालयों में संस्थित किए जा सकते हैं उनको अन्तरित करने की शक्ति—जहां कोई वाद दो या अधिक न्यायालयों में से किसी एक में संस्थित किया जा सकता है और ऐसे न्यायालयों में से किसी एक में संस्थित किया गया है वहां कोई भी प्रतिवादी अन्य पक्षकारों को सूचना देने के पश्चात् यथासंभव सर्वप्रथम अवसर पर और उन सब मामलों में, जिनमें विवादक स्थिर किए जाते हैं, ऐसे स्थिरीकरण के समय या उसके पहले किसी अन्य न्यायालय को वाद अन्तरित किए जाने के लिए आवेदन कर सकेगा और वह न्यायालय, जिससे ऐसा आवेदन किया गया है, अन्य पक्षकारों के (यदि कोई हों) आक्षेपों पर विचार करने के पश्चात् यह अवधारित करेगा कि अधिकारिता रखने वाले कई न्यायालयों में से किस न्यायालय में वाद चलेगा।

23. किस न्यायालय में आवेदन किया जाए—(1) जहां अधिकारिता रखने वाले कई न्यायालय एक ही अपील न्यायालय के अधीनस्थ हैं वहां धारा 22 के अधीन आवेदन अपील न्यायालय में किया जाएगा।

(2) जहां ऐसे न्यायालय विभिन्न अपील न्यायालयों के अधीन होते हुए भी एक ही उच्च न्यायालय के अधीनस्थ हैं वहां वह आवेदन उक्त उच्च न्यायालय में किया जाएगा।

(3) जहां ऐसे न्यायालय विभिन्न उच्च न्यायालयों के अधीनस्थ हैं वहां आवेदन उस उच्च न्यायालय में किया जाएगा जिसकी अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर वह न्यायालय स्थित है जिसमें वाद लाया गया है।

24. अन्तरण और प्रत्याहरण की साधारण शक्ति—(1) किसी भी पक्षकार के आवेदन पर और पक्षकारों को सूचना देने के पश्चात् और उनमें से जो सुनवाई के इच्छुक हों उनको सुनने के पश्चात् या ऐसी सूचना दिए बिना स्वप्रेरणा से, उच्च न्यायालय या जिला न्यायालय किसी भी प्रक्रम में—

(क) ऐसे किसी वाद, अपील या अन्य कार्यवाही को, जो उसके सामने विचारण या निपटारे के लिए लम्बित है, अपने अधीनस्थ ऐसे किसी न्यायालय को अन्तरित कर सकेगा जो उसका विचारण करने या उसे निपटाने के लिए सक्षम है, अथवा

(ख) अपने अधीनस्थ किसी न्यायालय में लम्बित किसी वाद, अपील या अन्य कार्यवाही का प्रत्याहरण कर सकेगा, तथा—

(i) उसका विचारण या निपटारा कर सकेगा; अथवा

(ii) अपने अधीनस्थ ऐसे किसी न्यायालय को उसका विचारण या निपटारा करने के लिए अन्तरित कर सकेगा, जो उसका विचारण करने या उसे निपटाने के लिए सक्षम है; अथवा

(iii) विचारण या निपटारा करने के लिए उसी न्यायालय को उसका प्रत्यन्तरण कर सकेगा, जिससे उसका प्रत्याहरण किया गया था।

(2) जहां किसी वाद या कार्यवाही का अन्तरण या प्रत्याहरण उपधारा (1) के अधीन किया गया है वहां वह न्यायालय, जिसे [2][ऐसे वाद या कार्यवाही का तत्पश्चात् विचारण करना है या उसे निपटाना है] अन्तरण आदेश में दिए गए विशेष निदेशों के अधीन रहते हुए या तो उसका पुनः विचारण कर सकेगा या उस प्रक्रम से आगे कार्यवाही करेगा जहां से उसका अन्तरण या प्रत्याहरण किया गया था।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 9 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 10 द्वारा (1-2-1977 से) "ऐसे वाद का तत्पश्चात् विचारण करना है" के स्थान पर प्रतिस्थापित।

[1][(3) इस धारा के प्रयोजनों के लिए—

(क) अपर और सहायक न्यायाधीशों के न्यायालय, जिला न्यायालय के अधीनस्थ समझे जाएंगे;

(ख) "कार्यवाही" के अन्तर्गत किसी डिक्री या आदेश के निष्पादन के लिए कार्यवाही भी है।]

(4) किसी लघुवाद न्यायालय से इस धारा के अधीन अन्तरित या प्रत्याहृत किसी वाद का विचारण करने वाला न्यायालय ऐसे वाद के प्रयोजनों के लिए लघुवाद न्यायालय समझा जाएगा।

[2][(5) कोई वाद या कार्यवाही उस न्यायालय से इस धारा के अधीन अन्तरित की जा सकेगी जिसे उसका विचारण करने की अधिकारिता नहीं है।]

[3][25. वादों आदि के अन्तरण करने की उच्चतम न्यायालय की शक्ति—(1) किसी पक्षकार के आवेदन पर और पक्षकारों को सूचित करने के पश्चात् और उनमें से जो सुनवाई के इच्छुक हों उनको सुनने के पश्चात् यदि उच्चतम न्यायालय का किसी भी प्रक्रम पर यह समाधान हो जाता है कि न्याय की प्राप्ति के लिए इस धारा के अधीन आदेश देना समीचीन है तो वह यह निदेश दे सकेगा कि किसी राज्य के किसी उच्च न्यायालय या अन्य सिविल न्यायालय से किसी अन्य राज्य के किसी उच्च न्यायालय या अन्य सिविल न्यायालय को कोई वाद, अपील या अन्य कार्यवाही अन्तरित कर दी जाए।

(2) इस धारा के अधीन प्रत्येक आवेदन समावेदन के द्वारा किया जाएगा और उसके अनुसमर्थन में एक शपथपत्र होगा।

(3) वह न्यायालय जिसको ऐसा वाद, अपील या अन्य कार्यवाही अन्तरित की गई है, अन्तरण आदेश में दिए गए विशेष निदेशों के अधीन रहते हुए, या तो उसका पुनः विचारण करेगा या उस प्रक्रम से आगे कार्यवाही करेगा जिस पर वह उसे अन्तरित किया गया था।

(4) इस धारा के अधीन आवेदन को खारिज करते हुए यदि उच्चतम न्यायालय की यह राय है कि आवेदन तुच्छ था या तंग करने वाला था तो वह आवेदक को यह आदेश दे सकेगा कि वह उस व्यक्ति को जिसने आवेदन का विरोध किया है, प्रतिकर के रूप में दो हजार रुपए से अनधिक ऐसी राशि संदत्त करे जो न्यायालय मामले की परिस्थितियों में उचित समझे।

(5) इस धारा के अधीन अन्तरित वाद, अपील या अन्य कार्यवाही को लागू होने वाली विधि वह विधि होगी जो वह न्यायालय जिसमें वह वाद, अपील या अन्य कार्यवाही मूलतः संस्थित की गई थी, ऐसे वाद, अपील या अन्य कार्यवाही को लागू करता।]

वादों का संस्थित किया जाना

26. वादों का संस्थित किया जाना—हर वाद वादपत्र को उपस्थित करके, या ऐसे अन्य प्रकार से, जैसा विहित किया जाए, संस्थित किया जाएगा।

समन और प्रकटीकरण

27. प्रतिवादियों को समन—जहां कोई वाद सम्यक् रूप से संस्थित किया जा चुका है वहां उपसंजात होने और दावे का उत्तर देने के लिए समन प्रतिवादी के नाम निकाला जा सकेगा और उसकी तामील विहित रीति से की जा सकेगी।

28. जहां प्रतिवादी किसी अन्य राज्य में निवास करता है वहां समन की तामील—(1) समन अन्य राज्य में तामील किए जाने के लिए ऐसे न्यायालय को और ऐसी रीति से भेजा जा सकेगा जो उस राज्य में प्रवृत्त नियमों द्वारा विहित की जाए।

(2) वह न्यायालय जिसे ऐसा समन भेजा जाता है, उसकी प्राप्ति पर आगे ऐसे कार्यवाही करेगा मानो वह उस न्यायालय द्वारा ही निकाला गया हो और तब वह उस समन को तथा उसके बारे में अपनी कार्यवाहियों के अभिलेख को (यदि कोई हो) उसे निकालने वाले न्यायालय को लौटाएगा।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 10 द्वारा (1-2-1977 से) उपधारा (3) के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 10 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
3. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 11 द्वारा (1-2-1977 से) धारा 25 के स्थान पर प्रतिस्थापित।

[1][(3) जहां किसी दूसरे राज्य में तामील के लिए भेजे गए समन की भाषा उपधारा (2) में निर्दिष्ट अभिलेख की भाषा से भिन्न है वहां उस उपधारा के अधीन भेजे गए अभिलेख के साथ उसके साथ उसका,—

(क) यदि समन जारी करने वाले न्यायालय की भाषा हिन्दी है तो, हिन्दी में; या

(ख) यदि ऐसे अभिलेख की भाषा हिन्दी या अंग्रेजी से भिन्न है तो, हिन्दी या अंग्रेजी में,

अनुवाद भी भेजा जाएगा।]

[2][29. विदेशी समनों की तामील—वे समन और अन्य आदेशिकाएं जो—

(क) भारत के किसी भी ऐसे भाग में स्थापित किसी सिविल या राजस्व न्यायालय द्वारा जिस पर इस संहिता के उपबन्धों का विस्तार नहीं है; अथवा

(ख) किसी ऐसे सिविल या राजस्व न्यायालय द्वारा जो केन्द्रीय सरकार के प्राधिकार से भारत के बाहर स्थापित किया गया है या चालू रखा गया है; अथवा

(ग) भारत के बाहर के किसी अन्य ऐसे सिविल या राजस्व न्यायालय द्वारा जिसके बारे में केन्द्रीय सरकार ने राजपत्र में अधिसूचना द्वारा यह घोषित किया है उसे इस धारा के उपबंध लागू हैं,

निकाली गई हैं, उन राज्यक्षेत्रों में के न्यायालयों को भेजी जा सकेंगी जिन पर इस संहिता का विस्तार है और उनकी तामील ऐसे की जा सकेगी मानो वे ऐसे न्यायालयों द्वारा निकाले गए समन हों।]

30. प्रकटीकरण और उसके सदृश बातों के लिए आदेश करने की शक्ति—ऐसी शर्तों और परिसीमाओं के अधीन रहते हुए जो विहित की जाएं, न्यायालय किसी भी समय या तो स्वप्रेरणा से या किसी भी पक्षकार के आवेदन पर—

(क) ऐसे आदेश कर सकेगा जो परिप्रश्नों के परिदान और उनका उत्तर देने से, दस्तावेजों और तथ्यों की स्वीकृति से और दस्तावेजों या अन्य भौतिक पदार्थों के जो साक्ष्य के रूप में पेश किए जाने योग्य हों, प्रकटीकरण, निरीक्षण, पेश किए जाने, परिबद्ध किए जाने और लौटाए जाने से संबंधित सभी विषयों के बारे में आवश्यक या युक्तियुक्त हैं;

(ख) ऐसे व्यक्तियों के नाम समन निकाल सकेगा जिनकी हाजिरी या तो साक्ष्य देने या दस्तावेजें पेश करने या पूर्वोक्त जैसे अन्य पदार्थों को पेश करने के लिए अपेक्षित है;

(ग) यह आदेश दे सकेगा कि कोई तथ्य शपथपत्र द्वारा साबित किया जाए।

31. साक्षी को समन—धारा 27, धारा 28 और धारा 29 के उपबन्ध साक्ष्य देने या दस्तावेजों या अन्य भौतिक पदार्थों के पेश करने के लिए समनों को लागू होंगे।

32. व्यतिक्रम के लिए शास्ति—न्यायालय किसी ऐसे व्यक्ति को जिसके नाम धारा 30 के अधीन समन निकाला गया है, हाजिर होने के लिए विवश कर सकेगा और उस प्रयोजन के लिए—

(क) उसकी गिरफ्तारी के लिए वारण्ट निकाल सकेगा;

(ख) उसकी सम्पत्ति को कुर्क कर सकेगा और उसका विक्रय कर सकेगा;

(ग) उसके ऊपर पांच सौ रुपए से अनधिक जुर्माना अधिरोपित कर सकेगा;

(घ) उसे आदेश दे सकेगा कि वह अपनी उपसंजाति के लिए प्रतिभूति दे और व्यतिक्रम करने पर उसको सिविल कारागार को सुपुर्द कर सकेगा।

निर्णय और डिक्री

33. निर्णय और डिक्री—न्यायालय मामले की सुनवाई हो चुकने के पश्चात् निर्णय सुनाएगा और ऐसे निर्णय के अनुसरण में डिक्री होगी।

ब्याज

34. ब्याज—(1) जहां और जहां तक कि डिक्री धन के संदाय के लिए है, न्यायालय डिक्री में यह आदेश दे सकेगा कि न्यायनिर्णीत मूल राशि पर किसी ऐसे ब्याज के अतिरिक्त जो ऐसी मूल राशि पर वाद संस्थित किए जाने से पूर्व की किसी अवधि के

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 12 द्वारा (1-5-1977 से) अन्तःस्थापित।

2. 1951 के अधिनियम सं० 2 की धारा 6 द्वारा पूर्ववर्ती धारा के स्थान पर प्रतिस्थापित।

लिए न्यायनिर्णीत हुआ है, वाद की तारीख से डिक्री की तारीख तक ब्याज, ऐसी दर से जो न्यायालय युक्तियुक्त समझे, [1][ऐसी मूल राशि पर] डिक्री की तारीख से संदाय की तारीख तक या ऐसी पूर्वतर तारीख तक जो न्यायालय ठीक समझे, [1][छह प्रतिशत प्रति वर्ष से अनधिक ऐसी दर से जो न्यायालय युक्तियुक्त समझे, आगे के ब्याज सहित,] दिया जाए:

[2][परन्तु जहां इस प्रकार न्यायनिर्णीत राशि के संबंध में दायित्व किसी वाणिज्यिक संव्यवहार से उद्भूत हुआ था वहां ऐसे आगे के ब्याज की दर से छह प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से अधिक हो सकती है, किन्तु ऐसी दर ब्याज की संविदात्मक दर से या जहां कोई संविदात्मक दर नहीं है वहां उस दर से अधिक नहीं होगी जिस पर वाणिज्यिक संव्यवहार के संबंध में राष्ट्रीयकृत बैंक धन उधार या अग्रिम देते हैं।

स्पष्टीकरण 1—इस उपधारा में "राष्ट्रीयकृत बैंक" से बैंककारी कम्पनी (उपक्रमों का अर्जन और अन्तरण) अधिनियम, 1970 (1970 का 5) में यथापरिभाषित तत्स्थानी नया बैंक अभिप्रेत है।

स्पष्टीकरण 2—इस धारा के प्रयोजनों के लिए, कोई संव्यवहार वाणिज्यिक संव्यवहार है, यदि वह दायित्व उपगत करने वाले पक्षकार के उद्योग, व्यापार या कारबार से संबंधित है।]

(2) जहां [1][ऐसी मूल राशि पर] डिक्री की तारीख से संदाय की तारीख तक या अन्य पूर्वतर तारीख तक आगे के ब्याज के संदाय के संबंध में ऐसी डिक्री मौन है वहां यह समझा जाएगा कि न्यायालय ने ऐसा ब्याज दिलाने से इंकार कर दिया है और उसके लिए पृथक् वाद नहीं होगा।

खर्चे

35. खर्चे—(1) ऐसी शर्तों और परिसीमाओं के जो विहित की जाएं और तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के उपबन्धों के अधीन रहते हुए, सभी वादों के और उनसे आनुषंगिक खर्चों का दिलाना न्यायालय के विवेकाधिकार में होगा और न्यायालय को यह अवधारण करने की कि ऐसे खर्चे किसके द्वारा या किस सम्पत्ति में से और कितने तक दिए जाने हैं, और पूर्वोक्त प्रयोजनों के लिए सभी आवश्यक निदेश देने की पूरी शक्ति होगी। यह तथ्य कि न्यायालय को वाद का विचारण करने की अधिकारिता नहीं है, ऐसी शक्तियों के प्रयोग के लिए वर्जन नहीं होगा।

(2) जहां न्यायालय यह निदेश देता है कि खर्चे परिणाम के अनुसार नहीं दिए जाएंगे वहां न्यायालय अपने कारणों को लेखबद्ध करेगा।

[3]* * * * *

[4][35क. मिथ्या या तंग करने वाले दावों या प्रतिरक्षाओं के लिए प्रतिकरात्मक खर्चे—(1) यदि किसी वाद में या अन्य कार्यवाही में [5][जिसके अन्तर्गत निष्पादन कार्यवाही आती है किन्तु [6][अपील या पुनरीक्षण नहीं आता है]] कोई पक्षकार दावे या प्रतिरक्षा के बारे में इस आधार पर आक्षेप करता है कि दावा या प्रतिरक्षा या उसका कोई भाग, जहां तक वह आक्षेपकर्ता के विरुद्ध है, वहां तक उस पक्षकार के ज्ञान में मिथ्या या तंग करने वाला है, जिसके द्वारा वह किया गया है, और तत्पश्चात् यदि ऐसा दावा या ऐसी प्रतिरक्षा वहां तक पूर्णतः या भागतः नामंजूर, परित्यक्त या प्रत्याहृत की जाती है जहां तक वह आक्षेपकर्ता के विरुद्ध है, तो न्यायालय, [7][यदि वह ठीक समझे तो,] ऐसे दावे या प्रतिरक्षा को मिथ्या या तंग करने वाली ठहराने के लिए अपने कारणों को अभिलिखित करने के पश्चात् यह आदेश कर सकेगी कि आक्षेपकर्ता को प्रतिकर के रूप में खर्चे का संदाय वह पक्षकार करे जिसके द्वारा ऐसा दावा या प्रतिरक्षा की गई है।

---

1. 1956 के अधिनियम सं० 66 की धारा 2 द्वारा कुछ शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 13 द्वारा (1-7-1977 से) अन्तःस्थापित।
3. 1956 के अधिनियम सं० 66 की धारा 3 द्वारा उपधारा (3) का लोप किया गया।
4. 1922 के अधिनियम सं० 9 की धारा 2 द्वारा धारा 35क का अन्तःस्थापन किया गया था, जिसे उसकी धारा 1(2) के अधीन किसी भी राज्य में किसी विनिर्दिष्ट तारीख को राज्य सरकार द्वारा प्रवृत्त किया जा सकेगा। इसे मुम्बई, बंगाल संयुक्त प्रान्त, पंजाब, बिहार, मध्य प्रान्त, असम, उड़ीसा और तमिलनाडु में इस प्रकार प्रवृत्त किया गया है।
5. 1956 के अधिनियम सं० 66 की धारा 4 द्वारा "जो अपील नहीं है" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
6. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 14 द्वारा (1-2-1977 से) "जिसमें से अपील अपवर्जित है" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
7. 1956 के अधिनियम सं० 66 की धारा 4 द्वारा कुछ शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।

(2) कोई भी न्यायालय [1][तीन हजार रुपए] की रकम और अपनी धन-संबंधी अधिकारिता की परिसीमा तक की रकम में से जो भी रकम कम हो, उससे अधिक रकम के संदाय के लिए ऐसा कोई आदेश नहीं करेगा:

परन्तु जहां किसी ऐसे न्यायालय की जो प्रान्तीय लघुवाद न्यायालय अधिनियम, 1887 (1887 का 9) [2][या [3][भारत के किसी ऐसे भाग] में, [3][जिस पर उक्त अधिनियम का विस्तार नहीं है,] प्रवृत्त तत्समान विधि के अधीन] लघुवाद न्यायालय की अधिकारिता का प्रयोग करता है और जो [4][ऐसे अधिनियम या विधि के अधीन] गठित न्यायालय नहीं है, अधिकारिता की धन-संबंधी परिसीमाएं दो सौ पचास रुपए से कम हैं वहां उच्च न्यायालय ऐसी रकम, जो दो सौ पचास रुपए से अनधिक हो, और उन परिसीमाओं से एक सौ रुपए से अधिक न हो, खर्चे के रूप में इस धारा के अधीन अधिनिर्णीत करने की शक्ति उस न्यायालय को दे सकेगा:

परंतु यह और कि उच्च न्यायालय ऐसी रकम को परिसीमित कर सकेगा, जिसे कोई न्यायालय या न्यायालयों का वर्ग इस धारा के अधीन खर्च के रूप में अधिनिर्णीत करने के लिए सशक्त है।

(3) कोई भी व्यक्ति, जिसके विरुद्ध इस धारा के अधीन आदेश किया गया है, इस कारण से कोई छूट किसी ऐसे आपराधिक दायित्व से नहीं पाएगा, जो उसके द्वारा किए गए किसी दावे या प्रतिरक्षा के संबंध में है।

(4) किसी मिथ्या या तंग करने वाले दावे या प्रतिरक्षा के संबंध में इस धारा के अधीन अधिनिर्णीत किसी प्रतिकर की रकम को ऐसे दावे या प्रतिरक्षा के संबंध में नुकसानी या प्रतिकर के लिए किए गए किसी पश्चात्वर्ती वाद में हिसाब में लिया जाएगा।]

[5][35ख. विलम्ब कारित करने के लिए खर्चा—(1) यदि किसी वाद की सुनवाई के लिए या उसमें कोई कार्यवाही करने के लिए नियत किसी तारीख को, वाद का कोई पक्षकार—

(क) कार्यवाही करने में, जो वह उस तारीख को इस संहिता द्वारा या इसके अधीन करने के लिए अपेक्षित था, असफल रहता है; अथवा

(ख) ऐसी कार्यवाही करने के लिए या साक्ष्य पेश करने के लिए या किसी अन्य आधार पर स्थगन अभिप्राप्त करता है,

तो न्यायालय ऐसे कारणों के आधार पर जो लेखबद्ध किए जाएंगे, ऐसे पक्षकार से दूसरे पक्षकार को ऐसे खर्चों का, जो न्यायालय की राय में दूसरे पक्षकार को उसके द्वारा उस तारीख को न्यायालय में हाजिर होने में उपगत व्ययों की बाबत प्रतिपूर्ति करने के लिए युक्तियुक्त रूप में पर्याप्त हों, संदाय करने की अपेक्षा करने वाला आदेश कर सकेगा और ऐसे आदेश की तारीख के ठीक बाद की तारीख को ऐसे खर्चों का संदाय—

(क) यदि वादी को ऐसे खर्चों का संदाय करने का आदेश दिया गया था तो वादी द्वारा वाद;

(ख) यदि प्रतिवादी को ऐसे खर्चों का संदाय करने लिए आदेश दिया गया था तो प्रतिवादी द्वारा प्रतिरक्षा में आगे कार्यवाही करने के लिए पुरोभाव्य शर्त होगी।

स्पष्टीकरण—जहां प्रतिवादियों या प्रतिवादियों के समूहों द्वारा पृथक्-पृथक् प्रतिरक्षाएं की गई हैं वहां ऐसे खर्चों का संदाय, ऐसे प्रतिवादियों या प्रतिवादियों के समूहों द्वारा, जिन्हें न्यायालय द्वारा ऐसे खर्चों का संदाय करने का आदेश दिया गया है, प्रतिरक्षा में आगे कार्यवाही करने के लिए पुरोभाव्य शर्त होगी।

(2) ऐसे खर्चे, जिनका उपधारा (1)के अधीन संदाय किए जाने का आदेश किया गया है यदि उनका संदाय कर दिया गया है तो, उस वाद में पारित डिक्री में अधिनिर्णीत किए गए खर्चों में सम्मिलित नहीं किए जाएंगे; किन्तु यदि ऐसे खर्चों का संदाय नहीं किया गया है तो ऐसे खर्चों की रकम और उन व्यक्तियों के नाम और पते, जिनके द्वारा ऐसे खर्चे संदेय हैं, उपदर्शित करने वाला पृथक् आदेश किया जाएगा और ऐसे तैयार किए गए आदेश का ऐसे व्यक्तियों के विरुद्ध निष्पादन किया जा सकेगा।]

---

1. 1976 की अधिनियम सं० 104 की धारा 14 द्वारा (1-2-1977 से) "एक हजार रुपए" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1951 के अधिनियम सं० 2 की धारा 7 द्वारा अन्तःस्थापित।
3. विधि अनुकूलन (सं० 2) आदेश, 1956 "भाग ख राज्य" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
4. 1951 के अधिनियम सं० 2 की धारा 7 द्वारा "उस अधिनियम के अधीन" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
5. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 15 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

भाग 2

निष्पादन

साधारण

[1][**36. आदेशों को लागू होना**—इस संहिता के डिक्रियों के निष्पादन से संबंधित उपबन्धों के बारे में (जिनके अंतर्गत डिक्री के अधीन संदाय से संबंधित उपबन्ध भी हैं यह समझा जाएगा कि वे आदेशों के निष्पादन को (जिनके अन्तर्गत आदेश के अधीन संदाय भी हैं) वहां तक लागू हैं जहां तक कि वे उन्हें लागू किए जा सकेंगे।]

37. डिक्री पारित करने वाले न्यायालय की परिभाषा—जब तक कि कोई बात, विषय या संदर्भ में विरुद्ध न हो, डिक्रियों के निष्पादन के सम्बन्ध में "डिक्री पारित करने वाला न्यायालय" पद के या उस प्रभाव वाले शब्दों के बारे में यह समझा जाएगा कि उसके या उनके अन्तर्गत—

(क) जहां निष्पादित की जाने वाली डिक्री अपीली अधिकारिता के प्रयोग में पारित की गई है वहां प्रथम बार का न्यायालय आता है, तथा

(ख) जहां प्रथम बार का न्यायालय विद्यमान नहीं रह गया है या उसे निष्पादित करने की अधिकारिता उसे नहीं रह गई है वहां वह न्यायालय आता है जो, यदि वह वाद जिसमें डिक्री पारित की गई है, डिक्री के निष्पादन के लिए आवेदन देने के समय संस्थित किया जाता तो ऐसे वाद का विचारण करने की अधिकारिता रखता।

[2][**स्पष्टीकरण**—प्रथम बार के न्यायालय की डिक्री का निष्पादन करने की अधिकारिता केवल इस आधार पर समाप्त नहीं हो जाती कि उस वाद के संस्थित किए जाने के पश्चात् जिसमें डिक्री पारित की गई थी या डिक्री पारित किए जाने के पश्चात् उस न्यायालय की अधिकारिता से कोई क्षेत्र किसी अन्य न्यायालय की अधिकारिता में अन्तरित कर दिया गया है किन्तु ऐसे प्रत्येक मामले में, ऐसे अन्य न्यायालय को भी डिक्री के निष्पादन की अधिकारिता होगी यदि डिक्री के निष्पादन के लिए आवेदन करने के समय, उसे उक्त वाद का विचारण करने की अधिकारिता होती।]

वे न्यायालय जिनके द्वारा डिक्रियां निष्पादित की जा सकेंगी

38. वह न्यायालय जिसके द्वारा डिक्री निष्पादित की जा सकेगी—डिक्री या तो उसे पारित करने वाले न्यायालय द्वारा या उस न्यायालय द्वारा, जिसे वह निष्पादन के लिए भेजी गई है, निष्पादित की जा सकेगी।

39. डिक्री का अन्तरण—(1)डिक्री पारित करने वाला न्यायालय डिक्रीदार के आवेदन पर उसे [3][सक्षम अधिकारिता वाले अन्य न्यायालय को] निष्पादन के लिए भेजेगा:—

(क) यदि वह व्यक्ति, जिसके विरुद्ध डिक्री पारित की गई है, ऐसे अन्य न्यायालय की अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर वास्तव में और स्वेच्छा से निवास करता है या कारबार करता है या अभिलाभ के लिए स्वयं काम करता है; अथवा

(ख) यदि ऐसे व्यक्ति की सम्पत्ति जो ऐसी डिक्री की तुष्टि के लिए पर्याप्त हो डिक्री पारित करने वाले न्यायालय की अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर नहीं है और ऐसे अन्य न्यायालय की अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर है; अथवा

(ग) यदि डिक्री उसे पारित करने वाले न्यायालय की अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के बाहर स्थित स्थावर सम्पत्ति के विक्रय या परिदान का निदेश देती है; अथवा

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 16 द्वारा (1-2-1977 से) धारा 36 के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 17 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
3. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 18 द्वारा (1-2-1977 से) कुछ शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।

(घ) यदि डिक्री पारित करने वाला न्यायालय किसी अन्य कारण से जिसे वह लेखबद्ध करेगा, यह विचार करता है कि डिक्री का निष्पादन ऐसे अन्य न्यायालय द्वारा किया जाना चाहिए।

(2) डिक्री पारित करने वाला न्यायालय स्वप्रेरणा से उसे सक्षम अधिकारिता वाले किसी भी अधीनस्थ न्यायालय को निष्पादन के लिए भेज सकेगा।

[1][(3) इस धारा के प्रयोजनों के लिए, किसी न्यायालय को सक्षम अधिकारिता वाला न्यायालय समझा जाएगा यदि, उस न्यायालय को डिक्री के अन्तरण के लिए आवेदन करने के समय, ऐसे न्यायालय को उस वाद का विचारण करने की अधिकारिता होती जिसमें ऐसे डिक्री पारित की गई थी।]

40. किसी अन्य राज्य के न्यायालय को डिक्री का अन्तरण—जहां डिक्री किसी अन्य राज्य में निष्पादन के लिए भेजी जाती है वहां वह ऐसे न्यायालय को भेजी जाएगी, और ऐसी रीति से निष्पादित की जाएगी जो उस राज्य में प्रवृत्त नियमों द्वारा विहित की जाए।

41. निष्पादन कार्यवाहियों के परिणाम का प्रमाणित किया जाना—वह न्यायालय, जिसे डिक्री को ऐसे निष्पादन का तथ्य या जहां पूर्व कथित न्यायालय उसे निष्पादित करने में असफल रहता है वहां ऐसी असफलता की परिस्थितियां प्रमाणित करेगा।

42. अन्तरित डिक्री के निष्पादन में न्यायालय की शक्तियां—[2][(1)] अपने को भेजी गई डिक्री का निष्पादन करने वाले न्यायालय को ऐसी डिक्री के निष्पादन में वे ही शक्तियां होंगी जो उसकी होती यदि वह उसके ही द्वारा पारित की गई होती। वे सभी व्यक्ति, जो डिक्री की अवज्ञा करते हैं या उसके निष्पादन में बाधा डालते हैं, ऐसे न्यायालय द्वारा उसी रीति से दण्डनीय होंगे मानो डिक्री उसने ही पारित की हो और ऐसी डिक्री के निष्पादन में उसका आदेश अपील के बारे में उन्हीं नियमों के अधीन रहेगा मानो डिक्री उसके ही द्वारा पारित की गई हो।

[3][(2) उपधारा (1) के उपबन्धों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, उस उपधारा के अधीन न्यायालय की शक्तियों के अन्तर्गत डिक्री पारित करने वाले न्यायालय की निम्नलिखित शक्तियां होंगी, अर्थात्:—

(क) धारा 39 के अधीन किसी अन्य न्यायालय को निष्पादन के लिए डिक्री भेजने की शक्ति;

(ख) धारा 50 के अधीन मृत निर्णीत-ऋणी के विधिक प्रतिनिधि के विरुद्ध डिक्री का निष्पादन करने की शक्ति;

(ग) डिक्री को कुर्क करने का आदेश देने की शक्ति।

(3) उपधारा (2) में विनिर्दिष्ट शक्तियों के प्रयोग में आदेश पारित करने वाला न्यायालय उसकी एक प्रति डिक्री पारित करने वाले न्यायालय को भेजेगा।

(4) इस धारा की किसी बात से यह नहीं समझा जाएगा कि वह उस न्यायालय को जिसको डिक्री निष्पादन के लिए भेजी गई है, निम्नलिखित शक्तियों में से कोई शक्ति प्रदान करती है, अर्थात्:—

(क) डिक्री के अन्तरिती की प्रेरणा से निष्पादन का आदेश देने की शक्ति;

(ख) किसी फर्म के विरुद्ध पारित डिक्री की दशा में, आदेश 21 के नियम 50 के उपनियम (1) के खण्ड (ख) या खण्ड (ग) में निर्दिष्ट व्यक्ति से भिन्न किसी व्यक्ति के विरुद्ध ऐसी डिक्री के निष्पादन की इजाजत देने की शक्ति।]

[4][**43. जिन स्थानों पर इस संहिता का विस्तार नहीं है, वहां के सिविल न्यायालयों द्वारा पारित डिक्रियों का निष्पादन**—यदि कोई डिक्री, जो किसी ऐसे सिविल न्यायालय द्वारा पारित की गई है, जो भारत के किसी ऐसे भाग में स्थापित है जिस पर इस संहिता के उपबंधों का विस्तार नहीं है या किसी ऐसे न्यायालय द्वारा पारित की गई है जो केन्द्रीय सरकार के प्राधिकार द्वारा

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 18 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 19 द्वारा (1-2-1977 से) उपधारा (1) के रूप में पुनःसंख्यांकित।
3. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 19 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
4. 1951 के अधिनियम सं० 2 की धारा 8 द्वारा पूर्ववर्ती धारा के स्थान पर प्रतिस्थापित।

भारत के बाहर स्थापित किया गया है या चालू रखा गया है, उसे पारित करने वाले न्यायालय की अधिकारिता के भीतर निष्पादित नहीं की जा सकती, तो इसमें उपबंधित रीति से वह उन राज्यक्षेत्रों के, जिन पर इस संहिता का विस्तार है, किसी भी न्यायालय की अधिकारिता के भीतर निष्पादित की जा सकेगी।]

[1][44. जिन स्थानों पर इस संहिता का विस्तार नहीं है, वहां के राजस्व न्यायालयों द्वारा पारित डिक्रियों का निष्पादन—राज्य सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, यह घोषित कर सकेगी कि भारत के ऐसे किसी भाग के, जिस पर इस संहिता के उपबंधों का विस्तार नहीं है, किसी राजस्व न्यायालय की डिक्रियों का या ऐसी डिक्रियों के किसी वर्ग का राज्य में ऐसे निष्पादन किया जा सकेगा मानो वे उस राज्य में के न्यायालय द्वारा पारित की गई थी।]

[2][44क. व्यतिकारी राज्यक्षेत्रों के न्यायालयों द्वारा पारित डिक्रियों का निष्पादन—(1) जहां [3]*** किसी व्यतिकारी राज्यक्षेत्र के वरिष्ठ न्यायालयों में से किसी की डिक्री की प्रमाणित प्रति किसी जिला न्यायालय में फाइल की गई है वहां उस डिक्री का [4][भारत] में निष्पादन ऐसे किया जा सकेगा मानो वह उस जिला न्यायालय द्वारा पारित की गई थी।

(2) डिक्री की प्रमाणित प्रति के साथ ऐसे वरिष्ठ न्यायालय का ऐसा प्रमाणपत्र फाइल किया जाएगा जिसमें उस विस्तार का, यदि कोई हो, उल्लेख होगा जिस तक वह डिक्री तुष्ट या समायोजित की गई है, और ऐसा प्रमाणपत्र इस धारा के अधीन की कार्यवाहियों के प्रयोजनों के लिए ऐसी तुष्टि या समायोजन के विस्तार का निश्चायक सबूत होगा।

(3) धारा 47 के उपबन्ध इस धारा के अधीन डिक्री का निष्पादन करने वाले जिला न्यायालय की कार्यवाहियों को उस डिक्री की प्रमाणित प्रति के फाइल किए जाने के समय से लागू होंगे और यदि जिला न्यायालय को समाधानप्रद रूप में यह दर्शित कर दिया जाता है कि डिक्री धारा 13 के खण्ड (क) से खण्ड (च) तक में विनिर्दिष्ट अपवादों में से किसी में आती है तो वह न्यायालय ऐसी डिक्री का निष्पादन करने से इंकार कर देगा।

[5][स्पष्टीकरण 1—"व्यतिकारी राज्यक्षेत्रों" से भारत के बाहर का ऐसा देश या राज्यक्षेत्र अभिप्रेत है, जिसे केन्द्रीय सरकार इस धारा के प्रयोजनों के लिए राजपत्र में अधिसूचना द्वारा व्यतिकारी राज्यक्षेत्र घोषित करे और ऐसे किसी राज्यक्षेत्र के प्रति निर्देश से "वरिष्ठ न्यायालय" से ऐसे न्यायालय अभिप्रेत हैं जो उक्त अधिसूचना में विनिर्दिष्ट किए जाएं।

स्पष्टीकरण 2—वरिष्ठ न्यायालय के प्रति निर्देश से प्रयुक्त "डिक्री" शब्द से ऐसे न्यायालय की ऐसी डिक्री या निर्णय अभिप्रेत है, जिसके अधीन ऐसी धनराशि संदेय है जो करों या समान प्रकृति के अन्य प्रभारों के लिए अथवा जुर्माने या अन्य शास्ति के बारे में संदेय राशि नहीं है, किन्तु किसी भी दशा में इसके अन्तर्गत माध्यस्थम् पंचाट नहीं होगा, यद्यपि ऐसा पंचाट डिक्री या निर्णय के रूप में प्रवर्तनीय है।]]

[6][45. भारत के बाहर डिक्रियों का निष्पादन—इस भाग की पूर्वगामी धाराओं में से उतनी धाराओं का, जितनी न्यायालय को किसी अन्य न्यायालय में निष्पादन के लिए डिक्री भेजने के लिए सशक्त करती हैं, यह अर्थ लगाया जाएगा कि वह किसी राज्य में के न्यायालय को केन्द्रीय सरकार के प्राधिकार द्वारा [7][भारत के बाहर] स्थापित [8]*** किसी ऐसे न्यायालय में निष्पादन के लिए डिक्री भेजने के लिए सशक्त करती है, जिसके बारे में उस राज्य सरकार ने राजपत्र में अधिसूचना द्वारा यह घोषित किया है कि उसे यह धारा लागू होगी।]

46. आज्ञापत्र—(1) जब कभी डिक्री पारित करने वाला न्यायालय डिक्रीदार के आवेदन पर ठीक समझे तब वह किसी ऐसे अन्य न्यायालय को जो उस डिक्री के निष्पादन के लिए सक्षम है, यह आज्ञापत्र निकाल सकेगा कि वह निर्णीत-ऋणी की उसी आज्ञापत्र में विनिर्दिष्ट कोई भी सम्पत्ति कुर्क कर ले।

---

1. 1951 के अधिनियम सं० 2 की धारा 9 द्वारा पूर्ववर्ती धारा के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1937 के अधिनियम सं० 8 की धारा 2 द्वारा अन्तःस्थापित।
3. 1952 के अधिनियम सं० 71 की धारा 2 द्वारा "यूनाइटेड किंगडम या" शब्दों का लोप किया गया।
4. 1951 के अधिनियम सं० 2 की धारा 3 द्वारा "राज्यों" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
5. 1952 के अधिनियम सं० 71 की धारा 2 द्वारा स्पष्टीकरण 1 से 3 के स्थान पर प्रतिस्थापित।
6. भारत शासन (भारतीय विधि अनुकूलन) आदेश, 1937 द्वारा मूल धारा 45 के स्थान पर प्रतिस्थापित।
7. विधि अनुकूलन आदेश, 1950 द्वारा "किसी भारतीय राज्य में" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
8. भारतीय स्वतंत्रता (केन्द्रीय अधिनियम और अध्यादेश अनुकूलन) आदेश, 1948 द्वारा "या बनाए रखे गए" शब्दों का लोप किया गया।

(2) वह न्यायालय, जिसे आज्ञापत्र भेजा जाता है, उस सम्पत्ति को ऐसी रीति से कुर्क करने के लिए कार्यवाही करेगा जो डिक्री के निष्पादन में सम्पत्ति की कुर्की के लिए विहित है:

परन्तु जब तक कि कुर्की की अवधि डिक्री पारित करने वाले न्यायालय के आदेश द्वारा बढ़ा न दी गई हो या जब तक कि कुर्की के अवसान के पूर्व डिक्री कुर्की करने वाले न्यायालय को अन्तरित न कर दी गई हो और डिक्रीदार ने ऐसी सम्पत्ति के विक्रय के आदेश के लिए आवेदन न कर दिया हो, आज्ञापत्र के अधीन कोई भी कुर्की दो मास से अधिक चालू न रहेगी।

प्रश्न जिनका अवधारण डिक्री का निष्पादन करने वाला न्यायालय करेगा

47. प्रश्न जिनका अवधारण डिक्री का निष्पादन करने वाला न्यायालय करेगा—(1) वे सभी प्रश्न, जो उस वाद के पक्षकारों के या उनके प्रतिनिधियों के बीच पैदा होते हैं, जिसमें डिक्री पारित की गई थी और जो डिक्री के निष्पादन, उन्मोचन या तुष्टि से संबंधित है, डिक्री का निष्पादन करने वाले न्यायालय द्वारा, न कि पृथक् वाद द्वारा, अवधारित किए जाएंगे।

[1]* * * * * *

(3) जहां यह प्रश्न पैदा होता है कि कोई व्यक्ति किसी पक्षकार का प्रतिनिधि है या नहीं है वहां ऐसा प्रश्न उस न्यायालय द्वारा इस धारा के प्रयोजनों के लिए अवधारित किया जाएगा।

[2][स्पष्टीकरण 1—वह वादी जिसका वाद खारिज हो चुका है और वह प्रतिवादी जिसके विरुद्ध वाद खारिज हो चुका है इस धारा के प्रयोजनों के लिए वाद के पक्षकार हैं।

स्पष्टीकरण 2—(क) डिक्री के निष्पादन के लिए विक्रय में सम्पत्ति का क्रेता इस धारा के प्रयोजनों के लिए उस वाद का पक्षकार समझा जाएगा जिसमें वह डिक्री पारित की गई है; और

(ख) ऐसी सम्पत्ति के क्रेता को या उसके प्रतिनिधि को कब्जा देने से संबंधित सभी प्रश्न इस धारा के अर्थ में डिक्री के निष्पादन, उन्मोचन या उसकी तुष्टि से संबंधित प्रश्न समझे जाएंगे।]

निष्पादन के लिए समय की सीमा

48. [कुछ मामलों में निष्पादन वर्जित।] परिसीमा अधिनियम, 1963 (1963 का 36) की धारा 28 द्वारा (1 जनवरी, 1964 से) निरसित।

अन्तरिती और विधिक प्रतिनिधि

49. अन्तरिती—डिक्री का हर अन्तरिती, उसे उन सभ्याओं के (यदि कोई हों) अधीन रहते हुए धारण करेगा जिन्हें निर्णीत-ऋणी मूल डिक्रीदार के विरुद्ध प्रवर्तित करा सकता था।

50. विधिक प्रतिनिधि—(1) जहां डिक्री के पूर्णतः तुष्ट किए जाने से पहले निर्णीत-ऋणी की मृत्यु हो जाती है वहां डिक्री का धारक डिक्री पारित करने वाले न्यायालय में आवेदन कर सकेगा कि वह उसका निष्पादन मृतक के विधिक प्रतिनिधि के विरुद्ध करे।

(2) जहां डिक्री ऐसे विधिक प्रतिनिधि के विरुद्ध निष्पादित की जाती है वहां वह मृतक की सम्पत्ति के उस परिमाण तक ही दायी होगा जितने परिमाण तक वह सम्पत्ति उसके हाथ में आई है और सम्यक् रूप से व्ययनित नहीं कर दी गई है और डिक्री निष्पादित करने वाला न्यायालय ऐसा दायित्व अभिनिश्चित करने के प्रयोजन के लिए स्वप्रेरणा से या डिक्रीदार के आवेदन पर ऐसे लेखाओं को, जो वह न्यायालय ठीक समझे, पेश करने के लिए ऐसे विधिक प्रतिनिधि को विवश कर सकेगा।

निष्पादन-प्रक्रिया

51. निष्पादन कराने की न्यायालय की शक्तियां—ऐसी शर्तों और परिसीमाओं के अधीन रहते हुए, जो विहित की जाएं, न्यायालय डिक्रीदार के आवेदन पर आदेश दे सकेगा कि डिक्री का निष्पादन—

(क) विनिर्दिष्ट रूप से डिक्रीत किसी सम्पत्ति के परिदान द्वारा किया जाए;

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 20 द्वारा (1-2-1977 से) उपधारा (2) का लोप किया गया।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 20 द्वारा (1-2-1977 से) पूर्ववर्ती स्पष्टीकरण के स्थान पर प्रतिस्थापित।

(ख) किसी सम्पत्ति की कुर्की और विक्रय द्वारा या उसकी कुर्की के बिना विक्रय द्वारा की जाए;

(ग) [1][जहां धारा 58 के अधीन गिरफ्तारी और निरोध अनुज्ञेय है वहां गिरफ्तारी और ऐसी अवधि के लिए जो उस धारा में विनिर्दिष्ट अवधि से अधिक न हो,] कारागार में निरोध द्वारा किया जाए;

(घ) रिसीवर की नियुक्ति द्वारा किया जाए; अथवा

(ङ) ऐसी अन्य रीति से किया जाए जिसकी दिए गए अनुतोष की प्रकृति अपेक्षा करे:

[2][परन्तु जहां डिक्री धन के संदाय के लिए है वहां कारागार में निरोध द्वारा निष्पादन के लिए आदेश तब तक नहीं दिया जाएगा जब तक कि निर्णीत-ऋणी को इसके लिए हेतुक दर्शित करने का अवसर देने के पश्चात् कि उसे कारागार को क्यों न सुपुर्द किया जाए, न्यायालय का अभिलिखित कारणों से यह समाधान नहीं हो जाता है कि—

(क) निर्णीत-ऋणी इस उद्देश्य से या यह परिणाम पैदा करने के लिए कि डिक्री के निष्पादन में बाधा या विलम्ब हो,—

(i) न्यायालय की अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं से फरार होने वाला है या उन्हें छोड़ने वाला है, अथवा

(ii) उस वाद के संस्थित किए जाने के पश्चात् जिसमें वह डिक्री पारित की गई थी अपनी सम्पत्ति के किसी भाग को बेईमानी से अन्तरित कर चुका है, छिपा चुका है या हटा चुका है अथवा अपनी सम्पत्ति के सम्बन्ध में असद्भावपूर्ण कोई अन्य कार्य कर चुका है, अथवा

(ख) डिक्री की रकम या उसके पर्याप्त भाग का संदाय करने के साधन निर्णीत-ऋणी के पास हैं या डिक्री की तारीख के पश्चात् रह चुके हैं और वह उसे संदत्त करने से इंकार या संदत्त करने में उपेक्षा करता है या कर चुका है,

(ग) डिक्री उस राशि के लिए है, जिसका लेखा देने के लिए निर्णीत-ऋणी वैश्वासिक हैसियत में आबद्ध था।

स्पष्टीकरण—खण्ड (ख) के प्रयोजनों के लिए, निर्णीत-ऋणी के साधनों की गणना करने में, ऐसी सम्पत्ति गणना में से छोड़ दी जाएगी, जो डिक्री के निष्पादन में कुर्क किए जाने से तत्समय प्रवृत्त किसी विधि या विधि का बल रखने वाली रूढ़ि द्वारा या उसके अधीन छूट-प्राप्त है।]

52. विधिक प्रतिनिधि के विरुद्ध डिक्री का प्रवर्तन—(1) जहां किसी मृत व्यक्ति के विधिक प्रतिनिधि के रूप में किसी पक्षकार के विरुद्ध कोई डिक्री पारित की गई है और डिक्री मृतक की सम्पत्ति में से धन संदत्त किए जाने के लिए है और वहां वह ऐसी किसी भी संपत्ति को कुर्की और विक्रय द्वारा निष्पादित की जा सकेगी।

(2) जहां निर्णीत-ऋणी के कब्जे में ऐसी कोई सम्पत्ति बाकी न बची हो और वह न्यायालय का यह समाधान करने में असफल रहता है कि उसने मृतक की उस सम्पत्ति का सम्यक् रूप से उपयोजन कर दिया है जिसका उसके कब्जे में आना साबित कर दिया गया है वहां डिक्री निर्णीत-ऋणी के विरुद्ध उस सम्पत्ति के परिमाण तक, जिसके सम्बन्ध में वह न्यायालय का समाधान करने में असफल रहा है, उसी रीति से निष्पादित की जा सकेगी मानो वह डिक्री वैयक्तिक रूप से उसके विरुद्ध पारित की गई थी।

53. पैतृक सम्पत्ति का दायित्व—पुत्र या अन्य वंशज के हाथ में की ऐसी सम्पत्ति के बारे में, जो मृत पूर्वज के ऐसे ऋण के चुकाने के लिए हिन्दू विधि के अधीन दायी है, जिसके लिए डिक्री पारित की जा चुकी है, धारा 50 और धारा 52 के प्रयोजनों के लिए यह समझा जाएगा कि वह मृतक की ऐसी सम्पत्ति है जो उसके विधिक प्रतिनिधि के रूप में पुत्र या अन्य वंशज के हाथ में आई है।

54. सम्पदा का विभाजन या अंश का पृथक्करण—जहां डिक्री किसी ऐसी अविभक्त सम्पदा के विभाजन के लिए है, जिस पर सरकार को दिए जाने के लिए राजस्व निर्धारित है, या ऐसी सम्पदा के अंश के पृथक् कब्जे के लिए है वहां सम्पदा का विभाजन या अंश का पृथक्करण कलक्टर या कलक्टर के ऐसे किसी राजपत्रित अधीनस्थ द्वारा, जिसे उसने इस निमित्त प्रतिनियुक्त किया हो, ऐसी सम्पदाओं के विभाजन या अंशों के पृथक् कब्जे से संबंधित तत्समय प्रवृत्त विधि (यदि कोई हो) के अनुसार किया जाएगा।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 21 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
2. 1936 के अधिनियम सं० 21 की धारा 2 द्वारा अन्तःस्थापित।

गिरफ्तारी और निरोध

55. गिरफ्तारी और निरोध—(1) निर्णीत-ऋणी डिक्री के निष्पादन में किसी भी समय और किसी भी दिन गिरफ्तार किया जा सकेगा और यथासाध्य शीघ्रता से न्यायालय के समक्ष लाया जाएगा और वह उस जिले के सिविल कारागार में, जिसमें निरोध का आदेश देने वाला न्यायालय स्थित है या जहां ऐसे सिविल कारागार में उपयुक्त वास-सुविधा नहीं है वहां ऐसे किसी अन्य स्थान में, जिसे राज्य सरकार ने ऐसे व्यक्तियों के निरोध के लिए नियत किया हो, जिनके विरुद्ध किए जाने का आदेश ऐसे जिले के न्यायालयों द्वारा दिया जाए, निरुद्ध किया जा सकेगा:

परन्तु प्रथमतः इस धारा के अधीन गिरफ्तारी करने के प्रयोजन के लिए किसी भी निवास-गृह में सूर्यास्त के पश्चात् और सूर्योदय के पूर्व प्रवेश नहीं किया जाएगा:

परन्तु द्वितीयतः निवास-गृह का कोई भी बाहरी द्वार तब तक तोड़कर नहीं खोला जाएगा तब तक कि ऐसा निवास-गृह निर्णीत-ऋणी के अधिभोग में न हो और वह उस तक पहुंच होने देने से मना न करता हो या पहुंच होने देना किसी भांति निवारित न करता हो, किन्तु जबकि गिरफ्तार करने के लिए प्राधिकृत अधिकारी ने किसी निवास-गृह में सम्यक् रूप से प्रवेश कर लिया है, तब वह किसी ऐसे कमरे का द्वार तोड़ सकेगा जिसके बारे में उसे यह विश्वास करने का कारण है कि उसमें निर्णीत-ऋणी है:

परन्तु तृतीयतः यदि कमरा किसी ऐसी स्त्री के वास्तविक अधिभोग में है जो निर्णीत-ऋणी नहीं है और जो देश की रूढ़ियों के अनुसार लोगों के सामने नहीं आती है तो गिरफ्तारी करने के लिए प्राधिकृत अधिकारी उसे यह सूचना देगा कि वह वहां से हट जाने के लिए स्वतंत्र है और उसे हट जाने के लिए युक्तियुक्त समय अनुज्ञात करने और हट जाने के लिए उसे युक्तियुक्त सुविधा देने के पश्चात् वह गिरफ्तारी करने के प्रयोजन से कमरे में प्रवेश कर सकेगा:

परन्तु चतुर्थतः जहां वह डिक्री, जिसके निष्पादन में निर्णीत-ऋणी को गिरफ्तार किया गया है, धन के संदाय के लिए डिक्री है और निर्णीत-ऋणी डिक्री की रकम और गिरफ्तारी का खर्चा उस अधिकारी को संदत्त कर देता है, जिसने उसे गिरफ्तार किया है वहां ऐसा अधिकारी उसे तुरन्त छोड़ देगा।

(2) राज्य सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, यह घोषणा कर सकेगी कि ऐसा कोई भी व्यक्ति या ऐसे व्यक्तियों का वर्ग, जिसकी गिरफ्तारी से लोगों को खतरा या असुविधा पैदा हो सकती है, डिक्री के निष्पादन में ऐसी प्रक्रिया से भिन्न प्रक्रिया के अनुसार जो राज्य सरकार इस निमित्त विहित करे, गिरफ्तार किए जाने के दायित्व के अधीन नहीं होगा।

(3) जहां निर्णीत-ऋणी धन के संदाय के लिए डिक्री के निष्पादन में गिरफ्तार किया जाता है और न्यायालय के समक्ष लाया जाता है वहां न्यायालय उसे यह बताएगा कि वह दिवालिया घोषित किए जाने के लिए आवेदन कर सकता है और यदि उसने आवेदन की विषय-वस्तु के संबंध में कोई असद्भावपूर्ण कार्य नहीं किया है और यदि वह तत्समय प्रवृत्त दिवाला-विधि के उपबन्धों का अनुपालन करता है तो वह [1][उन्मोचित किया जा सकेगा]।

(4) जहां निर्णीत-ऋणी दिवालिया घोषित किए जाने के लिए आवेदन करने का अपना आशय प्रकट करता है और न्यायालय को समाधानप्रद प्रतिभूति इस बात के लिए दे देता है कि वह ऐसा आवेदन एक मास के भीतर करेगा और वह आवेदन-संबंधी या उस डिक्री-संबंधी जिसके निष्पादन में वह गिरफ्तार किया गया था, किसी कार्यवाही में बुलाए जाने पर उपसंजात होगा वहां न्यायालय उसे गिरफ्तारी से [2][छोड़ सकेगा] और यदि वह ऐसे आवेदन करने और उपसंजात होने में असफल रहता है तो न्यायालय डिक्री के निष्पादन में या तो प्रतिभूति आप्त करने का या उस व्यक्ति को सिविल कारागार को सुपुर्द किए जाने का निदेश दे सकेगा।

56. धन की डिक्री के निष्पादन में स्त्रियों की गिरफ्तारी या निरोध का निषेध—इस भाग में किसी बात के होते हुए भी, न्यायालय धन के संदाय की डिक्री के निष्पादन में स्त्री को गिरफ्तार करने और सिविल कारागार में निरुद्ध करने के लिए आदेश नहीं देगा।

---

1. 1921 के अधिनियम सं० 3 की धारा 2 द्वारा "उन्मोचित किया जाएगा" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1921 के अधिनियम सं० 3 की धारा 2 द्वारा "निर्मुक्त कर देगा" के स्थान पर प्रतिस्थापित।

57. जीवन-निर्वाह भत्ता—राज्य सरकार निर्णीत-ऋणियों के जीवन-निर्वाह के लिए संदेय मासिक भत्तों के मापमान, उनकी पंक्ति, मूलवंश और राष्ट्रिकता के अनुसार श्रेणीबद्ध करके नियत कर सकेगी।

58. निरोध और छोड़ा जाना—(1) डिक्री के निष्पादन में सिविल कारागार में निरुद्ध हर व्यक्ति,—

(क) जहां डिक्री [1][एक हजार रुपए] से अधिक धनराशि का संदाय करने के लिए है [1][वहां तीन मास से अनधिक अवधि के लिए, और]

[2][(ख) जहां डिक्री पांच सौ रुपए से अधिक किन्तु एक हजार रुपए से अनधिक धनराशि का संदाय करने के लिए है वहां छह सप्ताह से अनधिक अवधि के लिए,]

ऐसे निरुद्ध किया जाएगा:

परन्तु वह ऐसे निरोध में से—

(i) उसके निरोध के वारंट में वर्णित रकम का सिविल कारागार के भारसाधक अधिकारी को संदाय कर दिए जाने पर, अथवा

(ii) उसके विरुद्ध डिक्री के अन्यथा पूर्ण रूप से तुष्ट हो जाने पर, अथवा

(iii) जिस व्यक्ति के आवेदन पर वह ऐसे निरुद्ध किया गया था उसके अनुरोध पर, अथवा

(iv) जिस व्यक्ति के आवेदन पर उसे निरुद्ध किया गया था, उसके द्वारा जीवन-निर्वाह भत्ते का संदाय करने का लोप किए जाने पर,

[1][निरोध की उक्त अवधि] के अवसान से पहले छोड़ दिया जाएगा:

परन्तु यह भी कि वह खण्ड (ii) या खण्ड (iii) के अधीन ऐसे निरोध में से न्यायालय के आदेश के बिना नहीं छोड़ा जाएगा।

[3][(1क) शंकाओं को दूर करने के लिए यह घोषित किया जाता है कि जहां डिक्री की कुल रकम पांच सौ रुपए से अधिक नहीं है वहां धन के संदाय की डिक्री के निष्पादन में निर्णीत-ऋणी को सिविल कारागार में निरुद्ध करने के लिए कोई आदेश नहीं किया जाएगा।]

(2) इस धारा के अधीन निरोध में से छोड़ा गया निर्णीत-ऋणी अपने छोड़े जाने के कारण ही अपने ऋण से उन्मोचित नहीं हो जाएगा, किन्तु वह जिस डिक्री के निष्पादन में सिविल कारागार में निरुद्ध किया गया था, उसके निष्पादन में पुनः गिरफ्तार नहीं किया जा सकेगा।

59. रुग्णता के आधार पर छोड़ा जाना—(1) न्यायालय निर्णीत-ऋणी की गिरफ्तारी के लिए वारण्ट निकाले जाने के पश्चात् किसी भी समय उसकी गंभीर रुग्णता के आधार पर उस वारण्ट को रद्द कर सकेगा।

(2) जहां निर्णीत-ऋणी गिरफ्तार किया जा चुका है वहां, यदि न्यायालय की यह राय है कि उसका स्वास्थ्य इतना ठीक नहीं है कि उसे सिविल कारागार में निरुद्ध किया जाए तो, वह उसे छोड़ सकेगा।

(3) यदि निर्णीत-ऋणी को सिविल कारागार के सुपुर्द कर दिया गया है तो उसको वहां से—

(क) राज्य सरकार किसी संक्रामक या सांसर्गिक रोग होने के आधार पर छोड़ सकेगी, अथवा

(ख) सुपुर्द करने वाला न्यायालय या ऐसा कोई न्यायालय, जिसके अधीनस्थ वह न्यायालय है, उस निर्णीत-ऋणी के किसी गम्भीर रुग्णता से पीड़ित होने के आधार पर छोड़ सकेगा।

(4) इस धारा के अधीन छोड़ा गया निर्णीत-ऋणी पुनः गिरफ्तार किया जा सकेगा, किन्तु सिविल कारागार में उसके निरोध की कुल अवधि धारा 58 द्वारा विहित अवधि से अधिक नहीं होगी।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 22 द्वारा (1-2-1977 से) कुछ शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 22 द्वारा (1-2-1977 से) खण्ड (ख) के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 22 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

कुर्की

60. वह सम्पत्ति, जो डिक्री के निष्पादन में कुर्क और विक्रय की जा सकेगी— (1) निम्नलिखित सम्पति डिक्री के निष्पादन में कुर्क और विक्रय की जा सकेगी अर्थात् भूमि, गृह या अन्य निर्माण, माल, धन, बैंक-नोट, चैक, विनिमय पत्र, हुण्डी, वचनपत्र, सरकारी प्रतिभूतियां, धन के लिए बन्धपत्र या अन्य प्रतिभूतियां, ऋण, निगम-अंश और उसके सिवाय जैसा इसमें इसके पश्चात् वर्णित है, विक्रय की जा सकने वाली अन्य ऐसी सभी जंगम या स्थावर सम्पति, जो निर्णीत-ऋणी की है या जिस पर या जिसके लाभों पर वह ऐसी व्ययन शक्ति रखता है जिसे वह अपने फायदे के लिए प्रयोग कर सकता हो, चाहे वह निर्णीत-ऋणी के नाम में धारित हो या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा उसके लिए न्यास में या उसकी ओर से धारित हो:

परन्तु निम्नलिखित विशिष्ट वस्तुएं, ऐसे कुर्क और विक्रय नहीं की जा सकेंगी, अर्थात्:—

(क) निर्णीत-ऋणी, उसकी पत्नी और उसके बच्चों के पहनने के आवश्यक वस्त्र, भोजन पकाने के बर्तन, चारपाई और बिछौने और ऐसे निजी आभूषण जिन्हें कोई स्त्री धार्मिक प्रथा के अनुसार अपने से अलग नहीं कर सकती;

(ख) शिल्पी के औजार, और जहां निर्णीत-ऋणी कृषक है वहां उसमें खेती के उपकरण और ऐसे पशु और चीज, जो न्यायालय की राय में उसे वैसी हैसियत में अपनी जीविका का उपार्जन करने के लिए समर्थ बनाने के लिए आवश्यक है और कृषि-उपज का या कृषि-उपज के किसी वर्ग का ऐसा भाग जो ठीक अगली धारा के उपबंधों के अधीन दायित्व से मुक्त घोषित कर दिया गया है;

(ग) वे गृह और अन्य निर्माण (उनके मसलों और आस्थानों के तथा उनसे अव्यवहित रूप से अनुलग्न और उनके उपभोग के लिए आवश्यक भूमि के सहित) जो [1][कृषक या श्रमिक या घरेलू नौकर के हैं और उसके] अधिभोग में है;

(घ) लेखा बहियां;

(ङ) नुकसानी के लिए वाद लाने का अधिकारमात्र;

(च) वैयक्तिक सेवा कराने का कोई अधिकार;

(छ) ये वृत्तिकाएं और उपदान जो सरकार के [2][या किसी स्थानीय प्राधिकारी के या किसी अन्य नियोजक के] पेंशन भोगियों को अनुज्ञात हैं या ऐसी किसी सेवा कुटुम्ब पेंशन निधि में से, जो [3][केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार] द्वारा राजपत्र में अधिसूचना[4] द्वारा इस निमित्त अधिसूचित की गई है, संदेय हैं और राजनैतिक पेंशनें;

[5](ज) श्रमिकों और घरेलू नौकरों की मजदूरी चाहे वह धन में या वस्तु के रूप में संदेय हो [6]***;

[7][(झ) [8][भरणपोषण की डिक्री से भिन्न किसी डिक्री के निष्पादन में] वेतन के [9][प्रथम [10][चार सौ रुपए] और बाकी का दो-तिहाई]:

[11][परन्तु जहां ऐसे वेतन के प्रभाग का जो कुर्क किया जा सकता है, कोई भाग, कुल मिलाकर चौबीस मास की अवधि तक लगातार या आंतरायिक रूप से कुर्क रहा है वहां जब तक आगे की बारह मास की अवधि समाप्त न हो जाए तब तक ऐसे भाग को कुर्की से छूट प्राप्त होगी और जहां ऐसी कुर्की एक ही डिक्री के निष्पादन में की गई है वहां कुल मिलाकर चौबीस मास की अवधि

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 23 द्वारा (1-2-1977 से) "कृषक के या उसके" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 23 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
3. भारत शासन (भारतीय विधि अनुकूलन) आदेश, 1937 द्वारा "सपरिषद् गवर्नर जनरल" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
4. ऐसी अधिसूचना के लिए भारत का राजपत्र (अंग्रेजी), 1909, भाग 1, पृष्ठ 5 देखिए।
5. 1937 के अधिनियम सं० 9 की धारा 2 द्वारा पूर्ववर्ती खण्ड (ज) और (झ) के स्थान पर प्रतिस्थापित। 1 जून, 1937 के पहले संस्थित वाद से उद्भूत किन्हीं कार्यवाहियों के बारे में उस धारा द्वारा किए गए संशोधन का कोई प्रभाव नहीं है; 1937 के अधिनियम सं० 9 की धारा 3 देखिए।
6. 1943 के अधिनियम सं० 5 की धारा 2 द्वारा "तथा वेतन के प्रथम एक सौ रुपए और ऐसे वेतन के बाकी का आधा" शब्दों का लोप किया गया।
7. 1943 के अधिनियम सं० 5 की धारा 2 द्वारा पूर्ववर्ती खण्ड और परन्तुक के स्थान पर प्रतिस्थापित।
8. 1956 के अधिनियम सं० 66 की धारा 6 द्वारा अन्तःस्थापित।
9. 1963 के अधिनियम सं० 26 की धारा 2 द्वारा "प्रथम सौ रुपए" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
10. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 23 द्वारा (1-2-1977 से) कुछ शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।
11. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 23 द्वारा (1-2-1977 से) परन्तुक के स्थान पर प्रतिस्थापित।

तक कुर्की चालू रहने के पश्चात्, ऐसे भाग को उस डिक्री के निष्पादन में कुर्की से अन्तिम रूप से छूट-प्राप्त होगी।]]]

[1][(झक) भरणपोषण की डिक्री के निष्पादन में वेतन का एक-तिहाई;]

[2][(ञ) ऐसे व्यक्तियों के वेतन और भत्ते जिन्हें वायु सेना अधिनियम, 1950 (1950 का 45) या सेना अधिनियम, 1950 (1950 का 46) या नौसेना अधिनियम, 1957 (1957 का 62) लागू है;]

(ट) किसी भी ऐसी निधि में के या उससे व्युत्पन्न जिसे भविष्य-निधि अधिनियम, [3][1925] (1925 का 19) तत्समय लागू है, सभी अनिवार्य निक्षेप और अन्य राशियां, जहां तक कि उनके बारे में उक्त अधिनियम द्वारा यह घोषित किया गया है कि वे कुर्क नहीं की जा सकेंगी;

[4][(टक) किसी ऐसी निधि में के या उससे व्युत्पन्न जिसे लोक भविष्य-निधि अधिनियम, 1968 (1968 का 23) तत्समय लागू है, सभी निक्षेप और अन्य राशियां जहां तक कि उनके बारे में उक्त अधिनियम द्वारा यह घोषित किया गया है कि वे कुर्क नहीं की जा सकेंगी।

(टख) निर्णीत-ऋणी के जीवन पर बीमा पालिसी के अधीन संदेय सभी धन;

(टग) किसी ऐसे निवास भवन के पट्टेदार का हित जिसको भाटक और वास-सुविधा के नियंत्रण से संबंधित तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के उपबंध लागू हैं;]

[5][(ठ) [6][सरकार के किसी सेवक] की या रेल कम्पनी या स्थानीय प्राधिकारी के सेवक की उपलब्धियों का भागरूप ऐसा कोई भत्ता, जिसके बारे में [7][समुचित सरकार] राजपत्र में अधिसूचना द्वारा घोषित करे कि वह कुर्की से छूट-प्राप्त है और [8][ऐसे किसी सेवक] को उसके निलम्बन-काल में दिया गया कोई जीवन-निर्वाह अनुदान या भत्ता;]

(ड) उत्तरजीविता द्वारा उत्तराधिकार की प्रत्याशा अथवा अन्य केवल समाश्रित या सम्भव अधिकार या हित;

(ढ) भावी भरणपोषण का अधिकार;

(ण) ऐसा भत्ता, जिसके बारे में [9][किसी भारतीय विधि] ने यह घोषित किया है कि वह डिक्री के निष्पादन में कुर्की या विक्रय के दायित्व से छूट-प्राप्त है; तथा

(त) जहां निर्णीत-ऋणी कोई ऐसा व्यक्ति है जो भू-राजस्व के संदाय के लिए दायी है वहां कोई ऐसी जंगम संपत्ति, जो ऐसे राजस्व की बकाया की वसूली के लिए विक्रय से ऐसी विधि के अधीन छूट-प्राप्त है जो उसे तत्समय लागू है।

[10][स्पष्टीकरण 1—खण्ड (छ), (ज), (झ), (झक), (ञ), (ठ) और (ण) में वर्णित वस्तुओं के संबंध में संदेय धन को, उनके वस्तुतः संदेय होने के पहले या उसके पश्चात् कुर्की या विक्रय से छूट-प्राप्त है और वेतन की दशा में उसका कुर्की योग्य प्रभाग, उसके वस्तुतः संदेय होने के पहले या उसके पश्चात् कुर्क किया जा सकता है।]

---

1. 1956 के अधिनियम सं॰ 66 की धारा 6 द्वारा अन्तःस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं॰ 104 की धारा 23 द्वारा (1-2-1977 से) खण्ड (ञ) के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. 1937 के अधिनियम सं॰ 9 की धारा 2 द्वारा "1897" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
4. 1976 के अधिनियम सं॰ 104 की धारा 23 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
5. 1937 के अधिनियम सं॰ 9 की धारा 2 द्वारा मूल खण्ड के स्थान पर प्रतिस्थापित।
6. 1943 के अधिनियम सं॰ 5 की धारा 2 द्वारा "लोक अधिकारी" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
7. भारत शासन (भारतीय विधि अनुकूलन) आदेश, 1937 द्वारा "सपरिषद् गवर्नर जनरल" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
8. 1943 के अधिनियम सं॰ 5 की धारा 2 द्वारा "ऐसे किसी अधिकारी या सेवक" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
9. भारत शासन (भारतीय विधि अनुकूलन) आदेश, 1937 द्वारा "इण्डियन काउन्सिल्स ऐक्ट्स, 1861 और 1892 के अधीन पारित किसी विधि" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
10. 1976 के अधिनियम सं॰ 104 की धारा 23 द्वारा (1-2-1977 से) स्पष्टीकरण 1 के स्थान पर प्रतिस्थापित।

[1][[2][स्पष्टीकरण 2— खण्ड (झ) और (झक) में] वेतन से, ऐसे भत्तों को छोड़कर जो खण्ड (ठ) के उपबन्धों के अधीन कुर्की से छूट-प्राप्त घोषित किए गए हैं, वे समस्त मासिक उपलब्धियां अभिप्रेत हैं जो किसी व्यक्ति को उसके नियोजन से, चाहे वह कर्तव्यारूढ़ हो या छुट्टी पर हो, व्युत्पन्न होती है।]

[3][स्पष्टीकरण [4][3]—खण्ड (ठ) में समुचित सरकार से अभिप्रेत है—

(i) केन्द्रीय सरकार की सेवा में के किसी [5][व्यक्ति] अथवा [6][रेल प्रशासन] के या छावनी प्राधिकारी के या महापत्तन के पत्तन प्राधिकारी के किसी सेवक के बारे में, केन्द्रीय सरकार;

[7]* * * *

(iii) [8][सरकार के किसी अन्य सेवक] या किसी अन्य [9]*** स्थानीय प्राधिकारी के सेवक के बारे में, राज्य सरकार।]

[3][स्पष्टीकरण 4—इस परन्तुक के प्रयोजनों के लिए, "मजदूरी" के अन्तर्गत बोनस है और "श्रमिक" के अन्तर्गत कुशल, अकुशल या अर्धकुशल श्रमिक है।

स्पष्टीकरण 5— इस परन्तुक के प्रयोजनों के लिए "कृषक" से ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है जो स्वयं खेती करता है और जो अपनी जीविका के लिए मुख्यतः कृषि-भूमि की आय पर निर्भर है चाहे स्वामी के रूप में या अभिधारी, भागीदार या कृषि श्रमिक के रूप में।

स्पष्टीकरण 6—स्पष्टीकरण 5 के प्रयोजनों के लिए, कोई कृषक स्वयं खेती करने वाला समझा जाएगा, यदि वह—

(क) अपने श्रम द्वारा; अथवा

(ख) अपने कुटुम्ब के किसी सदस्य के श्रम द्वारा; अथवा

(ग) नकद या वस्तु के रूप में (जो उपज का अंश न हो) या दोनों में संदेय मजदूरियों पर सेवकों या श्रमिकों द्वारा, खेती करता है।]

[8][(1क) तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी, वह करार, जिसके द्वारा वह व्यक्ति इस धारा के अधीन छूट के फायदे का अधित्यजन करने का करार करता है, शून्य होगा।]

(2) इस धारा की किसी भी बात के बारे में यह नहीं समझा जाएगा कि वह [10]*** किन्हीं ऐसे गृहों या अन्य निर्माणों को (उनके मलबों और आस्थानों के तथा उनसे अव्यवहित रूप से अनुलग्न और उनके उपभोग के लिए आवश्यक भूमि के सहित) ऐसे किसी गृह निर्माण, आस्थान या भूमि के भाटक के लिए डिक्रियों में निष्पादन में कुर्की या विक्रय से छूट देती है।[10]***

[10]* * * *

61. कृषि-उपज को भागतः छूट— [11]*** राज्य सरकार राजपत्र में प्रकाशित साधारण या विशेष आदेश द्वारा यह घोषणा कर सकेगी कि कृषि-उपज या कृषि के किसी वर्ग के ऐसे प्रभाग को जिसकी बाबत राज्य सरकार को यह प्रतीत होता है कि वह उस आगामी फसल तक उस भूमि पर सम्यक् खेती करने के लिए तथा निर्णीत-ऋणी और उसके कुटुम्ब के निर्वाह के लिए उपबन्ध करने के प्रयोजन के लिए आवश्यक है, सभी कृषकों या कृषकों के किसी वर्ग की दशा में डिक्री के निष्पादन में कुर्की या विक्रय के दायित्व से छूट होगी।

62. निवास-गृह में सम्पत्ति का अभिग्रहण— (1) कोई भी व्यक्ति इस संहिता के अधीन जंगम संपत्ति का अभिग्रहण निर्दिष्ट या प्राधिकृत करने वाली किसी आदेशिका का निष्पादन करते हुए किसी निवास-गृह में सूर्यास्त के पश्चात् और सूर्योदय के पूर्व प्रवेश नहीं करेगा।

---

1. 1937 के अधिनियम सं० 9 की धारा 2 द्वारा (1-6-1937 से) पूर्ववर्ती खंड (ज) और (झ) के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 23 द्वारा (1-2-1977 से) कुछ शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. भारत शासन (भारतीय विधि अनुकूलन) आदेश, 1937 द्वारा अंतःस्थापित।
4. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 23 द्वारा (1-2-1977 से), "संख्या 3" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
5. 1953 के अधिनियम सं० 5 की धारा 2 द्वारा "लोक अधिकारी" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
6. विधि अनुकूलन आदेश, 1950 द्वारा "फेडरल रेल" के स्थान पर प्रतिस्थापित
7. भारतीय स्वतंत्रता (केन्द्रीय अधिनियमों और अध्यादेशों का अनुकूलन) आदेश, 1948 द्वारा खंड (ii) का लोप किया गया।
8. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 23 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
9. विधि अनुकूलन आदेश, 1950 द्वारा "रेल या" शब्दों का लोप किया गया।
10. 1914 के अधिनियम सं० 10 की धारा 3 और अनुसूची 2 द्वारा अक्षर और कोष्ठक "(क)", शब्द "या" और खंड (ख) निरसित।
11. 1920 के अधिनियम सं० 38 की धारा 2 और अनुसूची 1 के भाग 1 द्वारा "सपरिषद् गवर्नर जनरल की पूर्व मंजूरी से" शब्दों का लोप किया गया।

(2) निवास-गृह का कोई भी बाहरी द्वार तब तक तोड़कर नहीं खोला जाएगा जब तक कि ऐसा निवास-गृह निर्णीत-ऋणी के अधिभोग में न हो और वह उस तक पहुंच होने देने से मना न करता हो या पहुंच होने देना किसी भांति निवारित न करता हो, किन्तु जबकि ऐसी किसी आदेशिका का निष्पादन करने वाले व्यक्ति ने किसी निवास-गृह में सम्यक् रूप से प्रवेश कर लिया है, तब वह किसी ऐसे कमरे का द्वार तोड़ सकेगा जिसके बारे में उसे यह विश्वास करने का कारण है कि उसमें ऐसी कोई सम्पत्ति है।

(3) जहां निवास-गृह का कमरा किसी ऐसी स्त्री के वास्तविक अधिभोग में है जो देश की रूढ़ियों के अनुसार लोगों के सामने नहीं आती है वहां आदेशिका का निष्पादन करने वाला व्यक्ति ऐसी स्त्री को यह सूचना देगा कि वह वहां से हट जाने के लिए स्वतंत्र है और उसे हट जाने के लिए युक्तियुक्त समय अनुज्ञात करने और हट जाने के लिए उसे युक्तियुक्त सुविधा देने के पश्चात् और साथ ही उस सम्पत्ति के छिपा कर हटाए जाने का निवारण करने के लिए ऐसी हर एक पूर्वाविधानी बरत करके, जो इन उपबंधों से संगत है, वह सम्पत्ति के अभिग्रहण के प्रयोजन से ऐसे कमरे में प्रवेश कर सकेगा।

63. कई न्यायालयों की डिक्रियों के निष्पादन में कुर्क की गई सम्पत्ति—(1) जहां वह सम्पत्ति, जो किसी न्यायालय की अभिरक्षा में नहीं है, एक से अधिक न्यायालयों की डिक्रियों के निष्पादन में कुर्क की हुई है वहां वह न्यायालय, जो ऐसी सम्पत्ति को प्राप्त या आप्त करेगा और उसके संबंध में किसी दावे का या उसकी कुर्की के संबंध में किसी आक्षेप का अवधारण करेगा, वह न्यायालय होगा जो सबसे ऊंची श्रेणी का है या जहां ऐसे न्यायालयों के बीच में श्रेणी का कोई अन्तर नहीं है वहां वह न्यायालय होगा, जिसकी डिक्री के अधीन सम्पत्ति सबसे पहले कुर्क की गई थी।

(2) इस धारा की कोई भी बात ऐसी डिक्रियों में से एक का निष्पादन करने वाले न्यायालय द्वारा की गई किसी कार्यवाही को अविधिमान्य करने वाली नहीं समझी जाएगी।

[1][**स्पष्टीकरण**—उपधारा (2) के प्रयोजनों के लिए, "न्यायालय द्वारा की गई किसी कार्यवाही" के अन्तर्गत ऐसे डिक्रीदार को जिसने डिक्री के निष्पादन में किए गए विक्रय में सम्पत्ति का क्रय किया है, उसके द्वारा संदेय क्रय कीमत के बराबर मुजरा अनुज्ञात करने का आदेश नहीं है।]

64. कुर्की के पश्चात् सम्पत्ति के प्राइवेट अन्य संक्रामण का शून्य होना—जहां कुर्की की जा चुकी है वहां कुर्क की गई सम्पत्ति या उसमें के किसी हित का ऐसी कुर्की के प्रतिकूल प्राइवेट अन्तरण या परिदान और किसी ऋण, लाभांश या अन्य धन का ऐसी कुर्की के प्रतिकूल निर्णीत-ऋणी को संदाय कुर्की के अधीन प्रवर्तनीय सभी दावों के मुकाबले में शून्य होगा।

स्पष्टीकरण—इस धारा के प्रयोजनों के लिए, कुर्की के अधीन प्रवर्तनीय सभी दावों के अन्तर्गत आस्तियों के आनुपातिक वितरण के दावे भी हैं।

विक्रय

65. क्रेता का हक—जहां किसी डिक्री के निष्पादन में स्थावर सम्पत्ति का विक्रय किया गया है और ऐसा विक्रय आत्यन्तिक हो गया है वहां यह समझा जाएगा कि सम्पत्ति उस समय से, जब उसका विक्रय किया गया है, न कि उस समय से, जब विक्रय आत्यन्तिक हुआ है, क्रेता में निहित हो गई है।

66. [इस आधार पर क्रेता के विरुद्ध वाद नहीं चलेगा कि क्रय वादी की ओर से किया गया था।] बेनामी संव्यवहार (प्रतिषेध) अधिनियम, 1988 (1988 का 45) की धारा 7 द्वारा (19-5-1988 से) निरसित।

67. धन के संदाय की डिक्रियों के निष्पादन में भूमि के विक्रय के बारे में नियम बनाने की राज्य सरकार की शक्ति—[2][(1)] [3]***राज्य सरकार किसी भी स्थानीय क्षेत्र के लिए ऐसे नियम, जो धन के संदाय की डिक्रियों के निष्पादन में भूमि में के हितों के किसी वर्ग के विक्रय की बाबत शर्त अधिरोपित करते हों, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा बना सकेगी यदि ऐसे हित इतने अनिश्चित या अनवधारित हों कि उनका मूल्य नियत करना राज्य सरकार की राय में असंभव हो।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 24 द्वारा (1-2-1977 से) अंतःस्थापित।
2. 1914 के अधिनियम सं० 1 की धारा 3 द्वारा धारा 67 को उस धारा की उपधारा (1) के रूप में पुनःसंख्यांकित किया गया।
3. 1920 के अधिनियम सं० 38 की धारा 2 और अनुसूची 1 के भाग 1 द्वारा "सपरिषद् गवर्नर जनरल की पूर्व मंजूरी से" शब्दों का लोप किया गया।

(भाग 2— निष्पादन। विक्रय। स्थावर सम्पत्ति के विरुद्ध डिक्रियों का निष्पादन करने की शक्ति का कलक्टर को प्रत्यायोजन। आस्तियों का वितरण।)

[1][(2) यदि उस तारीख को, जिस तारीख को यह संहिता किसी स्थानीय क्षेत्र में प्रवर्तन में आई थी, डिक्रियों के निष्पादन में भूमि के विक्रय के बारे में कोई विशेष नियम वहां प्रवृत्त थे तो राज्य सरकार राजपत्र में अधिसूचना द्वारा ऐसे नियमों के बारे में यह घोषित कर सकेगी कि वे प्रवृत्त हैं या [2]*** वैसी ही अधिसूचना द्वारा उन्हें उपान्तरित कर सकेगी।

ऐसे चालू रखे गए या ऐसे उपान्तरित नियम, इस उपधारा द्वारा प्रदत्त शक्तियों के प्रयोग में निकाली गई हर अधिसूचना में उपवर्णित होंगे।]

[3][(3) इस धारा के अधीन बनाया गया प्रत्येक नियम, बनाए जाने के पश्चात्, यथाशीघ्र राज्य विधान-मंडल के समक्ष रखा जाएगा।]

स्थावर सम्पत्ति के विरुद्ध डिक्रियों का निष्पादन करने की शक्ति का कलक्टर को प्रत्यायोजन

68—72. सिविल प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 1956 (1956 का 66) की धारा 7 द्वारा निरसित।

आस्तियों का वितरण

73. निष्पादन-विक्रय के आगमों का डिक्रीदारों के बीच आनुपातिक रूप से वितरित किया जाना—(1) जहां आस्तियां न्यायालय द्वारा धारित हैं और ऐसी आस्तियों की अभिप्राप्ति के पूर्व एक से अधिक व्यक्तियों ने धन के संदाय की ऐसी डिक्रियों के, जो एक ही निर्णीत-ऋणी के विरुद्ध पारित है, निष्पादन के लिए आवेदन न्यायालय से किए हैं और उनकी तुष्टि अभिप्राप्त नहीं की है, वहां आपन के खर्चों को काट लेने के पश्चात् वे आस्तियां ऐसे सभी व्यक्तियों के बीच आनुपातिक रूप से वितरित की जाएंगी:

परन्तु—

(क) जहां कोई सम्पत्ति बंधक या भार के अधीन विक्रय की गई है वहां बन्धकदार या विल्लंगमदार ऐसे विक्रय से पैदा किसी अधिशेष में से अंश पाने के हकदार नहीं होंगे;

(ख) जहां डिक्री के निष्पादन में विक्रय के दायित्वाधीन कोई सम्पत्ति बन्धक या भार के अधीन है वहां न्यायालय बन्धकदार या विल्लंगमदार की सहमति से और बन्धकदार या विल्लंगमदार को विक्रय के आगमों में वही हित देते हुए, जो उसका विक्रीत सम्पत्ति में था, सम्पत्ति को बन्धक या भार से मुक्त रूप में विक्रय करने के लिए आदेश दे सकेगा;

(ग) जहां कोई स्थावर सम्पत्ति ऐसी डिक्री के निष्पादन में विक्रय की जाती है जो उस पर विल्लंगम के उन्मोचन के लिए उसके विक्रय किए जाने का आदेश देती है वहां विक्रय के आगम निम्नलिखित के अनुसार उपयोजित किए जाएंगे—

प्रथमतः विक्रय के व्ययों को चुकाने में;

द्वितीयतः डिक्री के अधीन शोध्य रकम के उन्मोचन में;

तृतीयतः पाश्चिक विल्लंगमों पर (यदि कोई हों) शोध्य ब्याज और मूलधन के उन्मोचन में; तथा

चतुर्थतः निर्णीत-ऋणी के विरुद्ध धन के संदाय की डिक्रियों के ऐसे धारकों के बीच आनुपातिक रूप में, जिन्होंने ऐसे विक्रय का आदेश देने वाली डिक्री पारित करने वाले न्यायालय से, सम्पत्ति के विक्रय के पूर्व ऐसी डिक्रियों के निष्पादन के लिए आवेदन कर दिया है और उनकी तुष्टि अभिप्राप्त नहीं की है।

(2) जहां वे सभी या कोई आस्तियां जो इस धारा के अधीन आनुपातिक रूप से वितरित किए जाने के लिए दायी हैं, ऐसे व्यक्ति को दे दी जाती हैं जो उन्हें प्राप्त करने का हकदार नहीं है वहां ऐसा हकदार कोई भी व्यक्ति उन आस्तियों का प्रतिदाय विवश करने के लिए ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध वाद ला सकेगा।

(3) इस धारा की कोई भी बात सरकार के किसी भी अधिकार पर प्रभाव नहीं डालेगी।

---

1. 1914 के अधिनियम सं० 1 की धारा 3 द्वारा जोड़ा गया।
2. 1920 के अधिनियम सं० 38 की धारा 2 और अनुसूची 1 के भाग 1 द्वारा "सपरिषद् गवर्नर जनरल की पूर्व मंजूरी से" शब्दों का लोप किया गया।
3. 1983 के अधिनियम सं० 20 की धारा 2 और अनुसूची द्वारा (15-3-1984 से) अंतःस्थापित।

निष्पादन का प्रतिरोध

74. निष्पादन का प्रतिरोध—जहां न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि स्थावर सम्पत्ति के कब्जे के लिए डिक्री के निष्पादन में विक्रीत स्थावर सम्पत्ति का क्रेता सम्पत्ति पर कब्जा अभिप्राप्त करने में निर्णीत-ऋणी या उसकी ओर से किसी व्यक्ति के द्वारा प्रतिरुद्ध या बाधित किया गया है और ऐसा प्रतिरोध या बाधा किसी न्यायसंगत हेतुक के बिना है, वहां डिक्रीदार या क्रेता की प्रेरणा से न्यायालय निर्णीत-ऋणी या ऐसे अन्य व्यक्ति को ऐसी अवधि के लिए सिविल कारागार में निरुद्ध करने का आदेश दे सकेगा, जो तीस दिन तक की हो सकेगी और यह अतिरिक्त निदेश दे सकेगा कि डिक्रीदार या विक्रेता को सम्पत्ति का कब्जा दिलाया जाए।

भाग 3

आनुषंगिक कार्यवाहियां

कमीशन

75. कमीशन निकालने की न्यायालय की शक्ति—ऐसी शर्तों और परिसीमाओं के अधीन रहते हुए, जो विहित की जाएं, न्यायालय—

(क) किसी व्यक्ति की परीक्षा करने के लिए;

(ख) स्थानीय अन्वेषण करने के लिए;

(ग) लेखाओं की परीक्षा या उनका समायोजन करने के लिए; अथवा

(घ) विभाजन करने के लिए;

[1][(ङ) कोई वैज्ञानिक, तकनीकी या विशेषज्ञ अन्वेषण करने के लिए;

(च) ऐसी सम्पत्ति का विक्रय करने के लिए जो शीघ्र और प्रकृत्या क्षयशील है और जो वाद का अवधारण लम्बित रहने तक न्यायालय की अभिरक्षा में है;

(छ) कोई अनुसचिवीय कार्य करने के लिए,]

कमीशन निकाल सकेगा।

76. अन्य न्यायालय को कमीशन—(1) किसी व्यक्ति की परीक्षा करने के लिए कमीशन उस राज्य से, जिसमें उसे निकालने वाला न्यायालय स्थित है, भिन्न राज्य में स्थित किसी ऐसे न्यायालय को निकाला जा सकेगा (जो उच्च न्यायालय नहीं है और) जो उस स्थान में अधिकारिता रखता है जिसमें वह व्यक्ति निवास करता है जिसकी परीक्षा की जानी है।

(2) उपधारा (1) के अधीन किसी व्यक्ति की परीक्षा करने के लिए कमीशन को प्राप्त करने वाला हर न्यायालय उसके अनुसरण में उस व्यक्ति की परीक्षा करेगा या कराएगा और जब कमीशन सम्यक् रूप से निष्पादित किया गया है तब वह, उसके अधीन लिए गए साक्ष्य सहित, उस न्यायालय को लौटा दिया जाएगा जिसने उसे निकाला था, किन्तु यदि कमीशन निकालने के आदेश द्वारा अन्यथा निदिष्ट किया गया है तो कमीशन ऐसे आदेश के निबन्धनों के अनुसार लौटाया जाएगा।

77. अनुरोध-पत्र—कमीशन निकालने के बदले न्यायालय ऐसे व्यक्ति की परीक्षा करने के लिए अनुरोध-पत्र निकाल सकेगा जो ऐसे स्थान में निवास करता है जो [2][भारत] के भीतर नहीं है।

[3][**78. विदेशी न्यायालयों द्वारा निकाले गए कमीशन**—ऐसी शर्तों और परिसीमाओं के अधीन रहते हुए जो विहित की जाएं, साक्षियों की परीक्षा करने के लिए कमीशनों के निष्पादन और लौटाने से सम्बन्ध रखने वाले उपबन्ध उन कमीशनों को लागू होंगे जो,—

(क) भारत के उन भागों में जिन पर इस संहिता का विस्तार नहीं है, स्थित न्यायालयों द्वारा या उनकी प्रेरणा से निकाले गए हों, अथवा

---

1. 1976 के अधिनियम सं॰ 104 की धारा 26 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
2. 1951 के अधिनियम सं॰ 2 की धारा 3 द्वारा "राज्यों" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. 1951 के अधिनियम सं॰ 2 की धारा 11 द्वारा पूर्ववर्ती धारा के स्थान पर प्रतिस्थापित।

(ख) केन्द्रीय सरकार के प्राधिकार द्वारा भारत से बाहर स्थापित या चालू रखे गए न्यायालयों द्वारा या उनकी प्रेरणा से निकाले गए हों; अथवा

(ग) भारत से बाहर के किसी राज्य या देश में के न्यायालयों द्वारा या उनकी प्रेरणा से निकाले गए हों।]

भाग 4

विशिष्ट मामलों में वाद

सरकार द्वारा या उसके विरुद्ध वाद या अपनी पदीय हैसियत में लोक अधिकारी द्वारा या उसके विरुद्ध वाद

[1][79. सरकार द्वारा या उसके विरुद्ध वाद—सरकार द्वारा या उसके विरुद्ध वाद में, यथास्थिति, वादी या प्रतिवादी के रूप में नामित किया जाने वाला प्राधिकारी,—

(क) केन्द्रीय सरकार द्वारा या उसके विरुद्ध वाद की दशा में, [2][भारत संघ] होगा; तथा

(ख) किसी राज्य सरकार द्वारा या उसके विरुद्ध वाद की दशा में, वह राज्य होगा।]

80. सूचना—[3][(1)] [4][उसके सिवाय जैसा उपधारा (2) में उपबन्धित है,] [5][सरकार के (जिसके अंतर्गत जम्मू-कश्मीर राज्य की सरकार भी आती है) विरुद्ध] या ऐसे कार्य की बाबत जिसके बारे में यह तात्पर्यित है कि वह ऐसे लोक अधिकारी द्वारा अपनी पदीय हैसियत में किया गया है, लोक अधिकारी के विरुद्ध [4][कोई वाद तब तक] [5][संस्थित नहीं किया जाएगा] जब तक वाद-हेतुक का, वादी के नाम, वर्णन और निवास-स्थान का और जिस अनुतोष का वह दावा करता है उसका, कथन करने वाली लिखित सूचना—

(क) केन्द्रीय सरकार के विरुद्ध वाद की दशा में, [6][वहां के सिवाय जहां वह रेल से संबंधित है], उस सरकार के सचिव को;

[7][[8][(ख)] केन्द्रीय सरकार के विरुद्ध वाद की दशा में, जहां वह रेल से संबंधित है, उस रेल के प्रधान प्रबन्धक को;]

[8]* * * * * *

[9][(खख) जम्मू-कश्मीर राज्य की सरकार के विरुद्ध वाद की दशा में, उस सरकार के मुख्य सचिव को या उस सरकार द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत किसी अन्य अधिकारी को;]

(ग) [10][किसी अन्य राज्य सरकार] के विरुद्ध वाद की दशा में, उस सरकार के सचिव को या जिले के कलक्टर को,

[11]* * * *

[12][परिदत्त किए जाने या उसके कार्यालय में छोड़े जाने के,] और लोक अधिकारी की दशा में उसे परिदत्त किए जाने या उसके

---

1. भारतीय स्वतंत्रता (केन्द्रीय अधिनियमों और अध्यादेशों का अनुकूलन) आदेश, 1948 द्वारा पूर्ववर्ती धारा के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. विधि अनुकूलन आदेश, 1950 द्वारा "भारत डोमिनियन" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 27 द्वारा (1-2-1977 से) धारा 80 को उस धारा की उपधारा (1) के रूप में पुनःसंख्यांकित किया गया।
4. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 27 द्वारा (1-2-1977 से) "कोई वाद तब तक संस्थित नहीं किया जाएगा" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
5. 1963 के अधिनियम सं० 26 की धारा 3 द्वारा (5-6-1964 से) "सरकार के विरुद्ध संस्थित किया जाएगा" के स्थान पर प्रतिस्थापित। रेखांकित शब्द विधि अनुकूलन आदेश, 1948 द्वारा "क्राउन के विरुद्ध संस्थित" शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित किए गए थे।
6. 1948 के अधिनियम सं० 6 की धारा 2 द्वारा अन्तःस्थापित।
7. 1948 के अधिनियम सं० 6 की धारा 2 द्वारा खण्ड (कक) के रूप में अन्तःस्थापित।
8. भारतीय स्वतंत्रता (केन्द्रीय अधिनियम और अध्यादेश अनुकूलन) आदेश, 1948 द्वारा खण्ड (कक) को खण्ड (ख) के रूप में पुनः अक्षरांकित किया गया और पूर्ववर्ती खण्ड (ख) का लोप किया गया।
9. 1963 के अधिनियम सं० 26 की धारा 3 द्वारा (5-6-1964 से) अन्तःस्थापित।
10. 1963 के अधिनियम सं० 26 की धारा 3 द्वारा (5-6-1964 से) "राज्य सरकार" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
11. भारतीय स्वतंत्रता (केन्द्रीय अधिनियमों और अध्यादेशों का अनुकूलन) आदेश, 1948 द्वारा "और" शब्द तथा खण्ड (घ) का लोप किया गया।
12. भारत शासन (भारतीय विधि अनुकूलन) आदेश, 1937 द्वारा "सेक्रेटरी आफ स्टेट इन काउन्सिल की दशा में, स्थानीय सरकार के सचिव को या जिले के कलक्टर को परिदत्त किए जाने या उसके कार्यालय में छोड़ जाने के" के स्थान पर प्रतिस्थापित।

कार्यालय में छोड़े जाने के पश्चात्, दो मास का अवसान न हो गया हो, और वादपत्र में यह कथन अन्तर्विष्ट होगा कि ऐसी सूचना ऐसे परिदत्त कर दी गई है या छोड़ दी गई है।

[1][(2) सरकार के (जिसके अन्तर्गत जम्मू-कश्मीर राज्य की सरकार भी आती है,) विरुद्ध या ऐसे कार्य की बाबत जिसके बारे में यह तात्पर्यित है कि वह ऐसे लोक अधिकारी द्वारा अपनी पदीय हैसियत में किया गया है, लोक अधिकारी के विरुद्ध, कोई अत्यावश्यक या तुरन्त अनुतोष अभिप्राप्त करने के लिए कोई वाद, न्यायालय की इजाजत से, उपधारा (1) द्वारा यथाअपेक्षित किसी सूचना की तामील किए बिना, संस्थित किया जा सकेगा; किन्तु न्यायालय वाद में अनुतोष, चाहे अन्तरिम या अन्यथा, यथास्थिति, सरकार या लोक अधिकारी को वाद में आवेदित अनुतोष की बाबत हेतुक दर्शित करने का उचित अवसर देने के पश्चात् ही प्रदान करेगा, अन्यथा नहीं:

परन्तु यदि न्यायालय का पक्षकारों को सुनने के पश्चात्, यह समाधान हो जाता है कि वाद में कोई अत्यावश्यक या तुरन्त अनुतोष प्रदान करने की आवश्यकता नहीं है तो वह वादपत्र को वापस कर देगा कि उसे उपधारा (1) की अपेक्षाओं का पालन करने के पश्चात् प्रस्तुत किया जाए।

(3) सरकार के विरुद्ध या ऐसे कार्य की बाबत जिसके बारे में यह तात्पर्यित है कि वह ऐसे लोक अधिकारी द्वारा अपनी पदीय हैसियत में किया गया है, लोक अधिकारी के विरुद्ध संस्थित किया गया कोई वाद केवल इस कारण खारिज नहीं किया जाएगा कि उपधारा (1) में निर्दिष्ट सूचना में कोई त्रुटि या दोष है, यदि ऐसी सूचना में—

(क) वादी का नाम, वर्णन और निवास-स्थान इस प्रकार दिया गया है जो सूचना की तामील करने वाले व्यक्ति को शनाख्त करने में समुचित प्राधिकारी या लोक अधिकारी को समर्थ करे और ऐसी सूचना उपधारा (1) में विनिर्दिष्ट समुचित प्राधिकारी के कार्यालय में परिदत्त कर दी गई है या छोड़ दी गई है, तथा

(ख) वाद-हेतुक और वादी द्वारा दावा किया गया अनुतोष सारतः उपदर्शित किया गया है।]

81. गिरफ्तारी और स्वीय उपसंजाति से छूट—ऐसे किसी भी कार्य के लिए, जो लोक अधिकारी द्वारा उसकी पदीय हैसियत में किया गया तात्पर्यित है, उसके विरुद्ध संस्थित किए गए वाद में—

(क) डिक्री के निष्पादन में से अन्यथा न तो गिरफ्तार किए जाने का दायित्व प्रतिवादी पर और न कुर्क किए जाने का दायित्व उसकी सम्पत्ति पर होगा; तथा

(ख) जहां न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि प्रतिवादी लोक सेवा का अपाय किए बिना अपने कर्तव्य से अनुपस्थित नहीं हो सकता वहां, वह उसे स्वीय उपसंजाति से छूट दे देगा।

82. डिक्री का निष्पादन—[2][(1) जहां सरकार द्वारा या उसके विरुद्ध या ऐसे कार्य की बाबत जिसके बारे में यह तात्पर्यित है कि वह ऐसे लोक अधिकारी द्वारा अपनी पदीय हैसियत में किया गया है, उसके द्वारा उसके विरुद्ध किसी वाद में, यथास्थिति, भारत संघ या किसी राज्य या लोक अधिकारी के विरुद्ध डिक्री पारित की जाती है वहां ऐसी डिक्री उपधारा (2) के उपबंधों के अनुसार ही निष्पादित की जाएगी, अन्यथा नहीं।]

(2) [3][ऐसी डिक्री] की तारीख से संगणित तीन मास की अवधि तक उस डिक्री के तुष्ट न होने पर ही किसी ऐसी डिक्री के निष्पादन का आदेश निकाला जाएगा।

[4][(3) उपधारा (1) और उपधारा (2) के उपबन्ध किसी आदेश या पंचाट के सम्बन्ध में ऐसे लागू होंगे जैसे वे डिक्री के संबंध में लागू होते हैं, यदि वह आदेश या पंचाट—

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 27 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 28 द्वारा (1-2-1977 से) उपधारा (1) के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 28 द्वारा (1-2-1977 से) "ऐसी रिपोर्ट" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
4. 1949 के अधिनियम सं० 32 की धारा 2 द्वारा अन्तःस्थापित।

(क) [1][भारत संघ] या किसी राज्य के या यथापूर्वोक्त किसी कार्य के बारे में किसी लोक अधिकारी के विरुद्ध, चाहे न्यायालय द्वारा या चाहे किसी अन्य प्राधिकारी द्वारा, दिया गया हो, तथा

(ख) इस संहिता या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि के उपबन्धों के अधीन ऐसे निष्पादित किए जाने के योग्य हो मानो वह डिक्री हो।]

[2][अन्य देशियों द्वारा और विदेशी शासकों, राजदूतों और दूतों द्वारा या उनके विरुद्ध वाद

83. अन्य देशीय कब वाद ला सकेंगे—अन्य देशीय शत्रु, जो केन्द्रीय सरकार की अनुज्ञा से भारत में निवास कर रहे हैं, और अन्य देशीय मित्र किसी भी ऐसे न्यायालय में, जो वाद का विचारण करने के लिए अन्यथा सक्षम हैं, इस प्रकार वाद ला सकेंगे मानो वे भारत के नागरिक हों, किन्तु अन्य देशीय शत्रु, जो ऐसी अनुज्ञा के बिना भारत में निवास कर रहे हैं या जो विदेश में निवास कर रहे हैं ऐसे किसी भी न्यायालय में वाद नहीं लाएंगे।

स्पष्टीकरण—ऐसे हर व्यक्ति के बारे में जो ऐसे विदेश में निवास कर रहा है जिसकी सरकार भारत से युद्धस्थिति में है और जो केन्द्रीय सरकार द्वारा इस निमित्त दी गई अनुज्ञप्ति के बिना उस देश में कारबार कर रहा है, इस धारा के प्रयोजनों के लिए यह समझा जाएगा कि वह ऐसा अन्य देशीय शत्रु है जो विदेश में निवास कर रहा है।

84. विदेशी राज्य कब वाद ला सकेंगे—कोई विदेशी राज्य किसी भी सक्षम न्यायालय में वाद ला सकेगा:

परन्तु यह तब जब कि वाद का उद्देश्य ऐसे राज्य के शासक में या ऐसे राज्य के किसी अधिकारी में उसकी लोक हैसियत में निहित प्राइवेट अधिकार का प्रवर्तन कराना हो।

85. विदेशी शासकों की ओर से अभियोजन या प्रतिरक्षा करने के लिए सरकार द्वारा विशेष रूप से नियुक्त किए गए व्यक्ति—(1) विदेशी राज्य के शासक के अनुरोध पर या ऐसे शासक की ओर से कार्य करने की केन्द्रीय सरकार की राय में सक्षम किसी व्यक्ति के अनुरोध पर, केन्द्रीय सरकार ऐसे शासक की ओर से किसी वाद का अभियोजन करने या प्रतिरक्षा करने के लिए किन्हीं व्यक्तियों को आदेश द्वारा नियुक्त कर सकेगी और ऐसे नियुक्त किए गए कोई भी व्यक्ति ऐसे मान्यताप्राप्त अभिकर्ता समझे जाएंगे जो ऐसे शासकों की ओर से इस संहिता के अधीन उपसंजात हो सकेंगे और कार्य और आवेदन कर सकेंगे।

(2) इस धारा के अधीन नियुक्ति किसी विनिर्दिष्ट वाद के या अनेक विनिर्दिष्ट वादों के प्रयोजन के लिए या ऐसे सभी वादों के प्रयोजन के लिए की जा सकेगी जिनका ऐसे शासक की ओर से अभियोजन या प्रतिरक्षा करना समय-समय पर आवश्यक हो।

(3) इस धारा के अधीन नियुक्त व्यक्ति ऐसे किसी वाद या किन्हीं वादों में उपसंजात होने तथा आवेदन और कार्य करने के लिए किन्हीं अन्य व्यक्तियों को ऐसे प्राधिकृत या नियुक्त कर सकेगा मानो वह स्वयं ही उसका या उनका पक्षकार हो।

86. विदेशी राज्यों, राजदूतों और दूतों के विरुद्ध वाद—(1) विदेशी राज्य [3]*** पर कोई भी वाद किसी भी न्यायालय में, जो अन्यथा ऐसे वाद का विचारण करने के लिए सक्षम है, केन्द्रीय सरकार की ऐसी सहमति के बिना नहीं लाया जा सकेगा जो उस सरकार के किसी सचिव द्वारा लिखित रूप में प्रमाणित की गई हो:

परन्तु यह व्यक्ति, जो स्थावर सम्पत्ति के अधिधारी के तौर पर ऐसे [4][विदेशी राज्य] पर, जिससे वह सम्पत्ति को धारण करता है या धारण करने का दावा करता है, यथापूर्वोक्त सहमति के बिना वाद ला सकेगा।

---

1. विधि अनुकूलन आदेश, 1950 द्वारा "भारत के डोमिनियन" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1951 के अधिनियम सं० 2 की धारा 12 द्वारा पूर्ववर्ती शीर्ष और धारा 83 से 87 तक के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. 1970 के अधिनियम सं० 104 की धारा 29 द्वारा (1-2-1977 से) "के किसी भी शासक" शब्दों का लोप किया गया।
4. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 29 द्वारा (1-2-1977 से) "शासक" के स्थान पर प्रतिस्थापित।

(2) ऐसी सहमति विनिर्दिष्ट वाद या अनेक विनिर्दिष्ट वादों या किसी या किन्हीं विनिर्दिष्ट वर्ग या वर्गों के समस्त वादों के बारे में दी जा सकेगी और वह किसी वाद या वादों के वर्ग की दशा में उस न्यायालय को भी विनिर्दिष्ट कर सकेगी, जिसमें उस [1][विदेशी राज्य] के विरुद्ध वाद लाया जा सकेगा, किन्तु वह तब तक नहीं दी जाएगी जब तक केन्द्रीय सरकार को यह प्रतीत नहीं होता है कि वह [1][विदेशी राज्य]—

(क) उस व्यक्ति के विरुद्ध जो उस पर वाद लाने की वांछा करता है, उस न्यायालय में वाद संस्थित कर चुका है, अथवा

(ख) स्वयं या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा उस न्यायालय की अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर व्यापार करता है, अथवा

(ग) उन सीमाओं के भीतर स्थित स्थावर सम्पत्ति पर कब्जा रखता है और उसके विरुद्ध ऐसी सम्पत्ति के बारे में या उस धन के बारे में जिसका भार उस सम्पत्ति पर है, वाद लाया जाना है, अथवा

(घ) इस धारा द्वारा उसे दिए गए विशेषाधिकार का अधित्यजन अभिव्यक्त या विवक्षित रूप से कर चुका है।

[2][(3) केन्द्रीय सरकार के सचिव द्वारा लिखित रूप में प्रमाणित कोई डिक्री विदेशी राज्य की सम्पत्ति के विरुद्ध केन्द्रीय सरकार की सहमति से ही निष्पादित की जाएगी अन्यथा नहीं।]

(4) इस धारा के पूर्ववर्ती उपबन्ध निम्नलिखित के सम्बन्ध में वैसे ही लागू होंगे [3][जैसे वे विदेशी राज्य के संबंध में लागू होते हैं]—

[4][(क) विदेशी राज्य का कोई शासक;]

[5][(कक)] विदेशी राज्य का कोई भी राजदूत या दूत;

(ख) कामनवेल्थ देश का कोई भी उच्चायुक्त; तथा

(ग) [3][विदेशी राज्य के कर्मचारिवृन्द का या विदेशी राज्य के राजदूत या दूत के] या कामनवेल्थ देश के उच्चायुक्त के कर्मचारिवृन्द या अनुचर वर्ग का कोई भी ऐसा सदस्य जिसे केन्द्रीय सरकार साधारण या विशेष आदेश द्वारा इस निमित्त विनिर्दिष्ट करे।

[4][(5) इस संहिता के अधीन निम्नलिखित व्यक्ति गिरफ्तार नहीं किए जाएंगे, अर्थात्:—

(क) विदेशी राज्य का कोई शासक;

(ख) विदेशी राज्य का कोई राजदूत या दूत;

(ग) कामनवेल्थ देश का कोई उच्चायुक्त;

(घ) विदेशी राज्य के कर्मचारिवृन्द का या विदेशी राज्य के शासक, राजदूत या दूत के या कामनवेल्थ देश के उच्चायुक्त के कर्मचारिवृन्द या अनुचर वर्ग का कोई भी ऐसा सदस्य जिसे केन्द्रीय सरकार साधारण या विशेष आदेश द्वारा इस निमित्त विनिर्दिष्ट करे।

(6) जहां केन्द्रीय सरकार को उपधारा (1) में निर्दिष्ट सहमति देने का अनुरोध किया जाता है वहां केन्द्रीय सरकार ऐसे अनुरोध को स्वीकार करने से पूर्णतः या भागतः इंकार करने से पहले अनुरोध करने वाले व्यक्ति को सुनवाई का उचित अवसर देगी।]

87. विदेशी शासकों का वादों के पक्षकारों के रूप में अभिधान—विदेशी राज्य का शासक अपने राज्य के नाम से वाद ला सकेगा और उसके विरुद्ध वाद उसके राज्य के नाम से लाया जाएगा:

परन्तु धारा 86 में निर्दिष्ट सहमति देने में केन्द्रीय सरकार शासक के विरुद्ध वाद किसी अभिकर्ता के नाम से या किसी अन्य नाम से लाए जाने का निदेश दे सकेगी।

87क. "विदेशी राज्य" और "शासक" की परिभाषाएं—(1) इस भाग में—

(क) "विदेशी राज्य" से भारत से बाहर का ऐसा कोई राज्य अभिप्रेत है जो केन्द्रीय सरकार द्वारा मान्यताप्राप्त है; तथा

(ख) विदेशी राज्य के संबंध में "शासक" से ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है जो उस राज्य के अधिपति के रूप में केन्द्रीय सरकार द्वारा तत्समय मान्यताप्राप्त है।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 29 द्वारा (1-2-1977 से) "शासक" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 29 द्वारा (1-2-1977 से) उपधारा (3) के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 29 द्वारा (1-2-1977 से) कुछ शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।
4. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 29 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
5. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 29 द्वारा (1-2-1977 से) खंड (क) को खंड (कक) के रूप में पुनः अक्षरांकित किया गया।

(2) हर न्यायालय इस तथ्य की न्यायिक अवेक्षा करेगा कि—

(क) कोई राज्य केन्द्रीय सरकार द्वारा मान्यताप्राप्त है या नहीं;

(ख) कोई व्यक्ति राज्य के अधिपति के रूप में केंद्रीय सरकार द्वारा मान्यताप्राप्त है या नहीं।

भूतपूर्व भारतीय राज्यों के शासकों के विरुद्ध वाद

87ख. भूतपूर्व भारतीय राज्यों के शासकों को धारा 85 और धारा 86 का लागू होना— [1][(1) किसी भूतपूर्व भारतीय राज्य के शासक द्वारा या उसके विरुद्ध किसी वाद की दशा में जो पूर्णतः या भागतः ऐसे वाद हेतुक पर आधारित है जो संविधान के प्रारम्भ से पूर्व उद्भूत हुआ है या ऐसे वाद से उद्भूत होने वाली किसी कार्यवाही की दशा में धारा 85 और धारा 86 की उपधारा (1) और (3) के उपबन्ध ऐसे शासक के सम्बन्ध में उसी प्रकार लागू होंगे जैसे वे किसी विदेशी राज्य के शासक के सम्बन्ध में लागू होते हैं।]

(2) इस धारा में—

(क) "भूतपूर्व भारतीय राज्य" से वह भारतीय राज्य अभिप्रेत है जिसे केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, इस धारा के प्रयोजनों के लिए विनिर्दिष्ट करे;[2]***

[3][(ख) "संविधान का प्रारम्भ" से 26 जनवरी, 1950 अभिप्रेत है; और

(ग) किसी भूतपूर्व भारतीय राज्य के सम्बन्ध में "शासक" का वही अर्थ है जो संविधान के अनुच्छेद 363 में है।]

अन्तराभिवाची

88. अन्तराभिवाची वाद कहां संस्थित किया जा सकेगा—जहां दो या अधिक व्यक्ति उसी ऋण, धनराशि या अन्य जंगम या स्थावर सम्पत्ति के बारे में एक दूसरे के प्रतिकूल दावा किसी ऐसे अन्य व्यक्ति से करते हैं जो प्रभारों या खर्चों से भिन्न किसी हित का उसमें दावा नहीं करता है और जो अधिकारवान दावेदार को उसे देने या परिदत्त करने के लिए तैयार है वहां ऐसा अन्य व्यक्ति समस्त ऐसे दावेदारों के विरुद्ध अन्तराभिवाची वाद उस व्यक्ति के बारे में जिसे संदाय या परिदान किया जाएगा, विनिश्चय अभिप्राप्त करने और अपने लिए परित्राण अभिप्राप्त करने के प्रयोजन से संस्थित कर सकेगा:

परन्तु जहां ऐसा कोई वाद लम्बित है जिसमें सभी पक्षकारों के अधिकार उचित रूप से विनिश्चित किए जा सकते हैं वहां ऐसा कोई अन्तराभिवाची वाद संस्थित नहीं किया जाएगा।

भाग 5

विशेष कार्यवाहियां

माध्यस्थम्

89. [माध्यस्थम्।]—माध्यस्थम् अधिनियम, 1940 (1940 का 10) की धारा 49 और अनुसूची 3 द्वारा निरसित।

विशेष मामला

90. न्यायालय की राय के लिए मामले का कथन करने की शक्ति—जहां कोई व्यक्ति न्यायालय की राय के लिए किसी मामले का कथन करने के लिए लिखित करार कर ले वहां न्यायालय विहित रीति से उसका विचारण और अवधारण करेगा।

---

1. 1972 के अधिनियम सं० 54 की धारा 3 द्वारा उपधारा (1) के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1972 के अधिनियम सं० 54 की धारा 3 द्वारा "और" शब्द का लोप किया गया।
3. 1972 के अधिनियम सं० 54 की धारा 3 द्वारा खण्ड (ख) के स्थान पर प्रतिस्थापित।

[1][लोक न्यूसेंस और लोक पर प्रभाव डालने वाले अन्य दोषपूर्ण कार्य

91. लोक न्यूसेंस और लोक पर प्रभाव डालने वाले अन्य दोषपूर्ण कार्य—[2][(1) लोक न्यूसेंस या अन्य ऐसे दोषपूर्ण कार्य की दशा में जिससे लोक पर प्रभाव पड़ता है या प्रभाव पड़ना संभव है, घोषणा और व्यादेश के लिए या ऐसे अनुतोष के लिए जो मामले की परिस्थितियों में समुचित हो वाद,—

(क) महाधिवक्ता द्वारा, या

(ख) दो या अधिक व्यक्तियों द्वारा, ऐसे लोक न्यूसेंस या अन्य दोषपूर्ण कार्य के कारण ऐसे व्यक्तियों को विशेष नुकसान न होने पर भी न्यायालय की इजाजत से,

संस्थित किया जा सकेगा।]

(2) इस धारा की कोई भी बात वाद के किसी ऐसे अधिकार को परिसीमित करने वाली या उस पर अन्यथा प्रभाव डालने वाली नहीं समझी जाएगी, जिसका अस्तित्व इसके उपबंधों से स्वतंत्र है।

[3]**92. लोक पूर्त कार्य**— (1) पूर्त या धार्मिक प्रकृति के लोक प्रयोजनों के लिए सृष्ट किसी अभिव्यक्त या आन्वयिक न्यास के किसी अभिकथित भंग के मामले में, या जहां ऐसे किसी न्यास के प्रशासन के लिए न्यायालय का निदेश आवश्यक समझा जाता है वहां महाधिवक्ता या न्यास में हित रखने वाले ऐसे दो या अधिक व्यक्ति, जिन्होंने [4][न्यायालय की इजाजत] अभिप्राप्त कर ली है, ऐसा वाद, चाहे वह प्रतिविरोधात्मक हो या नहीं, आरम्भिक अधिकारिता वाले प्रधान सिविल न्यायालय में या राज्य सरकार द्वारा इस निमित्त सशक्त किए गए किसी अन्य न्यायालय में जिसकी अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर न्यास की सम्पूर्ण विषय-वस्तु या उसका कोई भाग स्थित है, निम्नलिखित डिक्री अभिप्राप्त करने के लिए संस्थित कर सकेंगे—

(क) किसी न्यासी को हटाने की डिक्री;

(ख) नए न्यासी को नियुक्त करने की डिक्री;

(ग) न्यासी में किसी सम्पत्ति को निहित करने की डिक्री;

[5][(गग) ऐसे न्यासी को जो हटाया जा चुका है या ऐसे व्यक्ति को जो न्यासी नहीं रह गया है, अपने कब्जे में की किसी न्यास-सम्पत्ति का कब्जा उस व्यक्ति को जो उस सम्पत्ति के कब्जे का हकदार है, परिदत्त करने का निदेश देने की डिक्री;]

(घ) लेखाओं और जांचों को निर्दिष्ट करने की डिक्री;

(ङ) यह घोषणा करने की डिक्री कि न्यास-सम्पत्ति का या उसमें के हित का कौन सा अनुपात न्यास के किसी विशिष्ट उद्देश्य के लिए आबंटित होगा;

(च) सम्पूर्ण न्यास-सम्पत्ति या उसके किसी भाग का पट्टे पर उठाया जाना, विक्रय किया जाना, बन्धक किया जाना या विनिमय किया जाना प्राधिकृत करने की डिक्री;

(छ) स्कीम स्थिर करने की डिक्री; अथवा

(ज) ऐसा अतिरिक्त या अन्य अनुतोष अनुदत्त करने की डिक्री जो मामले की प्रकृति से अपेक्षित हो।

(2) उसके सिवाय जैसा धार्मिक विन्यास अधिनियम, 1863 (1863 का 20) द्वारा [6][या [7][उन राज्यक्षेत्रों] में, [6][जो 1 नवम्बर, 1956 के ठीक पूर्व भाग ख राज्यों में समाविष्ट थे] प्रवृत्त तत्समान किसी विधि द्वारा] उपबन्धित है, उपधारा (1) में विनिर्दिष्ट अनुतोषों में से किसी के लिए दावा करने वाला कोई भी वाद ऐसे किसी न्यास के सम्बन्ध में जो उसमें निर्दिष्ट है, उस उपधारा के उपबन्धों के अनुरूप ही संस्थित किया जाएगा, अन्यथा नहीं।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 30 द्वारा (1-2-1977 से) पूर्ववर्ती शीर्ष के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 30 द्वारा (1-2-1977 से) उपधारा (1) के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. धारा 92 बिहार के किसी धार्मिक न्यास को लागू नहीं होगी। देखिए 1951 का बिहार अधिनियम सं० 4
4. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 31 द्वारा (1-2-1977 से) "महाधिवक्ता की लिखित सम्मति" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
5. 1956 के अधिनियम सं० 66 की धारा 9 द्वारा अन्तःस्थापित।
6. 1951 के अधिनियम सं० 2 की धारा 13 द्वारा अन्तःस्थापित।
7. विधि अनुकूलन (सं० 2) आदेश, 1956 द्वारा "भाग 'ख' राज्य" के स्थान पर प्रतिस्थापित।

[1][(3) न्यायालय, पूर्त या धार्मिक प्रकृति के लोक प्रयोजनों के लिए सृष्ट किसी अभिव्यक्त या आन्वयिक न्यास के मूल प्रयोजनों में परिवर्तन कर सकेगा और ऐसे न्यास की सम्पत्ति या आय को अथवा उसके किसी भाग को निम्नलिखित में से एक या अधिक परिस्थितियों में समान उद्देश्य के लिए उपयोजित कर सकेगा, अर्थात्:—

(क) जहां न्यास के मूल प्रयोजन पूर्णतः या भागतः ,—

(i) जहां तक हो सके पूरे हो गए हैं, अथवा

(ii) क्रियान्वित किए ही नहीं जा सकते हैं या न्यास को सृष्ट करने वाले लिखत में दिए गए निदेशों के अनुसार या जहां ऐसी कोई लिखत नहीं है वहां, न्यास की भावना के अनुसार क्रियान्वित नहीं किए जा सकते हैं, अथवा

(ख) जहां न्यास के मूल प्रयोजनों में, न्यास के आधार पर उपलब्ध सम्पत्ति के केवल एक भाग के उपयोग के लिए ही उपबन्ध है; अथवा

(ग) जहां न्यास के आधार पर उपलब्ध सम्पत्ति और समान प्रयोजन के लिए उपयोजित की जा सकने वाली अन्य सम्पत्ति का न्यास की भावना और सामान्य प्रयोजनों के लिए उसके उपयोजन को ध्यान में रखते हुए, किसी अन्य प्रयोजन के साथ-साथ अधिक प्रभावी ढंग से उपयोग किया जा सकता है और वह उस उद्देश्य से किसी अन्य प्रयोजन के लिए उपयुक्त रीति से उपयोजित की जा सकती है; अथवा

(घ) जहां मूल प्रयोजन पूर्णतः या भागतः, किसी ऐसे क्षेत्र के बारे में बनाए गए थे जो ऐसे प्रयोजनों के लिए उस समय एक इकाई था किन्तु अब नहीं रह गया है; अथवा

(ङ) जहां—

(i) मूल प्रयोजनों को बनाए जाने के पश्चात्, पूर्णतः या भागतः, अन्य साधनों से पर्याप्त रूप से व्यवस्था कर दी है; अथवा

(ii) मूल प्रयोजन बनाए जाने के पश्चात्, पूर्णतः या भागतः, समाज के लिए अनुपयोगी या अपहानिकर होने के कारण समाप्त हो गए हैं; अथवा

(iii) मूल प्रयोजन बनाए जाने के पश्चात्, पूर्णतः या भागतः, विधि के अनुसार पूर्त नहीं रह गए हैं; अथवा

(iv) मूल प्रयोजन बनाए जाने के पश्चात्, पूर्णतः या भागतः, न्यास की भावना को ध्यान में रखते हुए, न्यास के आधार पर उपलब्ध सम्पत्ति के उपयुक्त और प्रभावी उपयोग के लिए किसी अन्य रीति से उपबन्ध नहीं करते हैं।]

93. प्रेसिडेंसी नगरों से बाहर महाधिवक्ता की शक्तियों का प्रयोग—महाधिवक्ता को धारा 91 और धारा 92 द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग प्रेसिडेंसी नगरों से बाहर राज्य सरकार की पूर्व मंजूरी से कलक्टर या ऐसा अधिकारी भी कर सकेगा जिसे राज्य सरकार इस निमित्त नियुक्त करे।

भाग 6

अनुपूरक कार्यवाहियां

94. अनुपूरक कार्यवाहियां— न्यायालय न्यास के उद्देश्यों का विफल किया जाना निवारित करने के लिए उस दशा में जिसमें ऐसा करना विहित हो—

(क) प्रतिवादी को गिरफ्तार करने के लिए और न्यायालय के सामने उसको इस बात का हेतुक दर्शित करने के लिए लाए जाने के लिए कि उसे अपने उपसंजात होने के लिए प्रतिभूति क्यों नहीं देनी चाहिए, वारण्ट निकाल सकेगा और यदि वह प्रतिभूति के लिए दिए गए किसी आदेश का अनुपालन करने में असफल रहता है तो उसे सिविल कारागार को सुपुर्द कर सकेगा;

(ख) प्रतिवादी को अपनी कोई सम्पत्ति पेश करने के लिए प्रतिभूति देने का और उस सम्पत्ति को न्यायालय के नियंत्रणाधीन रखने का निदेश दे सकेगा या किसी सम्पत्ति की कुर्की आदिष्ट कर सकेगा;

---

1. 1976 के अधिनियम सं॰ 104 की धारा 31 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

(ग) अस्थायी व्यादेश अनुदत्त कर सकेगा और अवज्ञा की दशा में उसके दोषी व्यक्ति को सिविल कारागार को सुपुर्द कर सकेगा और आदेश दे सकेगा कि उसकी सम्पत्ति कुर्क की जाए और उसका विक्रय किया जाए;

(घ) किसी सम्पत्ति का रिसीवर नियुक्त कर सकेगा और उसकी सम्पत्ति को कुर्क करके और उसका विक्रय करके उसके कर्त्तव्यों का पालन करा सकेगा;

(ङ) ऐसे अन्य अन्तर्वर्ती आदेश कर सकेगा जो न्यायालय को न्यायसंगत और सुविधापूर्ण प्रतीत हों।

95. अपर्याप्त आधारों पर गिरफ्तारी, कुर्की या व्यादेश अभिप्राप्त करने के लिए प्रतिकर—(1) जहां किसी वाद में, जिसमें इसके ठीक पहले की धारा के अधीन कोई गिरफ्तारी या कुर्की कर ली गई है या अस्थायी व्यादेश दिया गया है—

(क) न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि ऐसी गिरफ्तारी, कुर्की या व्यादेश के लिए आवेदन अपर्याप्त आधारों पर दिया गया था, अथवा

(ख) वादी का वाद असफल हो जाता है और न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि उसके संस्थित किए जाने के लिए कोई युक्तियुक्त या अधिसंभाव्य आधार नहीं था,

वहां प्रतिवादी न्यायालय से आवेदन कर सकेगा और न्यायालय ऐसे आवेदन पर अपने आदेश द्वारा एक हजार रुपए से अनधिक इतनी रकम वादी के विरुद्ध अधिनिर्णीत कर सकेगा जितना वह प्रतिवादी के लिए [1][उसके द्वारा किए गए व्यय के लिए या उसे हुई क्षति के लिए (जिसके अन्तर्गत प्रतिष्ठा की हुई क्षति भी है)] युक्तियुक्त प्रतिकर समझे:

परन्तु न्यायालय, अपनी धन-संबंधी अधिकारिता की परिसीमाओं से अधिक रकम इस धारा के अधीन अधिनिर्णीत नहीं करेगा।

(2) ऐसे किसी आवेदन का अवधारण करने वाला आदेश ऐसी गिरफ्तारी, कुर्की या व्यादेश के संबंध में प्रतिकर के लिए किसी भी वाद का वर्जन करेगा।

भाग 7

अपीलें

मूल डिक्रियों की अपीलें

96. मूल डिक्री की अपील—(1) वहां के सिवाय जहां इस संहिता के पाठ में या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि द्वारा अभिव्यक्त रूप से अन्यथा उपबन्धित है, ऐसी हर डिक्री की, जो आरम्भिक अधिकारिता का प्रयोग करने वाले किसी न्यायालय द्वारा पारित की गई है, अपील उस न्यायालय में होगी जो ऐसे न्यायालय के विनिश्चयों की अपीलों को सुनने के लिए अधिकृत है।

(2) एकपक्षीय पारित मूल डिक्री की अपील हो सकेगी।

(3) पक्षकारों की सहमति से जो डिक्री न्यायालय ने पारित की है उसकी कोई अपील नहीं होगी।

[2][(4) लघुवाद न्यायालयों द्वारा संज्ञेय वाद में किसी डिक्री से कोई अपील, यदि ऐसी डिक्री की रकम या उसका मूल्य तीन हजार रुपए से अधिक नहीं है तो, केवल विधि के प्रश्न के संबंध में ही होगी।]

97. जहां प्रारम्भिक डिक्री की अपील नहीं की गई है वहां अन्तिम डिक्री की अपील—जहां इस संहिता के प्रारम्भ के पश्चात् पारित प्रारम्भिक डिक्री से व्यथित कोई पक्षकार ऐसी डिक्री की अपील नहीं करता है वहां वह उसकी शुद्धता के बारे में अंतिम डिक्री के विरुद्ध की गई अपील में विवाद करने से प्रवारित रहेगा।

98. जहां कोई अपील दो या अधिक न्यायाधीशों द्वारा सुनी जाए वहां विनिश्चय—(1) जहां कोई अपील दो या अधिक न्यायाधीशों के न्यायपीठ द्वारा सुनी जाती है वहां अपील का विनिश्चय ऐसे न्यायाधीशों की या ऐसे न्यायाधीशों की बहुसंख्या की (यदि कोई हो) राय के अनुसार होगा।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 32 द्वारा (1-2-1977 से) "उसके द्वारा किए गए व्यय या उसे हुई क्षति के लिए" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 33 द्वारा (1-2-1977) से अन्तःस्थापित।

(2) जहां ऐसी बहुसंख्या नहीं है जो अपीलित डिक्री में फेरफार करने या उसे उलटने वाले निर्णय के बारे में सहमत है, वहां ऐसी डिक्री पुष्ट कर दी जाएगी:

परन्तु जहां [1][अपील सुनने वाले न्यायपीठ में दो या किसी अन्य समसंख्या में न्यायाधीश हैं और वे न्यायाधीश ऐसे न्यायालय के हैं जिस न्यायालय में उस न्यायपीठ के न्यायधीशों से अधिक संख्या में न्यायाधीश हैं] और न्यायपीठ के न्यायाधीशों में किसी विधि के प्रश्न पर मतभेद है वहां वे उस विधि के प्रश्न का कथन करेंगे जिसके बारे में उनमें मतभेद है और तब अपील को अन्य न्यायाधीशों में से कोई एक या अधिक केवल उस प्रश्न के बारे में सुनेंगे और तब उस प्रश्न का विनिश्चय अपील सुनने वाले न्यायाधीशों की बहुसंख्या की, (यदि कोई हो) जिनके अन्तर्गत वे न्यायाधीश भी हैं जिन्होंने वह अपील सर्वप्रथम सुनी थी राय के अनुसार किया जाएगा।

[2][(3) इस धारा की कोई भी बात किसी भी उच्च न्यायालय के लेटर्स पेटेन्ट के किसी भी उपबंध का परिवर्तन करने वाली या अन्यथा उस पर प्रभाव डालने वाली नहीं समझी जाएगी।]

99. कोई भी डिक्री ऐसी गलती या अनियमितता के कारण जिससे गुणागुण या अधिकारिता पर प्रभाव नहीं पड़ता है न तो उलटी जाएगी और न उपान्तरित की जाएगी—पक्षकारों या वाद हेतुकों के ऐसे कुसंयोजन [3][या असंयोजन] के या वाद की किन्हीं भी कार्यवाहियों में ऐसी गलती, त्रुटि या अनियमितता के कारण जिससे मामले के गुणागुण या न्यायालय की अधिकारिता पर प्रभाव नहीं पड़ता है कोई भी डिक्री अपील में न तो उलटी जाएगी और न उसमें सारभूत फेरफार किया जाएगा और न कोई मामला अपील में प्रतिप्रेषित किया जाएगा:

[3][परन्तु इस धारा की कोई भी बात किसी आवश्यक पक्षकार के असंयोजन को लागू नहीं होगी।]

[4][**99क. धारा 47 के अधीन तब तक किसी आदेश को उलटा न जाना या उपान्तरित न किया जाना जब तक मामले के विनिश्चय पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता है**—धारा 99 के उपबंधों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, धारा 47 के अधीन कोई भी आदेश, ऐसे आदेश से संबंधित किसी कार्यवाही में किसी गलती, त्रुटि या अनियमितता के कारण तब तक न तो उलटा जाएगा और न उसमें सारभूत फेरफार किया जाएगा जब तक ऐसी गलती, त्रुटि या अनियमितता का मामले के विनिश्चय पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता है।]

अपीली डिक्रियों की अपीलें

[5][**100. द्वितीय अपील**—(1) उसके सिवाय जैसा इस संहिता के पाठ में या तत्समय प्रवृत किसी अन्य विधि में अभिव्यक्त रूप से उपबंधित है, उच्च न्यायालय के अधीनस्थ किसी न्यायालय द्वारा अपील में पारित प्रत्येक डिक्री की उच्च न्यायालय में अपील हो सकेगी, यदि उच्च न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि उस मामले में विधि का कोई सारवान् प्रश्न अन्तर्वलित है।

(2) एकपक्षीय पारित अपीली डिक्री की अपील इस धारा के अधीन हो सकेगी।

(3) इस धारा के अधीन अपील में अन्तर्वलित विधि के उस सारवान् प्रश्न का अपील के ज्ञापन में प्रमिततः कथन किया जाएगा।

(4) जहां उच्च न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि किसी मामले में सारवान् विधि का प्रश्न अन्तर्वलित है तो वह उस प्रश्न को बनाएगा।

(5) अपील इस प्रकार बनाए गए प्रश्न पर सुनी जाएगी और प्रतिवादी को अपील की सुनवाई में यह तर्क करने की अनुज्ञा दी जाएगी कि ऐसे मामले में ऐसा प्रश्न अन्तर्वलित नहीं है:

परन्तु इस धारा की किसी बात के बारे में यह नहीं समझा जाएगा कि वह, विधि के किसी अन्य ऐसे सारवान् प्रश्न पर जो न्यायालय के द्वारा नहीं बनाया गया है, न्यायालय का यह समाधान हो जाने पर कि उस मामले में ऐसा प्रश्न अन्तर्वलित है, न्यायालय की कारणों को लेखबद्ध करके अपील सुनने की शक्ति वापस लेती है या उसे न्यून करती है।]

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 34 द्वारा (1-2-1977 से) कुछ शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1928 के अधिनियम सं० 18 की धारा 2 और अनुसूची 1 द्वारा अन्तःस्थापित।
3. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 35 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
4. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 36 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
5. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 37 द्वारा (1-2-1977 से) धारा 100 के स्थान पर प्रतिस्थापित।

[1][100क. कुछ मामलों में आगे अपील का न होना—किसी उच्च न्यायालय के लिए किसी लेटर्स पेटेन्ट में या विधि का बल रखने वाली किसी अन्य लिखत में या तसमय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी, जहां किसी अपीली डिक्री या आदेश की अपील की सुनवाई और उसका विनिश्चय उच्च न्यायालय के किसी एकल न्यायाधीश द्वारा किया जाता है वहां ऐसी अपील में ऐसे एकल न्यायाधीश के निर्णय, विनिश्चय या आदेश की अथवा ऐसी अपील में पारित डिक्री की आगे कोई अपील नहीं होगी।]

101. द्वितीय अपील का किसी भी अन्य आधार पर न होना—कोई भी द्वितीय अपील धारा 100 में वर्णित आधारों पर होगी, अन्यथा नहीं।

102. कतिपय वादों में द्वितीय अपील का न होना—लघुवाद न्यायालयों द्वारा संज्ञेय प्रकृति के किसी भी वाद में, जबकि विषयवस्तु का परिमाण या मूल्य [2][तीन हजार रुपए] से अधिक नहीं है, कोई भी द्वितीय अपील नहीं होगी।

[3][**103. तथ्य-विवाद्यकों का अवधारण करने की उच्च न्यायालय की शक्ति**—यदि अभिलेख में का साक्ष्य पर्याप्त हो तो किसी भी द्वितीय अपील में उच्च न्यायालय ऐसी अपील के निपटारे के लिए आवश्यक कोई विवाद्यक अवधारित कर सकेगा, जो—

(क) निचले अपील न्यायालय द्वारा या प्रथम बार के न्यायालय और निचले अपील न्यायालय दोनों द्वारा अवधारित नहीं किया गया है, अथवा

(ख) धारा 100 में यथानिर्दिष्ट विधि के ऐसे प्रश्न के विनिश्चय के कारण ऐसे न्यायालय या न्यायालयों द्वारा गलत तौर पर अवधारित किया गया है।

आदेशों की अपील

104. वे आदेश जिनकी अपील होगी—(1) निम्नलिखित आदेशों की अपील होगी—

[4]* * * *

[5][(चच) धारा 35क के अधीन आदेश;]

[6][(चचक) धारा 91 या धारा 92 के अधीन, यथास्थिति, धारा 91 या धारा 92 में निर्दिष्ट प्रकृति के वाद को संस्थित करने के लिए इजाजत देने से इंकार करने वाला आदेश;]

(छ) धारा 95 के अधीन आदेश;

(ज) इस संहिता के उपबंधों में से किसी के भी अधीन ऐसा आदेश, जो जुर्माना अधिरोपित करता है या किसी व्यक्ति की गिरफ्तारी या सिविल कारागार में निरोध निर्दिष्ट करता है, वहां के सिवाय जहां कि ऐसी गिरफ्तारी या निरोध किसी डिक्री के निष्पादन में है;

(झ) नियमों के अधीन किया गया कोई ऐसा आदेश जिसकी अपील नियमों द्वारा अभिव्यक्त रूप से अनुज्ञात है,

और इस संहिता के पाठ में या तत्समय प्रवृत्त किसी विधि द्वारा अभिव्यक्त रूप से अन्यथा उपबन्धित के सिवाय किन्हीं भी अन्य आदेशों की अपील नहीं होगी:

[5][परन्तु खण्ड (चच) में विनिर्दिष्ट किसी भी आदेश की कोई भी अपील केवल इस आधार पर ही होगी कि कोई आदेश किया ही नहीं जाना चाहिए था या आदेश कम रकम के संदाय के लिए किया जाना चाहिए था।]

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 38 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 39 द्वारा (1-2-1977 से) "एक हजार रुपए" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 40 द्वारा (1-2-1977 से) धारा 103 के स्थान पर प्रतिस्थापित।
4. 1940 के अधिनियम सं० 10 की धारा 49 और अनुसूची 3 द्वारा खण्ड (क) से (च) तक का लोप किया गया।
5. 1922 के अधिनियम सं० 9 की धारा 3 द्वारा अन्तःस्थापित।
6. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 41 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

(2) इस धारा के अधीन अपील में पारित किसी भी आदेश की कोई भी अपील नहीं होगी।

105. अन्य आदेश—(1) अभिव्यक्त रूप से अन्यथा उपबन्धित के सिवाय, किसी न्यायालय द्वारा अपनी आरंभिक या अपीली अधिकारिता के प्रयोग में किए गए किसी भी आदेश की कोई भी अपील नहीं होगी, किन्तु जहां डिक्री की अपील की जाती है वहां किसी आदेश में की ऐसी गलती, त्रुटि या अनियमितता, जिससे मामले के विनिश्चय पर प्रभाव पड़ता है, अपील ज्ञापन में आक्षेप के आधार के रूप में उपवर्णित की जा सकेगी।

(2) उपधारा (1) में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी जहां [1]*** प्रतिप्रेषण के ऐसे आदेश से, जिसकी अपील होती है, व्यक्ति कोई पक्षकार अपील नहीं करता है वहां वह उसके पश्चात् उसकी शुद्धता पर विवाद करने से प्रवारित रहेगा।

106. कौन से न्यायालय अपील सुनेंगे—जहां किसी आदेश की अपील अनुज्ञात है, वहां वह उस न्यायालय में होगी, जिसमें उस वाद की डिक्री की अपील होती है जिसमें ऐसा आदेश किया गया था, या जहां ऐसा आदेश अपीली अधिकारिता के प्रयोग में किसी न्यायालय द्वारा (जो उच्च न्यायालय नहीं है) किया जाता है वहां वह उच्च न्यायालय में होगी।

अपील सम्बन्धी साधारण उपबन्ध

107. अपील न्यायालय की शक्तियां—(1) ऐसी शर्तों और परिसीमाओं के अधीन रहते हुए, जो विहित की जाए, अपील न्यायालय को यह शक्ति होगी कि वह—

(क) मामले का अंतिम रूप से अवधारण करे;

(ख) मामले का प्रतिप्रेषण करे;

(ग) विवाद्यक विरचित करे और उन्हें विचारण के लिए निर्देशित करे;

(घ) अतिरिक्त साक्ष्य ले या ऐसे साक्ष्य का लिया जाना अपेक्षित करे।

(2) पूर्वोक्त के अधीन रहते हुए, अपील न्यायालय को वे ही शक्तियां होंगी और वह जहां तक हो सके उन्हीं कर्तव्यों का पालन करेगा, जो आरंभिक अधिकारिता वाले न्यायालयों में संस्थित वादों के बारे में इस संहिता द्वारा उन्हें प्रदत्त और उन पर अधिरोपित किए गए हैं।

108. अपीली डिक्रियों और आदेशों की अपीलों में प्रक्रिया—मूल डिक्रियों की अपीलों से सम्बन्धित इस भाग के उपबन्ध जहां तक हो सके,—

(क) अपीली डिक्रियों की अपीलों को लागू होंगे, तथा

(ख) उन आदेशों की अपीलों को लागू होंगे जो इस संहिता के अधीन या ऐसी किसी विशेष या स्थानीय विधि के अधीन किए गए हैं जिसमें कोई भिन्न प्रक्रिया उपबन्धित नहीं की गई है।

उच्चतम न्यायालय में अपीलें

[2][**109. उच्चतम न्यायालय में अपीलें कब होंगी**—संविधान के भाग 5 के अध्याय 4 के उपबन्धों के और ऐसे नियमों के जो भारत के न्यायालयों से अपीलों के संबंध में उच्चतम न्यायालय द्वारा समय-समय पर बनाए जाएं और इसमें इसके पश्चात् अन्तर्विष्ट उपबन्धों के अधीन रहते हुए किसी उच्च न्यायालय की सिविल कार्यवाही में के किसी निर्णय, डिक्री या अन्तिम आदेश की अपील उच्चतम न्यायालय में होगी यदि उच्च न्यायालय यह प्रमाणित कर देता है कि—

(i) मामले में व्यापक महत्व का कोई सारवान् विधिक प्रश्न अन्तर्वलित है; तथा

(ii) उच्च न्यायालय की राय में उस प्रश्न का उच्चतम न्यायालय द्वारा विनिश्चय आवश्यक है।]

110. [विषय-वस्तु का मूल्य।]—सिविल प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 1973 (1973 का 49) की धारा 3 द्वारा निरसित।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 42 द्वारा (1-2-1977 से) कुछ शब्दों का लोप किया गया।
2. 1973 के अधिनियम सं० 49 की धारा 2 द्वारा प्रतिस्थापित।

111. [कुछ अपीलों का वर्जन।]—विधि अनुकूलन आदेश, 1950 द्वारा निरसित।

[111क. [फेडरल न्यायालयों को अपीलें।]—फेडरल न्यायालय अधिनियम, 1941 (1941 का 21) की धारा 2 द्वारा निरसित।]

112. व्यावृत्तियां—[2][(1) इस संहिता में अन्तर्विष्ट किसी भी बात के बारे में यह नहीं समझा जाएगा कि वह—

(क) संविधान के अनुच्छेद 136 या अन्य किसी उपबन्ध के अधीन उच्चतम न्यायालय की शक्तियों पर प्रभाव डालती है, अथवा

(ख) उच्चतम न्यायालय में अपीलों को उपस्थित करने के लिए या उसके सामने उनके संचालन के लिए उस न्यायालय द्वारा बनाए गए और तत्समय प्रवृत्त किन्हीं नियमों में हस्तक्षेप करती है।]

(2) इसमें अन्तर्विष्ट कोई भी बात किसी भी दाण्डिक या नावधिकरण विषयक या उपनावधिकरण विषयक अधिकारिता के विषय को अथवा प्राइज न्यायालयों के आदेशों और डिक्रियों की अपीलों को लागू नहीं होती।

भाग 8

निर्देश, पुनर्विलोकन और पुनरीक्षण

113. उच्च न्यायालय को निर्देश—उन शर्तों और परिसीमाओं के अधीन रहते हुए, जो विहित की जाएं, कोई भी न्यायालय मामले का कथन करके उसे उच्च न्यायालय की राय के लिए निर्देशित कर सकेगा और उच्च न्यायालय उस पर ऐसा आदेश कर सकेगा जो वह ठीक समझे:

[3][परन्तु जहां न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि उसके समक्ष लंबित मामले में किसी अधिनियम, अध्यादेश या विनियम अथवा किसी अधिनियम, अध्यादेश या विनियम में अन्तर्विष्ट किसी उपबन्ध की विधिमान्यता के बारे में ऐसा प्रश्न अन्तर्वलित है, जिसका अवधारण उस मामले को निपटाने के लिए आवश्यक है और उसकी यह राय है कि ऐसा अधिनियम, अध्यादेश, विनियम या उपबंध अविधिमान्य या अप्रवर्तनशील है, किन्तु उस उच्च न्यायालय द्वारा जिसके वह न्यायालय अधीनस्थ है, या उच्चतम न्यायालय द्वारा इस प्रकार घोषित नहीं किया गया है, वहां न्यायालय अपनी राय और उसके कारणों को उपवर्णित करते हुए मामले का कथन करेगा और उसे उच्च न्यायालय की राय के लिए निर्देशित करेगा।

स्पष्टीकरण—इस धारा में "विनियम" से बंगाल, मुम्बई या मद्रास संहिता का कोई विनियम या साधारण खण्ड अधिनियम, 1897 (1897 का 10) में या किसी राज्य के साधारण खण्ड अधिनियम में परिभाषित कोई भी विनियम अभिप्रेत है।

114. पुनर्विलोकन—पूर्वोक्त के अधीन रहते हुए कोई व्यक्ति, जो—

(क) किसी ऐसी डिक्री या आदेश में जिसकी इस संहिता द्वारा अपील अनुज्ञात है, किन्तु जिसकी कोई अपील नहीं की गई है,

(ख) किसी ऐसी डिक्री या आदेश से जिसकी इस संहिता द्वारा अपील अनुज्ञात नहीं है, अथवा

(ग) ऐसे विनिश्चय से जो लघुवाद न्यायालय के निर्देश पर किया गया है,

अपने को व्यथित मानता है वह डिक्री पारित करने वाले या आदेश करने वाले न्यायालय से निर्णय के पुनर्विलोकन के लिए आवेदन कर सकेगा और न्यायालय उस पर ऐसा आदेश कर सकेगा जो वह ठीक समझे।

115. पुनरीक्षण—[4][(1)]उच्च न्यायालय किसी भी ऐसे मामले के अभिलेख को मंगवा सकेगा जिसका ऐसे उच्च न्यायालय के अधीनस्थ किसी न्यायालय ने विनिश्चय किया है और जिसकी कोई भी अपील नहीं होती है और यदि यह प्रतीत होता है कि—

(क) ऐसे अधीनस्थ न्यायालय ने ऐसी अधिकारिता का प्रयोग किया है जो उसमें विधि द्वारा निहित नहीं है, अथवा

---

1. भारत शासन (भारतीय विधि अनुकूलन) आदेश, 1937 द्वारा धारा 111क अंतःस्थापित की गई थी।
2. विधि अनुकूलन आदेश, 1950 द्वारा पूर्ववर्ती उपधारा (1) के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. 1951 के अधिनियम सं॰ 24 की धारा 2 द्वारा जोड़ा गया।
4. 1976 के अधिनियम सं॰ 104 की धारा 43 द्वारा (1-2-1977 से) धारा 115 को उस धारा की उपधारा (1) के रूप में पुनःसंख्यांकित किया गया।

(भाग 8—अपीलें। निर्देश, पुनर्विलोकन और पुनरीक्षण। भाग 9—ऐसे उच्च न्यायालयों के संबंध में विशेष उपबन्ध जो न्यायिक आयुक्त के न्यायालय नहीं हैं।)

(ख) ऐसा अधीनस्थ न्यायालय ऐसी अधिकारिता का प्रयोग करने में असफल रहा है जो इस प्रकार निहित है, अथवा

(ग) ऐसे अधीनस्थ न्यायालय ने अपनी अधिकारिता का प्रयोग करने में अवैध रूप से या तात्त्विक अनियमितता से कार्य किया है,

तो उच्च न्यायालय उस मामले में ऐसा आदेश कर सकेगा जो वह ठीक समझे:

[1][परन्तु उच्च न्यायलय, किसी वाद या अन्य कार्यवाही के अनुक्रम में इस धारा के अधीन किए गए किसी आदेश में या कोई विवाद्यक विनिश्चित करने वाले किसी आदेश में तभी फेरफार करेगा या उसे उलटेगा जब—

(क) ऐसा आदेश यदि वह पुनरीक्षण के लिए आवेदन करने वाले पक्षकार के पक्ष में किया गया होता तो वाद या अन्य कार्यवाही का अन्तिम रूप से निपटारा कर देता, अथवा

(ख) ऐसा आदेश यदि रहने दिया गया तो, न्याय नहीं हो पाएगा अथवा उस पक्षकार को जिसके विरुद्ध वह किया गया था, ऐसी क्षति पहुँचेगी जिसकी हानिपूर्ति नहीं हो सकती।]

[1][(2) उच्च न्यायालय इस धारा के अधीन किसी ऐसे डिक्री या आदेश में, जिसके विरुद्ध या तो उच्च न्यायालय में या उसके अधीनस्थ किसी न्यायालय में अपील होती है, फेरफार नहीं करेगा अथवा उसे नहीं उलटेगा।

स्पष्टीकरण—इस धारा में "ऐसे मामले के अभिलेख को मंगवा सकेगा जिसका ऐसे उच्च न्यायालय के अधीनस्थ किसी न्यायालय ने विनिश्चय किया है" अभिव्यक्ति के अन्तर्गत किसी वाद या अन्य कार्यवाही के अनुक्रम में किया गया कोई आदेश या कोई विवाद्यक विनिश्चित करने वाला कोई आदेश भी है।]

भाग 9

[2][ऐसे उच्च न्यायालयों] के सम्बन्ध में विशेष उपबन्ध जो [3][न्यायिक आयुक्त के न्यायालय नहीं] हैं

116. इस भाग का कुछ उच्च न्यायालयों को ही लागू होना—यह भाग ऐसे उच्च न्यायालयों को ही लागू होगा जो [3][न्यायिक आयुक्त के न्यायालय नहीं] हैं।

117. संहिता का उच्च न्यायालयों को लागू होना—उसके सिवाय जैसा इस भाग में या भाग 10 में या नियमों में उपबन्धित है, इस संहिता के उपबन्ध ऐसे उच्च न्यायालयों को लागू होंगे।

118. खर्चों के अभिनिश्चय के पूर्व डिक्री का निष्पादन—जहां ऐसा कोई उच्च न्यायालय यह आवश्यक समझता है कि उसकी अपनी आरंभिक सिविल अधिकारिता के प्रयोग में पारित कोई डिक्री वाद में के खर्चों की राशि का विनिर्धारण द्वारा अभिनिश्चय किए जाने के पूर्व निष्पादित की जानी चाहिए वहां वह न्यायालय यह आदेश दे सकेगा कि डिक्री के उतने भाग के सिवाय जितना खर्चों से सम्बन्धित है, उस डिक्री का निष्पादन तुरन्त किया जाए;

और उसके उतने भाग के बारे में जिसका खर्चों से सम्बन्ध है, यह आदेश दे सकेगा कि जैसे ही खर्चे विनिर्धारण द्वारा अभिनिश्चित हो जाएं, वह डिक्री वैसे ही निष्पादित की जा सकेगी।

119. अप्राधिकृत व्यक्ति न्यायालय को संबोधित नहीं कर सकेंगे—इस संहिता की किसी भी बात के बारे में यह नहीं समझा जाएगा कि वह किसी व्यक्ति को वहां के सिवाय जहां कि न्यायालय ने अपने चार्टर द्वारा प्रदत्त शक्ति के प्रयोग में उस व्यक्ति को ऐसा करने के लिए प्राधिकृत कर दिया है, दूसरे व्यक्ति की ओर से उस न्यायालय को उसकी आरम्भिक सिविल अधिकारिता के प्रयोग में संबोधित करने को या साक्षियों की परीक्षा करने को प्राधिकृत करती है, या अधिवक्ताओं, वकीलों और अटर्नियों के संबंध में नियम बनाने की उस उच्च न्यायालय की शक्ति में हस्तक्षेप करती है।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 43 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
2. 1951 के अधिनियम सं० 2 की धारा 14 द्वारा "चार्टर्ड उच्च न्यायालयों" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. विधि अनुकूलन (सं० 2) आदेश, 1956 द्वारा "भाग क राज्यों और भाग ख राज्यों के लिए" के स्थान पर प्रतिस्थापित।

120. आरंभिक सिविल अधिकारिता में उच्च न्यायालयों को उपबन्धों का लागू न होना—(1) निम्नलिखित उपबन्ध, अर्थात् धारा 16, धारा 17 और धारा 20 उच्च न्यायालय को उसकी आरम्भिक सिविल अधिकारिता का प्रयोग करने में लागू नहीं होंगे।

[1]* * * * * * *

भाग 10

नियम

121. प्रथम अनुसूची में के नियमों का प्रभाव—प्रथम अनुसूची में के नियम, जब तक कि वे इस भाग के उपबन्धों के अनुसार बातिल या परिवर्तित न कर दिए जाएं, ऐसे प्रभावशील होंगे, मानो वे इस संहिता के पाठ में अधिनियमित हों।

122. नियम बनाने की कुछ उच्च न्यायालयों की शक्ति—[2][ऐसे उच्च न्यायालय, जो [3][न्यायिक आयुक्त के न्यायालय नहीं] हैं,] [4]***अपनी स्वयं की प्रक्रिया और अपने अधीक्षण के अधीन आने वाले सिविल न्यायालयों की प्रक्रिया का विनियमन करने के लिए नियम, पूर्व प्रकाशन के पश्चात् समय-समय पर बना सकेंगे और वे ऐसे नियमों द्वारा प्रथम अनुसूची में के सभी नियमों को या उनमें से किसी को बातिल या परिवर्तित कर सकेंगे अथवा उन सभी में या उनमें से किसी में परिवर्धन कर सकेंगे।

123. कुछ राज्यों में नियम-समितियों का गठन—(1) [5][ऐसे नगर में, जो धारा 122 में निर्दिष्ट उच्च न्यायालयों [6]*** में से हर एक की बैठक का प्रायिक स्थान है,] एक समिति गठित की जाएगी जिसका नाम नियम-समिति होगा।

(2) ऐसी हर एक समिति निम्नलिखित व्यक्तियों से मिलकर गठित होगी, अर्थात्:—

(क) ऐसे नगर में, जहां ऐसी समिति का गठन हुआ है, स्थापित उच्च न्यायालय के तीन न्यायाधीश, जिनमें से कम से कम एक ऐसा होगा जिसने जिला न्यायाधीश या [7]*** खण्ड न्यायाधीश के रूप में तीन वर्ष सेवा की है,

[8][(ख) दो विधि-व्यवसायी, जिनके नाम उस न्यायालय में दर्ज हों,]

[9][(ग)] उस उच्च न्यायालय के अधीनस्थ सिविल न्यायालय का एक न्यायाधीश,[10]***

[10]* * *

(3) ऐसी हर समिति के सदस्य [11][उच्च न्यायालय] द्वारा नियुक्त किए जाएंगे, जो उनके सदस्यों में से एक को सभापति भी नामनिर्देशित करेगा।

[12]* * *

(4) किसी ऐसी समिति का हर एक सदस्य ऐसी अवधि के लिए पद धारण करेगा जो [11][उच्च न्यायालय] द्वारा इस निमित्त

---

1. 1909 के अधिनियम सं० 3 की धारा 127 और अनुसूची 3 द्वारा उपधारा (2) निरसित।
2. विधि अनुकूलन आदेश, 1950 द्वारा "ऐसे न्यायालय जो भारत शासन अधिनियम, 1935 के प्रयोजनों के लिए उच्च न्यायालय हैं" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. विधि अनुकूलन सं० 2 आदेश, 1956 द्वारा "भाग क राज्यों और भाग ख राज्यों के लिए" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
4. 1923 के अधिनियम सं० 11 की धारा 3 और अनुसूची 2 द्वारा "और लोअर बर्मा का मुख्य न्यायालय" शब्द निरसित।
5. 1916 के अधिनियम सं० 13 की धारा 2 और अनुसूची द्वारा "कलकत्ता, मद्रास, मुम्बई, इलाहाबाद, लाहौर और रंगून के नगरों में से प्रत्येक नगर," के स्थान पर प्रतिस्थापित।
6. 1923 के अधिनियम सं० 11 की धारा 3 और अनुसूची 2 द्वारा "और मुख्य न्यायालय" शब्दों का लोप किया गया। 1925 के अधिनियम सं० 32 द्वारा इन शब्दों का पुनः अंतःस्थापन किया गया था और तत्पश्चात् इनका भारतीय स्वतंत्रता (केन्द्रीय अधिनियम और अध्यादेश अनुकूलन) आदेश, 1948 द्वारा लोप किया गया।
7. 1923 के अधिनियम सं० 11 की धारा 3 और अनुसूची 2 द्वारा "(बर्मा में)" कोष्ठक और शब्द निरसित।
8. 1951 के अधिनियम सं० 2 की धारा 16 द्वारा मूल खण्ड (ख) और (ग) के स्थान पर प्रतिस्थापित।
9. 1951 के अधिनियम सं० 2 की धारा 16 द्वारा खण्ड (घ) को (ग) के रूप में पुनः अक्षरांकित किया गया।
10. 1978 के अधिनियम सं० 38 की धारा 3 और दूसरी अनुसूची द्वारा अन्त में आने वाले शब्द "तथा" और खण्ड (घ) का लोप किया गया।
11. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 44 द्वारा (1-2-1977 से) "मुख्य न्यायमूर्ति या मुख्य न्यायाधीश" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
12. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 44 द्वारा (1-2-1977 से) परन्तुक का लोप किया गया।

विहित की जाए और जब कभी कोई सदस्य सेवा-निवृत्त हो जाए, पदत्याग कर दे, उसकी मृत्यु हो जाए, या वह उस राज्य में जिसमें समिति का गठन हुआ है, निवास करना छोड़ दे या समिति के सदस्य के रूप में कार्य करने के लिए असमर्थ हो जाए, तब उक्त [1][उच्च न्यायालय] उसके स्थान पर अन्य व्यक्ति को सदस्य नियुक्त कर सकेगा।

(5) हर एक ऐसी समिति का एक सचिव होगा जो [1][उच्च न्यायालय] द्वारा नियुक्त किया जाएगा और ऐसा पारिश्रमिक पाएगा, जो [2][राज्य सरकार द्वारा] इस निमित्त उपबन्धित किया जाए।

124. समिति उच्च न्यायालय को रिपोर्ट करेगी—हर एक नियम-समिति, उस नगर में जहां उसका गठन हुआ है, स्थापित उच्च न्यायालय को प्रथम अनुसूची में के नियमों को बातिल, परिवर्तित या परिवर्धित करने की या नए नियम बनाने की किसी भी प्रस्थापना के बारे में रिपोर्ट करेगी और धारा 122 के अधीन किन्हीं भी नियमों को बनाने से पूर्व वह उच्च न्यायालय ऐसी रिपोर्ट पर विचार करेगा।

125. नियम बनाने की अन्य उच्च न्यायालयों की शक्ति—धारा 122 में विनिर्दिष्ट न्यायालयों से भिन्न उच्च न्यायालय उस धारा द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग ऐसी रीति से और ऐसी शर्तों के अधीन रहते हुए कर सकेंगे [3][जो [4][राज्य सरकार] अवधारित करे]:

परन्तु ऐसा कोई भी उच्च न्यायालय ऐसे किन्हीं भी नियमों का जो किसी अन्य उच्च न्यायालय द्वारा बनाए गए हैं, अपनी अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर विस्तारण करने के लिए नियम, पूर्व प्रकाशन के पश्चात् बना सकेगा।

[5][**126. नियमों का अनुमोदन के अधीन होना**—पूर्वगामी उपबन्धों के अधीन बनाए गए नियम उस राज्य सरकार के पूर्व अनुमोदन के, जिसमें वह न्यायालय जिसकी प्रक्रिया का विनियमन वे नियम करते हैं, स्थित है या यदि वह न्यायालय किसी राज्य में स्थित नहीं है तो, [6][केन्द्रीय सरकार] के पूर्व अनुमोदन के अधीन रहेंगे।]

127. नियमों का प्रकाशन—इस प्रकार बनाए गए और [7][अनुमोदित किए गए] नियम [8][राजपत्र] में प्रकाशित किए जाएंगे और प्रकाशन की तारीख से या ऐसी अन्य तारीख से जो विनिर्दिष्ट की जाए, उस उच्च न्यायालय की अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर जिसने उन्हें बनाया है, वही बल और प्रभाव रखेंगे मानो वे प्रथम अनुसूची में अन्तर्विष्ट थे।

128. वे विषय जिनके लिए नियम उपबन्ध कर सकेंगे—(1) ऐसे नियम इस संहिता के पाठ में के उपबंधों से असंगत नहीं होंगे किन्तु उनके अधीन रहते हुए, सिविल न्यायालयों की प्रक्रिया से सम्बन्धित किन्हीं भी विषयों के लिए उपबंध कर सकेंगे।

(2) विशिष्टतया और उपधारा (1) द्वारा प्रदत्त शक्तियों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे नियम निम्नलिखित सभी विषयों या उनमें से किसी के लिए उपबन्ध कर सकेंगे, अर्थात्:—

(क) समनों, सूचनाओं और अन्य आदेशिकाओं की साधारणतः या किन्हीं विनिर्दिष्ट क्षेत्रों में डाक द्वारा या किसी अन्य प्रकार से तामील और ऐसी तामील का सबूत;

(ख) जितने समय पशु-धन और अन्य जंगम सम्पत्ति कुर्की के अधीन रहे, उतने समय उनका भरण-पोषण और अभिरक्षा, ऐसे भरण-पोषण और अभिरक्षा के लिए फीस और ऐसे पशु-धन और सम्पत्ति का विक्रय और ऐसे विक्रय के आगम;

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 44 द्वारा (1-2-1977 से) "मुख्य न्यायमूर्ति या मुख्य न्यायाधीश" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. भारत शासन (भारतीय विधि अनुकूलन) आदेश, 1937 द्वारा "यथास्थिति, सपरिषद् गवर्नर जनरल द्वारा या स्थानीय स्वशासन द्वारा" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. 1920 के अधिनियम सं० 38 की धारा 2 और अनुसूची 1 के भाग 1 द्वारा "जैसी सपरिषद् गवर्नर जनरल अवधारित करे" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
4. भारत शासन (भारतीय विधि अनुकूलन) आदेश, 1937 द्वारा "कुर्ग के न्यायिक आयुक्त के न्यायालय की दशा में, सपरिषद् गवर्नर जनरल और अन्य दशाओं में स्थानीय स्वशासन" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
5. भारत शासन (भारतीय विधि अनुकूलन) आदेश, 1937 द्वारा पूर्ववर्ती धारा के स्थान पर प्रतिस्थापित।
6. विधि अनुकूलन आदेश, 1950 द्वारा "गवर्नर जनरल" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
7. 1917 के अधिनियम सं० 24 की धारा 2 और अनुसूची 1 द्वारा "मंजूर किए गए" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
8. भारत शासन (भारतीय विधि अनुकूलन) आदेश, 1937 द्वारा "यथास्थिति, भारत के राजपत्र या स्थानीय राजपत्र" के स्थान पर प्रतिस्थापित। सही अर्थ में यह प्रतिस्थापन "यथास्थिति, राजपत्र या राजपत्र" पढ़ा जाएगा, किन्तु पश्चात्वर्ती शब्दों को अनावश्यक समझकर उनका लोप कर दिया गया है।

(ग) प्रतिदावे के रूप में किए गए वादों में की प्रक्रिया और अधिकारिता के प्रयोजनों के लिए ऐसे वादों का मूल्यांकन;

(घ) ऋणों की कुर्की और विक्रय के अतिरिक्त या बदले में गारनिशी आदेशों और भारण आदेशों की प्रक्रिया;

(ङ) जहां प्रतिवादी किसी व्यक्ति के विरुद्ध चाहे वह वाद का पक्षकार हो या नहीं, अभिदाय या क्षतिपूर्ति के लिए हकदार होने का दावा करे वहां प्रक्रिया;

(च) उन वादों में संक्षिप्त प्रक्रिया—

(i) जिनमें वादी किसी अभिव्यक्त या विवक्षित संविदा से अथवा किसी अधिनियमिति से उस दशा में जिसमें वह राशि, जिसकी वसूली चाही गई है नियत धनराशि है या शास्ति से भिन्न कोई ऋण है, अथवा किसी प्रत्याभूति से उस दशा में जिसमें मूल ऋण के विरुद्ध दावा किसी ऋण या परिनिर्धारित मांग के लिए ही है, अथवा किसी न्यास से उद्भूत ऋण या परिनिर्धारित मांग को, जो प्रतिवादी द्वारा धन के रूप में संदेय है, ब्याज सहित या बिना ब्याज के वसूल करना चाहता है; अथवा

(ii) जो भाटक या अन्तःकालीन लाभों के लिए दावों के सहित या बिना स्थावर सम्पत्ति के प्रत्युद्धरण के लिए भूस्वामी द्वारा ऐसे अभिधारी के विरुद्ध है, जिसकी अवधि का अवसान हो गया है, या जिसकी अवधि का पर्यवसान खाली कर देने की सूचना द्वारा सम्यक् रूप से कर दिया गया है या जिसकी अवधि भाटक के असंदाय के कारण समपहरणीय हो गई है, अथवा ऐसे अभिधारी से व्युत्पन्न अधिकार के अधीन दावा करने वाले व्यक्तियों के विरुद्ध है;

(छ) ओरिजिनेटिंग समन के रूप में प्रक्रिया;

(ज) वादों, अपीलों और अन्य कार्यवाहियों का समेकन;

(झ) न्यायालय के किसी रजिस्ट्रार, प्रोथोनोटरी, मास्टर या अन्य पदधारी को किन्हीं न्यायिक, न्यायिक-कल्प या न्यायिकेतर कर्तव्यों का प्रत्यायोजन; तथा

(ञ) ऐसे सभी प्ररूप, रजिस्टर, पुस्तकें, प्रविष्टियां और लेखे, जो सिविल न्यायालयों के कारबार के संव्यवहार के लिए आवश्यक या वांछनीय हों।

129. अपनी आरम्भिक सिविल प्रक्रिया के सम्बन्ध में नियम बनाने की उच्च न्यायालयों की शक्ति—इस संहिता में किसी बात के होते हुए भी, कोई ऐसा उच्च न्यायालय [1][जो न्यायिक आयुक्त का न्यायालय नहीं है] ऐसे नियम बना सकेगा जो उसकी स्थापना करने वाले लेटर्स पेटेन्ट [2][या आदेश] [3][या अन्य विधि] से असंगत न हो और जो वह अपनी आरम्भिक सिविल अधिकारिता के प्रयोग में अपनी प्रक्रिया का विनियमन करने के लिए ठीक समझे और इसमें अन्तर्विष्ट कोई भी बात किन्हीं ऐसे नियमों की विधिमान्यता पर प्रभाव नहीं डालेगी जो इस संहिता के प्रारंभ के समय प्रवृत्त हैं।

[4][130. प्रक्रिया से भिन्न विषयों के सम्बन्ध में नियम बनाने की अन्य उच्च न्यायालयों की शक्ति—वह उच्च न्यायालय [5][जो ऐसा उच्च न्यायालय नहीं है जिसे धारा 129 लागू होती है,] प्रक्रिया से भिन्न किसी भी विषय के संबंध में कोई ऐसा नियम राज्य सरकार के पूर्व अनुमोदन से बना सकेगा जिसे [6][किसी] [7]***[राज्य का] उच्च न्यायालय अपनी अधिकारिता के अधीन राज्यक्षेत्रों के किसी ऐसे भाग के लिए, जो प्रेसिडेन्सी नगर की सीमाओं के अन्तर्गत नहीं है। [8][संविधान के अनुच्छेद 227] के अधीन ऐसे किसी विषय के लिए बना सकता है।

---

1. विधि अनुकूलन (सं॰ 2) आदेश, 1956 द्वारा "भाग क राज्य या भाग ख राज्य के लिए" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. विधि अनुकूलन आदेश, 1950 द्वारा अन्तःस्थापित।
3. 1951 के अधिनियम सं॰ 2 की धारा 17 द्वारा अन्तःस्थापित।
4. भारत शासन (भारतीय विधि अनुकूलन) आदेश, 1937 द्वारा पूर्ववर्ती धारा के स्थान पर प्रतिस्थापित।
5. विधि अनुकूलन आदेश, 1950 द्वारा "जो लेटर्स पेटेन्ट द्वारा हिज मजेस्टी द्वारा गठित नहीं है" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
6. विधि अनुकूलन आदेश, 1950 द्वारा "इस प्रकार गठित" शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।
7. विधि अनुकूलन (सं॰ 2) आदेश, 1956 द्वारा "भाग क" शब्द और अक्षर का लोप किया गया।
8. विधि अनुकूलन आदेश, 1950 द्वारा "भारत शासन अधिनियम, 1935 की धारा 224" के स्थान पर प्रतिस्थापित।

131. नियमों का प्रकाशन—धारा 129 या धारा 130 के अनुसार बनाए गए नियम [1][राजपत्र] में प्रकाशित किए जाएंगे और प्रकाशन की तारीख से या ऐसी अन्य तारीख से जो विनिर्दिष्ट की जाए, विधि का बल रखेंगे।

भाग 11

प्रकीर्ण

132. कुछ स्त्रियों को स्वीय उपसंजाति से छूट—(1) जो स्त्रियां देश की रूढ़ियों और रीतियों के अनुसार लोगों के सामने आने के लिए विवश नहीं की जानी चाहिएं उन्हें न्यायालय में स्वीय उपसंजाति से छूट होगी।

(2) इसमें अन्तर्विष्ट कोई भी बात ऐसे किसी मामले में जिसमें स्त्री की गिरफ्तारी इस संहिता द्वारा निषिद्ध नहीं है, सिविल आदेशिका के निष्पादन में किसी स्त्री को गिरफ्तारी से छूट देने वाली नहीं समझी जाएगी।

133. अन्य व्यक्तियों को छूट—[2][(1) निम्नलिखित व्यक्ति न्यायालय में स्वीय उपसंजाति से छूट पाने के हकदार होंगे, अर्थात्:—

(i) भारत का राष्ट्रपति;
(ii) भारत का उपराष्ट्रपति;
(iii) लोक सभा का अध्यक्ष;
(iv) संघ के मंत्री;
(v) उच्चतम न्यायालय के न्यायधीश;
(vi) राज्यों के राज्यपाल और संघ राज्यक्षेत्रों के प्रशासक;
(vii) राज्य विधान सभाओं के अध्यक्ष;
(viii) राज्य विधान परिषदों के सभापति;
(ix) राज्यों के मंत्री;
(x) उच्च न्यायालयों के न्यायाधीश; तथा
(xi) वे व्यक्ति जिन्हें धारा 87ख लागू होती है।]

[3]* * * * *

(3) जहां [4]**** कोई व्यक्ति ऐसी छूट के विशेषाधिकार का दावा करता है और उसके परिणामस्वरूप उसकी परीक्षा कमीशन द्वारा करना आवश्यक है वहां यदि उसके साक्ष्य की अपेक्षा करने वाले पक्षकार ने कमीशन का खर्चा नहीं दिया है तो वह व्यक्ति उसका खर्चा देगा।

134. डिक्री के निष्पादन में की जाने से अन्यथा गिरफ्तारी—धारा 55, धारा 57 और धारा 59 के उपबन्ध इस संहिता के अधीन गिरफ्तार किए गए सभी व्यक्तियों को, जहां तक हो सके लागू होंगे।

135. सिविल आदेशिका के अधीन गिरफ्तारी से छूट—(1) कोई भी न्यायाधीश, मजिस्ट्रेट या अन्य न्यायिक अधिकारी उस समय सिविल आदेशिका के अधीन गिरफ्तार नहीं किया जा सकेगा जब वह अपने न्यायालय को जा रहा हो, उसमें पीठासीन हो या वहां से लौट रहा हो।

(2) जहां कोई मामला किसी ऐसे अधिकरण के समक्ष लंबित है जिसकी उसमें अधिकारिता है, या जिसके बारे में वह सद्भावपूर्वक यह विश्वास करता है कि उसमें उसकी ऐसी अधिकारिता है वहां उस मामले के पक्षकार, उनके प्लीडर, मुख्तार, राजस्व

---

1. भारत शासन (भारतीय विधि अनुकूलन) आदेश, 1937 द्वारा "यथास्थिति, भारत के राजपत्र या स्थानीय राजपत्र" के स्थान पर प्रतिस्थापित। सही अर्थ में, यह प्रतिस्थापन "यथास्थिति, राजपत्र या राजपत्र" पढ़ा जाएगा, किन्तु पश्चात्वर्ती शब्दों को अनावश्यक समझकर उनका लोप कर दिया गया है।
2. 1956 के अधिनियम सं॰ 66 की धारा 12 द्वारा उपधारा (1) के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. 1956 के अधिनियम सं॰ 66 की धारा 12 द्वारा उपधारा (2) का लोप किया गया।
4. 1956 के अधिनियम सं॰ 66 की धारा 12 द्वारा "इस प्रकार छूट प्राप्त" शब्दों का लोप किया गया।

अभिकर्ता और मान्यताप्राप्त अभिकर्ता और उनके वे साक्षी जो समन के आज्ञानुवर्तन में कार्य कर रहे हैं, ऐसी आदेशिका से, जो ऐसे अधिकरण ने न्यायालय के अवमान के लिए निकाली है भिन्न सिविल आदेशिका के अधीन गिरफ्तार किए जाने से उस समय छूट-प्राप्त रहेंगे जब वे ऐसे मामले के प्रयोजन के लिए ऐसे अधिकरण को जा रहे हों या उसमें हाजिर हों और जब वे ऐसे अधिकरण से लौट रहे हों।

(3) उपधारा (2) की कोई भी बात निर्णीत-ऋणी को तुरंत निष्पादन के आदेश के अधीन या जहां ऐसा निर्णीत-ऋणी इस बात का हेतुक दर्शित करने के लिए हाजिर हुआ है कि डिक्री के निष्पादन में उसे कारागार में क्यों न सुपुर्द किया जाए वहां गिरफ्तारी से छूट का दावा करने के लिए समर्थ नहीं बनाएगी।

[1][135क. विधायी निकायों के सदस्यों को सिविल आदेशिका के अधीन गिरफ्तार किए जाने और निरुद्ध किए जाने से छूट—[2][(1) कोई व्यक्ति—

(क) यदि वह—
(i) संसद् के किसी सदन का, या
(ii) किसी राज्य की विधान सभा या विधान परिषद् का, या
(iii) किसी संघ राज्यक्षेत्र की विधान सभा का,

सदस्य है तो, यथास्थिति, संसद् के किसी सदन के अथवा विधान सभा या विधान परिषद् के किसी अधिवेशन के चालू रहने के दौरान;

(ख) यदि वह—
(i) संसद् के किसी सदन की, या
(ii) किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र की विधान सभा की, या
(iii) किसी राज्य की विधान परिषद् की,

किसी समिति का सदस्य है तो ऐसी समिति के किसी अधिवेशन के चालू रहने के दौरान;

(ग) यदि वह—
(i) संसद् के किसी सदन का, या
(ii) किसी ऐसे राज्य की विधान सभा या विधान परिषद् का जिसमें ऐसे दोनों सदन हैं,

सदस्य है तो, यथास्थिति, संसद् के सदनों या राज्य विधान-मण्डल के सदनों की संयुक्त बैठक, अधिवेशन, सम्मेलन या संयुक्त समिति के चालू रहने के दौरान,

और ऐसे अधिवेशन, बैठक या सम्मेलन के चालीस दिन पूर्व और पश्चात् सिविल आदेशिका के अधीन गिरफ्तार या कारागार में निरुद्ध नहीं किया जा सकेगा।]

(2) उपधारा (1) के अधीन निरोध से छोड़ा गया व्यक्ति, उक्त उपधारा के उपबन्धों के अधीन रहते हुए पुनः गिरफ्तारी और उतनी अतिरिक्त अवधि के लिए निरुद्ध किया जा सकेगा जितनी अवधि के लिए वह निरुद्ध रहता यदि वह उपधारा (1) के उपबन्धों के अधीन छोड़ा नहीं गया होता।]

136. जहां गिरफ्तार किया जाने वाला व्यक्ति या कुर्क की जाने वाली सम्पत्ति जिले से बाहर है वहां प्रक्रिया—(1) जहां यह आवेदन किया जाता है कि इस संहिता के किसी ऐसे उपबन्ध के अधीन, जो डिक्रियों के निष्पादन से सम्बन्धित नहीं है, कोई व्यक्ति गिरफ्तार किया जाए या कोई सम्पत्ति कुर्क की जाए और जिस न्यायालय से ऐसा आवेदन किया जाए, उसकी अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं से बाहर ऐसा व्यक्ति निवास करता है या ऐसी सम्पत्ति स्थित है वहां न्यायालय स्वविवेकानुसार

---

1. 1925 के अधिनियम सं० 23 की धारा 3 द्वारा अन्तःस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 45 द्वारा (1-2-1977 से) उपधारा (1) के स्थान पर प्रतिस्थापित।

गिरफ्तारी का वारंट निकाल सकेगा या कुर्की का आदेश कर सकेगा और जिले के उस न्यायालय को, जिसकी अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर ऐसा व्यक्ति निवास करता है या ऐसी सम्पत्ति स्थित है वारंट या आदेश की एक प्रति गिरफ्तारी या कुर्की के खर्चों की अधिसंभाव्य रकम के सहित भेज सकेगा।

(2) जिला न्यायालय ऐसी प्रति और रकम की प्राप्ति पर अपने अधिकारियों द्वारा या अपने अधीनस्थ न्यायालय द्वारा गिरफ्तारी या कुर्की करवाएगा, और जिस न्यायालय ने गिरफ्तारी या कुर्की का ऐसा वारंट निकाला था या आदेश किया था उसको इत्तला भेजेगा।

(3) इस धारा के अधीन गिरफ्तारी करने वाला न्यायालय गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को उस न्यायालय को भेजेगा, जिसने गिरफ्तारी का वारंट निकाला था किन्तु यदि गिरफ्तार किया गया व्यक्ति पूर्वकथित न्यायालय को समाधान प्रदान करने वाला हेतुक इस बात के लिए दर्शित कर दे कि उसे पश्चात्कथित न्यायालय को क्यों न भेजा जाए अथवा पश्चात्कथित न्यायालय के समक्ष अपनी उपसंजाति के लिए या ऐसी किसी डिक्री की तुष्टि के लिए, जो उस न्यायालय द्वारा उसके विरुद्ध पारित की जाए, पर्याप्त प्रतिभूति दे दे तो इन दोनों दशाओं में से हर एक में वह न्यायालय, जिसने गिरफ्तारी की है, उसे छोड़ देगा।

(4) इस धारा के अधीन गिरफ्तार किया जाने वाला व्यक्ति या कुर्क की जाने वाली जंगम सम्पत्ति बंगाल के फोर्ट विलियम, या मद्रास के या मुम्बई के उच्च न्यायालय की [1]*** मामूली आरम्भिक सिविल अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर है वहां गिरफ्तारी के वारंट की या कुर्की के आदेश की प्रति और गिरफ्तारी या कुर्की के खर्चों की अधिसंभाव्य रकम, यथास्थिति, कलकत्ता, मद्रास[2][या मुम्बई] के लघुवाद न्यायालय को भेजी जाएगी और वह न्यायालय उस प्रति और उस रकम के प्राप्त होने पर ऐसे अग्रसर होगा मानो वह जिला न्यायालय हो।

137. अधीनस्थ न्यायालयों की भाषा—(1) वह भाषा जो इस संहिता के प्रारंभ पर उच्च न्यायालय के अधीनस्थ किसी न्यायालय की भाषा है, उस अधीनस्थ न्यायालय की भाषा तब तक बनी रहेगी जब तक राज्य सरकार अन्यथा निदेश न दे।

(2) राज्य सरकार यह घोषणा कर सकेगी कि किसी भी ऐसे न्यायालय की भाषा क्या होगी और किस लिपि में ऐसे न्यायालयों को आवेदन और उनमें की कार्यवाहियां लिखी जाएंगी।

(3) जहां यह संहिता साक्ष्य के अभिलेखन से भिन्न किसी बात का किसी ऐसे न्यायालय में लिखित रूप में किया जाना अपेक्षित या अनुज्ञात करती है वहां ऐसा लेखन अंग्रेजी में किया जा सकेगा, किन्तु यदि कोई पक्षकार या उसका प्लीडर अंग्रेजी नहीं जानता है तो न्यायालय की भाषा में अनुवाद उसकी प्रार्थना पर उसे दिया जाएगा और न्यायालय ऐसे अनुवाद के खर्चों के संदाय के सम्बन्ध में ऐसा आदेश करेगा जो वह ठीक समझे।

138. साक्ष्य के अंग्रेजी में अभिलिखित किए जाने की अपेक्षा करने की उच्च न्यायालय की शक्ति—(1) [3][उच्च न्यायालय], राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, ऐसी अधिसूचना में विनिर्दिष्ट या उसमें दिए हुए वर्णन वाले किसी न्यायाधीश के बारे में निदेश दे सकेगा कि उन मामलों में, जिनमें अपील अनुज्ञात है, साक्ष्य अंग्रेजी भाषा में और विहित रीति से उसके द्वारा लिखा जाएगा।

(2) जहां न्यायालय उपधारा (1) के अधीन निदेश का अनुपालन करने से किसी पर्याप्त कारण से निवारित हो जाता है वहां वह उस कारण को अभिलिखित करेगा और खुले न्यायालय में बोलकर साक्ष्य लिखवाएगा।

139. शपथ-पत्र के लिए शपथ किसके द्वारा दिलाई जाएगी—इस संहिता के अधीन किसी भी शपथ-पत्र की दशा में,—

(क) कोई भी न्यायालय या मजिस्ट्रेट; अथवा

[4][(कक) नोटेरी अधिनियम, 1952 (1952 का 53) के अधीन नियुक्त नोटेरी; अथवा]

(ख) ऐसा कोई भी अधिकारी या अन्य व्यक्ति, जिसे उच्च न्यायालय इस निमित्त नियुक्त करे; अथवा

---

1. भारत शासन (भारतीय विधि अनुकूलन) आदेश, 1937 द्वारा "या लोअर बर्मा के मुख्य न्यायालय की" शब्दों का लोप किया गया।
2. भारत शासन (भारतीय विधि अनुकूलन) आदेश, 1937 द्वारा "मुम्बई या रंगून" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. 1914 के अधिनियम सं॰ 4 की धारा 2 और अनुसूची के भाग 1 द्वारा "स्थानीय स्वशासन" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
4. 1976 के अधिनियम सं॰ 104 की धारा 46 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

(ग) किसी अन्य न्यायालय द्वारा, जिसे राज्य सरकार ने इस निमित्त साधारणतया या विशेष रूप से सशक्त किया है, नियुक्त किया गया कोई भी अधिकारी,

अभिसाक्षी को शपथ दिला सकेगा।

140. उद्धारण, आदि के मामलों में असेसर—(1) नावधिकरण या उपनावधिकरण विषयक ऐसे मामले में जो उद्धारण, अनुकर्षण या टक्कर का है, न्यायालय चाहे वह अपनी आरम्भिक अधिकारिता का प्रयोग कर रहा हो या अपीली अधिकारिता का, अपनी सहायता के लिए ऐसी रीति से, जो वह निर्दिष्ट करे या जो विहित की जाए, दो सक्षम असेसरों को, यदि वह ठीक समझे, समन कर सकेगा और ऐसे मामले में के पक्षकारों में से किसी के निवेदन पर समन करेगा और तदनुसार ऐसे असेसर हाजिर होंगे और सहायता करेंगे।

(2) हर ऐसा असेसर अपनी हाजिरी के लिए ऐसी फीस पाएगा जो पक्षकारों में से ऐसे पक्षकार द्वारा संदत्त की जाएगी जो न्यायालय निर्दिष्ट करे या जो विहित की जाए।

141. प्रकीर्ण कार्यवाहियां—उस प्रक्रिया का जो वादों के विषय में इस संहिता में उपबन्धित है, सिविल अधिकारिता वाले किसी भी न्यायालय में की सभी कार्यवाहियों में वहां तक अनुसरण किया जाएगा जहां तक वह लागू की जा सके।

[1][**स्पष्टीकरण**—इस धारा में, "कार्यवाही" शब्द के अन्तर्गत आदेश 9 के अधीन कार्यवाही है, किन्तु इसके अन्तर्गत संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन कार्यवाही नहीं है।]

142. आदेशों और सूचनाओं का लिखित होना—वे सभी आदेश और सूचनाएं, जिनकी तामील इस संहिता के अधीन किसी व्यक्ति पर की जाए या जो उसे दी जाएं, लिखित रूप में होंगी।

143. डाक महसूल—जहां इस संहिता के अधीन निकाली गई और डाक द्वारा प्रेषित किसी सूचना, समन या पत्र पर डाक महसूल प्रभार्य है वहां ऐसा डाक महसूल और उनके रजिस्ट्रीकरण की फीस उस समय के भीतर संदत्त की जाएगी जो उस पत्र-व्यवहार के लिए किए जाने के पूर्व नियत किया जाएगा :

परन्तु राज्य सरकार [2]*** ऐसे डाक महसूल या फीस से या दोनों से छूट दे सकेगी या उसके बदले में उद्ग्रहणीय न्यायालय फीस का मापमान विहित कर सकेगी।

144. प्रत्यास्थापन के लिए आवेदन—(1) जहां कि और जहां तक कि किसी डिक्री [3][या आदेश] में [4][किसी अपील, पुनरीक्षण या अन्य कार्यवाही में फेरफार किया जाए या उसे उलटा जाए अथवा उसको इस प्रयोजन के लिए संस्थित किसी वाद में अपास्त किया जाए या उपान्तरित किया जाए वहां और वहां तक वह न्यायालय जिसने डिक्री या आदेश पारित किया था,] उस पक्षकार के आवेदन पर जो प्रत्यास्थापन द्वारा या अन्यथा कोई फायदा पाने का हकदार है, ऐसा प्रत्यास्थापन कराएगा जिससे पक्षकार, जहां तक हो सके, उस स्थिति में हो जाएंगे जिसमें वे होते यदि वह डिक्री [3][या आदेश] या [4][उसका वह भाग जिसमें फेरफार किया गया है या जिसे उलटा गया है या अपास्त किया गया है या उपान्तरित किया गया है,] न दिया गया होता और न्यायालय इस प्रयोजन से कोई ऐसे आदेश जिनके अन्तर्गत खर्चों के प्रतिदाय के लिए और ब्याज, नुकसानी, प्रतिकर और अन्तःकालीन लाभों के संदाय के लिए आदेश होंगे, कर सकेगा जो [4][उस डिक्री या आदेश को ऐसे फेरफार करने, उलटने, अपास्त करने या उपान्तरण के उचित रूप में पारिणामिक है]।

[5][**स्पष्टीकरण**—इस धारा के प्रयोजनों के लिए "वह न्यायालय जिसने डिक्री या आदेश पारित किया था" पद के बारे में यह समझा जाएगा कि उसके अन्तर्गत निम्नलिखित हैं:—

(क) जहां डिक्री या आदेश में फेरफार या उलटाव अपीली या पुनरीक्षण अधिकारिता के प्रयोग में किया गया है वहां प्रथम बार का न्यायालय;

(ख) जहां डिक्री या आदेश पृथक् वाद में अपास्त किया गया है वहां प्रथम बार का वह न्यायालय जिसने ऐसी डिक्री या आदेश पारित किया था;

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 47 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
2. 1920 के अधिनियम सं० 38 की धारा 2 और अनुसूची 1 के भाग 1 द्वारा "सपरिषद् गवर्नर जनरल की मंजूरी से" शब्दों का लोप किया गया।
3. 1956 के अधिनियम सं० 66 की धारा 13 द्वारा अन्तःस्थापित।
4. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 48 द्वारा (1-2-1977 से) कुछ शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।
5. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 48 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

(ग) जहां प्रथम बार का न्यायालय विद्यमान नहीं रहा है या उसकी उसे निष्पादित करने की अधिकारिता नहीं रही है वहां वह न्यायालय जिसे ऐसे वाद का विचारण करने की अधिकारिता होती यदि वह वाद जिसमें डिक्री या आदेश पारित किया गया था, इस धारा के अधीन प्रत्यास्थापन के लिए आवेदन किए जाने के समय संस्थित किया गया होता।]

(2) कोई भी वाद कोई ऐसा प्रत्यास्थापन या अन्य अनुतोष अभिप्राप्त करने के प्रयोजन से संस्थित नहीं किया जाएगा जो उपधारा (1) के अधीन आवेदन द्वारा अभिप्राप्त किया जा सकता था।

145. प्रतिभू के दायित्व का प्रवर्तन—[1][जहां किसी व्यक्ति ने]—

(क) किसी डिक्री या उसके किसी भाग के पालन के लिए, अथवा

(ख) डिक्री के निष्पादन में ली गई किसी सम्पत्ति के प्रत्यास्थापन के लिए, अथवा

(ग) किसी वाद में या उसके परिणामस्वरूप किसी कार्यवाही में न्यायालय के किसी आदेश के अधीन किसी धन के संदाय के लिए या किसी व्यक्ति पर उसके अधीन अधिरोपित किसी शर्त की पूर्ति के लिए,

[1][प्रतिभूति या प्रत्याभूति दे दी है वहां वह डिक्री या आदेश, डिक्रियों के निष्पादन के लिए इसमें उपबन्धित रीति से निष्पादित किया जाएगा, अर्थात्:—

(i) यदि उसने अपने को व्यक्तिगत रूप से दायी बनाया है तो उसके विरुद्ध उस विस्तार तक;

(ii) यदि उसने प्रतिभूति के रूप में कोई सम्पत्ति दी है तो ऐसी प्रतिभूति के विस्तार तक उस सम्पत्ति के विक्रय द्वारा;

(iii) यदि मामला खण्ड (i) और खण्ड (ii) दोनों के अधीन आता है तो उन खंडों के विनिर्दिष्ट विस्तार तक,

और ऐसे व्यक्ति के बारे में यह समझा जाएगा कि वह धारा 47 के अर्थ में पक्षकार है:]

परन्तु यह तब जब कि ऐसी सूचना, जो न्यायालय हर एक मामले में पर्याप्त समझे, प्रतिभू को दी जा चुकी हो।

146. प्रतिनिधियों द्वारा या उनके विरुद्ध कार्यवाहियां—उसके सिवाय जैसा इस संहिता द्वारा या तत्समय प्रवृत्त किसी विधि द्वारा अन्यथा उपबन्धित है, जहां किसी व्यक्ति द्वारा या उसके विरुद्ध कोई कार्यवाही की जा सकती है या आवेदन किया जा सकता है वहां उससे व्युत्पन्न अधिकार के अधीन दावा करने वाले किसी भी व्यक्ति द्वारा या उसके विरुद्ध वह कार्यवाही की जा सकेगी या आवेदन किया जा सकेगा।

147. नियोज्यता के अधीन व्यक्तियों द्वारा सहमति या करार—उन सभी वादों में, जिनमें नियोज्यता के अधीन कोई व्यक्ति पक्षकार है, किसी भी कार्यवाही के सम्बन्ध में कोई भी सहमति या करार, यदि वह उससे वाद-मित्र या वादार्थ संरक्षक द्वारा न्यायालय की अभिव्यक्त इजाजत से दी जाए या किया जाए तो वह ऐसा ही बल या प्रभाव रखेगी या रखेगा मानो ऐसा व्यक्ति किसी नियोज्यता के अधीन नहीं था और उसने ऐसी सहमति दी थी या ऐसा करार किया था।

148. समय का बढ़ाया जाना—जहां न्यायालय ने इस संहिता द्वारा विहित या अनुज्ञात कोई कार्य करने के लिए कोई अवधि नियत या अनुदत्त की है वहां न्यायालय ऐसी अवधि को स्वविवेकानुसार समय-समय पर बढ़ा सकेगा, यद्यपि पहले नियत या अनुदत्त अवधि का अवसान हो चुका हो।

[2][148क. केविएट दायर करने का अधिकार—(1) जहां किसी न्यायालय में संस्थित या शीघ्र ही संस्थित होने वाले किसी वाद या कार्यवाही में किसी आवेदन का किया जाना प्रत्याशित है या कोई आवेदन किया गया है वहां कोई व्यक्ति जो ऐसे आवेदन की सुनवाई में न्यायालय के समक्ष उपस्थित होने के अधिकार का दावा करता है उसके बारे में केविएट दायर कर सकेगा।

(2) जहां उपधारा (1) के अधीन कोई केविएट दायर किया गया है वहां वह व्यक्ति जिसके द्वारा केविएट दायर किया गया है (जिसे इसमें इसके पश्चात् केविएटकर्ता कहा गया है), उस व्यक्ति पर जिसके द्वारा उपधारा (1) के अधीन आवेदन किया गया है या किए जाने की प्रत्याशा है, केविएट की सूचना की तामील रसीदी रजिस्ट्री डाक द्वारा करेगा।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 49 द्वारा (1-2-1977 से) कुछ शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 50 द्वारा (1-5-1977 से) अन्तःस्थापित।

(3) जहां उपधारा (1) के अधीन कोई केविएट दायर किए जाने के पश्चात् किसी वाद या कार्यवाही में कोई आवेदन फाइल किया जाता है वहां न्यायालय आवेदन की सूचना केविएटकर्ता को देगा।

(4) जहां आवेदक पर किसी केविएट की सूचना की तामील की गई है वहां वह उसके द्वारा किए गए आवेदन की और उस आवेदन के समर्थन में उसके द्वारा फाइल किए गए या फाइल किए जाने वाले किसी कागज या दस्तावेज की प्रतियां केविएटकर्ता के खर्चे पर केविएटकर्ता को तुरन्त देगा।

(5) जहां उपधारा (1) के अधीन कोई केविएट दायर किया गया है वहां ऐसा केविएट उस तारीख से जिसको वह दायर किया गया था, नब्बे दिन के अवसान के पश्चात् प्रवृत्त नहीं रहेगा जब तक कि उपधारा (1) में निर्दिष्ट आवेदन उक्त अवधि के अवसान के पूर्व नहीं किया गया हो।]

149. न्यायालय-फीस की कमी को पूरा करने की शक्ति—जहां न्यायालय-फीस से सम्बन्धित तत्समय प्रवृत किसी विधि द्वारा किसी दस्तावेज के लिए विहित पूरी फीस या उसका कोई भाग संदत्त नहीं किया गया है वहां जिस व्यक्ति द्वारा ऐसी फीस संदेय है उसे न्यायालय किसी भी प्रक्रम में स्वविवेकानुसार अनुज्ञात कर सकेगा कि वह, यथास्थिति, ऐसी पूरी न्यायालय-फीस या उसका वह भाग संदत्त करे और ऐसा संदाय किए जाने पर उस दस्तावेज का, जिसकी बाबत वह फीस संदेय है, वही बल और प्रभाव होगा मानो ऐसी फीस पहली बार ही संदत्त कर दी गई हो।

150. कारबार का अन्तरण—उसके सिवाय जैसा अन्यथा उपबन्धित है, जहां किसी न्यायालय का कारबार किसी अन्य न्यायालय को अन्तरित कर दिया गया है वहां जिस न्यायालय को कारबार इस प्रकार अन्तरित किया गया है उसकी वे ही शक्तियां होंगी और वह उन्हीं कर्तव्यों का पालन करेगा जो उस न्यायालय को और उस पर इस संहिता द्वारा या इसके अधीन क्रमशः प्रदत्त और अधिरोपित थे जिससे कारबार इस प्रकार अन्तरित किया गया था।

151. न्यायालय की अन्तर्निहित शक्तियों की व्यावृति—इस संहिता की किसी भी बात के बारे में यह नहीं समझा जाएगा कि वह ऐसे आदेशों के देने की न्यायालय की अन्तर्निहित शक्ति को परिसीमित या अन्यथा प्रभावित करती है, जो न्याय के उद्देश्यों के लिए या न्यायालय की आदेशिका के दुरुपयोग का निवारण करने के लिए आवश्यक है।

152. निर्णयों, डिक्रियों या आदेशों का संशोधन—निर्णयों, डिक्रियों या आदेशों में की लेखन या गणित सम्बन्धी भूलें या किसी आकस्मिक भूल या लोप से उसमें हुई गलतियां न्यायालय द्वारा स्वप्रेरणा से या पक्षकारों में से किसी के आवेदन पर किसी भी समय शुद्ध की जा सकेंगी।

153. संशोधन करने की साधारण शक्ति—न्यायालय किसी भी समय और खर्च-सम्बन्धी ऐसी शर्तों पर या अन्यथा जो वह ठीक समझे, वाद की किसी भी कार्यवाही में की किसी भी त्रुटि या गलती को संशोधित कर सकेगा, और ऐसी कार्यवाही द्वारा उठाए गए या उस पर अवलंबित वास्तविक प्रश्न या विवाद्यक के अवधारण के प्रयोजन के लिए सभी आवश्यक संशोधन किए जाएंगे।

[1] [**153क. जहां अपील संक्षेपतः खारिज की जाती है वहां डिक्री या आदेश का संशोधन करने की शक्ति**—जहां अपील न्यायालय आदेश 41 के नियम 11 के अधीन कोई अपील खारिज करता है वहां धारा 152 के अधीन उस न्यायालय को उस डिक्री या आदेश को जिसके विरुद्ध अपील की गई है, संशोधित करने की शक्ति का प्रयोग उस न्यायालय द्वारा जिसने प्रथम बार डिक्री या आदेश पारित किया है, इस बात के होते हुए भी किया जा सकेगा कि अपील के खारिज किए जाने का प्रभाव, प्रथम बार के न्यायालय द्वारा पारित, यथास्थिति, डिक्री या आदेश की पुष्टि में हुआ है।

153ख. विचारण के स्थान को खुला न्यायालय समझा जाना—वह स्थान जहां किसी वाद के विचारण के प्रयोजन के लिए कोई सिविल न्यायालय लगता है, खुला न्यायालय समझा जाएगा और उसमें साधारणतः जनता की वहां तक पहुंच होगी जहां तक जनता इसमें सुविधापूर्वक समा सके:

परन्तु यदि पीठासीन न्यायाधीश ठीक समझे तो वह किसी विशिष्ट मामले की जांच या विचारण के किसी भी प्रक्रम पर यह आदेश दे सकता है कि साधारणतः जनता या किसी विशिष्ट व्यक्ति की न्यायालय द्वारा प्रयुक्त कमरे या भवन तक पहुंच नहीं होगी या वह उसमें नहीं आएगा या वह नहीं रहेगा।]

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 51 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

154. [अपील के वर्तमान अधिकार की व्यावृति।]—निरसन और संशोधन अधिनियम, 1952 (1952 का 48) की धारा 2 और अनुसूची 1 द्वारा निरसित।

155. [कुछ अधिनियमों का संशोधन।]—निरसन और संशोधन अधिनियम, 1952 (1952 का 48) की धारा 2 और अनुसूची 1 द्वारा निरसित।

156. [निरसन।]—द्वितीय निरसन और संशोधन अधिनियम, 1914 (1914 का 17) की धारा 3 और अनुसूची 2 द्वारा निरसित।

157. निरसित अधिनियमितियों के अधीन आदेशों का चालू रहना—1859 के अधिनियम 8 या किसी भी सिविल प्रक्रिया संहिता या उसका संशोधन करने वाले किसी भी अधिनियम या एतद्द्वारा निरसित किसी भी अन्य अधिनियमिति के अधीन प्रकाशित अधिसूचनाएं, की गई घोषणाएं और बनाए गए नियम, नियत किए गए स्थान, फाइल किए गए करार, विहित मापमान, विरचित प्ररूप, की गई नियुक्तियां और प्रदत्त शक्तियां जहां तक वे इस संहिता से संगत हैं, वही बल और प्रभाव रखेंगी मानो वे इस संहिता के अधीन और इसके द्वारा इस निमित्त सशक्त प्राधिकारी द्वारा क्रमशः प्रकाशित की गई, बनाए गए, नियत किए गए, फाइल किए गए, विहित किए गए, विरचित किए गए और प्रदत्त की गई हों।

158. सिविल प्रक्रिया संहिता और अन्य विकसित अधिनियमितियों के प्रति निर्देश—इस संहिता के प्रारंभ के पूर्व पारित या निकाली गई ऐसी हर एक अधिनियमिति या अधिसूचना में, जिसमें 1859 के अधिनियम 8 या किसी भी सिविल प्रक्रिया संहिता या उसका संशोधन करने वाले किसी भी अधिनियम या एतद्द्वारा निरसित किसी भी अन्य अधिनियमिति के प्रति या उसके किसी भी अध्याय या धारा के प्रति निर्देश किया गया है, ऐसे निर्देश को, जहां तक हो सके, इस संहिता या इसके तत्स्थानी भाग, आदेश, धारा या नियम के प्रति निर्देश माना जाएगा।

पहली अनुसूची

आदेश 1

वादों के पक्षकार

नियम

1. वादियों के रूप में कौन संयोजित किए जा सकेंगे।
2. पृथक् विचारण का आदेश करने की न्यायालय की शक्ति।
3. प्रतिवादियों के रूप में कौन संयोजित किए जा सकेंगे।
3क. जहां प्रतिवादियों के संयोजन से उलझन या विचारण में विलंब हो सकता है वहां पृथक् विचारण का आदेश देने की शक्ति।
4. न्यायालय, संयुक्त पक्षकारों में से एक या अधिक के पक्ष में या उनके विरुद्ध निर्णय दे सकेंगे।
5. दावाकृत सम्पूर्ण अनुतोष में प्रतिवादी का हितबद्ध होना आवश्यक नहीं है।
6. एक ही संविदा के आधार पर दायी पक्षकारों का संयोजन।
7. जब वादी को संदेह है कि किससे प्रतितोष चाहा गया है।
8. एक ही हित में सभी व्यक्तियों की ओर से एक व्यक्ति वाद ला सकेगा या प्रतिरक्षा कर सकेगा।
8क. न्यायालय की कार्यवाही में राय देने या भाग लेने के लिए किसी व्यक्ति या व्यक्तियों के निकाय को अनुज्ञात करने की शक्ति।
9. कुसंयोजन और असंयोजन।
10. गलत वादी के नाम से वाद।
न्यायालय पक्षकारों का नाम काट सकेगा या जोड़ सकेगा।
जहां प्रतिवादी जोड़ा जाए वहां वादपत्र का संशोधन किया जाना।
10क. न्यायालय की उसको सम्बोधित करने के लिए किसी प्लीडर से अनुरोध करने की शक्ति।
11. वाद का संचालन।
12. कई वादियों या प्रतिवादियों में से एक का अन्यों के लिए उपसंजात होना।
13. असंयोजन या कुसंयोजन के बारे में आक्षेप।

नियम

आदेश 2

वाद की विरचना

1. वाद की विरचना।
2. वाद के अन्तर्गत सम्पूर्ण दावा होगा।
   दावे के भाग का त्याग।
   कई अनुतोषों में से एक के लिए वाद लाने का लोप।
3. वाद-हेतुकों का संयोजन।
4. स्थावर सम्पत्ति के प्रत्युद्धरण के लिए केवल कुछ दावों का संयोजित किया जाना।
5. निष्पादक, प्रशासक या वारिस द्वारा या उसके विरुद्ध दावे।
6. पृथक् विचारण का आदेश देने की न्यायालय की शक्ति।
7. कुसंयोजन के बारे में आक्षेप।

आदेश 3

मान्यताप्राप्त अभिकर्ता और प्लीडर

1. उपसंजातियां, आदि स्वयं या मान्यताप्राप्त अभिकर्ता द्वारा या प्लीडर द्वारा की जा सकेंगी।
2. मान्यताप्राप्त अभिकर्ता।
3. मान्यताप्राप्त अभिकर्ता पर आदेशिका की तामील।
4. प्लीडर की नियुक्ति।
5. प्लीडर पर आदेशिका की तामील।
6. अभिकर्ता तामील का प्रतिग्रहण करेगा।
   नियुक्ति लिखित में होगी और न्यायालय में फाइल की जाएगी।

आदेश 4

वादों का संस्थित किया जाना

1. वादपत्र द्वारा वाद प्रारंभ होगा।
2. वादों का रजिस्टर

आदेश 5

समनों का निकाला जाना और उनकी तामील

समनों का निकाला जाना

1. समन।
2. समनों से उपाबद्ध प्रति या कथन
3. न्यायालय प्रतिवादी या वादी को स्वयं उपसंजात होने के लिए आदेश दे सकेगा।
4. किसी भी पक्षकार को स्वयं उपसंजात होने के लिए तब तक आदेश नहीं किया जाएगा जब तक कि वह किन्हीं निश्चित सीमाओं के भीतर निवासी न हो।
5. समन या तो विवाद्यकों के स्थिरीकरण के लिए या अन्तिम निपटारे के लिए होगा।
6. प्रतिवादी की उपसंजाति के लिए दिन नियत किया जाना।
7. समन प्रतिवादी को यह आदेश देगा कि वह वे दस्तावेजें पेश करे, जिन पर वह निर्भर करता है।
8. अंतिम निपटारे के लिए समन निकाले जाने पर प्रतिवादी को यह निदेश होगा कि वह अपने साक्षियों को पेश करे।

नियम

समन की तामील

9. तामील के लिए समन का परिदान या प्रेषण।
10. तामील का ढंग।
11. अनेक प्रतिवादियों पर तामील।
12. जब साध्य हो तब समन की तामील स्वयं प्रतिवादी पर, अन्यथा उसके अभिकर्ता पर की जाएगी।
13. उस अभिकर्ता पर तामील जिसके द्वारा प्रतिवादी कारबार करता है।
14. स्थावर सम्पत्ति के वादों में भारसाधक अभिकर्ता पर तामील।
15. जहां तामील प्रतिवादी के कुटुम्ब के वयस्क सदस्य पर की जा सकेगी।
16. वह व्यक्ति जिस पर तामील की गई है, अभिस्वीकृति हस्ताक्षरित करेगा।
17. जब प्रतिवादी तामील का प्रतिग्रहण करने से इंकार करे या न पाया जाए, तब प्रक्रिया।
18. तामील करने के समय और रीति का पृष्ठांकन।
19. तामील करने वाले अधिकारी की परीक्षा।
19क. वैयक्तिक तामील के अतिरिक्त डाक द्वारा तामील के लिए समन का एक साथ जारी किया जाना।
20. प्रतिस्थापित तामील।
प्रतिस्थापित तामील का प्रभाव।
जहां तामील प्रतिस्थापित की गई हो वहां उपसंजाति के लिए समय का नियत किया जाना।
20क. [निरसित।]
21. जहां प्रतिवादी किसी अन्य न्यायालय की अधिकारिता के भीतर निवास करता है वहां समन की तामील।
22. बाहर के न्यायालयों द्वारा निकाले गए समन की प्रेसिडेंसी नगरों में तामील।
23. जिस न्यायालय को समन भेजा गया है उसका कर्तव्य।
24. कारागार में प्रतिवादी पर तामील।
25. वहां तामील, जहां प्रतिवादी भारत के बाहर निवास करता है और उसका कोई अभिकर्ता नहीं है।
26. राजनीतिक अभिकर्ता या न्यायालय की मार्फत विदेशी राज्यक्षेत्र में तामील।
26क. विदेशों के अधिकारियों को समन का भेजा जाना।
27. सिविल लोक अधिकारी पर या रेल कम्पनी या स्थानीय प्राधिकारी के सेवक पर तामील।
28. सैनिकों, नौसैनिकों या वायुसैनिकों पर तामील।
29. उस व्यक्ति का कर्तव्य जिसको समन तामील के लिए परिदत्त किया जाए या भेजा जाए।
30. समन के बदले पत्र का प्रतिस्थापित किया जाना।

आदेश 6

अभिवचन साधारणतः

1. अभिवचन।
2. अभिवचन में तात्त्विक तथ्यों का, न कि साक्ष्य का, कथन होगा।
3. अभिवचन का प्ररूप।
4. जहां आवश्यक हो वहां विशिष्टियों का दिया जाना।
5. अतिरिक्त और अधिक अच्छा कथन या विशिष्टियां।
6. पुरोभाव्य शर्त।
7. फेरबदल।
8. संविदा का प्रत्याख्यान।
9. दस्तावेज के प्रभाव का कथन किया जाना।

नियम

10. विद्वेष, ज्ञान, आदि।
11. सूचना।
12. विवक्षित संविदा या संबंध।
13. विधि की उपधारणाएं।
14. अभिवचन का हस्ताक्षरित किया जाना।

14क. सूचना की तामील के लिए पता।

15. अभिवचनों का सत्यापन।
16. अभिवचन का काट दिया जाना।
17. अभिवचन का संशोधन।
18. आदेश के पश्चात् संशोधन करने में असफल रहना।

आदेश 7

वादपत्र

1. वादपत्र में अंतर्विष्ट की जाने वाली विशिष्टियां।
2. धन के वादों में।
3. जहां वाद की विषयवस्तु स्थावर सम्पत्ति है।
4. जब वादी प्रतिनिधि के रूप में वाद लाता है।
5. प्रतिवादी के हित और दायित्व का दर्शित किया जाना।
6. परिसीमा विधि से छूट के आधार।
7. अनुतोष का विनिर्दिष्ट रूप से कथन।
8. पृथक् आधारों पर आधारित अनुतोष।
9. वादपत्र ग्रहण करने पर प्रक्रिया।
   संक्षिप्त कथन।
10. वादपत्र का लौटाया जाना।
    वादपत्र के लौटाए जाने पर प्रक्रिया।

10क. जहां वादपत्र उसके लौटाए जाने के पश्चात् फाइल किया जाता है वहां न्यायालय में उपसंजाति के लिए तारीख नियत करने की न्यायालय की शक्ति।

10ख. समुचित न्यायालय को वाद अंतरित करने की अपील न्यायालय की शक्ति।

11. वादपत्र का नामंजूर किया जाना।
12. वादपत्र के नामंजूर किए जाने पर प्रक्रिया।
13. जहां वादपत्र की नामंजूरी से नए वादपत्र का उपस्थित किया जाना प्रवारित नहीं होता।

वे दस्तावेजें जिन पर वादपत्र में निर्भर किया गया है

14. जिस दस्तावेज के आधार पर वादी वाद लाता है उसका पेश किया जाना।
    अन्य दस्तावेजों की सूची।
15. दस्तावेजें वादी के कब्जे या शक्ति में न होने की दशा में कथन।
16. खोई हुई परक्राम्य लिखतों के आधार पर वाद।
17. दुकान का बही खाता पेश करना।
    मूल प्रविष्टि का चिह्नांकित किया जाना और लौटाया जाना।
18. वादपत्र फाइल करते समय न पेश की गई दस्तावेज की अग्राह्यता।

आदेश 8

लिखित कथन, मुजरा और प्रतिदावा

नियम

1. लिखित कथन।
2. नए तथ्यों का विशेष रूप से अभिवचन करना होगा।
3. प्रत्याख्यान विनिर्दिष्टतः होगा।
4. वाग्छलपूर्ण प्रत्याख्यान।
5. विनिर्दिष्टतः प्रत्याख्यान।
6. मुजरा की विशिष्टियां लिखित कथन में दी जाएंगी।
   मुजरा का प्रभाव।

6क. प्रतिवादी द्वारा प्रतिदावा।

6ख. प्रतिदावे का कथन किया जाना।

6ग. प्रतिदावे का अपवर्जन।

6घ. वादों के बन्द कर दिए जाने का प्रभाव।

6ङ. प्रतिदावे का उत्तर देने में वादी द्वारा व्यतिक्रम।

6च. जहां प्रतिदावा सफल होता है वहां प्रतिवादी को अनुतोष।

6छ. लिखित कथन संबंधी नियमों का लागू होना।

7. पृथक् आधारों पर आधारित प्रतिरक्षा या मुजरा।
8. प्रतिरक्षा का नया आधार।

8क. प्रतिवादी का उन दस्तावेजों को पेश करने का कर्तव्य जिनके आधार पर उसने अनुतोष का दावा किया है।

9. पश्चात्वर्ती अभिवचन।
10. जब न्यायालय द्वारा अपेक्षित किए जाने पर लिखित कथन को उपस्थित करने में पक्षकार असफल रहता है तब प्रक्रिया।

आदेश 9

पक्षकारों की उपसंजाति और उनकी अनुपसंजाति का परिणाम

1. पक्षकार उस दिन उपसंजात होंगे जो प्रतिवादी के उपसंजात होने और उत्तर देने के लिए समन में नियत है।
2. जहां समनों की तामील, खर्चे देने में वादी के असफल रहने के परिणामस्वरूप नहीं हुई है वहां वाद का खारिज किया जाना।
3. जहां दोनों में से कोई भी पक्षकार उपसंजात नहीं होता है वहां वाद का खारिज किया जाना।
4. वादी नया वाद ला सकेगा या न्यायालय वाद को फाइल पर प्रत्यावर्तित कर सकेगा।
5. जहां वादी, समन तामील के बिना लौटने के पश्चात् एक मास तक नए समन के लिए आवेदन करने में असफल रहता है वहां वाद का खारिज किया जाना।
6. जब केवल वादी उपसंजात होता है तब प्रक्रिया।
   जब समन की तामील सम्यक् रूप से की गई है।
   जब समन की तामील सम्यक् रूप से नहीं की गई है।
   जब समन की तामील तो हुई हो, किंतु सम्यक् समय में नहीं हुई हो।
7. जहां प्रतिवादी स्थगित सुनवाई के दिन उपसंजात होता है और पूर्व अनुपसंजाति के लिए अच्छा हेतुक दिखाता है वहां प्रक्रिया।
8. जहां केवल प्रतिवादी उपसंजात होता है वहां प्रक्रिया।
9. व्यतिक्रम के कारण वादी के विरुद्ध पारित डिक्री नए वाद का वर्जन करती है।

नियम

10. कई वादियों में से एक या अधिक की गैरहाजिरी की दशा में प्रक्रिया।
11. कई प्रतिवादियों में से एक या अधिक की गैरहाजिरी की दशा में प्रक्रिया।
12. स्वयं उपसंजात होने के लिए आदिष्ट पक्षकार के पर्याप्त हेतुक दर्शित किए बिना गैरहाजिर रहने का परिणाम।

एकपक्षीय डिक्रियों को अपास्त करना

13. प्रतिवादी के विरुद्ध एकपक्षीय डिक्री को अपास्त करना।
14. कोई भी डिक्री विरोधी पक्षकार को सूचना के बिना अपास्त नहीं की जाएगी।

आदेश 10

न्यायालय द्वारा पक्षकारों की परीक्षा

1. यह अभिनिश्चय करना कि अभिवचनों में के अभिकथन स्वीकृत हैं या प्रत्याख्यात हैं।
2. पक्षकार की या पक्षकार के साथी की मौखिक परीक्षा।
3. परीक्षा का सार लिखा जाएगा।
4. उत्तर देने से प्लीडर के इंकार का या उत्तर देने में उसकी असमर्थता का परिणाम।

आदेश 11

प्रकटीकरण और निरीक्षण

1. परिप्रश्नों द्वारा प्रकटीकरण कराना।
2. विशिष्ट परिप्रश्नों का दिया जाना।
3. परिप्रश्नों के खर्चे।
4. परिप्रश्नों का प्ररूप।
5. नियम।
6. परिप्रश्नों के संबंध में उत्तर द्वारा आक्षेप।
7. परिप्रश्नों का अपास्त किया जाना और काट दिया जाना।
8. उत्तर में दिए गए शपथपत्र का फाइल किया जाना।
9. उत्तर में दिए गए शपथपत्र का प्ररूप।
10. कोई आक्षेप नहीं किया जाएगा।
11. उत्तर देने के या अतिरिक्त उत्तर देने के लिए आदेश।
12. दस्तावेजों के प्रकटीकरण के लिए आवेदन।
13. दस्तावेजों संबंधी शपथपत्र।
14. दस्तावेजों का पेश किया जाना।
15. अभिवचनों या शपथपत्रों में निर्दिष्ट दस्तावेजों का निरीक्षण।
16. पेश करने की सूचना।
17. जब सूचना दी गई है तब निरीक्षण के लिए समय।
18. निरीक्षण के लिए आदेश।
19. सत्यापित प्रतियां।
20. समयपूर्व प्रकटीकरण।
21. प्रकटीकरण के आदेश का अनुपालन।
22. परिप्रश्नों के उत्तरों का विचारण में उपयोग।
23. आदेश अवयस्क को लागू होगा।

आदेश 12

स्वीकृतियां

नियम

1. मामले की स्वीकृति की सूचना।
2. दस्तावेजों की स्वीकृति के लिए सूचना।
2क. यदि दस्तावेजों की स्वीकृति के लिए सूचना की तामील के पश्चात् उनसे इंकार नहीं किया जाता तो उन्हें स्वीकृत समझा जाना।
3. सूचना का प्ररूप।
3क. स्वीकृति के अभिलेखन की न्यायालय की शक्ति।
4. तथ्यों को स्वीकृत करने की सूचना।
5. स्वीकृतियों का प्ररूप।
6. स्वीकृतियों पर निर्णय।
7. हस्ताक्षर के बारे में शपथपत्र।
8. दस्तावेजों को पेश करने के लिए सूचना।
9. खर्चे।

आदेश 13

दस्तावेजों का पेश किया जाना, परिबद्ध किया जाना और लौटाया जाना

1. दस्तावेजी साक्ष्य का विवाद्यकों के स्थिरीकरण के समय या उसके पूर्व पेश किया जाना।
2. दस्तावेजों को पेश न करने का प्रभाव।
3. विसंगत या अग्राह्य दस्तावेजों का नामंजूर किया जाना।
4. साक्ष्य में गृहीत दस्तावेजों पर पृष्ठांकन।
5. बहियों, लेखाओं और अभिलेखों में की गृहीत प्रविष्टियों की प्रतियों पर पृष्ठांकन।
6. साक्ष्य में अग्राह्य होने के कारण नामंजूर दस्तावेजों पर पृष्ठांकन।
7. गृहीत दस्तावेजों का अभिलेख में सम्मिलित किया जाना और नामंजूर की गई दस्तावेजों का लौटाया जाना।
8. न्यायालय किसी दस्तावेज के परिबद्ध किए जाने का आदेश दे सकेगा।
9. गृहीत दस्तावेजों का लौटाया जाना।
10. न्यायालय स्वयं अपने अभिलेखों में से या अन्य न्यायालयों के अभिलेखों में से कागज मंगा सकेगा।
11. दस्तावेजों से संबंधित उपबंधों का भौतिक पदार्थों को लागू होना।

आदेश 14

विवाद्यकों का स्थिरीकरण और विधि विवाद्यकों के आधार पर या उन विवाद्यकों के आधार पर जिन पर रजामंदी हो गई है वाद का अवधारण

1. विवाद्यकों की विरचना।
2. न्यायालय द्वारा सभी विवाद्यकों का निर्णय सुनाया जाना।
3. वह सामग्री जिससे विवाद्यकों की विरचना की जा सकेगी।
4. न्यायालय विवाद्यकों की विरचना करने के पहले साक्षियों की या दस्तावेजों की परीक्षा कर सकेगा।
5. विवाद्यकों का संशोधन और उन्हें काट देने की शक्ति।
6. तथ्य के या विधि के प्रश्न करार द्वारा विवाद्यकों के रूप में कथित किए जा सकेंगे।

नियम

7. यदि न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि करार का निष्पादन सद्भावपूर्वक हुआ था तो वह निर्णय सुना सकेगा।

आदेश 15

प्रथम सुनवाई में वाद का निपटारा

1. जब पक्षकारों में कोई विवाद नहीं है।
2. जब कई प्रतिवादियों में से किसी एक का विवाद नहीं है।
3. जब पक्षकारों में विवाद है।
4. साक्ष्य पेश करने में असफलता।

आदेश 16

साक्षियों को समन करना और उनकी हाजिरी

1. साक्षियों की सूची और साक्षियों को समन।

1क. समन के बिना साक्षियों का पेश किया जाना।

2. समन के लिए आवेदन करने पर, साक्षी के व्यय न्यायालय में जमा कर दिए जाएंगे।
   विशेषज्ञ।
   व्ययों का मापमान।
   व्ययों का साक्षियों को सीधे संदाय किया जाना।
3. साक्षी को व्ययों का निविदान।
4. जहां अपर्याप्त राशि जमा की गई है वहां प्रक्रिया।
   एक दिन से अधिक रोके जाने पर साक्षियों के व्यय।
5. हाजिरी के समय, स्थान और प्रयोजन का समन में विनिर्दिष्ट किया जाना।
6. दस्तावेज पेश करने के लिए समन।
7. न्यायालय में उपस्थित व्यक्तियों को साक्ष्य देने या दस्तावेज पेश करने के लिए अपेक्षित करने की शक्ति।

7क. तामील के लिए पक्षकार को समन का दिया जाना।

8. समन की तामील कैसे होगी।
9. समन की तामील के लिए समय।
10. जहां साक्षी समन का अनुपालन करने में असफल रहता है वहां प्रक्रिया।
11. यदि साक्षी उपसंजात हो जाता है तो कुर्की प्रत्याहृत की जा सकेगी।
12. यदि साक्षी उपसंजात होने में असफल रहता है तो प्रक्रिया।
13. कुर्की करने का ढंग।
14. जो व्यक्ति वाद में परव्यक्ति हैं उन्हें न्यायालय साक्षियों के रूप में स्वप्रेरणा से समन कर सकेगा।
15. उन व्यक्तियों का कर्तव्य जो साक्ष्य देने या दस्तावेज पेश करने के लिए समन किए गए हैं।
16. वे कब प्रस्थान कर सकेंगे।
17. नियम 10 से नियम 13 तक का लागू होना।
18. जहां पकड़ा गया साक्षी साक्ष्य नहीं दे सकता या दस्तावेज पेश नहीं कर सकता वहां प्रक्रिया।
19. जब तक कि कोई साक्षी किन्हीं निश्चित सीमाओं के भीतर का निवासी न हो वह स्वयं हाजिर होने के लिए आदिष्ट नहीं किया जाएगा।
20. न्यायालय द्वारा बुलाए जाने पर साक्ष्य देने से पक्षकार के इंकार का परिणाम।
21. साक्षियों विषयक नियम समनित पक्षकारों को लागू होंगे।

आदेश 16क

कारागार में परिरुद्ध या निरुद्ध साक्षियों की हाजिरी

नियम

1. परिभाषाएं।
2. साक्ष्य देने के लिए बंदियों को हाजिर करने की अपेक्षा करने की शक्ति।
3. न्यायालय में व्यय का संदत्त किया जाना।
4. नियम 2 के प्रवर्तन से कतिपय व्यक्तियों को अपवर्जित करने की राज्य सरकार की शक्ति।
5. कारागार के भारसाधक अधिकारी का कुछ मामलों में आदेश को कार्यान्वित न करना।
6. बंदी का न्यायालय में अभिरक्षा में लाया जाना।
7. कारागार में साक्षी की परीक्षा के लिए कमीशन निकालने की शक्ति।

आदेश 17

स्थगन

1. न्यायालय समय दे सकेगा और सुनवाई स्थगित कर सकेगा।
स्थगन के खर्चे।
2. यदि पक्षकार नियत दिन पर उपसंजात होने में असफल रहते हैं तो प्रक्रिया।
3. पक्षकारों में से किसी पक्षकार के साक्ष्य, आदि पेश करने में असफल रहने पर भी न्यायालय आगे कार्यवाही कर सकेगा।

आदेश 18

वाद की सुनवाई और साक्षियों की परीक्षा

1. आरम्भ करने का अधिकार।
2. कथन और साक्ष्य का पेश किया जाना।
3. जहां कई विवाद्यक हैं वहां साक्ष्य।
3क. पक्षकार का अन्य साक्षियों से पहले उपसंजात होना।
4. साक्षियों की परीक्षा खुले न्यायालय में की जाएगी।
5. जिन मामलों की अपील हो सकती है उनमें साक्ष्य कैसा लिखा जाएगा।
6. अभिसाक्ष्य का भाषान्तर कब किया जाएगा।
7. धारा 138 के अधीन साक्ष्य।
8. जब साक्ष्य न्यायाधीश द्वारा नहीं लिखा गया हो तब ज्ञापन।
9. साक्ष्य अंग्रेजी में कब लिखा जा सकेगा।
10. कोई विशिष्ट प्रश्न और उत्तर लिखा जा सकेगा।
11. वे प्रश्न जिन पर आक्षेप किया गया है और जो न्यायालय द्वारा अनुज्ञात किए गए हैं।
12. साक्षियों की भावभंगी के बारे में टिप्पणियां।
13. जिन मामलों में अपील नहीं हो सकती है उन मामलों में साक्ष्य का ज्ञापन।
14. [निरसित।]

नियम

15. किसी अन्य न्यायाधीश के सामने लिए गए साक्ष्य का उपयोग करने की शक्ति।

16. साक्षी की तुरन्त परीक्षा करने की शक्ति।

17. न्यायालय साक्षी को पुनः बुला सकेगा और उसकी परीक्षा कर सकेगा।

17क. ऐसे साक्ष्य का पेश किया जाना जिसकी पहले जानकारी नहीं थी या जो सम्यक् तत्परता के होते हुए भी पेश नहीं किया जा सका था।

18. निरीक्षण करने की न्यायालय की शक्ति।

आदेश 19

शपथपत्र

1. किसी बात के शपथपत्र द्वारा साबित किए जाने के लिए आदेश देने की शक्ति।
2. अभिसाक्षी की हाजिरी प्रतिपरीक्षा के लिए कराने का आदेश देने की शक्ति।
3. वे विषय जिन तक शपथपत्र सीमित होंगे।

आदेश 20

निर्णय और डिक्री

1. निर्णय कब सुनाया जाएगा।
2. न्यायाधीश के पूर्ववर्ती द्वारा लिखे गए निर्णय को सुनाने की शक्ति।
3. निर्णय हस्ताक्षरित किया जाएगा।
4. लघुवाद न्यायालयों के निर्णय।

   अन्य मामलों के निर्णय।
5. न्यायालय हर एक विवाद्यक पर अपने विनिश्चय का कथन करेगा।

5क. जिन मामलों में पक्षकारों का प्रतिनिधित्व प्लीडरों द्वारा न किया गया हो उनमें न्यायालय द्वारा पक्षकारों को इस बात की इत्तिला देना कि अपील कहां की जा सकेगी।

6. डिक्री की अन्तर्वस्तु।

6क. दिए गए अनुतोष का निर्णय के अन्तिम पैरा में प्रमित शब्दों में उल्लिखित होना।

6ख. टाइप किए हुए निर्णयों की प्रतियां कब उपलब्ध की जाएंगी।

7. डिक्री की तारीख।

8. जहां न्यायाधीश ने डिक्री पर हस्ताक्षर करने से पूर्व अपना पद रिक्त कर दिया है वहां प्रक्रिया।

9. स्थावर सम्पत्ति के प्रत्युद्धरण के लिए डिक्री।

10. जंगम सम्पत्ति के परिदान के लिए डिक्री।

11. डिक्री किस्तों द्वारा संदाय के लिए निदेश दे सकेगी।

    डिक्री के पश्चात् किस्तों में संदाय का आदेश।

12. कब्जा और अन्तःकालीन लाभों के लिए डिक्री।

नियम

12क. स्थावर सम्पत्ति के विक्रय या पट्टे के संविदा के विनिर्दिष्ट पालन के लिए डिक्री।

13. प्रशासन-वाद में डिक्री।

14. शुफा के वाद में डिक्री।

15. भागीदारी के विघटन के लिए वाद में डिक्री।

16. मालिक और अभिकर्ता के बीच लेखा के लिए लाए गए वाद में डिक्री।

17. लेखाओं के संबंध में विशेष निदेश।

18. सम्पत्ति के विभाजन के लिए या उनमें के अंश पर पृथक् कब्जे के लिए वाद में डिक्री।

19. जब मुजरा या प्रतीपदावा अनुज्ञात किया जाए तब डिक्री।
मुजरा या प्रतीपदावा संबंधी डिक्री की अपील।

20. निर्णय और डिक्री की प्रमाणित प्रतियों का दिया जाना।

आदेश 20क

खर्चे

1. कुछ मदों के बारे में उपबन्ध।

2. उच्च न्यायालय द्वारा बनाए गए नियमों के अनुसार खर्चों का अधिनिर्णीत किया जाना।

आदेश 21

डिक्रियों और आदेशों का निष्पादन

डिक्री के अधीन धन के संदाय

1. डिक्री के अधीन धन के संदाय की रीतियां।

2. डिक्रीदार को न्यायालय के बाहर संदाय।

डिक्रियां निष्पादन करने वाले न्यायालय

3. एक से अधिक अधिकारिता में स्थित भूमि।

4. लघुवाद न्यायालय को अन्तरण।

5. अन्तरण की रीति।

6. जहां न्यायालय यह चाहता है कि उसकी अपनी डिक्री किसी अन्य न्यायालय द्वारा निष्पादित की जाए वहां प्रक्रिया।

7. डिक्री आदि की प्रतियां प्राप्त करने वाला न्यायालय उन्हें सबूत के बिना फाइल कर लेगा।

8. डिक्री या आदेश का उस न्यायालय द्वारा निष्पादन जिसे वह भेजा गया है।

9. अन्य न्यायालय द्वारा अन्तरित डिक्री का उच्च न्यायालय द्वारा निष्पादन।

निष्पादन के लिए आवेदन

10. निष्पादन के लिए आवेदन।

11. मौखिक आवेदन।
लिखित आवेदन।

11क. गिरफ्तारी के लिए आवेदन के आधारों का कथित होना।

12. ऐसी जंगम सम्पत्ति की कुर्की के लिए आवेदन जो निर्णीत-ऋणी के कब्जे में नहीं है।

13. स्थावर सम्पत्ति की कुर्की के आवेदन में कुछ विशिष्टियों का अन्तर्विष्ट होना।

नियम

14. कलक्टर के रजिस्टर में से प्रमाणित उद्धरणों को कुछ दशाओं में अपेक्षित करने की शक्ति।

15. संयुक्त डिक्रीदार द्वारा निष्पादन के लिए आवेदन।

16. डिक्री के अन्तरिती द्वारा निष्पादन के लिए आवेदन।

17. डिक्री के निष्पादन के लिए आवेदन प्राप्त होने पर प्रक्रिया।

18. प्रति-डिक्रियों की दशा में निष्पादन।

19. एक ही डिक्री के अधीन प्रतिदावों की दशा में निष्पादन।

20. बंधक-वादों में प्रति-डिक्रियां और प्रतिदावे।

21. एक साथ निष्पादन।

22. कुछ दशाओं में निष्पादन के विरुद्ध हेतुक दर्शित करने की सूचना।

22क. विक्रय से पूर्व किन्तु विक्रय की उद्घोषणा की तामील के पश्चात् निर्णीत-ऋणी की मृत्यु पर विक्रय का अपास्त न किया जाना।

23. सूचना के निकाले जाने के पश्चात् प्रक्रिया।

निष्पादन के लिए आदेशिका

24. निष्पादन के लिए आदेशिका।

25. आदेशिका पर पृष्ठांकन।

निष्पादन का रोका जाना

26. न्यायालय निष्पादन को कब रोक सकेगा।
निर्णीत-ऋणी से प्रतिभूति अपेक्षित करने या उस पर शर्तें अधिरोपित करने की शक्ति।

27. उन्मोचित निर्णीत-ऋणी का दायित्व।

28. डिक्री पारित करने वाले न्यायालय का या अपील न्यायालय का आदेश उस न्यायालय के लिए आबद्धकर होगा जिससे आवेदन किया गया है।

29. डिक्रीदार और निर्णीत-ऋणी के बीच वाद लम्बित रहने तक निष्पादन का रोका जाना।

निष्पादन की रीति

30. धन के संदाय की डिक्री।

31. विनिर्दिष्ट जंगम संपत्ति के लिए डिक्री।

32. विनिर्दिष्ट पालन के लिए दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए या व्यादेश के लिए डिक्री।

33. दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्रियों का निष्पादन करने में न्यायालय का विवेकाधिकार।

34. दस्तावेज के निष्पादन या परक्राम्य लिखत के पृष्ठांकन के लिए डिक्री।

35. स्थावर सम्पत्ति के लिए डिक्री।

36. जब स्थावर सम्पत्ति अभिधारी के अधिभोग में है तब ऐसी सम्पत्ति के परिदान के लिए डिक्री।

नियम

गिरफ्तारी और सिविल कारागार में निरोध

37. कारागार में निरुद्ध किए जाने के विरुद्ध हेतुक दर्शित करने के लिए निर्णीत-ऋणी को अनुज्ञा देने की वैवेकिक शक्ति।

38. गिरफ्तारी के वारण्ट में निर्णीत-ऋणी के लाए जाने के लिए निदेश होगा।

39. जीवन-निर्वाह भत्ता।

40. सूचना के आज्ञानुवर्तन में या गिरफ्तारी के पश्चात् निर्णीत-ऋणी के उपसंजात होने पर कार्यवाहियां।

सम्पत्ति की कुर्की

41. निर्णीत-ऋणी की अपनी सम्पत्ति के बारे में उसकी परीक्षा।

42. भाटक या अन्तःकालीन लाभों या तत्पश्चात् अन्य बातों के लिए जिसकी रकम वाद में अवधारित होनी है, डिक्री की दशा में कुर्की।

43. निर्णीत-ऋणी के कब्जे में की ऐसी जंगम सम्पत्ति की कुर्की जो कृषि उपज से भिन्न है।

43क. जंगम सम्पत्ति की अभिरक्षा।

44. कृषि उपज की कुर्की।

45. कुर्क की गई कृषि उपज के बारे में उपबंध।

46. ऐसे ऋण, अंश या अन्य सम्पत्ति की कुर्की जो निर्णीत-ऋणी के कब्जे में नहीं है।

46क. गारनिशी को सूचना।

46ख. गारनिशी के विरुद्ध आदेश।

46ग. विवादग्रस्त प्रश्नों का विचारण।

46घ. जहां ऋण अन्य व्यक्ति का हो वहां प्रक्रिया।

46ङ. अन्य व्यक्ति के बारे में आदेश।

46च. गारनिशी द्वारा किया गया संदाय विधिमान्य उन्मोचन होगा।

46छ. खर्चे।

46ज. अपीलें।

46झ. परक्राम्य लिखतों को लागू होना।

47. जंगम सम्पत्ति में अंश की कुर्की।

48. सरकार या रेल कम्पनी या स्थानीय प्राधिकारी के सेवक के वेतन या भत्तों की कुर्की।

48क. प्राइवेट कर्मचारियों के वेतन या भत्तों की कुर्की।

49. भागीदारी की सम्पत्ति की कुर्की।

50. फर्म के विरुद्ध डिक्री का निष्पादन।

51. परक्राम्य लिखतों की कुर्की।

52. न्यायालय या लोक अधिकारी की अभिरक्षा में की सम्पत्ति की कुर्की।

नियम

53. डिक्रियों की कुर्की।

54. स्थावर सम्पत्ति की कुर्की।

55. डिक्री की तुष्टि पर कुर्की का उठाया जाना।

56. डिक्री के अधीन हकदार पक्षकार को सिक्के या करेंसी नोटों का संदाय किए जाने का आदेश।

57. कुर्की का पर्यवसान।

दावों और आक्षेपों का न्यायनिर्णयन

58. कुर्क की गई सम्पत्ति पर दावों का और ऐसी सम्पत्ति की कुर्की के बारे में आक्षेपों का न्यायनिर्णयन।

59. विक्रय को रोकना।

विक्रय साधारणतः

64. कुर्क की गई सम्पत्ति से विक्रय किए जाने और उसके आगम हकदार व्यक्ति को दिए जाने के लिए आदेश करने की शक्ति।

65. विक्रय किस के द्वारा संचालित किए जाएं और कैसे दिए जाएं।

66. लोक नीलाम द्वारा किए जाने वाले विक्रयों की उद्घोषणा।

67. उद्घोषणा करने की रीति।

68. विक्रय का समय।

69. विक्रय का स्थगन या रोका जाना।

70. [निरसित।]

71. व्यतिक्रम करने वाला क्रेता पुनर्विक्रय में हुई हानि के लिए उत्तरदायी होगा।

72. अनुज्ञा के बिना डिक्रीदार सम्पत्ति के लिए न बोली लगाएगा और न उसका क्रय करेगा। जहां डिक्रीदार क्रय करता है वहां डिक्री की रकम संदाय मानी जा सकेगी।

72क. बंधकदार द्वारा न्यायालय की इजाजत के बिना विक्रय में बोली का न लगाया जाना।

73. अधिकारियों द्वारा बोली लगाने का क्रय करने पर निर्बंधन।

जंगम सम्पत्ति का विक्रय

74. कृषि उपज का विक्रय।

75. उगती फसलों के संबंध में विशेष उपबंध।

76. परक्राम्य लिखतें और निगमों के अंश।

77. लोक नीलाम द्वारा विक्रय।

78. अनियमितता विक्रय को दूषित नहीं करेगी किन्तु कोई भी व्यक्ति, जिसे क्षति हुई है, वाद ला सकेगा।

79. जंगम सम्पत्ति, ऋणों और अंशों का परिदान।

80. परक्राम्य लिखतों और अंशों का अन्तरण।

81. अन्य सम्पत्ति की दशा में निहित करने वाला आदेश।

नियम

स्थावर संपत्ति का विक्रय

82. कौन से न्यायालय विक्रयों के लिए आदेश कर सकेंगे।

83. विक्रय का इसलिए मुल्तवी किया जाना कि निर्णीत-ऋणी डिक्री की रकम जुटा सके।

84. क्रेता द्वारा निक्षेप और उसके व्यतिक्रम पर पुनर्विक्रय।

85. क्रय धन के पूरे संदाय के लिए समय।

86. संदाय में व्यतिक्रम होने पर प्रक्रिया।

87. पुनर्विक्रय पर अधिसूचना।

88. सह-अंशधारी की बोली को अधिमान प्राप्त होगा।

89. निक्षेप करने पर विक्रय को अपास्त कराने के लिए आवेदन।

90. विक्रय को अनियमितता या कपट के आधार पर अपास्त कराने के लिए आवेदन।

91. विक्रय को इस आधार पर अपास्त कराने के लिए क्रेता द्वारा आवेदन कि उसमें निर्णीत-ऋणी का कोई विक्रय हित नहीं था।

92. विक्रय कब आत्यन्तिक हो जाएगा या अपास्त कर दिया जाएगा।

93. कुछ दशाओं में क्रय धन की वापसी।

94. क्रेता को प्रमाणपत्र।

95. निर्णीत-ऋणी के अधिभोग में की सम्पत्ति का परिदान।

96. अभिधारी के अधिभोग में की सम्पत्ति का परिदान।

डिक्रीदार या क्रेता को कब्जा परिदत्त किए जाने में प्रतिरोध

97. स्थावर सम्पत्ति पर कब्जा करने में प्रतिरोध या बाधा।

98. न्यायनिर्णयन के पश्चात् आदेश।

99. डिक्रीदार या क्रेता द्वारा बेकब्जा किया जाना।

100. बेकब्जा किए जाने का परिवाद करने वाले आवेदन पर पारित किया जाने वाला आदेश।

101. अवधारित किए जाने वाले प्रश्न।

102. वादकालीन अन्तरिती को इन नियमों का लागू न होना।

103. आदेशों को डिक्री माना जाना।

104. नियम 101 या नियम 103 के अधीन आदेश लम्बित वाद के परिणाम के अधीन होगा।

105. आवेदन की सुनवाई।

106. एकपक्षीय रूप से पारित आदेशों, आदि का अपास्त किया जाना।

नियम

आदेश 22

पक्षकारों की मृत्यु, उनका विवाह और दिवाला

1. यदि वाद लाने का अधिकार बचा रहता है तो पक्षकार की मृत्यु से उसका उपशमन नहीं हो जाता।
2. जहां कई वादियों या प्रतिवादियों में से एक की मृत्यु हो जाती है और वाद लाने का अधिकार बचा रहता है वहां प्रक्रिया।
3. कई वादियों में से एक या एकमात्र वादी की मृत्यु की दशा में प्रक्रिया।
4. कई प्रतिवादियों में से एक या एकमात्र प्रतिवादी की मृत्यु की दशा में प्रक्रिया।

4क. विधिक प्रतिनिधि न होने की दशा में प्रक्रिया।

5. विधिक प्रतिनिधि के बारे में प्रश्न का अवधारण।
6. सुनवाई के पश्चात् मृत्यु हो जाने से उपशमन न होना।
7. स्त्री पक्षकार के विवाह के कारण वाद का उपशमन न होना।
8. वादी का दिवाला कब वाद का वर्जन कर देता है।
   जहां समनुदेशिती वाद चालू रखने या प्रतिभूति देने में असफल रहता है वहां प्रक्रिया।
9. उपशमन या खारिज होने का प्रभाव।
10. वाद में अन्तिम आदेश होने के पूर्व समनुदेशन की दशा में प्रक्रिया।

10क. न्यायालय को किसी पक्षकार की मृत्यु संसूचित करने के लिए प्लीडर का कर्तव्य।

11. आदेश का अपीलों को लागू होना।
12. आदेश का कार्यवाहियों को लागू होना।

आदेश 23

वादों का प्रत्याहरण और समायोजन

1. वाद का प्रत्याहरण या दावे के भाग का परित्याग।

1क. प्रतिवादियों को वादियों के रूप में पक्षान्तरण करने की अनुज्ञा कब दी जाएगी।

2. परिसीमा विधि पर पहले वाद का प्रभाव नहीं पड़ेगा।
3. वाद में समझौता।

3क. वाद का वर्जन।

3ख. प्रतिनिधि वाद में कोई करार या समझौता न्यायालय की इजाजत के बिना प्रविष्ट न किया जाना।

4. डिक्रियों के निष्पादन की कार्यवाहियों पर प्रभाव न पड़ना।

नियम

आदेश 24

न्यायालय में जमा करना

1. दावे की तुष्टि में प्रतिवादी द्वारा रकम का निक्षेप।
2. निक्षेप की सूचना।
3. निक्षेप पर ब्याज सूचना के पश्चात् वादी को अनुज्ञात नहीं किया जाएगा।
4. जहां वादी निक्षेप को भागतः तुष्टि के तौर पर प्रतिगृहीत करता है वहां प्रक्रिया।
   जहां वह उसे पूर्ण तुष्टि के तौर पर प्रतिगृहीत करता है वहां प्रक्रिया।

आदेश 25

खर्चों के लिए प्रतिभूति

1. वादी से खर्चों के लिए प्रतिभूति कब अपेक्षित की जा सकती है।
2. प्रतिभूति में असफल रहने का प्रभाव।

आदेश 26

कमीशन

साक्षियों की परीक्षा करने के लिए कमीशन

1. वे मामले जिनमें न्यायालय साक्षी की परीक्षा करने के लिए कमीशन निकाल सकेगा।
2. कमीशन के लिए आदेश।
3. जहां साक्षी न्यायालय की अधिकारिता के भीतर निवास करता है।
4. वे व्यक्ति जिनकी परीक्षा करने के लिए कमीशन निकाला जा सकेगा।
5. जो साक्षी भारत के भीतर नहीं है उसकी परीक्षा करने के लिए कमीशन या अनुरोधपत्र।
6. कमीशन के अनुसरण में न्यायालय साक्षी की परीक्षा करेगा।
7. साक्षियों के अभिसाक्ष्य के साथ कमीशन का लौटाया जाना।
8. अभिसाक्ष्य कब साक्ष्य में ग्रहण किया जा सकेगा।

स्थानीय अन्वेषणों के लिए कमीशन

9. स्थानीय अन्वेषण करने के लिए कमीशन।
10. कमिश्नर के लिए प्रक्रिया।
    रिपोर्ट और अभिसाक्ष्य वाद में साक्ष्य होंगे।
    कमिश्नर की वैयक्तिक रूप से परीक्षा की जा सकेगी।

वैज्ञानिक अन्वेषण, अनुसचिवीय कार्य करने और जंगम संपत्ति के विक्रय के लिए कमीशन

10क. वैज्ञानिक अन्वेषण के लिए कमीशन।
10ख. अनुसचिवीय कार्य करने के लिए कमीशन।
10ग. जंगम संपत्ति के विक्रय के लिए कमीशन।

नियम

लेखाओं की परीक्षा करने के लिए कमीशन

11. लेखाओं की परीक्षा या समायोजन करने के लिए कमीशन।
12. न्यायालय कमिश्नर को आवश्यक अनुदेश देगा।
कार्यवाही और रिपोर्ट साक्ष्य होंगी।
न्यायालय अतिरिक्त जांच निदिष्ट कर सकेगा।

विभाजन करने के लिए कमीशन

13. स्थावर संपत्ति का विभाजन करने के लिए कमीशन।
14. कमिश्नर की प्रक्रिया।

साधारण उपबन्ध

15. कमीशन के व्यय न्यायालय में जमा किए जाएंगे।
16. कमिश्नरों की शक्तियां।
16क. वे प्रश्न जिन पर कमिश्नर के समक्ष आक्षेप किया जाता है।
17. कमिश्नर के समक्ष साक्षियों की हाजिरी और उनकी परीक्षा।
18. पक्षकारों का कमिश्नर के समक्ष उपसंजात होना।
18क. निष्पादन कार्यवाहियों को आदेश का लागू होना।
18ख. न्यायालय द्वारा कमीशन के लौटाए जाने के लिए समय नियत किया जाना।

विदेशी अधिकरणों की प्रेरणा पर निकाले गए कमीशन

19. वे मामले जिनमें उच्च न्यायालय साक्षी की परीक्षा करने के लिए कमीशन निकाल सकेगा।
20. कमीशन निकलवाने के लिए आवेदन।
21. कमीशन किसके नाम निकाला जा सकेगा।
22. कमीशन का निकाला जाना, निष्पादन और लौटाया जाना और विदेशी न्यायालय को साक्ष्य का पारेषण।

आदेश 27

सरकार के या अपनी पदीय हैसियत में लोक अधिकारियों द्वारा या उनके विरुद्ध वाद

1. सरकार द्वारा या उसके विरुद्ध वाद।
2. सरकार के लिए कार्य करने के लिए प्राधिकृत व्यक्ति।
3. सरकार द्वारा या उसके विरुद्ध वादों में वादपत्र।
4. आदेशिका प्राप्त करने के लिए सरकार का अभिकर्ता।
5. सरकार की ओर से उपसंजाति के लिए दिन नियत किया जाना।
5क. लोक अधिकारी के विरुद्ध वाद में सरकार को पक्षकार के रूप में संयोजित किया जाना।
5ख. सरकार या लोक अधिकारी के विरुद्ध वादों में निपटारा कराने में सहायता करने के लिए न्यायालय का कर्तव्य।
6. सरकार के विरुद्ध वाद से संबंध रखने वाले प्रश्नों का उत्तर देने योग्य व्यक्ति की हाजिरी।
7. समय का इसलिए बढ़ाया जाना कि लोक अधिकारी सरकार से निर्देश करके पूछ सके।
8. लोक अधिकारी के विरुद्ध वादों में प्रक्रिया।

नियम

8क. कुछ मामलों में सरकार से या लोक अधिकारी से कोई प्रतिभूति अपेक्षित न की जाएगी।
8ख. "सरकार" और "सरकारी प्लीडर" की परिभाषाएं।

आदेश 27क

वे वाद जिनमें संविधान के निर्वचन या किसी कानूनी लिखत की विधिमान्यता संबंधी कोई सारभूत विधिप्रश्न अन्तर्ग्रस्त हों

1. महान्यायवादी या महाधिवक्ता को सूचना।
1क. उन वादों में प्रक्रिया जिनमें किसी कानूनी लिखत की विधिमान्यता अन्तर्ग्रस्त है।
2. न्यायालय सरकार को पक्षकार के रूप में जोड़ सकेगा।
2क. किसी कानूनी लिखत की विधिमान्यता संबंधी वाद में सरकार या अन्य प्राधिकारी को प्रतिवादी के रूप में जोड़ने की न्यायालय की शक्ति।
3. खर्चे।
4. इस आदेश का अपीलों को लागू होना।

आदेश 28

सैनिक या नौसैनिक या वायुसैनिक द्वारा या उनके विरुद्ध वाद

1. आफिसर, सैनिक, नौसैनिक या वायुसैनिक, जो छुट्टी अभिप्राप्त नहीं कर सकते अपनी ओर से वाद लाने या प्रतिरक्षा करने के लिए किसी व्यक्ति को प्राधिकृत कर सकेंगे।
2. इस प्रकार प्राधिकृत व्यक्ति स्वयं कार्य कर सकेगा या प्लीडर नियुक्त कर सकेगा।
3. इस प्रकार प्राधिकृत व्यक्ति या उसके प्लीडर पर की गई तामील उचित तामील होगी।

आदेश 29

निगमों द्वारा या उनके विरुद्ध वाद

1. अभिवचन पर हस्ताक्षर किया जाना और उसका सत्यापन।
2. निगम पर तामील।
3. निगम के अधिकारी की स्वीय हाजिरी अपेक्षित करने की शक्ति।

आदेश 30

फर्मों के या अपने नामों से भिन्न नामों में कारबार चलाने वाले व्यक्तियों द्वारा या उनके विरुद्ध वाद

1. भागीदारों का फर्म के नाम से वाद लाना।
2. भागीदारों के नामों का प्रकट किया जाना।
3. तामील।
4. भागीदार की मृत्यु पर वाद का अधिकार।
5. सूचना की तामील किस हैसियत में की जाएगी।
6. भागीदारों की उपसंजाति।
7. भागीदारों द्वारा ही उपसंजाति होगी अन्यथा नहीं।
8. अभ्यापत्तिपूर्वक उपसंजाति।
9. सहभागीदारों के बीच में वाद।

नियम

10. स्वयं अपने नाम से भिन्न नाम से कारबार चलाने वाले व्यक्ति के विरुद्ध वाद।

आदेश 31

न्यासियों, निष्पादकों और प्रशासकों द्वारा या उनके विरुद्ध वाद

1. न्यासियों, आदि में निहित सम्पत्ति से सम्बन्धित वादों में हिताधिकारियों का प्रतिनिधित्व।
2. न्यासियों, निष्पादकों और प्रशासकों का संयोजन।
3. विवाहिता निष्पादिका का पति संयोजित नहीं होगा।

आदेश 32

अवयस्कों और विकृतचित्त व्यक्तियों द्वारा या उनके विरुद्ध वाद

1. अवयस्क वाद-मित्र द्वारा वाद लाएगा।
2. जहां वाद-मित्र के बिना वाद संस्थित किया जाए वहां वाद-पत्र फाइल से निकाल दिया जाएगा।

2क. वाद-मित्र द्वारा प्रतिभूति का तब दिया जाना जब इस प्रकार आदिष्ट किया जाए।

3. अवयस्क प्रतिवादी के लिए न्यायालय द्वारा वादार्थ संरक्षक की नियुक्ति।

3क. अवयस्क के विरुद्ध डिक्री का तब तक अपास्त न किया जाना जब तक कि उसके हितों पर प्रतिकूल प्रभाव न पड़ा हो।

4. कौन वाद-मित्र की हैसियत में कार्य कर सकेगा या वादार्थ संरक्षक नियुक्त किया जा सकेगा।
5. वाद-मित्र या वादार्थ संरक्षक द्वारा अवयस्क का प्रतिनिधित्व।
6. अवयस्क की ओर से वाद-मित्र या वादार्थ संरक्षक को डिक्री के अधीन सम्पत्ति की प्राप्ति।
7. वाद-मित्र या वादार्थ संरक्षक द्वारा करार या समझौता।
8. वाद-मित्र की निवृत्ति।
9. वाद-मित्र का हटाया जाना।
10. वाद-मित्र के हटाए जाने, आदि पर कार्यवाहियों का रोका जाना।
11. वादार्थ संरक्षक की निवृत्ति, हटाया जाना या मृत्यु।
12. अवयस्क वादी या आवेदक द्वारा वयस्क होने पर अनुसरण की जाने वाली चर्या।
13. जहां अवयस्क सहवादी, वयस्क होने पर वाद का निराकरण करने की वांछा करता है।
14. अयुक्तियुक्त या अनुचित वाद।
15. नियम 1 से नियम 14 तक का (जिनमें नियम 2क सम्मिलित नहीं है) विकृतचित्त वाले व्यक्तियों को लागू होना।
16. व्यावृत्तियां।

आदेश 32क

कुटुम्ब से संबंध रखने वाले विषयों से संबंधित वाद

1. आदेश का लागू होना।
2. कार्यवाहियों का बन्द कमरे में किया जाना।
3. निपटारे के लिए प्रयत्न करने का न्यायालय का कर्तव्य।
4. कल्याण विशेषज्ञ से सहायता।
5. तथ्यों की जांच करने का कर्तव्य।
6. "कुटुम्ब" का अर्थ।

नियम

आदेश 33

निर्धन व्यक्तियों द्वारा वाद

1. निर्धन व्यक्तियों द्वारा वाद संस्थित किए जा सकेंगे।

1क. निर्धन व्यक्तियों के साधनों की जांच।

2. आवेदन की विषय-वस्तु।

3. आवेदन का उपस्थापन।

4. आवेदक की परीक्षा।

यदि आवेदन अभिकर्ता द्वारा उपस्थापित किया जाता है तो न्यायालय आदेश दे सकेगा कि आवेदक की परीक्षा कमीशन द्वारा की जाए।

5. आवेदन का नामंजूर किया जाना।

6. आवेदक की निर्धनता के बारे में साक्ष्य लेने के दिन की सूचना।

7. सुनवाई में प्रक्रिया।

8. यदि आवेदन ग्रहण कर लिया जाए तो प्रक्रिया।

9. निर्धन व्यक्ति के रूप में वाद लाने की अनुज्ञा का प्रत्याहरण।

9क. जिस निर्धन व्यक्ति का प्रतिनिधित्व न हो उसके लिए न्यायालय द्वारा प्लीडर नियत किया जाना।

10. जहां निर्धन व्यक्ति सफल होता है वहां खर्चे।

11. प्रक्रिया जहां निर्धन व्यक्ति असफल हो जाता है।

11क. निर्धन व्यक्ति के वाद के उपशमन पर प्रक्रिया।

12. राज्य सरकार न्यायालय-फीस के संदाय के लिए आवेदन कर सकेगी।

13. राज्य सरकार का पक्षकार समझा जाना।

14. न्यायालय-फीस की रकम की वसूली।

15. निर्धन व्यक्ति के रूप में वाद लाने के लिए आवेदक को अनुज्ञा देने से इंकार के कारण वैसे ही प्रकृति के पश्चात्वर्ती आवेदन का वर्जन।

15क. न्यायालय-फीस के संदाय के लिए समय का दिया जाना।

16. खर्चे।

17. निर्धन व्यक्ति द्वारा प्रतिवाद।

18. निर्धन व्यक्तियों के लिए मुफ्त विधिक सेवाओं की व्यवस्था करने की केन्द्रीय सरकार की शक्ति।

आदेश 34

स्थावर सम्पत्ति के बन्धकों के संबंध में वाद

1. पुरोबन्ध, विक्रय और मोचन के वादों के पक्षकार।

2. पुरोबन्ध वाद में प्रारम्भिक डिक्री।

3. पुरोबन्ध वाद में अन्तिम डिक्री।

4. विक्रय के लिए वाद में प्रारम्भिक डिक्री।

पुरोबन्ध वाद में विक्रय की डिक्री करने की शक्ति।

5. विक्रय के वाद में अन्तिम डिक्री।

6. विक्रय के वाद में बन्धक पर शोध्य बाकी रकम की वसूली।

7. मोचन के वाद में प्रारम्भिक डिक्री।

नियम

8. मोचन के वाद में अन्तिम डिक्री।
8क. मोचन के वाद में बन्धक पर शोध्य बाकी रकम की वसूली।
9. डिक्री जहां कुछ भी शोध्य नहीं पाया जाए या जहां बंधकदार को अतिसंदाय कर दिया गया हो।
10. बन्धकदार के खर्चे जो डिक्री के पश्चात् हुए हैं।
10क. अन्तःकालीन लाभ का संदाय करने के लिए बन्धकदार को निदेश देने की न्यायालय की शक्ति।
11. ब्याज का संदाय।
12. पूर्विक बन्धक के अधीन सम्पत्ति का विक्रय।
13. आगमों का उपयोजन।
14. बन्धक सम्पत्ति का विक्रय कराने के लिए आवश्यक विक्रय का वाद।
15. हक विलेखों के निक्षेप द्वारा बन्धक और भार।

आदेश 35

अन्तराभिवाची

1. अन्तराभिवाची वाद में वादपत्र।
2. दावाकृत चीज का न्यायालय में जमा किया जाना।
3. प्रक्रिया जहां प्रतिवादी वादी पर वाद चला रहा है।
4. पहली सुनवाई में प्रक्रिया।
5. अभिकर्ता और अभिधारी अन्तराभिवाची वाद संस्थित नहीं कर सकेंगे।
6. वादी के खर्चों पर भार।

आदेश 36

विशेष मामला

1. न्यायालय की राय के लिए मामले का कथन करने की शक्ति।
2. विषय-वस्तु का मूल्य कहां कथित करना होगा।
3. करार वाद के रूप में फाइल किया जाएगा और रजिस्टर में चढ़ाया जाएगा।
4. पक्षकार न्यायालय की अधिकारिता के अधीन होंगे।
5. मामले की सुनवाई और निपटारा।
6. नियम 5 के अधीन पारित डिक्री की अपील न होना।

आदेश 37

संक्षिप्त प्रक्रिया

1. वे न्यायालय और वादों के वर्ग जिन्हें यह आदेश लागू होना है।
2. संक्षिप्त वादों का संस्थित किया जाना।
3. प्रतिवादी की उपसंजाति के लिए प्रक्रिया।
4. डिक्री को अपास्त करने की शक्ति।
5. विनिमय-पत्र, आदि को न्यायालय के अधिकारी के पास जमा करने का आदेश देने की शक्ति।
6. अनादृत विनिमय-पत्र या वचनपत्र के अप्रतिग्रहण का टिप्पण करने के खर्च की वसूली।
7. वादों में प्रक्रिया।

नियम

आदेश 38

निर्णय के पहले गिरफ्तारी और कुर्की

निर्णय के पहले गिरफ्तारी

1. उपसंजाति के लिए प्रतिभूति देने की मांग प्रतिवादी से कब की जा सकेगी।
2. प्रतिभूति।
3. उन्मोचित किए जाने के लिए प्रतिभू के आवेदन पर प्रक्रिया।
4. जहां प्रतिवादी प्रतिभूति देने में या नई प्रतिभूति लाने में असफल रहता है वहां प्रक्रिया।

निर्णय के पहले कुर्की

5. सम्पत्ति पेश करने के लिए प्रतिभूति देने की अपेक्षा प्रतिवादी से कब की जा सकेगी।
6. जहां हेतुक दर्शित नहीं किया जाता या प्रतिभूति नहीं दी जाती वहां कुर्की।
7. कुर्की करने की रीति।
8. निर्णय के पूर्व कुर्क की गई सम्पत्ति के दावे का न्यायनिर्णयन।
9. प्रतिभूति दे दी जाने पर या वाद खारिज कर दिए जाने पर कुर्की का हटा लिया जाना।
10. निर्णय से पहले की गई कुर्की से न तो पर-व्यक्तियों के अधिकार प्रभावित होंगे और न विक्रय के लिए आवेदन करने से डिक्रीदार वर्जित होगा।
11. निर्णय से पहले कुर्क की गई सम्पत्ति डिक्री के निष्पादन में पुनः कुर्क नहीं की जाएगी।

11क. कुर्की को लागू होने वाले उपबंध।

12. कृषि-उपज निर्णय के पूर्व कुर्क नहीं होगी।
13. लघुवाद न्यायालय स्थावर सम्पत्ति को कुर्क नहीं करेगा।

आदेश 39

अस्थायी व्यादेश और अन्तर्वर्ती आदेश

अस्थायी व्यादेश

1. वे दशाएं जिनमें अस्थायी व्यादेश दिया जा सकेगा।
2. भंग की पुनरावृत्ति या जारी रखना अवरुद्ध करने के लिए व्यादेश।

2क. व्यादेश की अवज्ञा या भंग का परिणाम।

3. व्यादेश देने से पहले न्यायालय निदेश देगा कि विरोधी पक्षकार को सूचना दे दी जाए।

3क. व्यादेश के लिए आवेदन का न्यायालय द्वारा तीस दिन के भीतर निपटाया जाना।

4. व्यादेश के आदेश को प्रभावोन्मुक्त, उसमें फेरफार या उसे अपास्त किया जा सकेगा।
5. निगम को निदिष्ट व्यादेश उसके अधिकारियों पर आबद्धकर होगा।

अन्तर्वर्ती आदेश

6. अन्तरिम विक्रय का आदेश देने की शक्ति।
7. वाद की विषय-वस्तु का निरोध, परिरक्षण, निरीक्षण, आदि।
8. ऐसे आदेशों के लिए आवेदन सूचना के पश्चात् किया जाएगा।
9. जो भूमि वाद की विषय-वस्तु है उस पर पक्षकार का तुरन्त कब्जा कब कराया जा सकेगा।

नियम

10. न्यायालय में धन, आदि का जमा किया जाना।

आदेश 40
रिसीवरों की नियुक्ति

1. रिसीवरों की नियुक्ति।
2. पारिश्रमिक।
3. कर्तव्य।
4. रिसीवर के कर्तव्यों को प्रवर्तित कराना।
5. कलक्टर कब रिसीवर नियुक्त किया जा सकेगा।

आदेश 41
मूल डिक्रियों की अपीलें

1. अपील का प्ररूप। ज्ञापन के साथ क्या-क्या दिया जाएगा।
ज्ञापन की अन्तर्वस्तु।
2. आधार जो अपील में लिए जा सकेंगे।
3. ज्ञापन का नामंजूर किया जाना या संशोधन।
3क. विलंब की माफी के लिए आवेदन।
4. कई वादियों या प्रतिवादियों में से एक पूरी डिक्री को उलटवा सकेगा जहां वह ऐसे आधार पर दी गई है जो उन सभी के लिए सामान्य है।

कार्यवाहियों का और निष्पादन का रोका जाना

5. अपील न्यायालय द्वारा रोका जाना।
जिस न्यायालय ने डिक्री पारित की थी उसके द्वारा रोका जाना।
6. डिक्री के निष्पादन के लिए आदेश की दशा में प्रतिभूति।
7. [निरसित।]
8. डिक्री के निष्पादन में किए गए आदेश की अपील में शक्तियों का प्रयोग।

अपील के ग्रहण पर प्रक्रिया

9. अपीलों के ज्ञापन का रजिस्टर में चढ़ाया जाना।
अपीलों का रजिस्टर।
10. अपील न्यायालय अपीलार्थी से खर्चों के लिए प्रतिभूति देने की अपेक्षा कर सकेगा।
जहां अपीलार्थी भारत के बाहर निवास करता है।
11. निचले न्यायालय को सूचना भेजे बिना अपील खारिज करने की शक्ति।
11क. समय जिसके भीतर नियम 11 के अधीन सुनवाई समाप्त हो जानी चाहिए।
12. अपील की सुनवाई के लिए दिन।
13. अपील न्यायालय उस न्यायालय को सूचना देगा जिसकी डिक्री की अपील की गई है।
अपील न्यायालय को कागजों का परेषण।
उस न्यायलय में के जिसकी डिक्री की अपील की गई है, प्रदर्शों की प्रतियां।
14. अपील की सुनवाई के दिन की सूचना का प्रकाशन और तामील।
अपील न्यायालय स्वयं सूचना की तामील करवा सकेगा।

नियम

15. सूचना की अन्तर्वस्तु।

सुनवाई की प्रक्रिया

16. शुरू करने का अधिकार।
17. अपीलार्थी के व्यतिक्रम के लिए अपील का खारिज किया जाना।
    अपील की एकपक्षीय सुनवाई।
18. जहां खर्चों का निक्षेप करने में अपीलार्थी के असफल रहने के परिणामस्वरूप सूचना की तामील नहीं हुई है वहां अपील का खारिज किया जाना।
19. व्यतिक्रम के लिए खारिज की गई अपील को पुनः ग्रहण करना।
20. सुनवाई को स्थगित करने और ऐसे व्यक्तियों को जो हितबद्ध प्रतीत होते हों, प्रत्यर्थी बनाए जाने के लिए निदिष्ट करने की शक्ति।
21. उस प्रत्यर्थी के आवेदन पर पुनः सुनवाई जिसके विरुद्ध एकपक्षीय डिक्री की गई है।
22. सुनवाई में प्रत्यर्थी डिक्री के विरुद्ध ऐसे आक्षेप कर सकेगा मानो उसने पृथक् अपील की हो।
    आक्षेप का प्ररूप और उसको लागू होने वाले उपबन्ध।
23. मामले का अपील न्यायालय द्वारा प्रतिप्रेषण।
23क. अन्य मामलों में प्रतिप्रेषण।
24. जहां अभिलेख में का साक्ष्य पर्याप्त है वहां अपील न्यायालय मामले का अन्तिम रूप से अवधारणा कर सकेगा।
25. अपील न्यायालय कहां विवाद्यकों की विरचना कर सकेगा और उन्हें उस न्यायालय को विचारण के लिए निर्दिष्ट कर सकेगा जिसकी डिक्री की अपील की गई है।
26. निष्कर्ष और साक्ष्य का अभिलेख में सम्मिलित किया जाना।
    निष्कर्ष पर आक्षेप।
    अपील का अवधारण।
26क. प्रतिप्रेषण के आदेश में अगली सुनवाई का उल्लेख किया जाना।
27. अपील न्यायालय में अतिरिक्त साक्ष्य का पेश किया जाना।
28. अतिरिक्त साक्ष्य लेने की रीति।
29. विषय-बिन्दुओं का परिभाषित और लेखबद्ध किया जाना।

अपील का निर्णय

30. निर्णय कब और कहां सुनाया जाएगा।
31. निर्णय की अन्तर्वस्तु, तारीख और हस्ताक्षर।
32. निर्णय क्या निदेश दे सकेगा।
33. अपील न्यायालय की शक्ति।
34. विसम्मति का लेखबद्ध किया जाना।

अपील में की डिक्री

35. डिक्री की तारीख और अन्तर्वस्तु।
    निर्णय से विसम्मत न्यायाधीश के लिए डिक्री पर हस्ताक्षर करना आवश्यक नहीं।
36. पक्षकारों को निर्णय और डिक्री की प्रतियों का दिया जाना।
37. डिक्री की प्रमाणित प्रति उस न्यायालय को भेजी जाएगी जिसकी डिक्री की अपील की गई थी।

नियम

आदेश 42

अपीली डिक्रियों की अपीलें

1. प्रक्रिया।
2. न्यायालय की यह निदेश देने की शक्ति कि उसके द्वारा बनाए गए प्रश्न पर अपील सुनी जाए।
3. आदेश 41 के नियम 14 का लागू होना।

आदेश 43

आदेशों की अपीलें

1. आदेशों की अपीलें।
1क. डिक्रियों के विरुद्ध अपील में के ऐसे आदेशों पर आक्षेप करने का अधिकार जिनकी अपील नहीं की जा सकती।
2. प्रक्रिया।

आदेश 44

निर्धन व्यक्तियों द्वारा अपीलें

1. निर्धन व्यक्ति के रूप में कौन अपील कर सकेगा।
2. न्यायालय फीस के संदाय के लिए समय दिया जाना।
3. इस प्रश्न के बारे में जांच कि आवदेक निर्धन व्यक्ति है या नहीं।

आदेश 45

उच्चतम न्यायालय में अपीलें

1. "डिक्री" की परिभाषा।
2. उस न्यायालय से आवेदन जिसकी डिक्री परिवादित है।
3. मूल्य या औचित्य के बारे में प्रमाणपत्र।
4. [निरसित।]
5. [निरसित।]
6. प्रमाणपत्र देने से इंकार का प्रभाव।
7. प्रमाणपत्र दिए जाने पर प्रतिभूति और निक्षेप।
8. अपील का ग्रहण और उस पर प्रक्रिया।
9. प्रतिभूति के प्रतिग्रहण का प्रतिसंहरण।
9क. मृत पक्षकारों की दशा में सूचना दिए जाने से अभिमुक्ति देने की शक्ति।
10. अतिरिक्त प्रतिभूति या संदाय का आदेश देने की शक्ति।
11. आदेश का अनुपालन करने में असफलता का प्रभाव।
12. निक्षेप की बाकी की वापसी।
13. अपील लंबित रहने तक न्यायालय की शक्तियां।
14. अपर्याप्त पाए जाने पर प्रतिभूति का बढ़ाया जाना।
15. उच्चतम न्यायालय के आदेशों को प्रवृत्त कराने की प्रक्रिया।
16. निष्पादन संबंधी आदेश की अपील।

नियम

17. [निरसित।]

आदेश 46

निर्देश

1. उच्च न्यायालय को प्रश्न का निर्देश।
2. न्यायालय ऐसी डिक्री पारित कर सकेगा जो उच्च न्यायालय के विनिश्चय पर समाश्रित है।
3. उच्च न्यायालय का निर्णय पारेषित किया जाएगा और मामला तदनुसार निपटाया जाएगा।
4. उच्च न्यायालय को किए गए निर्देश के खर्चे।

4क. धारा 113 के परन्तुक के अधीन उच्च न्यायालय को निर्देश।

5. निर्देश करने वाले न्यायालय की डिक्री को परिवर्तित करने आदि की शक्ति।
6. लघुवादों में अधिकारिता संबंधी प्रश्नों को उच्च न्यायालय को निर्देशित करने की शक्ति।
7. लघुवादों में अधिकारिता संबंधी भूल के अधीन की गई कार्यवाहियों को पुनरीक्षण के लिए निवेदित करने की जिला न्यायालय की शक्ति।

आदेश 47

पुनर्विलोकन

1. निर्णय के पुनर्विलोकन के लिए आवेदन।
2. [निरसित।]
3. पुनर्विलोकन के आवेदनों का प्ररूप।
4. आवेदन कब नामंजूर किया जाएगा।
   आवेदन कब मंजूर किया जाएगा।
5. दो या अधिक न्यायाधीशों से गठित न्यायालय में पुनर्विलोकन का आवेदन।
6. आवेदन कब नामंजूर किया जाएगा।
7. नामंजूरी का आदेश अपीलनीय न होगा। आवेदन की मंजूरी के आदेश पर आक्षेप।
8. मंजूर किए गए आवेदन का रजिस्टर में चढ़ाया जाना और फिर से सुनवाई के लिए आदेश।
9. कुछ आवेदनों का वर्जन।

आदेश 48

प्रकीर्ण

1. आदेशिका की तामील उसे निकलवाने वाले पक्षकार के व्यय पर की जाएगी।
   तामील के खर्चे।
2. आदेशों और सूचनाओं की तामील कैसे की जाएगी।
3. परिशिष्टों में दिए गए प्ररूपों का उपयोग।

नियम

आदेश 49

चार्टरित उच्च न्यायालय

1. उच्च न्यायालयों की आदेशिकाओं की तामील कौन कर सकेगा।
2. चार्टरित उच्च न्यायालय के बारे में व्यावृत्ति।
3. नियमों का लागू होना।

आदेश 50

प्रान्तीय लघुवाद न्यायालय

1. प्रान्तीय लघुवाद न्यायालय।

आदेश 51

प्रेसिडेन्सी लघुवाद न्यायालय

1. प्रेसिडेन्सी लघुवाद न्यायालय।

पहली अनुसूची के परिशिष्ट

प्ररूप

क—अभिवचन।

1. वादों के शीर्षक।
2. विशिष्ट मामलों में पक्षकारों का वर्णन।
3. वादपत्र।
4. लिखित कथन।

ख—आदेशिका।

ग—प्रकटीकरण, निरीक्षण और स्वीकृति।

घ—डिक्रियां।

ङ—निष्पादन।

च—अनुपूरक कार्यवाहियां।

छ—अपील, निर्देश और पुनर्विलोकन।

ज—प्रकीर्ण

पहली अनुसूची

आदेश 1

वादों के पक्षकार

[1][1. **वादियों के रूप में कौन संयोजित किए जा सकेंगे**—वे सभी व्यक्ति वादियों के रूप में एक वाद में संयोजित किए जा सकेंगे जहां,—

(क) एक ही कार्य या संव्यवहार या कार्यों या संव्यवहारों की आवली के बारे में या उससे पैदा होने वाले अनुतोष पाने का अधिकार उनमें संयुक्ततः या पृथक्ततः या अनुकल्पतः वर्तमान होना अभिकथित है; और

(ख) यदि ऐसे व्यक्ति पृथक्-पृथक् वाद लाते तो, विधि या तथ्य का सामान्य प्रश्न पैदा होता।]

2. **पृथक् विचारण का आदेश करने की न्यायालय की शक्ति**—जहां न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि वादियों के किसी संयोजन से वाद के विचारण, उलझन या विलंब हो सकता है वहां न्यायालय वादियों से निर्वाचन करने को कह सकेगा या पृथक् विचारण का या ऐसा अन्य आदेश दे सकेगा जो समीचीन हो।

[1][3. **प्रतिवादियों के रूप में कौन संयोजित किए जा सकेंगे**—वे सभी व्यक्ति प्रतिवादियों के रूप में एक वाद में संयोजित किए जा सकेंगे जहां,—

(क) एक ही कार्य या संव्यवहार या कार्यों या संव्यवहारों की आवली के बारे में या उससे पैदा होने वाले अनुतोष पाने का कोई अधिकार उनके विरुद्ध संयुक्ततः या पृथक्ततः या अनुकल्पतः वर्तमान होना अभिकथित है; और

(ख) यदि ऐसे व्यक्तियों के विरुद्ध पृथक्-पृथक् वाद लाए जाते तो, विधि या तथ्य का सामान्य प्रश्न पैदा होता।]

[2][3क. **जहां प्रतिवादियों के संयोजन से उलझन या विचारण में विलम्ब हो सकता है वहां पृथक् विचारण का आदेश देने की शक्ति**—जहां न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि प्रतिवादियों के संयोजन से वाद के विचारण में उलझन या विलम्ब हो सकता है वहां न्यायालय पृथक् विचारण का आदेश या ऐसा अन्य आदेश दे सकेगा जो न्याय के हित में समीचीन हो।]

4. **न्यायालय, संयुक्त पक्षकारों में से एक या अधिक के पक्ष में या उनके विरुद्ध निर्णय दे सकेगा**—(क) वादियों में से जो एक या अधिक वादी अनुतोष के हकदार पाए जाएं उसके या उनके पक्ष में, उस अनुतोष के लिए, जिसके वह या वे हकदार हों;

(ख) प्रतिवादियों में से जो एक या अधिक प्रतिवादी दायी पाए जाएं उसके या उनके विरुद्ध उनके अपने-अपने दायित्वों के अनुसार, निर्णय किसी संशोधन के बिना दिया जा सकेगा।

5. **दावाकृत सम्पूर्ण अनुतोष में प्रतिवादी का हितबद्ध होना आवश्यक नहीं है**—यह आवश्यक नहीं होगा कि हर प्रतिवादी अपने विरुद्ध किसी वाद में दावाकृत सम्पूर्ण अनुतोष के बारे में हितबद्ध हो।

6. **एक ही संविदा के आधार पर दायी पक्षकारों का संयोजन**—वादी किसी भी एक संविदा के आधार पर पृथक्ततः या संयुक्ततः और पृथक्ततः दायी सभी या किन्हीं व्यक्तियों को, जिनके अन्तर्गत विनिमय-पत्रों, हुण्डियों और वचनपत्रों के पक्षकार भी हैं, एक ही वाद के पक्षकारों के तौर पर अपने विकल्प के अनुसार संयोजित कर सकेगा।

7. **जब वादी को संदेह है कि किससे प्रतितोष चाहा गया है**—जहां वादी को इस बारे में संदेह है कि वह व्यक्ति कौन है, जिससे प्रतितोष अभिप्राप्त करने का वह हकदार है वहां वह दो या अधिक प्रतिवादियों को इसलिए संयोजित कर सकेगा कि सभी

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 52 द्वारा (1-2-1977 से) पूर्ववर्ती नियम के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 52 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

पक्षकारों के बीच इस प्रश्न के बारे में अवधारित किया जा सके कि प्रतिवादियों में से कौन और किस विस्तार तक दायी है।

[1][8. **एक ही हित में सभी व्यक्तियों की ओर से एक व्यक्ति वाद ला सकेगा या प्रतिरक्षा कर सकेगा**—(1) जहां एक ही वाद में एक ही हित रखने वाले बहुत से व्यक्ति हैं वहां,—

(क) इस प्रकार हितबद्ध सभी व्यक्तियों की ओर से या उनके फायदे के लिए न्यायालय की अनुज्ञा से ऐसे व्यक्तियों में से एक या अधिक व्यक्ति वाद ला सकेंगे या उनके विरुद्ध वाद लाया जा सकेगा या वे ऐसे वाद में प्रतिरक्षा कर सकेंगे;

(ख) न्यायालय यह निदेश दे सकेगा कि इस प्रकार हितबद्ध सभी व्यक्तियों की ओर से या उनके फायदे के लिए ऐसे व्यक्तियों में से एक या अधिक व्यक्ति वाद ला सकेंगे या उनके विरुद्ध वाद लाए जा सकेंगे या वे ऐसे वाद में प्रतिरक्षा कर सकेंगे।

(2) न्यायालय ऐसे प्रत्येक मामले में जहां उपनियम (1) के अधीन अनुज्ञा या निदेश दिया गया है, इस प्रकार हितबद्ध सभी व्यक्तियों को या तो वैयक्तिक तामील कराकर या जहां व्यक्तियों की संख्या या किसी अन्य कारण से ऐसी तामील युक्तियुक्त रूप से साध्य नहीं है वहां लोक विज्ञापन द्वारा, जैसा भी न्यायालय हर एक मामले में निर्दिष्ट करे, वाद के संस्थित किए जाने की सूचना वादी के खर्चे पर देगा।

(3) कोई व्यक्ति जिसकी ओर से या जिसके फायदे के लिए उपनियम (1) के अधीन कोई वाद संस्थित किया जाता है या ऐसे वाद में प्रतिरक्षा की जाती है, इस वाद में पक्षकार बनाए जाने के लिए न्यायालय को आवेदन कर सकेगा।

(4) आदेश 23 के नियम 1 के उपनियम (1) के अधीन ऐसे वाद में दावे के किसी भाग का परित्याग नहीं किया जाएगा और उस आदेश के नियम 1 के उपनियम (3) के अधीन ऐसे वाद का प्रत्याहरण नहीं किया जाएगा और उस आदेश के नियम 3 के अधीन ऐसे वाद में कोई करार, समझौता या तुष्टि अभिलिखित नहीं की जाएगी जब तक कि न्यायालय ने इस प्रकार हितबद्ध सभी व्यक्तियों को उपनियम (2) में विनिर्दिष्ट रीति से सूचना वादी के खर्चे पर न दे दी हो।

(5) जहां ऐसे वाद में वाद लाने वाला या प्रतिरक्षा करने वाला कोई व्यक्ति वाद या प्रतिरक्षा में सम्यक् तत्परता से कार्यवाही नहीं करता है वहां न्यायालय उस वाद में वैसा ही हित रखने वाले किसी अन्य व्यक्ति को उसके स्थान पर रख सकेगा।

(6) इस नियम के अधीन वाद में पारित डिक्री उन सभी व्यक्तियों पर आबद्धकर होगी जिनकी ओर से या जिनके फायदे के लिए, यथास्थिति, वाद संस्थित किया गया है या ऐसे वाद में प्रतिरक्षा की गई है।

स्पष्टीकरण—इस बात का अवधारण करने के प्रयोजन के लिए कि वे व्यक्ति जो वाद ला रहे हैं या जिनके विरुद्ध वाद लाया गया है या जो ऐसे वाद में प्रतिरक्षा कर रहे हैं, किसी एक वाद में वैसा ही हित रखते हैं या नहीं, यह साबित करना आवश्यक नहीं है कि ऐसे व्यक्तियों का वही वादहेतुक है जो उन व्यक्तियों का है जिनकी ओर से या जिनके फायदे के लिए, यथास्थिति, वे वाद ला रहे हैं या उनके विरुद्ध वाद लाया जा रहा है या वे ऐसे वाद में प्रतिरक्षा कर रहे हैं।]

[2][8क. **न्यायालय की कार्यवाही में राय देने या भाग लेने के लिए किसी व्यक्ति या व्यक्तियों के निकाय को अनुज्ञात करने की शक्ति**—यदि वाद का विचारण करते समय न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि कोई व्यक्ति या व्यक्तियों का निकाय किसी ऐसी विधि के प्रश्न में हितबद्ध है जो किसी वाद में प्रत्यक्षतः और सारतः विवाद्य है और ऐसे व्यक्ति या व्यक्तियों के निकाय को उस विधि के प्रश्न पर अपनी राय देने के लिए अनुज्ञात करना लोकहित में आवश्यक है तो वह ऐसे व्यक्ति या व्यक्तियों के निकाय को ऐसी राय देने के लिए और वाद की कार्यवाहियों में ऐसे भाग लेने के लिए अनुज्ञात कर सकेगा जो न्यायालय विनिर्दिष्ट करे।]

9. **कुसंयोजन और असंयोजन**—कोई भी वाद पक्षकारों के कुसंयोजन या असंयोजन के कारण विफल नहीं होगा और न्यायालय हर वाद में विवादग्रस्त विषय का निपटारा वहां तक कर सकेगा जहां तक उन पक्षकारों के, जो उसके वस्तुतः समक्ष है, अधिकारों और हितों का सम्बन्ध है:

[2][परन्तु इस नियम की कोई बात किसी आवश्यक पक्षकार के असंयोजन को लागू नहीं होगी।]

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 52 द्वारा (1-2-1977 से) पूर्ववर्ती नियम के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 52 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

10. **गलत वादी के नाम से वाद**—(1) जहां कोई वाद वादी के रूप में गलत व्यक्ति के नाम से संस्थित किया गया है, या जहां यह संदेहपूर्ण है कि क्या वह सही वादी के नाम में संस्थित किया गया है वहां यदि वाद के किसी भी प्रक्रम में न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि वाद सद्भाविक भूल से संस्थित किया गया है और विवाद में के वास्तविक विषय के अवधारण के लिए ऐसा करना आवश्यक है तो, वह ऐसे निबन्धनों पर, जो वह न्यायसंगत समझे, वाद के किसी भी प्रक्रम में किसी अन्य व्यक्ति को वादी के रूप में प्रतिस्थापित किए जाने या जोड़े जाने का आदेश दे सकेगा।

(2) **न्यायालय पक्षकारों का नाम काट सकेगा या जोड़ सकेगा**—न्यायालय कार्यवाहियों के किसी भी प्रक्रम में या तो दोनों पक्षकारों में से किसी के आवेदन पर या उसके बिना और ऐसे निबन्धनों पर जो न्यायालय को न्यायसंगत प्रतीत हों, यह आदेश दे सकेगा कि वादी के रूप में या प्रतिवादी के रूप में अनुचित तौर पर संयोजित किसी भी पक्षकार का नाम काट दिया जाए और किसी व्यक्ति का नाम जिसे वादी या प्रतिवादी के रूप में ऐसे संयोजित किया जाना चाहिए था या न्यायालय के सामने जिसकी उपस्थिति वाद में अन्तर्वलित सभी प्रश्नों का प्रभावी तौर पर और पूरी तरह न्यायनिर्णयन और निपटारा करने के लिए न्यायालय को समर्थ बनाने की दृष्टि से आवश्यक हो, जोड़ दिया जाए।

(3) कोई भी व्यक्ति, वाद-मित्र के बिना वाद लाने वाले वादी के रूप में अथवा उस वादी के, जो किसी निर्योग्यता के अधीन है, वाद-मित्र के रूप में उसकी सहमति के बिना नहीं जोड़ा जाएगा।

(4) **जहां प्रतिवादी जोड़ा जाए वहां वाद-पत्र का संशोधन किया जाना**—जहां कोई प्रतिवादी जोड़ा जाता है वहां जब तक न्यायालय अन्यथा निदिष्ट न करे वाद पत्र का इस प्रकार संशोधन किया जाएगा, जैसा आवश्यक हो, और समन की और वाद पत्र की संशोधित प्रतियों की तामील नए प्रतिवादी पर, और यदि न्यायालय ठीक समझे तो मूल प्रतिवादी पर की जाएगी।

(5) [1]इण्डियन लिमिटेशन ऐक्ट, 1877 (1877 का 15) की धारा 22 के उपबन्धों के अधीन रहते हुए, प्रतिवादी के रूप में जोड़े गए किसी भी व्यक्ति के विरुद्ध कार्यवाही समन की तामील पर ही प्रारंभ की गई समझी जाएगी।

[2][10क. **न्यायालय की उसको संबोधित करने के लिए प्लीडर से अनुरोध करने की शक्ति**—यदि किसी वाद या कार्यवाही में विवाद्य विषय पर न्यायालय के विनिश्चय का किसी हित पर प्रभाव पड़ना संभव है और उस पक्षकार का जो ऐसा हित रखता है जिसका इस प्रकार प्रभावित होना संभव है, किसी प्लीडर द्वारा प्रतिनिधित्व नहीं किया जाता है तो न्यायालय, स्वविवेकानुसार प्लीडर से यह अनुरोध कर सकेगा कि वह ऐसे हित के बारे में उसे सम्बोधित करे।]

11. **वाद का संचालन**—न्यायालय [3][किसी वाद] का संचालन ऐसे व्यक्ति को सौंप सकेगा जिसे वह ठीक समझे।

12. **कई वादियों या प्रतिवादियों में से एक का अन्यों के लिए उपसंजात होना**—(1) जहां एक से अधिक वादी हैं वहां उनमें से किसी एक या अधिक को उनमें से कोई अन्य वादी किसी भी कार्यवाही में उस अन्य के लिए उपसंजात होने, अभिवचन करने या कार्य करने के लिए प्राधिकृत कर सकेगा और उसी प्रकार से, जहां एक से अधिक प्रतिवादी हैं वहां उनमें से एक या अधिक को उनमें से कोई अन्य प्रतिवादी किसी भी कार्यवाही में उस अन्य के लिए उपसंजात होने, अभिवचन करने या कार्य करने के लिए प्राधिकृत कर सकेगा।

(2) वह प्राधिकार लिखित रूप में होगा और उसे देने वाले पक्षकार द्वारा हस्ताक्षरित होगा और न्यायालय में फाइल किया जाएगा।

13. **असंयोजन या कुसंयोजन के बारे में आक्षेप**—पक्षकारों के असंयोजन या कुसंयोजन के आधार पर सभी आक्षेप यथासंभव शीघ्रतम अवसर पर किए जाएंगे और ऐसे सभी मामलों में जिनमें विवाद्य स्थिर किए जाते हैं, ऐसे स्थिरीकरण के समय या उससे पहले किए जाएंगे, जब तक कि आक्षेप का आधार पीछे पैदा न हुआ हो और यदि आक्षेप ऐसे नहीं किया जाता है तो वह आक्षेप अधित्यक्त कर दिया गया समझा जाएगा।

---

1. अब परिसीमा अधिनियम, 1963 (1963 का 36) की धारा 21 देखिए।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 52 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
3. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 52 द्वारा (1-2-1977 से) "वाद" के स्थान पर प्रतिस्थापित।

आदेश 2
वाद की विरचना

1. वाद की विरचना—हर वाद की विरचना यावत्साध्य ऐसे की जाएगी कि विवादग्रस्त विषयों पर अंतिम विनिश्चय करने के लिए आधार प्राप्त हो जाए और उनसे सम्पृक्त अतिरिक्त मुकदमेबाजी का भी निवारण हो जाए।

2. वाद के अन्तर्गत संपूर्ण दावा होगा—(1) हर वाद के अन्तर्गत वह पूरा दावा होगा जिसे उस वाद-हेतुक के विषय में करने का वादी हकदार है, किन्तु वादी वाद को किसी न्यायालय की अधिकारिता के भीतर लाने की दृष्टि से अपने दावे के किसी भाग का त्याग कर सकेगा।

(2) **दावे के भाग का त्याग**—जहां वादी अपने दावे के किसी भाग के बारे में वाद लाने का लोप करता है या उसे साशय त्याग देता है वहां उसके पश्चात् वह इस प्रकार लोप किए गए या त्यक्त भाग के बारे में वाद नहीं लाएगा।

(3) **कई अनुतोषों में से एक के लिए वाद लाने का लोप**—एक ही वाद-हेतुक के बारे में एक से अधिक अनुतोष पाने का हकदार व्यक्ति ऐसे सभी अनुतोषों या उनमें से किसी के लिए वाद ला सकेगा, किन्तु यदि वह ऐसे सभी अनुतोषों के लिए वाद लाने का लोप न्यायालय की इजाजत के बिना करता है तो उसके पश्चात् वह इस प्रकार लोप किए गए किसी भी अनुतोष के लिए वाद नहीं लाएगा।

स्पष्टीकरण—इस नियम के प्रयोजनों के लिए, कोई बाध्यता और उसके पालन के लिए सांपार्श्विक प्रतिभूति और उसी बाध्यता के अधीन उद्भूत उत्तरोत्तर दावों के बारे में यह समझा जाएगा कि वे क्रमशः एक ही वाद-हेतुक गठित करते हैं।

दृष्टान्त

क एक घर ख को 1,200 रु० वार्षिक भाटक के पट्टे पर देता है। सन् 1905, 1906 और 1907 इन सभी पूरे वर्षों का भाटक शोध्य है और दिया नहीं गया है। क सन् 1908 में ख पर केवल सन् 1906 के शोध्य भाटक के लिए वाद लाता है। ख के ऊपर क उसके पश्चात् सन् 1905 या 1907 के शोध्य भाटक के लिए वाद नहीं लाएगा।

3. वाद-हेतुकों का संयोजन—(1) उसके सिवाय जैसा अन्यथा उपबन्धित है, वादी उसी प्रतिवादी या संयुक्ततः उन्हीं प्रतिवादियों के विरुद्ध कई वाद-हेतुक एक ही वाद में संयोजित कर सकेगा और ऐसे वाद-हेतुक रखने वाले कोई भी वादी जिनमें वे उसी प्रतिवादी या संयुक्ततः उन्हीं प्रतिवादियों के विरुद्ध संयुक्ततः हितबद्ध हों, ऐसे वाद हेतुकों को एक ही वाद में संयोजित कर सकेंगे।

(2) **जहां वाद-हेतुक संयोजित किए जाते हैं, वहां वाद के सम्बन्ध में न्यायालय की अधिकारिता संकलित विषय-वस्तुओं की उस रकम या मूल्य पर निर्भर होगी जो वाद के संस्थित किए जाने की तारीख पर है।**

4. स्थावर सम्पत्ति के प्रत्युद्धरण के लिए केवल कुछ दावों का संयोजित किया जाना—जब तक कि न्यायालय की इजाजत न हो स्थावर सम्पत्ति के प्रत्युद्धरण के लिए वाद में निम्नलिखित के सिवाय कोई भी वाद-हेतुक संयोजित नहीं किया जाएगा—

(क) उस दावाकृत सम्पत्ति या उसके किसी भाग के अन्तःकालीन लाभों या भाटक की बकाया के लिए दावे;

(ख) जिस संविदा के अधीन वह सम्पत्ति या उसका कोई भाग धारित है उसके भंग के लिए नुकसानी के लिए दावे; तथा

(ग) वे दावे जिनमें चाहा गया अनुतोष उसी वाद-हेतुक पर आधारित है:

परन्तु इस नियम की किसी भी बात के बारे में यह नहीं समझा जाएगा कि यह पुरोबन्ध या मोचन के किसी वाद में के किसी भी पक्षकार को यह मांग करने से निवारित करती है कि बन्धक-सम्पत्ति का उसे कब्जा दिलाया जाए।

5. निष्पादक, प्रशासक या वारिस द्वारा उसके विरुद्ध दावे—किसी निष्पादक, प्रशासक या वारिस द्वारा या उसके विरुद्ध उसका उस हैसियत में लाया गया कोई भी दावा वैयक्तिक रूप से उसके द्वारा या उसके विरुद्ध लाए गए उन दावों से तब तक संयोजित नहीं किया जाएगा जब तक कि अन्तिम वर्णित दावों के बारे में यह अभिकथन न किया गया हो कि वे उस सम्पदा के बारे में पैदा हुए हैं जिनके बारे में निष्पादक, प्रशासक या वारिस की हैसियत में वादी वाद लाया है या प्रतिवादी पर वाद लाया गया है या जब तक कि अन्तिम वर्णित दावे ऐसे न हों जिनके लिए वह उस मृत व्यक्ति के साथ, जिसका वह प्रतिनिधित्व करता है, संयुक्ततः हकदार या दायी था।

[1][**6. पृथक् विचारण का आदेश देने की न्यायालय की शक्ति**—जहां न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि एक ही वाद में वाद-हेतुकों के संयोजन से विचारण में उलझन या विलम्ब हो जाएगा या ऐसा करना अन्यथा असुविधाजनक होगा वहां न्यायालय पृथक् विचारण का आदेश दे सकेगा या ऐसा अन्य आदेश दे सकेगा जो न्याय के हित में समीचीन हो।]

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 53 द्वारा (1-2-1977 से) नियम 6 के स्थान पर प्रतिस्थापित।

7. **कुसंयोजन के बारे में आक्षेप**—वाद-हेतुकों के कुसंयोजन के आधार पर सभी आक्षेप यथासंभव शीघ्रतम अवसर पर किए जाएंगे और ऐसे सभी मामलों में जिनमें विवाद्यक स्थिर किए जाते हैं, ऐसे स्थिरीकरण के समय या उससे पहले किए जाएंगे, जब तक कि आक्षेप का आधार पीछे पैदा न हुआ हो और यदि ऐसे आक्षेप किया जाता है तो वह आक्षेप अधित्यक्त कर दिया गया समझा जाएगा।

आदेश 3

मान्यताप्राप्त अभिकर्ता और प्लीडर

1. **उपसंजातियां, आदि स्वयं या मान्यताप्राप्त अभिकर्ता द्वारा या प्लीडर द्वारा की जा सकेंगी**—किसी भी न्यायालय में या उससे कोई भी ऐसी उपसंजाति, आवेदन या कार्य, जिसे ऐसे न्यायालय में करने के लिए कोई पक्षकार विधि द्वारा अपेक्षित या प्राधिकृत है, वहां के सिवाय जहां तत्समय प्रवृत्त किसी विधि द्वारा अभिव्यक्त रूप से अन्यथा उपबन्धित हो, पक्षकार द्वारा स्वयं या उसके मान्यताप्राप्त अभिकर्ता द्वारा या उसकी ओर से [1][यथास्थिति, उपसंजात होने वाले, आवेदन करने वाले या कार्य करने वाले] उसके प्लीडर द्वारा किया जा सकेगा:

परन्तु यदि न्यायालय ऐसा निदिष्ट करे तो ऐसी उपसंजाति स्वयं पक्षकार द्वारा की जाएगी।

2. **मान्यताप्राप्त अभिकर्ता**—पक्षकारों के जिन मान्यताप्राप्त अभिकर्ताओं द्वारा ऐसी उपसंजातियां, आवेदन और कार्य किए जा सकेंगे वे निम्नलिखित हैं:—

(क) ऐसे मुख्तारनामे धारित करने वाले व्यक्ति जिनमें उन्हें ऐसे पक्षकारों की ओर से ऐसी उपसंजातियां, आवेदन और कार्य करने के लिए प्राधिकृत किया गया है;

(ख) जहां कोई भी अन्य अभिकर्ता ऐसी उपसंजातियों, आवेदनों और कार्यों को करने के लिए अभिव्यक्त रूप से प्राधिकृत नहीं है वहां ऐसे व्यक्ति जो उन पक्षकारों के लिए और उनके नाम से व्यापार या कारबार करते हैं, जो पक्षकार उस न्यायालय की अधिकारिता की उन स्थानीय सीमाओं में निवास नहीं करते हैं जिन सीमाओं के भीतर ऐसी उपसंजाति, आवेदन या कार्य ऐसे व्यापार या कारबार की ही बाबत किया जाता है।

3. **मान्यताप्राप्त अभिकर्ता पर आदेशिका की तामील**—(1) जब तक न्यायालय अन्यथा निदिष्ट नहीं करता, किसी पक्षकार के मान्यताप्राप्त अभिकर्ता पर तामील की गई आदेशिकाएं वैसे ही प्रभावी होंगी मानो उनकी तामील स्वयं पक्षकार पर की गई हो।

(2) जो उपबन्ध वाद के किसी पक्षकार पर आदेशिका की तामील के लिए हैं वे उसके मान्यताप्राप्त अभिकर्ता पर आदेशिका की तामील को लागू होंगे।

[2][4. **प्लीडर की नियुक्ति**—(1) कोई भी प्लीडर किसी भी न्यायालय में किसी भी व्यक्ति के लिए कार्य नहीं करेगा जब तक कि वह उस व्यक्ति द्वारा ऐसी लिखित दस्तावेज द्वारा इस प्रयोजन के लिए नियुक्त न किया गया हो जो उस व्यक्ति द्वारा या उसके मान्यताप्राप्त अभिकर्ता द्वारा या ऐसी नियुक्ति करने के लिए मुख्तारनामे द्वारा या उसके अधीन सम्यक् रूप से प्राधिकृत किसी अन्य व्यक्ति द्वारा हस्ताक्षरित है।

(2) हर ऐसी नियुक्ति [3][न्यायालय में फाइल की जाएगी और उपनियम (1) के प्रयोजनों के लिए] तब तक प्रवृत्त समझी जाएगी जब तक वह न्यायालय की इजाजत से ऐसे लेख द्वारा पर्यवसित न कर दी गई हो जो, यथास्थिति, मुवक्किल या प्लीडर द्वारा हस्ताक्षरित है और न्यायालय में फाइल कर दिया गया है या जब तक मुवक्किल या प्लीडर की मृत्यु न हो गई हो या जब तक वाद में की उस मुवक्किल से संबंधित समस्त कार्यवाहियों का अन्त न हो गया हो।

---

1. 1926 के अधिनियम सं० 22 की धारा 2 द्वारा "कार्य करने के लिए सम्यक् रूप से नियुक्त" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1926 के अधिनियम सं० 22 की धारा 2 द्वारा मूल नियम 4 के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 54 द्वारा (1-2-1977 से) कुछ शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।

[1][स्पष्टीकरण—इस उपनियम के प्रयोजनों के लिए, निम्नलिखित को वाद में की कार्यवाही समझा जाएगा—

(क) वाद में डिक्री या आदेश के पुनर्विलोकन के लिए आवेदन;

(ख) वाद में की गई किसी डिक्री या आदेश के सम्बन्ध में इस संहिता की धारा 144 या धारा 152 के अधीन आवेदन;

(ग) वाद में की किसी डिक्री या आदेश की अपील; और

(घ) वाद में पेश की गई या फाइल की गई दस्तावेजों की प्रतियां या उन दस्तावेजों की वापसी अभिप्राप्त करने या वाद के सम्बन्ध में न्यायालय में जमा किए गए धनों का प्रतिदाय अभिप्राप्त करने के प्रयोजन के लिए आवेदन या कार्य।]

[2][(3) उपनियम (2) की किसी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह—

(क) प्लीडर और उसके मुवक्किल के बीच उस अवधि का विस्तार करती है जिसके लिए प्लीडर मुकर्रर किया गया है, या

(ख) उस न्यायालय से भिन्न जिसके लिए प्लीडर मुकर्रर किया गया था, किसी न्यायालय द्वारा जारी की गई किसी सूचना या दस्तावेज को प्लीडर पर उस दशा को छोड़कर तामील करना प्राधिकृत करती है जिसमें मुवक्किल उपनियम (1) में निर्दिष्ट दस्तावेज में ऐसी तामील के लिए अभिव्यक्त रूप से सहमत हो गया है।]

(4) उच्च न्यायालय साधारण आदेश द्वारा यह निदेश दे सकेगा कि जहां वह व्यक्ति जिसके द्वारा प्लीडर नियुक्त किया जाता है, अपना नाम लिखने में असमर्थ है वहां प्लीडर को नियुक्त करने वाली दस्तावेज पर उसका चिह्न ऐसे व्यक्ति के द्वारा और ऐसी रीति से अनुप्रमाणित किया जाएगा जो उस आदेश द्वारा विनिर्दिष्ट की जाए।

(5) जो कोई प्लीडर केवल अभिवचन करने के प्रयोजन से मुकर्रर किया गया है वह किसी पक्षकार की ओर से तब तक अभिवचन नहीं करेगा जब तक उसने स्वहस्ताक्षरित और निम्नलिखित का कथन करने वाला उपसंजाति का ज्ञापन न्यायालय में फाइल न कर दिया हो—

(क) वाद के पक्षकारों के नाम,

(ख) उस पक्षकार का नाम, जिसके लिए वह उपसंजात हो रहा है, तथा

(ग) उस व्यक्ति का नाम जिसके द्वारा वह उपसंजात होने के लिए प्राधिकृत किया गया है:

परन्तु इस उपनियम की कोई भी बात ऐसे किसी प्लीडर को लागू नहीं होगी जो किसी पक्षकार की ओर से अभिवचन करने के लिए ऐसे किसी अन्य प्लीडर द्वारा मुकर्रर किया गया है जिसे ऐसे पक्षकार की ओर से न्यायालय में कार्य करने के लिए सम्यक् रूप से नियुक्त किया गया है।

5. **प्लीडर पर आदेशिका की तामील**—[3][किसी आदेशिका के बारे में, जिसकी तामील ऐसे प्लीडर पर कर दी गई है जिसे किसी पक्षकार की ओर से न्यायालय में कार्य करने के लिए सम्यक् रूप से नियुक्त किया गया है] या जो ऐसे प्लीडर के कार्यालय में या उस स्थान में जहां वह मामूली तौर से निवास करता है, छोड़ दी गई है चाहे वह पक्षकार की स्वीय उपसंजाति के लिए हो या नहीं, यह उपधारणा की जाएगी कि वह उस पक्षकार को सम्यक् रूप से संसूचित कर दी गई है और ज्ञात करा दी गई है, जिसका प्रतिनिधित्व वह प्लीडर करता है, और जब तक न्यायालय अन्यथा निर्दिष्ट न करे तब तक वह समस्त प्रयोजनों के लिए वैसे ही प्रभावी होगी मानो स्वयं पक्षकार को वह दी गई थी या स्वयं पक्षकार पर उसकी तामील की गई थी।

6. **अभिकर्ता तामील का प्रतिग्रहण करेगा**—(1) नियम 2 में वर्णित मान्यताप्राप्त अभिकर्ताओं के अतिरिक्त ऐसा कोई व्यक्ति जो न्यायालय की अधिकारिता के भीतर निवास करता है, आदेशिका की तामील का प्रतिग्रहण करने के लिए अभिकर्ता नियुक्त किया जा सकेगा।

(2) **नियुक्ति लिखित में होगी और न्यायालय में फाइल की जाएगी**—ऐसी नियुक्ति विशेष या साधारण हो सकेगी और ऐसी लिखत द्वारा की जाएगी जो मालिक द्वारा हस्ताक्षरित हो और ऐसी लिखत या यदि नियुक्ति साधारण है तो उसकी प्रमाणित प्रति न्यायालय में फाइल की जाएगी।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 54 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 54 द्वारा (1-2-1977 से) उपनियम (3) के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 54 द्वारा (1-2-1977) से कुछ शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।

[1][(3) न्यायालय, वाद के किसी ऐसे पक्षकार को जिसका कोई ऐसा मान्यताप्राप्त अभिकर्ता नहीं है जो न्यायालय की अधिकारिता के भीतर निवास करता है अथवा जिसका कोई ऐसा प्लीडर नहीं है जो उसकी ओर से न्यायालय में कार्य करने के लिए सम्यक् रूप से नियुक्त किया गया है, वाद के किसी भी प्रक्रम पर यह आदेश दे सकेगा कि वह अपनी ओर से आदेशिका की तामील का प्रतिग्रहण करने के लिए विनिर्दिष्ट समय के भीतर ऐसा अभिकर्ता नियुक्त करे जो न्यायालय की अधिकारिता के भीतर निवास करता है।]

आदेश 4

वादों का संस्थित किया जाना

1. वादपत्र द्वारा वाद प्रारम्भ होगा—(1) हर वाद न्यायालय को या उसके द्वारा इस निमित्त नियुक्त किसी अधिकारी को वादपत्र उपस्थित करके संस्थित किया जाएगा।

(2) हर वादपत्र आदेश 6 और 7 में अन्तर्विष्ट नियमों का वहां तक अनुपालन करेगा जहां तक वे लागू किए जा सकते हैं।

2. वादों का रजिस्टर—न्यायालय हर वाद की विशिष्टियों को, उस प्रयोजन के लिए रखी गई पुस्तक में जो सिविल वादों का रजिस्टर कहलाएगी, प्रविष्ट कराएगा। ऐसी प्रविष्टियां हर वर्ष उसी क्रम में संख्यांकित होंगी जिसमें वादपत्र ग्रहण किए गए हैं।

आदेश 5

समनों का निकाला जाना और उनकी तामील

समनों का निकाला जाना

1. समन—(1) जब वाद सम्यक् रूप से संस्थित किया जा चुका हो तब समन में विनिर्दिष्ट किए जाने वाले दिन को उपसंजात होने और दावे का उत्तर देने के लिए समन प्रतिवादी के नाम निकाला जाएगा:

परन्तु जब प्रतिवादी वादपत्र के उपस्थित किए जाने पर ही उपसंजात हो जाए और वादी का दावा स्वीकार कर ले तब ऐसा कोई समन नहीं निकाला जाएगा:

[2][परन्तु यह और कि जहां समन निकाला गया है वहां न्यायालय प्रतिवादी को अपनी उपसंजाति की तारीख पर अपनी प्रतिरक्षा का लिखित कथन, यदि कोई हो, फाइल करने का निदेश दे सकेगा और समन में इस आशय की प्रविष्टि कराएगा।]

(2) वह प्रतिवादी, जिसके नाम उपनियम (1) के अधीन समन निकाला गया है—

(क) स्वयं, अथवा

(ख) ऐसे प्लीडर द्वारा, जो सम्यक् रूप से अनुदिष्ट हो और वाद से संबंधित सभी सारवान् प्रश्नों का उत्तर देने के लिए समर्थ हो, अथवा

(ग) ऐसे प्लीडर द्वारा, जिसके साथ ऐसा कोई व्यक्ति है जो ऐसे सभी प्रश्नों का उत्तर देने के लिए समर्थ है, उपसंजात हो सकेगा।

(3) हर ऐसा समन न्यायाधीश या ऐसे अधिकारी द्वारा, जो वह नियुक्त करे, हस्ताक्षरित होगा और उस पर न्यायालय की मुद्रा लगी होगी।

2. समनों से उपाबद्ध प्रति या कथन—हर समन के साथ वादपत्र की एक प्रति या यदि ऐसा अनुज्ञात किया गया हो तो, एक संक्षिप्त कथन होगा।

3. न्यायालय प्रतिवादी या वादी को स्वयं उपसंजात होने के लिए आदेश दे सकेगा—(1) जहां न्यायालय के पास प्रतिवादी की स्वीय उपसंजाति अपेक्षित करने के लिए कारण हो वहां समन द्वारा यह आदेश किया जाएगा कि समन में विनिर्दिष्ट तारीख को वह न्यायालय में स्वयं उपसंजात हो।

(2) जहां न्यायालय के पास वादी की उसी दिन स्वीय उपसंजाति अपेक्षित करने के लिए कारण हो वहां वह ऐसी उपसंजाति के लिए आदेश करेगा।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 54 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 55 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

4. किसी भी पक्षकार को स्वयं उपसंजात होने के लिए तब तक आदेश नहीं किया जाएगा जब तक कि वह किन्हीं निश्चित सीमाओं के भीतर निवासी न हो—किसी भी पक्षकार को स्वयं उपसंजात होने के लिए केवल तभी आदेश किया जाएगा जब वह —

(क) न्यायालय की मामूली आरंभिक अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर निवास करता है, अथवा

(ख) ऐसी सीमाओं के बाहर किन्तु ऐसे स्थान में निवास करता है जो न्याय सदन से पचास मील से कम या (जहां उस स्थान के जहां वह निवास करता है और उस स्थान के जहां न्यायालय स्थित है, बीच पंचषष्ठांश दूरी तक रेल या स्टीमर संचार या अन्य स्थापित लोक प्रवहण है वहां) दो सौ मील से कम दूर है।

5. समन या तो विवाद्यकों के स्थिरीकरण के लिए या अंतिम निपटारे के लिए होगा—न्यायालय समन निकालने के समय यह अवधारित करेगा कि क्या वह केवल विवाद्यकों के स्थिरीकरण के लिए होगा या वाद के अन्तिम निपटारे के लिए होगा और समन में तदनुसार निदेश अन्तर्विष्ट होगाः

परन्तु लघुवाद न्यायालय द्वारा सुने जाने वाले हर वाद में समन वाद के अंतिम निपटारे के लिए होगा।

6. प्रतिवादी की उपसंजाति के लिए दिन नियत किया जाना—प्रतिवादी की उपसंजाति के लिए दिन, न्यायालय के चालू कारबार, प्रतिवादी के निवास-स्थान और समन की तामील के लिए आवश्यक समय के प्रति निर्देश से नियत किया जाएगा और वह दिन ऐसे नियत किया जाएगा कि प्रतिवादी को ऐसे दिन उपसंजात होने और उत्तर देने को समर्थ होने के लिए पर्याप्त समय मिल जाए।

7. समन प्रतिवादी को यह आदेश देगा कि वह वे दस्तावेजें पेश करे जिन पर वह निर्भर करता है—उपसंजाति और उत्तर के लिए समन में प्रतिवादी को आदेश होगा कि वह अपने कब्जे या शक्ति में की ऐसी सब दस्तावेजें को पेश करे जिन पर अपने मामले के समर्थन में निर्भर करने का उसका आशय है।

8. अंतिम निपटारे के लिए समन निकाले जाने पर प्रतिवादी को यह निदेश होगा कि वह अपने साक्षियों को पेश करे—जहां समन वाद के अंतिम निपटारे के लिए है वहां उसमें प्रतिवादी को यह निदेश भी होगा कि जिन साक्षियों के साक्ष्य पर अपने मामले के समर्थन में निर्भर करने का उसका आशय है उन सब को उसी दिन पेश करे जो उसकी उपसंजाति के लिए नियत है।

समन की तामील

9. तामील के लिए समन का परिदान या पारेषण—(1) जहां प्रतिवादी उस न्यायालय की अधिकारिता के भीतर निवास करता है जिसमें वाद संस्थित किया गया है या उस अधिकारिता के भीतर निवास करने वाला उसका ऐसा अभिकर्ता है जो समन की तामील का प्रतिग्रहण करने के लिए सशक्त है, वहां जब तक कि न्यायालय अन्यथा निदेश न करे समन उचित अधिकारी को उसके द्वारा या उसके अधीनस्थों में से एक के द्वारा तामील किए जाने के लिए परिदत्त किया या भेजा जाएगा।

(2) उचित अधिकारी उस न्यायालय से, जिसमें वाद संस्थित किया गया है, भिन्न किसी न्यायालय का अधिकारी हो सकेगा और जहां वह ऐसा अधिकारी है वहां समन उसे डाक द्वारा या ऐसी अन्य रीति से भेजा जा सकेगा जो न्यायालय निर्दिष्ट करे।

10. तामील का ढंग—समन की तामील उसकी ऐसी प्रति के परिदान या निविदान द्वारा की जाएगी जो न्यायाधीश या ऐसे अधिकारी द्वारा जो वह इस निमित्त नियुक्त करे, हस्ताक्षरित हो और जिस पर न्यायालय की मुद्रा लगी हो।

11. अनेक प्रतिवादियों पर तामील—अन्यथा विहित के सिवाय जहां एक से अधिक प्रतिवादी हैं, वहां समन की तामील हर एक प्रतिवादी पर की जाएगी।

12. जब साध्य हो तब समन की तामील स्वयं प्रतिवादी पर, अन्यथा उसके अभिकर्ता पर की जाएगी—जहां कहीं भी यह साध्य हो वहां तामील स्वयं प्रतिवादी पर की जाएगी किन्तु यदि तामील का प्रतिग्रहण करने के लिए सशक्त उसका कोई अभिकर्ता है तो उस पर उसकी तामील पर्याप्त होगी।

13. उस अभिकर्ता पर तामील जिसके द्वारा प्रतिवादी कारबार करता है—किसी कारबार या काम से संबंधित किसी ऐसे वाद में जो किसी ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध है, जो उस न्यायालय की अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर निवास नहीं करता

है जिसने समन निकाला है, किसी भी ऐसे प्रबन्धक या अभिकर्ता पर तामील ठीक तामील समझी जाएगी जो तामील के समय ऐसी सीमाओं के भीतर ऐसे व्यक्ति के लिए स्वयं ऐसा कारबार या काम करता है।

(2) पोत के मास्टर के बारे में इस नियम के प्रयोजन के लिए यह समझा जाएगा कि वह स्वामी या भाड़े पर लेने वाले व्यक्ति का अभिकर्ता है।

14. **स्थावर सम्पत्ति के वादों में भारसाधक अभिकर्ता पर तामील**—जहां स्थावर सम्पत्ति की बाबत अनुतोष या उसके प्रति किए गए दोष के लिए प्रतिकर अभिप्राप्त करने के वाद में तामील स्वयं प्रतिवादी पर नहीं की जा सकती और प्रतिवादी का उस तामील का प्रतिग्रहण करने के लिए सशक्त कोई अभिकर्ता नहीं है वहां तामील प्रतिवादी के किसी ऐसे अभिकर्ता पर की जा सकेगी जो उस सम्पत्ति का भारसाधक है।

[1][15. **तामील प्रतिवादी के कुटुम्ब के वयस्क सदस्य पर की जा सकेगी**—जहां किसी वाद में प्रतिवादी अपने निवास-स्थान से उस समय अनुपस्थित है जब उस पर समन की तामील उसके निवास-स्थान पर की जानी है और युक्तियुक्त समय के भीतर उसके निवास-स्थान पर पाए जाने की संभावना नहीं है और समन की तामील का उसकी ओर से प्रतिग्रहण करने के लिए सशक्त उसका कोई अभिकर्ता नहीं है वहां तामील प्रतिवादी के कुटुम्ब के ऐसे किसी वयस्क सदस्य पर, चाहे वह स्त्री हो या पुरुष, की जा सकेगी जो उसके साथ निवास कर रहा है।

स्पष्टीकरण—इस नियम के अर्थ में सेवक कुटुम्ब का सदस्य नहीं है।]

16. **वह व्यक्ति जिस पर तामील की गई है, अभिस्वीकृति हस्ताक्षरित करेगा**—जहां तामील करने वाला अधिकारी समन की प्रति स्वयं प्रतिवादी को, या उसके निमित्त अभिकर्ता को या किसी अन्य व्यक्ति को, परिदत्त करता है या निविदत्त करता है वहां जिस व्यक्ति को प्रति ऐसे परिदत्त या निविदत्त की गई है उससे वह यह अपेक्षा करेगा कि वह मूल समन पर पृष्ठांकित तामील की अभिस्वीकृति पर अपने हस्ताक्षर करे।

17. **जब प्रतिवादी तामील का प्रतिग्रहण करने से इंकार करे या न पाया जाए, तब प्रक्रिया**—जहां प्रतिवादी या उसका अभिकर्ता या उपरोक्त जैसा अन्य व्यक्ति अभिस्वीकृति पर हस्ताक्षर करने से इंकार करता है, या जहां तामील करने वाला अधिकारी सभी सम्यक् और युक्तियुक्त तत्परता बरतने के पश्चात् ऐसे प्रतिवादी को न पा सके, [2][जो अपने निवास-स्थान से उस समय अनुपस्थित है, जब उस पर समन की तामील उसके निवास-स्थान पर की जानी है और युक्तियुक्त समय के भीतर उसके निवास-स्थान पर पाए जाने की संभावना नहीं है] और ऐसा कोई अभिकर्ता नहीं है जो समन की तामील का प्रतिग्रहण उसकी ओर से करने के लिए सशक्त है और न कोई ऐसा अन्य व्यक्ति है जिस पर तामील की जा सके वहां तामील करने वाला अधिकारी उस गृह के, जिसमें प्रतिवादी मामूली तौर से निवास करता है या कारबार करता है या अभिलाभ के लिए स्वयं काम करता है, बाहरी द्वार पर या किसी अन्य सहजदृश्य भाग पर समन की एक प्रति लगाएगा और तब वह मूल प्रति को उस पर पृष्ठांकित या उससे उपाबद्ध ऐसी रिपोर्ट के साथ, जिसमें यह कथित होगा कि उसने प्रति को ऐसे लगा दिया है और वे कौन सी परिस्थितियां थीं जिनमें उसने ऐसा किया, कथित होंगी और जिसमें उस व्यक्ति का (यदि कोई हो) नाम और पता कथित होगा जिसने गृह पहचाना था और जिसकी उपस्थिति में प्रति लगाई गई थी, उस न्यायालय को लौटाएगा जिसने समन निकाला था।

18. **तामील करने के समय और रीति का पृष्ठांकन**—तामील करने वाला अधिकारी उन सभी दशाओं में, जिनमें समन की तामील नियम 16 के अधीन की गई है उस समय को जब और उस रीति को जिससे समन की तामील की गई थी और यदि ऐसा कोई व्यक्ति है जिसने उस व्यक्ति को, जिस पर तामील की गई है, पहचाना था और जो समन के परिदान या निविदान का साक्षी रहा था तो उसका नाम और पता कथित करने वाली विवरणी मूल समन पर पृष्ठांकित करेगा या कराएगा या मूल समन से उपाबद्ध करेगा या कराएगा।

19. **तामील करने वाले अधिकारी की परीक्षा**—जहां समन नियम 17 के अधीन लौटा दिया गया है वहां तामील करने वाले अधिकारी की परीक्षा उसकी अपनी कार्यवाहियों की बाबत न्यायालय स्वयं या किसी अन्य न्यायालय द्वारा उस दशा में करेगा या कराएगा जिसमें उस नियम के अधीन विवरणी तामील करने वाले अधिकारी द्वारा शपथपत्र द्वारा सत्यापित नहीं की गई है और उस

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 55 द्वारा (1-2-1977 से) नियम 15 के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 55 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

दशा में कर सकेगा या करा सकेगा जिसमें वह ऐसे सत्यापित की गई है और उस मामले में ऐसी अतिरिक्त जांच कर सकेगा जो वह ठीक समझे और या तो वह घोषित करेगा कि समन की तामील सम्यक् रूप से हो गई है या ऐसी तामील का आदेश करेगा जो वह ठीक समझे।

[1][19क. **वैयक्तिक तामील के अतिरिक्त डाक द्वारा तामील के लिए समन का एक साथ जारी किया जाना** — (1) न्यायालय नियम 9 से नियम 19 तक में (जिनमें ये दोनों नियम सम्मिलित हैं) उपबन्धित रीति से तामील करने के लिए समन निकालने के साथ ही साथ यह भी निदेश देगा कि समन की तामील प्रतिवादी को, या तामील का प्रतिग्रहण करने के लिए सशक्त उसके अभिकर्ता को सम्बोधित रसीदी रजिस्ट्री डाक द्वारा उस स्थान पर की जाए जहां प्रतिवादी या उसका अभिकर्ता वास्तव में और स्वेच्छा से निवास करता है या कारबार करता है या अभिलाभ के लिए स्वयं काम करता है:

परन्तु जहां मामले की परिस्थितियों में न्यायालय इसे अनावश्यक समझता है वहां इस उपनियम की कोई बात न्यायालय से यह अपेक्षा नहीं करेगी कि वह रजिस्ट्रीकृत डाक द्वारा तामील करने के लिए समन निकाले।

(2) जहां न्यायालय प्रतिवादी या उसके अभिकर्ता द्वारा हस्ताक्षित होने का तात्पर्य रखने वाली अभिस्वीकृति प्राप्त करता है या जहां न्यायालय उस डाक वस्तु को जिसमें समन है, ऐसे पृष्ठांकन के साथ वापस प्राप्त करता है, जो डाक कर्मचारी द्वारा इस आशय से किया गया तात्पर्यित है कि प्रतिवादी या उसके अभिकर्ता ने उस डाक वस्तु को जिसमें समन है, निविदत्त किए जाने पर ग्रहण करने से इंकार कर दिया था तो समन निकालने वाला न्यायालय यह घोषणा करेगा कि प्रतिवादी पर समन की सम्यक् रूप से तामील की गई थी:

परन्तु जहां समन उचित रूप से पता लिख कर, उस पर पूर्व संदाय करके और रसीदी रजिस्ट्री डाक द्वारा सम्यक् रूप से भेजा गया था वहां इस उपनियम में निर्दिष्ट घोषणा इस तथ्य के होते हुए भी की जाएगी कि अभिस्वीकृति खो जाने या इधर-उधर हो जाने या किसी अन्य कारण से समन निकालने की तारीख से तीस दिन के भीतर न्यायालय को प्राप्त नहीं हुई है।]

20. **प्रतिस्थापित तामील**—(1) जहां न्यायालय का समाधान हो जाता है कि यह विश्वास करने के लिए कारण है कि प्रतिवादी इस प्रयोजन से कि उस पर तामील न होने पाए, सामने आने से बचता है या समन की तामील मामूली प्रकार से किसी अन्य कारण से नहीं की जा सकती वहां न्यायालय आदेश देगा कि समन की तामील उसकी एक प्रति न्याय सदन के किसी सहजदृश्य स्थान में लगाकर और (यदि ऐसा कोई गृह हो) तो उस गृह के, जिसमें प्रतिवादी का अन्तिम बार निवास करना या कारबार करना या अभिलाभ के लिए स्वयं काम करना ज्ञात है, किसी सहजदृश्य भाग पर भी लगा कर या ऐसी अन्य रीति से, जो न्यायालय ठीक समझे, की जाए।

[1][(1क) जहां उपनियम (1) के अधीन कार्य करने वाला न्यायालय समाचारपत्र में विज्ञापन द्वारा तामील का आदेश करता है वहां वह समाचारपत्र ऐसा दैनिक समाचारपत्र होगा जिसका परिचालन उस स्थानीय क्षेत्र में होता है, जिसमें प्रतिवादी का अन्तिम बार वास्तव में और स्वेच्छा से निवास करना या कारबार करना या अभिलाभ के लिए स्वयं काम करना ज्ञात है।]

(2) **प्रतिस्थापित तामील का प्रभाव** — न्यायालय के आदेश द्वारा प्रतिस्थापित तामील इस प्रकार प्रभावी होगी मानो वह स्वयं प्रतिवादी पर की गई हो।

(3) **जहां तामील प्रतिस्थापित की गई हो वहां उपसंजाति के लिए समय का नियत किया जाना** — जहां तामील न्यायालय के आदेश द्वारा प्रतिस्थापित की गई है वहां न्यायालय प्रतिवादी को उपसंजाति के लिए ऐसा समय नियत करेगा जो उस मामले में अपेक्षित हो।

[2][20क. **[डाक द्वारा समन की तामील।]**—सिविल प्रक्रिया (संशोधन) अधिनियम, 1976 (1976 का 104) की धारा 55 द्वारा (1-2-1977 से) निरसित।

21. **जहां प्रतिवादी किसी अन्य न्यायालय की अधिकारिता के भीतर निवास करता है वहां समन की तामील** — समन को वह न्यायालय, जिसने उसे निकाला है, अपने अधिकारियों में से किसी द्वारा या डाक द्वारा राज्य के भीतर या बाहर ऐसे

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 55 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
2. 1956 के अधिनियम सं० 66 की धारा 14 द्वारा अन्तःस्थापित।

किसी न्यायालय को भेज सकेगा (जो उच्च न्यायालय न हो) जिसकी उस स्थान में अधिकारिता है जहां प्रतिवादी निवास करता है।

22. **बाहर के न्यायालयों द्वारा निकाले गए समन की प्रेसिडेंसी नगरों में तामील**—जहां कलकत्ता, मद्रास [1][और मुम्बई] नगरों की सीमाओं से परे स्थापित किसी न्यायालय द्वारा निकाले गए समन की तामील ऐसी सीमाओं में से किसी सीमा के भीतर की जानी है वहां वह उस लघुवाद न्यायालय को भेजा जाएगा जिसकी अधिकारिता के भीतर उसकी तामील की जानी है।

23. **जिस न्यायालय को समन भेजा गया है उसका कर्तव्य**—वह न्यायालय, जिसको समन नियम 21 या नियम 22 के अधीन भेजा गया है, उसकी प्राप्ति पर इस भांति असर होगा मानो वह उसी न्यायालय द्वारा निकाला गया था और तब वह उससे सम्बन्धित अपनी कार्यवाहियों के अभिलेख के (यदि कोई हो) सहित समन उसे निकालने वाले न्यायालय को वापस भेज देगा।

24. **कारागार में प्रतिवादी पर तामील**—जहां प्रतिवादी कारागार में परिरुद्ध है वहां समन कारागार के भारसाधक अधिकारी को प्रतिवादी पर तामील के लिए परिदत्त किया जाएगा या डाक द्वारा या अन्यथा भेजा जाएगा।

25. **वहां तामील, जहां प्रतिवादी भारत के बाहर निवास करता है और उसका कोई अभिकर्ता नहीं है**—जहां प्रतिवादी [2][भारत] के बाहर निवास करता है और उसका [2][भारत] में ऐसा कोई अभिकर्ता नहीं है जो तामील प्रतिगृहीत करने के लिए सशक्त है वहां, यदि ऐसे स्थान और उस स्थान के बीच जहां न्यायालय स्थित है, डाक द्वारा संचार है तो, समन उस प्रतिवादी को उस स्थान के पते पर, जहां वह निवास कर रहा है, डाक द्वारा भेजा जाएगा:

[3][परन्तु जहां ऐसा प्रतिवादी [4][बंगलादेश या पाकिस्तान में निवास करता है] वहां समन उसकी एक प्रति के सहित, प्रतिवादी पर तामील के लिए उस देश के किसी ऐसे न्यायालय को भेजा जा सकेगा (जो उच्च न्यायालय न हो) जिसकी उस स्थान में अधिकारिता है जहां प्रतिवादी निवास करता है:

परन्तु यह और कि जहां ऐसा कोई प्रतिवादी [5][बंगलादेश या पाकिस्तान में का लोक अधिकारी है जो, (यथास्थिति, बंगलादेश या पाकिस्तान की सेना, नौसेना या वायु सेना का नहीं है)] या उस देश में की रेल कम्पनी या स्थानीय प्राधिकारी का सेवक है वहां समन उसकी एक प्रति के सहित, उस प्रतिवादी पर तामील के लिए उस देश के ऐसे अधिकारी या प्राधिकारी को भेजा जा सकेगा जिसे केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, इस निमित्त विनिर्दिष्ट करे।]

[6][26. **राजनीतिक अभिकर्ता या न्यायालय की मार्फत विदेशी राज्यक्षेत्र में तामील**—जहां—

(क) केन्द्रीय सरकार में निहित किसी वैदेशिक अधिकारिता के प्रयोग में, किसी ऐसे विदेशी राज्यक्षेत्र में, जिसमें प्रतिवादी वास्तव में और स्वेच्छा से निवास करता है, कारबार करता है या अभिलाभ के लिए स्वयं काम करता है, ऐसा राजनीतिक अभिकर्ता नियुक्त किया गया है या न्यायालय स्थापित किया गया है या चालू रखा गया है जिसे उस समन की तामील करने की शक्ति है, जो इस संहिता के अधीन न्यायालय द्वारा निकाला जाए, अथवा

(ख) केन्द्रीय सरकार ने किसी ऐसे न्यायालय के बारे में जो किसी ऐसे राज्यक्षेत्र में स्थित है और पूर्वोक्त जैसी किसी अधिकारिता के प्रयोग में स्थापित नहीं किया गया या चालू नहीं रखा गया है, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा घोषणा की है कि न्यायालय द्वारा इस संहिता के अधीन निकाले गए समन की ऐसे न्यायालय द्वारा तामील विधिमान्य तामील समझी जाएगी,

वहां समन ऐसे राजनीतिक अभिकर्ता या न्यायालय को प्रतिवादी पर तामील किए जाने के प्रयोजन के लिए डाक द्वारा या अन्यथा या यदि केन्द्रीय सरकार द्वारा इस प्रकार निदेश दिया जाए तो उस सरकार के विदेशी मामलों से सम्बन्धित मंत्रालय की मार्फत या ऐसी अन्य रीति से जो केन्द्रीय सरकार द्वारा विनिर्दिष्ट की जाए, भेजा जा सकेगा और यदि राजनीतिक अभिकर्ता या न्यायालय समन को ऐसे राजनीतिक अभिकर्ता द्वारा या उस न्यायालय के न्यायाधीश या अन्य प्राधिकारी द्वारा किए गए तात्पर्यित इस आशय के पृष्ठांकन के

---

1. भारत शासन (भारतीय विधि अनुकूलन) आदेश, 1937 द्वारा "मुम्बई और रंगून" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1951 के अधिनियम सं० 2 की धारा 3 द्वारा "राज्यों" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. 1951 के अधिनियम सं० 19 की धारा 2 द्वारा अन्तःस्थापित।
4. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 55 द्वारा (1-2-1977 से) "पाकिस्तान में निवास करता है" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
5. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 55 द्वारा (1-2-1977 से) कुछ शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।
6. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 55 द्वारा (1-2-1977 से) नियम 26 के स्थान पर प्रतिस्थापित।

सहित लौटा देता है कि समन की तामील प्रतिवादी पर इसमें इसके पूर्व निदिष्ट रीति से की जा चुकी है तो ऐसा पृष्ठांकन तामील का साक्ष्य समझा जाएगा।

26क. विदेशों के अधिकारियों को समन का भेजा जाना— जहां केन्द्रीय सरकार ने राजपत्र में अधिसूचना द्वारा किसी विदेशी राज्यक्षेत्र के बारे में यह घोषणा की है कि उस विदेशी राज्यक्षेत्र में वास्तव में और स्वेच्छा से निवास करने वाले या कारबार करने वाले या अभिलाभ के लिए स्वयं काम करने वाले प्रतिवादियों पर तामील किए जाने वाले समन विदेशी राज्यक्षेत्र की सरकार के ऐसे अधिकारी को जो केन्द्रीय सरकार द्वारा विनिर्दिष्ट किया जाए, भेजे जा सकेंगे वहां समन ऐसे अधिकारी को भारत सरकार के विदेशी मामलों से सम्बन्धित मंत्रालय की मार्फत या ऐसी अन्य रीति से जो केन्द्रीय सरकार द्वारा विनिर्दिष्ट की जाए, भेजे जा सकेंगे और यदि ऐसा अधिकारी किसी ऐसे समन को उसके द्वारा किए गए तात्पर्यित इस पृष्ठांकन के सहित लौटा देता है कि समन की तामील प्रतिवादी पर की जा चुकी है तो ऐसा पृष्ठांकन तामील का साक्ष्य समझा जाएगा।]

27. सिविल लोक अधिकारी पर या रेल कम्पनी या स्थानीय प्राधिकारी के सेवक पर तामील—जहां प्रतिवादी लोक अधिकारी है (जो [1][भारतीय] सेना, [2][नौसेना या वायुसेना] [3]***का नहीं है) या रेल कम्पनी या स्थानीय प्राधिकारी का सेवक है वहां, यदि न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि समन की तामील अत्यन्त सुविधापूर्वक ऐसे की जा सकती है तो वह उसे उसकी उस प्रति के सहित जो प्रतिवादी द्वारा रख ली जानी है, उस कार्यालय के प्रधान को जिसमें प्रतिवादी नियोजित है, प्रतिवादी पर तामील के लिए भेज सकेगा।

28. सैनिकों, नौसैनिकों या वायुसैनिकों पर तामील—जहां प्रतिवादी सैनिक, [4][नौसैनिक] [5][या वायुसैनिक] है वहां न्यायालय समन को, उसकी उस प्रति के सहित जो प्रतिवादी द्वारा रख ली जानी है, उनके कमान आफिसर को तामील के लिए भेजेगा।

29. उस व्यक्ति का कर्तव्य जिसको समन तामील के लिए परिदत्त किया जाए या भेजा जाए—(1) जहां समन तामील के लिए किसी व्यक्ति को नियम 24, नियम 27 या नियम 28 के अधीन परिदत्त किया गया है या भेजा गया है वहां ऐसा व्यक्ति, उसकी तामील, यदि संभव हो, करने के लिए और अपने हस्ताक्षर करके प्रतिवादी की लिखित अभिस्वीकृति के साथ लौटाने के लिए आबद्ध होगा और ऐसे हस्ताक्षर तामील के साक्ष्य समझे जाएंगे।

(2) जहां किसी कारण से तामील असंभव हो वहां समन ऐसे कारण के और तामील कराने के लिए की गई कार्यवाहियों के पूर्ण कथन के साथ न्यायालय को लौटा दिया जाएगा और ऐसा कथन तामील न होने का साक्ष्य समझा जाएगा।

30. समन के बदले पत्र का प्रतिस्थापित किया जाना—(1) इसमें इसके पूर्व अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, जहां न्यायालय की यह राय है कि प्रतिवादी ऐसी पंक्ति का है जो उसे इस बात का हकदार बनाती है कि उसके प्रति ऐसा सम्मानपूर्ण बर्ताव किया जाए वहां वह समन के बदले ऐसा पत्र, प्रतिस्थापित कर सकेगा जो न्यायाधीश द्वारा या ऐसे अधिकारी द्वारा, जो वह इस निमित्त नियुक्त करे, हस्ताक्षरित होगा।

(2) उपनियम (1) के अधीन प्रतिस्थापित पत्र में वे सब विशिष्टियां अन्तर्विष्ट होंगी जिनका समन में कथित होना अपेक्षित है और उपनियम (3) के उपबन्धों के अधीन रहते हुए वह हर तरह से समन माना जाएगा।

(3) ऐसा प्रतिस्थापित पत्र प्रतिवादी को डाक द्वारा या न्यायालय द्वारा चुने गए विशेष संदेश-वाहक द्वारा या किसी ऐसी अन्य रीति से जो न्यायालय ठीक समझे, भेजा जा सकेगा और जहां प्रतिवादी का ऐसा अभिकर्ता हो जो तामील प्रतिगृहीत करने के लिए सशक्त है वहां वह पत्र ऐसे अभिकर्ता को परिदत्त किया जा सकेगा या भेजा जा सकेगा।

---

1. विधि अनुकूलन आदेश, 1950 द्वारा "हिज मजेस्टी की" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1927 के अधिनियम सं० 10 की धारा 2 और अनुसूची 1 द्वारा "या नौसेना" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. 1934 के अधिनियम सं० 35 की धारा 2 और अनुसूची द्वारा "या हिज मजेस्टी की भारतीय समुद्री सेवा" शब्दों का लोप किया गया।
4. 1934 के अधिनियम सं० 35 की धारा 2 और अनुसूची द्वारा अन्तःस्थापित।
5. 1927 के अधिनियम सं० 10 की धारा 2 और अनुसूची 1 द्वारा अन्तःस्थापित।

आदेश 6

अभिवचन साधारणतः

1. **अभिवचन**— "अभिवचन" से वादपत्र या लिखित कथन अभिप्रेत होगा।

[1][2. **अभिवचन में तात्त्विक तथ्यों का, न कि साक्ष्य का, कथन होगा**—(1) हर अभिवचन में उन तात्त्विक तथ्यों का, जिन पर अभिवचन करने वाला पक्षकार, यथास्थिति, अपने दावे या अपनी प्रतिरक्षा के लिए निर्भर करता है और केवल उन तथ्यों का, न कि उस साक्ष्य का जिसके द्वारा वे साबित किए जाने हैं, संक्षिप्त कथन अन्तर्विष्ट होगा।

(2) हर अभिवचन आवश्यकतानुसार पैराओं में विभक्त किया जाएगा। जो यथाक्रम संख्यांकित किए जाएंगे। हर अभिकथन सुविधानुसार पृथक् पैरा में किया जाएगा।

(3) अभिवचन में तारीखें, राशियां और संख्याएं अंकों और शब्दों में भी अभिव्यक्त की जाएंगी।]

3. **अभिवचन का प्ररूप**—जब वे लागू होने योग्य हों तब परिशिष्ट क में के प्ररूप और जहां वे लागू होने योग्य न हों वहां जहां तक हो सके, लगभग वैसे ही प्ररूप सभी अभिवचनों के लिए प्रयुक्त किए जाएंगे।

4. **जहां आवश्यक हो वहां विशिष्टियों का दिया जाना**—उन सभी मामलों में जिनमें अभिवचन करने वाला पक्षकार किसी दुर्व्यपदेशन, कपट, न्यास-भंग, जानबूझकर किए गए व्यतिक्रम या असम्यक् असर के अभिवाक् पर निर्भर करता है, और अन्य सभी मामलों में, जिनमें उन विशिष्टियों के अलावा विशिष्टियां जो पूर्वोक्त प्ररूपों में उदाहरण-स्वरूप दर्शित की गई हैं, आवश्यक हों अभिवचन में वे विशिष्टियां (यदि आवश्यक हों तो तारीखों और मदों के सहित) कथित की जाएंगी।

5. **अतिरिक्त और अधिक अच्छा कथन या विशिष्टियां**—दावे या प्रतिरक्षा की प्रकृति का अतिरिक्त और अधिक अच्छा कथन करने या किसी अभिवचन में कथित किसी बात के अतिरिक्त और अधिक विशिष्टियां देने का आदेश खर्चों और अन्य बातों के बारे में ऐसे निबंधनों पर दिया जा सकेगा जो न्यायसंगत हों।

6. **पुरोभाव्य शर्त**—जिस किसी पुरोभाव्य शर्त के पालन का या घटित होने का प्रतिवाद करना आशयित हो वह, यथास्थिति, वादी या प्रतिवादी द्वारा अपने अभिवचन में स्पष्टतः विनिर्दिष्ट की जाएगी और उसके अधीन रहते हुए वादी या प्रतिवादी के पक्ष के लिए आवश्यक सभी पुरोभाव्य शर्तों के पालन या घटित होने का प्रकथन उसके अभिवचन में विवक्षित होगा।

7. **फेरबदल**—किसी भी अभिवचन में दावे का कोई नया आधार या तथ्य का कोई अभिकथन, जो उसका अभिवचन करने वाले पक्षकार के पूर्वतन अभिवचनों से असंगत हो, बिना संशोधन किए न तो उठाया जाएगा और न अन्तर्विष्ट होगा।

8. **संविदा का प्रत्याख्यान**—जहां किसी अभिवचन में किसी संविदा का अभिकथन है वहां विरोधी पक्षकार द्वारा किए गए उसके कोरे प्रत्याख्यान का यह अर्थ लगाया जाएगा कि वह केवल अभिव्यक्त संविदा का, जो अभिकथित की गई है, या उन तथ्यों की बातों का, जिनसे वह संविदा विवक्षित की जा सके, प्रत्याख्यान है, न कि ऐसी संविदा की वैधता या विधि की दृष्टि में पर्याप्तता का प्रत्याख्यान।

9. **दस्तावेज के प्रभाव का कथन किया जाना**—जहां कहीं किसी दस्तावेज की अन्तर्वस्तु तात्त्विक है वहां उसे सम्पूर्णतः या उसके किसी भाग को उपवर्णित किए बिना उसके प्रभाव को यथासंभव संक्षिप्त रूप में अभिवचन में कथित कर देना पर्याप्त होगा, जब तक कि दस्तावेज के या उसके किसी भाग के यथावत् शब्द ही तात्त्विक न हों।

10. **विद्वेष, ज्ञान, आदि**—जहां कहीं किसी व्यक्ति के विद्वेष, कपटपूर्ण आशय, ज्ञान या चित्त की अन्य दशा का अभिकथन करना तात्त्विक है, वहां उन परिस्थितियों को उपवर्णित किए बिना जिनसे उसका अनुमान किया जाना है, उसे तथ्य के रूप में अभिकथित करना पर्याप्त होगा।

11. **सूचना**—जहां कहीं यह अभिकथन करना तात्त्विक है कि किसी तथ्य, बात या वस्तु की सूचना किस व्यक्ति को थी वहां जब तक कि ऐसी सूचना का प्ररूप या उसके यथावत् शब्द या वे परिस्थितियां, जिनसे ऐसी सूचना का अनुमान किया जाना है, तात्त्विक न हों, ऐसी सूचना को तथ्य के रूप में अभिकथित करना पर्याप्त होगा।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 56 द्वारा (1-2-1977 से) नियम 2 के स्थान पर प्रतिस्थापित।

12. विवक्षित संविदा या सम्बन्ध— जब कभी पत्रों की या वार्तालापों की आवली से या अन्यथा कई परिस्थितियों से किन्हीं व्यक्तियों के बीच में की कोई संविदा या अन्य सम्बन्ध विवक्षित किया जाना है तब ऐसी संविदा या सम्बन्ध को तथ्य के रूप में अभिकथित करना और ऐसे पत्रों, वार्तालापों या परिस्थितियों को ब्यौरेवार उपवर्णित किए बिना उनके प्रति साधारणतया निर्देश करना पर्याप्त होगा। और ऐसी दशा में यदि ऐसे अभिवचन करने वाला व्यक्ति ऐसी परिस्थितियों से विवक्षित की जाने वाली एक संविदा या सम्बंध से अधिक संविदाओं या सम्बन्धों पर अनुकल्पतः निर्भर करना चाहता है तो उनका कथन अनुकल्पतः कर सकेगा।

13. विधि की उपधारणाएं— किसी तथ्य की बात को, जिसकी विधि किसी पक्षकार के पक्ष में करती है या जिसके सबूत का भार प्रतिपक्ष पर है, पक्षकारों में से किसी के द्वारा किसी भी अभिवचन में अभिकथित करना तब तक आवश्यक न होगा जब तक कि पहले ही उसका प्रत्याख्यान विनिर्दिष्ट रूप से न कर दिया गया हो (उदाहरणार्थ जहां वादी दावे के सारभूत आधार के रूप में विनिमय-पत्र पर न कि उसके प्रतिफल के लिए वाद लाता है वहां विनिमय-पत्र का प्रतिफल)।

14. अभिवचन का हस्ताक्षरित किया जाना— हर अभिवचन पक्षकार द्वारा यदि उसका कोई प्लीडर है तो उसके द्वारा हस्ताक्षरित किया जाएगा : परन्तु जहां अभिवचन करने वाला पक्षकार अनुपस्थिति के कारण या किसी अन्य अच्छे हेतुक से अभिवचन पर हस्ताक्षर करने में असमर्थ है वहां वह ऐसे व्यक्ति द्वारा हस्ताक्षरित किया जा सकेगा जो उसकी ओर से उसे हस्ताक्षरित करने के लिए या वाद लाने या प्रतिरक्षा करने के लिए उसके द्वारा सम्यक् रूप से प्राधिकृत है।

[1][14क. **सूचना की तामील के लिए पता**— (1) पक्षकार द्वारा फाइल किए जाने वाले हर अभिवचन के साथ पक्षकार के पते के बारे में विहित प्ररूप में कथन, नियम 14 में उपबन्धित रूप में हस्ताक्षरित करके देना होगा।

(2) ऐसे पते को, न्यायालय में सम्यक् रूप से भरे गए प्ररूप और सत्यापित याचिका के साथ पक्षकार के नए पते का कथन दाखिल करके, समय-समय पर परिवर्तित किया जा सकेगा।

(3) उपनियम (1) के अधीन किए गए कथन में दिए गए पते को पक्षकार का "रजिस्ट्रीकृत पता" कहा जाएगा और जब तक पूर्वोक्त रूप में सम्यक्तः परिवर्तित न किया गया हो तब तक वह वाद में या उसमें दी गई किसी डिक्री या किए गए किसी आदेश की किसी अपील में सभी आदेशिकाओं की तामील के प्रयोजनों के लिए और निष्पादन की प्रयोजन के लिए पक्षकार का पता समझा जाएगा और पूर्वोक्त के अधीन रहते हुए इस मामले या विषय के अन्तिम निर्धारण के पश्चात् दो वर्षों की अवधि के लिए वही पता माना जाएगा।

(4) किसी आदेशिका की तामील पक्षकार पर सभी बातों के बारे में उसके रजिस्ट्रीकृत पते पर इस प्रकार की जा सकेगी मानो वह पक्षकार वहां निवास करता रहा हो।

(5) जहां न्यायालय को यह पता चलता है कि किसी पक्षकार का रजिस्ट्रीकृत पता अधूरा, मिथ्या या काल्पनिक है वहां न्यायालय या तो स्वप्रेरणा से या किसी पक्षकार के आवेदन पर,—

(क) ऐसे मामले में जहां ऐसा रजिस्ट्रीकृत पता वादी द्वारा दिया गया था वहां वाद के रोके जाने का आदेश दे सकेगा, अथवा

(ख) ऐसे मामले में जहां रजिस्ट्रीकृत पता प्रतिवादी द्वारा दिया गया था वहां उसकी प्रतिरक्षा काट दी जाएगी, और वह उसी स्थिति में रखा जाएगा मानो उसने कोई प्रतिरक्षा पेश नहीं की हो।

(6) जहां उपनियम (5) के अधीन किसी वाद को रोक दिया जाता है या प्रतिरक्षा काट दी जाती है वहां, यथास्थिति, वादी या प्रतिवादी अपना सही पता देने के पश्चात् न्यायालय से, यथास्थिति, रोक-आदेश या प्रतिरक्षा काटने के आदेश को अपास्त करने वाले आदेश के लिए आवेदन कर सकेगा।

(7) यदि न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि पक्षकार उचित समय पर अपना सही पता फाइल करने में किसी पर्याप्त कारण से रोक दिया गया था, तो वह रोक-आदेश या प्रतिरक्षा काटने के आदेश को खर्चों और अन्य बातों के बारे में ऐसे निबन्धनों पर जो वह ठीक समझे, अपास्त कर सकेगा और, यथास्थिति, वाद या प्रतिरक्षा की कार्यवाही के लिए दिन नियत करेगा।

(8) इस नियम की कोई बात न्यायालय को आदेशिका की तामील किसी अन्य पते पर किए जाने का निदेश देने से, यदि वह किसी कारण से ऐसा करना ठीक समझे तो, नहीं रोकेगी।]

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 56 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

15. **अभिवचन का सत्यापन**—(1) उसके सिवाय जैसा कि तत्समय प्रवृत्त किसी विधि द्वारा अन्यथा उपबन्धित है, हर अभिवचन उसे करने वाले पक्षकार द्वारा या पक्षकारों में से एक के द्वारा या किसी ऐसे अन्य व्यक्ति द्वारा, जिसके बारे में न्यायालय को समाधानप्रद रूप में साबित कर दिया गया है कि वह मामले के तथ्यों से परिचित है, उसके पाद-भाग में सत्यापित किया जाएगा।

(2) सत्यापन करने वाला व्यक्ति अभिवचन के संख्यांकित पैराओं का निर्देश करते हुए यह विनिर्दिष्ट करेगा कि कौन-सा पैरा वह अपने निजी ज्ञान के आधार पर सत्यापित करता है और कौन-सा पैरा वह ऐसी जानकारी के आधार पर सत्यापित करता है जो उसे मिली है और जिसके बारे में उसका यह विश्वास है कि वह सत्य है।

(3) सत्यापन करने वाले व्यक्ति द्वारा वह सत्यापन हस्ताक्षरित किया जाएगा और उसमें उस तारीख का जिसको और उस स्थान का जहां वह हस्ताक्षरित किया गया था कथन किया जाएगा।

[1][16. **अभिवचन का काट दिया जाना**—न्यायालय कार्यवाहियों के किसी भी प्रक्रम में आदेश दे सकेगा कि किसी भी अभिवचन में की कोई भी ऐसी बात काट दी जाए या संशोधित कर दी जाए,—

(क) जो अनावश्यक, कलंकात्मक, तुच्छ या तंग करने वाली है, अथवा

(ख) जो वाद के ऋजु विचारण पर प्रतिकूल प्रभाव डालने वाली या उसमें उलझन डालने वाली या विलंब करने वाली है; अथवा

(ग) जो अन्यथा न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग है।]

17. **अभिवचन का संशोधन**—न्यायालय दोनों में से किसी भी पक्षकार को कार्यवाहियों के किसी भी प्रक्रम में अनुज्ञा दे सकेगा कि वह अपने अभिवचनों को ऐसी रीति से और ऐसे निबंधनों पर, जो न्यायसंगत हों, परिवर्तित करे या संशोधित करे और सभी ऐसे संशोधन किए जाएंगे जो पक्षकारों के बीच में विवादग्रस्त वास्तविक प्रश्नों के अवधारण के प्रयोजन के लिए आवश्यक हों।

18. **आदेश के पश्चात् संशोधन करने में असफल रहना**—यदि कोई पक्षकार, जिसने संशोधन करने की इजाजत के लिए आदेश प्राप्त कर लिया है, उस आदेश द्वारा उस प्रयोजन के लिए परिसीमित समय के भीतर या यदि उसके द्वारा कोई समय परिसीमित नहीं किया गया है तो, आदेश की तारीख से चौदह दिन के भीतर तदनुसार संशोधन नहीं करता है तो जब तक कि न्यायालय द्वारा समय बढ़ा न दिया जाए उसे, यथास्थिति, यथापूर्वोक्त परिसीमित समय के या ऐसे चौदह दिन के अवसान के पश्चात् संशोधन करने के लिए अनुज्ञात नहीं किया जाएगा।

आदेश 7

वादपत्र

1. **वादपत्र में अन्तर्विष्ट की जाने वाली विशिष्टियां**—वादपत्र में निम्नलिखित विशिष्टियां होंगी—

(क) उस न्यायालय का नाम जिसमें वाद लाया गया है;

(ख) वादी का नाम, वर्णन और निवास-स्थान;

(ग) जहां तक अभिनिश्चित किए जा सकें, प्रतिवादी का नाम, वर्णन और निवास-स्थान;

(घ) जहां वादी या प्रतिवादी अवयस्क या विकृत-चित्त व्यक्ति है वहां उस भाव का कथन;

(ङ) वे तथ्य जिनसे वाद-हेतुक गठित है और वह कब पैदा हुआ;

(च) यह दर्शित करने वाले तथ्य कि न्यायालय को अधिकारिता है;

(छ) वह अनुतोष जिसका वादी दावा करता है;

(ज) जहां वादी ने कोई मुजरा अनुज्ञात किया है या अपने दावे का कोई भाग त्याग दिया है वहां ऐसी अनुज्ञात की गई या त्यागी गई रकम; तथा

---

1. 1976 के अधिनियम सं॰ 104 की धारा 56 द्वारा (1-2-1977 से) नियम 16 के स्थान पर प्रतिस्थापित।

(झ) अधिकारिता के और न्यायालय-फीस के प्रयोजनों के लिए वाद की विषय-वस्तु के मूल्य का ऐसा कथन उस मामले में किया जा सकता है।

2. **धन के वादों में**—जहां वादी धन की वसूली चाहता है वहां दावा की गई ठीक रकम वादपत्र में कथित की जाएगी।

किन्तु जहां वादी अन्तःकालीन लाभों के लिए या ऐसी रकम के लिए जो उसके और प्रतिवादी के बीच हिसाब किए जाने पर उसको शोध्य पाई जाए, [1][या प्रतिवादी के कब्जे में की जंगम वस्तुओं के लिए या ऐसे ऋणों के लिए जिनका मूल्य वह युक्तियुक्त तत्परता से भी प्राकलित नहीं कर सकता है, वाद लाता है वहां दावाकृत रकम या मूल्य वादपत्र में लगभग मात्रा में कथित किया जाएगा]।

3. **जहां वाद की विषय-वस्तु स्थावर सम्पत्ति है**—जहां वाद की विषय-वस्तु स्थावर सम्पत्ति है वहां वादपत्र में सम्पत्ति का ऐसा वर्णन होगा जो उसकी पहचान कराने के लिए पर्याप्त है और उस दशा में जिसमें ऐसी सम्पत्ति की पहचान भू-व्यवस्थापन या सर्वेक्षण संबंधी अभिलेख में की सीमाओं या संख्यांकों द्वारा की जा सकती है, वादपत्र में ऐसी सीमाएं या संख्यांक विनिर्दिष्ट होंगे।

4. **जब वादी प्रतिनिधि के रूप में वाद लाता है**—जहां वादी प्रतिनिधि की हैसियत में वाद लाता है वहां वादपत्र में न केवल यह दर्शित होगा कि उसका विषय-वस्तु में वास्तविक विद्यमान हित है, वरन् यह भी दर्शित होगा कि उससे सम्पृक्त वाद के संस्थित करने के लिए उसको समर्थ बनाने के लिए आवश्यक कदम (यदि कोई हो) वह उठा चुका है।

5. **प्रतिवादी के हित और दायित्व का दर्शित किया जाना**—वादपत्र में यह दर्शित किया जाएगा कि प्रतिवादी विषय-वस्तु में हित रखता है या रखने का दावा करता है और वह वादी की मांग का उत्तर देने के लिए अपेक्षित किए जाने का दायी है।

6. **परिसीमा विधि से छूट के आधार**—जहां वाद परिसीमा विधि द्वारा विहित अवधि के अवसान के पश्चात् संस्थित किया जाता है वहां वादपत्र में वह आधार दर्शित किया जाएगा जिस पर ऐसी विधि से छूट पाने का दावा किया गया है:

[2][परन्तु न्यायालय वादी को वाद में न दिए गए किसी आधार पर, यदि ऐसा आधार वाद में उपवर्णित आधारों से असंगत नहीं है तो परिसीमा विधि से छूट का दावा करने की अनुमति दे सकेगा।]

7. **अनुतोष का विनिर्दिष्ट रूप से कथन**—हर वादपत्र में उस अनुतोष का विनिर्दिष्ट रूप से कथन होगा जिसके लिए वादी सामान्यतः या अनुकल्पतः दावा करता है और यह आवश्यक नहीं होगा कि ऐसा कोई साधारण या अन्य अनुतोष मांगा जाए, जो न्यायालय न्यायसंगत समझे जो सर्वदा ही उसी विस्तार तक ऐसे दिया जा सकेगा मानो वह मांगा गया हो, और यही नियम प्रतिवादी द्वारा अपने लिखित कथन में दावा किए गए किसी अनुतोष को भी लागू होगा।

8. **पृथक् आधार पर आधारित अनुतोष**—जहां वादी कई सुभिन्न दावों या वाद-हेतुकों के बारे में जो पृथक् और सुभिन्न आधारों पर आधारित हैं, अनुतोष चाहता है वहां वे जहां तक हो सके पृथक्तः और सुभिन्नतः कथित किए जाएंगे।

9. **वादपत्र ग्रहण करने पर प्रक्रिया। संक्षिप्त कथन**—(1) यदि वादी द्वारा कोई दस्तावेजें वादपत्र के साथ पेश की गई हैं तो वादी ऐसे पेश की गई दस्तावेजों की सूची वादपत्र में पृष्ठांकित करेगा या वादपत्र के साथ उपाबद्ध करेगा और यदि वादपत्र ग्रहण कर लिया जाता है तो वादपत्र की सादा कागज पर इतनी प्रतियां [1][जितने प्रतिवादी हैं ऐसे समय के भीतर जो न्यायालय द्वारा नियत किया जाए या उसके द्वारा समय-समय पर बढ़ाया जाए, उस दशा में के सिवाय उपस्थित करेगा] जिसमें न्यायालय ने वादपत्र की लम्बाई या प्रतिवादियों की संख्या के कारण से या किसी अन्य पर्याप्त कारण के उसे यह अनुज्ञा दे दी हो कि वह किए गए दावे की या उस अनुतोष की, जिसका दावा वाद में किया गया है, प्रकृति के संक्षिप्त कथन उतनी ही संख्या में उपस्थित कर दे और उस दशा में वह ऐसे कथन उपस्थित करेगा।

[2][(1क) वादी, उपनियम (1) के अधीन न्यायालय द्वारा नियत किए गए या उसके द्वारा बढ़ाए गए समय के भीतर प्रतिवादियों पर समन की तामील के लिए अपेक्षित फीस का संदाय करेगा।]

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 57 द्वारा (1-2-1977 से) कुछ शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 57 द्वारा (1-2-1977 से) अंतःस्थापित।

(2) जहां प्रतिनिधि की हैसियत से वादी वाद लाता है या प्रतिवादी या प्रतिवादियों में से किसी पर वाद लाया जाता है वहां ऐसे कथन यह दर्शित करेंगे कि किस हैसियत में वादी वाद लाया है या प्रतिवादी पर वाद लाया गया है।

(3) ऐसे कथनों को वादपत्र के अनुरूप करने के लिए वादी न्यायालय की इजाजत से संशोधित कर सकेगा।

(4) यदि न्यायालय का मुख्य लिपिकवर्गीय अधिकारी ऐसी सूची और प्रतियों या कथनों की परीक्षा करने पर उन्हें सही पाए तो वह उन्हें हस्ताक्षरित करेगा।

[1]10. **वादपत्र का लौटाया जाना**—(1)[2][नियम 10क के उपबन्धों के अधीन रहते हुए, वादपत्र] वाद के किसी भी प्रक्रम में उस न्यायालय में उपस्थित किए जाने के लिए लौटा दिया जाएगा जिसमें वाद संस्थित किया जाना चाहिए था।

[3][**स्पष्टीकरण**—शंकाओं को दूर करने के लिए इसके द्वारा यह घोषित किया जाता है कि अपील या पुनरीक्षण न्यायालय, वाद में पारित डिक्री को अपास्त करने के पश्चात्, इस उपनियम के अधीन वादपत्र के लौटाए जाने का निदेश दे सकेगा।]

(2) **वादपत्र के लौटाए जाने पर प्रक्रिया**—न्यायाधीश वादपत्र के लौटाए जाने पर, उस पर उसके उपस्थित किए जाने की और लौटाए जाने की तारीख, उपस्थित करने वाले पक्षकार का नाम और उसके लौटाए जाने के कारणों का संक्षिप्त कथन पृष्ठांकित करेगा।

[3][10क. **जहां वादपत्र उसके लौटाए जाने के पश्चात् फाइल किया जाना है वहां न्यायालय में उपसंजाति के लिए तारीख नियत करने की न्यायालय की शक्ति**—(1) जहां किसी वाद में प्रतिवादी के उपसंजात होने के पश्चात् न्यायालय की यह राय है कि वादपत्र लौटाया जाना चाहिए वहां वह ऐसा करने के पूर्व वादी को अपने विनिश्चय की सूचना देगा।

(2) जहां वादी को उपनियम (1) के अधीन सूचना दी गई हो वहां वादी न्यायालय से—

(क) उस न्यायालय को विनिर्दिष्ट करते हुए जिसमें वह वादपत्र के लौटाए जाने के पश्चात् वादपत्र प्रस्तुत करने की प्रस्थापना करता है,

(ख) यह प्रार्थना करते हुए कि न्यायालय उक्त न्यायालय में पक्षकारों की उपसंजाति के लिए तारीख नियत करे, और

(ग) यह अनुरोध करते हुए कि इस प्रकार नियत तारीख की सूचना उसे और प्रतिवादी को दी जाए, आवेदन कर सकेगा।

(3) जहां वादी द्वारा उपनियम (2) के अधीन आवेदन किया जाता है वहां न्यायालय वादपत्र लौटाए जाने के पूर्व और इस बात के होते हुए भी कि उसके द्वारा वादपत्र के लौटाए जाने का आदेश इस आधार पर किया गया था कि उसे वाद का विचारण करने की अधिकारिता नहीं थी,—

(क) उस न्यायालय में जिसमें वादपत्र के उपस्थित किए जाने की प्रस्थापना है, पक्षकारों की उपसंजाति के लिए तारीख नियत करेगा, और

(ख) उपसंजाति की ऐसी तारीख की सूचना वादी और प्रतिवादी को देगा।

(4) जहां उपनियम (3) के अधीन उपसंजाति की तारीख की सूचना दी जाती है वहां—

(क) उस न्यायालय के लिए जिसमें वादपत्र उसके लौटाए जाने के पश्चात् उपस्थित किया जाता है, तब तक यह आवश्यक नहीं होगा कि वह वाद में उपसंजाति के लिए समन प्रतिवादी पर तामील करे, जब तक कि वह न्यायालय, अभिलिखित किए जाने वाले कारणों से, अन्यथा निदेश न दे, और

(ख) उक्त सूचना, उस न्यायालय में जिसमें वादपत्र को लौटाने वाले न्यायालय द्वारा इस प्रकार नियत तारीख को वादपत्र उपस्थित किया जाता है, प्रतिवादी की उपसंजाति के लिए समन समझी जाएगी।

(5) जहां न्यायालय वादी द्वारा उपनियम (2) के अधीन किए गए आवेदन को मंजूर कर लेता है वहां वादपत्र लौटाए जाने के आदेश के विरुद्ध अपील करने का हकदार नहीं होगा।

---

1. यह नियम छोटा नागपुर टेनेंसी ऐक्ट, 1908 (1908 का बंगाल अधिनियम सं० 6) की धारा 265 के अधीन भाटक की वसूली के लिए वाद को लागू किया गया है।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 57 द्वारा (1-2-1977 से) कुछ शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 57 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

10ख. समुचित न्यायालय को वाद अन्तरित करने की अपील न्यायालय की शक्ति—(1) जहां वादपत्र के लौटाए जाने के आदेश के विरुद्ध अपील में अपील की सुनवाई करने वाला न्यायालय ऐसे आदेश की पुष्टि करता है वहां अपील न्यायालय, यदि वादी आवेदन द्वारा ऐसी वांछा करे तो वादपत्र लौटाते समय वादी को यह निदेश दे सकेगा कि वह वादपत्र को उस न्यायालय में जिसमें वाद संस्थित किया जाना चाहिए था (चाहे ऐसा न्यायालय उस राज्य के भीतर हो या बाहर जिसमें अपील की सुनवाई करने वाला न्यायालय स्थित है), परिसीमा अधिनियम, 1963 (1963 का 36) के उपबन्धों के अधीन रहते हुए, फाइल करे और उस न्यायालय में जिसमें वादपत्र फाइल किए जाने का निदेश दिया जाता है, पक्षकारों की उपसंजाति के लिए तारीख नियत कर सकेगा और जब इस प्रकार तारीख नियत कर दी जाती है तब उस न्यायालय के लिए जिसमें वादपत्र फाइल किया गया है, वाद में उपसंजाति के लिए समन प्रतिवादी पर तामील करना तब तक आवश्यक नहीं होगा जब तक कि वह न्यायालय जिसमें वादपत्र फाइल किया गया है, अभिलिखित किए जाने वाले कारणों से, अन्यथा निदेश न दे।

(2) न्यायालय द्वारा उपनियम (1) के अधीन किए गए किसी निदेश से पक्षकारों के उन अधिकारों पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा जो उस न्यायालय की जिसमें वादपत्र फाइल किया गया है वाद का विचारण करने की अधिकारिता को प्रश्नगत करने के संबंध में हैं।]

11. वादपत्र का नामंजूर किया जाना—वादपत्र निम्नलिखित दशाओं में नामंजूर कर दिया जाएगा—

(क) जहां वह वाद-हेतुक प्रकट नहीं करता है;

(ख) जहां दावाकृत अनुतोष का मूल्यांकन कम किया गया है और वादी मूल्यांकन को ठीक करने के लिए न्यायालय द्वारा अपेक्षित किए जाने पर उस समय के भीतर जो न्यायालय ने नियत किया है, ऐसा करने में असफल रहता है;

(ग) जहां दावाकृत अनुतोष का मूल्यांकन ठीक है किन्तु वादपत्र अपर्याप्त स्टाम्प-पत्र पर लिखा गया है और वादी अपेक्षित स्टाम्प-पत्र के देने के लिए न्यायालय द्वारा अपेक्षित किए जाने पर उस समय के भीतर, जो न्यायालय ने नियत किया है, ऐसा करने में असफल रहता है;

(घ) जहां वादपत्र में के कथन से यह प्रतीत होता है कि वाद किसी विधि द्वारा वर्जित है:

[1][परन्तु मूल्यांकन की शुद्धि के लिए या अपेक्षित स्टाम्प-पत्र के देने के लिए न्यायालय द्वारा नियत समय तब तक नहीं बढ़ाया जाएगा जब तक कि न्यायालय का अभिलिखित किए जाने वाले कारणों से यह समाधान नहीं हो जाता है कि वादी किसी असाधारण कारण से, न्यायालय द्वारा नियत समय के भीतर, यथास्थिति, मूल्यांकन की शुद्धि करने या अपेक्षित स्टाम्प-पत्र के देने से रोक दिया गया था और ऐसे समय के बढ़ाने से इंकार किए जाने से वादी के प्रति गंभीर अन्याय होगा।]

12. वादपत्र के नामंजूर किए जाने पर प्रक्रिया—जहां वादपत्र नामंजूर किया जाता है वहां न्यायालय इस भाव का आदेश कारणों सहित अभिलिखित करेगा।

13. जहां वादपत्र की नामंजूरी से नए वादपत्र का उपस्थित किया जाना प्रवारित नहीं होता—इसमें इसके पूर्व वर्णित आधारों में से किसी पर भी वादपत्र के नामंजूर किए जाने पर केवल नामंजूरी के ही कारण वादी उसी वाद-हेतुक के बारे में नया वादपत्र उपस्थित करने से प्रवारित नहीं हो जाएगा।

वे दस्तावेजें जिन पर वादपत्र में निर्भर किया गया है

14. जिस दस्तावेज के आधार पर वादी वाद लाता है उसका पेश किया जाना—(1) जहां वादी अपने कब्जे या शक्ति में की दस्तावेज के आधार पर वाद लाता है वहां वादपत्र उपस्थित किए जाने के समय वह उसे न्यायालय में पेश करेगा और उसी समय दस्तावेज को या उसकी प्रति को वादपत्र के साथ फाइल किए जाने के लिए परिदत्त करेगा।

(2) **अन्य दस्तावेजों की सूची**—जहां वह अपने दावे के समर्थन में साक्ष्य के रूप में किन्हीं अन्य दस्तावेजों पर निर्भर करता है (चाहे वे उसके कब्जे या शक्ति में हों या न हों) वहां वह ऐसी दस्तावेजों को ऐसी सूची में प्रविष्ट करेगा जो वादपत्र में जोड़ी जानी है या वादपत्र के साथ उपाबद्ध की जानी है।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 57 द्वारा (1-2-1977 से) अंतःस्थापित।

15. दस्तावेजें वादी के कब्जे या शक्ति में न होने की दशा में कथन—जहां ऐसी कोई दस्तावेज वादी के कब्जे या शक्ति में नहीं है वहां, यदि संभव हो तो, वह यह कथन करेगा कि वह किसके कब्जे या शक्ति में है।

16. खोई हुई परक्राम्य लिखतों के आधार पर वाद—जहां वाद परक्राम्य लिखत पर आधारित है और यह साबित कर दिया जाता है कि लिखत खो गई है और वादी ऐसी लिखत पर आधारित किसी अन्य व्यक्ति के दावों के लिए क्षतिपूर्ति, न्यायालय को समाधानप्रद रूप में कर देता है वहां न्यायालय ऐसी डिक्री पारित कर सकेगा जो वह पारित करता। यदि वादी ने उस समय जब वादपत्र उपस्थित किया गया था, उस लिखत को पेश किया होता और उस लिखत की प्रति वादपत्र के साथ फाइल किए जाने के लिए उसी समय परिदत्त कर दी होती।

17. दुकान का बही खाता पेश करना—(1) वहां तक के सिवाय जहां तक कि बैंककार बही साक्ष्य अधिनियम, 1891 (1891 का 18) द्वारा अन्यथा उपबन्धित है, उस दशा में जिसमें कि वह दस्तावेज जिसके आधार पर वादी वाद लाता है, दुकान के बही खाते या अन्य लेखे में की जो उसके अपने कब्जे या शक्ति में है, प्रविष्टि है, वादी उस प्रविष्टि की जिस पर वह निर्भर करता है, प्रति के सहित उस बही खाते या लेखे को वादपत्र के फाइल किए जाने के समय पेश करेगा।

(2) **मूल प्रविष्टि का चिह्नांकित किया जाना और लौटाया जाना**—न्यायालय या ऐसा अधिकारी जिसे वह इस निमित्त नियुक्त करे तत्क्षण दस्तावेज को उसकी पहचान के प्रयोजन के लिए चिह्नांकित करेगा और प्रति की परीक्षा और मूल से तुलना करने के पश्चात् यदि वह सही पाई जाए तो यह प्रमाणित करेगा कि वह ऐसी है और बही खाता वादी को लौटाएगा और प्रति को फाइल कराएगा।

18. वादपत्र फाइल करते समय पेश न की गई दस्तावेज की अग्राह्यता—(1) जो दस्तावेज वादपत्र उपस्थित किए जाने के समय न्यायालय में वादी द्वारा पेश की जानी चाहिए थी या उस सूची में प्रविष्ट की जानी चाहिए थी जो वादपत्र में जोड़ी जाती है या वादपत्र से उपाबद्ध की जाती है और जो तदनुसार पेश या प्रविष्ट नहीं की गई है उसे वाद की सुनवाई में न्यायालय की इजाजत के बिना, उसकी ओर से साक्ष्य में नहीं लिया जाएगा।

(2) इस नियम की कोई भी बात ऐसी दस्तावेजों को लागू नहीं होगी जो प्रतिवादी के साक्षियों की प्रतिपरीक्षा करने के लिए या किसी ऐसे मामले का उत्तर देने के लिए जिसे प्रतिवादी ने उठाया हो, पेश की गई हो या साक्षी को उसकी स्मृति को ताजा करने के लिए ही उसके हाथ में दी गई हो।

आदेश 8

[1][लिखित कथन, मुजरा और प्रतिदावा]

1. लिखित कथन—[2][(1)] प्रतिवादी अपनी प्रतिरक्षा का लिखित कथन पहली सुनवाई के समय या उसके पहले या इतने समय के भीतर जितना न्यायालय अनुज्ञात करे, उपस्थित [3]*** करेगा।

[4][(2) उसके सिवाय जैसा नियम 8क में उपबन्धित है, जहां प्रतिवादी मुजरा या प्रतिदावा के लिए अपनी प्रतिरक्षा या दावे का समर्थन किसी दस्तावेज पर (चाहे वह दस्तावेज उसके कब्जे या शक्ति में हो या नहीं) निर्भर करता है वहां वह एक सूची में ऐसी दस्तावेज की प्रविष्टि करेगा और—

(क) यदि लिखित कथन उपस्थित किया जाता है तो लिखित कथन के साथ उस सूची को उपाबद्ध करेगा:

परन्तु जहां प्रतिवादी अपने लिखित कथन में ऐसी दस्तावेज के आधार पर जो उसके कब्जे या शक्ति में है, मुजरा का दावा करता है या प्रतिदावा करता है वहां वह लिखित कथन के उपस्थित किए जाने के समय न्यायालय में उसे पेश करेगा और उसी समय वह दस्तावेज या उसकी प्रति लिखित कथन के साथ फाइल किए जाने के लिए परिदत्त करेगा;

(ख) यदि लिखित कथन उपस्थित नहीं किया जाता है तो वाद की प्रथम सुनवाई पर न्यायालय में उस सूची को उपस्थित करेगा।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 58 द्वारा (1-2-1977 से) पूर्ववर्ती शीर्ष के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 58 द्वारा (1-2-1977 से) नियम 1 को उस नियम के उपनियम (1) के रूप में पुनःसंख्यांकित किया गया।
3. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 58 द्वारा (1-2-1977 से) कुछ शब्दों का लोप किया गया।
4. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 58 द्वारा (1-2-1977 से) अंतःस्थापित।

(3) जहां ऐसी कोई दस्तावेज प्रतिवादी के कब्जे या शक्ति में नहीं है, वहां वह जहां तक संभव हो सके, यह कथन करेगा कि वह किसके कब्जे या शक्ति में है।

(4) यदि ऐसी कोई सूची इस प्रकार उपाबद्ध या उपस्थित नहीं की जाती है तो प्रतिवादी को इस प्रयोजन के लिए ऐसी और अवधि अनुज्ञात की जाएगी जो न्यायालय ठीक समझे।

(5) ऐसी दस्तावेज जो उपनियम (2) में निर्दिष्ट सूची में प्रविष्ट की जानी चाहिए और जो इस प्रकार प्रविष्ट नहीं की गई है, न्यायालय की इजाजत के बिना वाद की सुनवाई में प्रतिवादी की ओर से साक्ष्य में नहीं ली जाएगी।

(6) उपनियम (5) की कोई भी बात ऐसी दस्तावेजों को लागू नहीं होगी जो वादी के साक्षियों की प्रतिपरीक्षा के लिए पेश किए गए हों या वादपत्र फाइल किए जाने के पश्चात् वादी द्वारा उठाए गए किसी मामले के उत्तर में हों, या किसी साक्षी को केवल उसकी स्मृति को ताजा करने के लिए दिए गए हों।

(7) जहां न्यायालय उपनियम (5) के अधीन इजाजत देता है वहां वह ऐसा करने के लिए अपने कारण लेखबद्ध करेगा और ऐसी कोई इजाजत तब तक नहीं दी जाएगी जब तक कि उपनियम (2) में निर्दिष्ट सूची में दस्तावेज प्रविष्ट न की जाने के लिए न्यायालय के समाधानप्रद रूप में पर्याप्त कारण दर्शित नहीं कर दिया जाता।]

2. **नए तथ्यों का विशेष रूप से अभिवचन करना होगा**—प्रतिवादी को अपने अभिवचन द्वारा वे सब बातें उठानी होंगी जिनसे यह दर्शित होता है कि वाद या विधि की दृष्टि से वह व्यवहार शून्य है या शून्यकरणीय है और प्रतिरक्षा के सब ऐसे आधार उठाने होंगे जो ऐसे हैं कि यदि वे न उठाए गए तो यह संभाव्य है उनके सहसा सामने आने से विरोधी पक्षकार चकित हो जाएगा या जिनसे तथ्य के ऐसे विवाद्यक पैदा हो जाएंगे जो वादपत्र से पैदा नहीं होते हैं। उदाहरणार्थ कपट, परिसीमा, निर्मुक्ति, संदाय, पालन या अवैधता दर्शित करने वाले तथ्य।

3. **प्रत्याख्यान विनिर्दिष्टतः होगा**—प्रतिवादी के लिए यह पर्याप्त नहीं होगा कि वह अपने लिखित कथन में उन आधारों का साधारणतः प्रत्याख्यान कर दे जो वादी द्वारा अभिकथित हैं, किन्तु प्रतिवादी के लिए यह आवश्यक है कि वह नुकसानी के सिवाय ऐसे तथ्य संबंधी हर एक अभिकथन का विनिर्दिष्टतः विवेचन करे जिसकी सत्यता वह स्वीकार नहीं करता है।

4. **वाग्छलपूर्ण प्रत्याख्यान**—जहां प्रतिवादी वाद में के किसी तथ्य के अभिकथन का प्रत्याख्यान करता है वहां उसे वैसा वाग्छलपूर्ण तौर पर नहीं करना चाहिए, वरन् सार की बात का उत्तर देना चाहिए। उदाहरणार्थ, यदि यह अभिकथित किया जाता है कि उसने एक निश्चित धन की राशि प्राप्त की तो यह प्रत्याख्यान कि उसने वह विशिष्ट राशि प्राप्त नहीं की पर्याप्त नहीं होगा वरन् उसे यह चाहिए कि वह प्रत्याख्यान करे कि उसने वह राशि या उसका कोई भाग प्राप्त नहीं किया या फिर यह उपवर्णित करना चाहिए कि उसने कितनी राशि प्राप्त की; और यदि अभिकथन विभिन्न परिस्थितियों सहित किया गया है तो उन परिस्थितियों सहित उस अभिकथन का प्रत्याख्यान कर देना पर्याप्त नहीं होगा।

5. **विनिर्दिष्टतः प्रत्याख्यान**—[1][(1)] यदि वादपत्र में के तथ्य संबंधी हर अभिकथन का विनिर्दिष्टतः यह आवश्यक विवक्षा से प्रत्याख्यान नहीं किया जाता है या प्रतिवादी के अभिवचन में यह कथन कि वह स्वीकार नहीं किया जाता तो जहां तक निर्योग्यताधीन व्यक्ति को छोड़कर किसी अन्य व्यक्ति का संबंध है वह स्वीकार कर लिया गया माना जाएगा:

परन्तु ऐसे स्वीकार किए गए किसी भी तथ्य के ऐसी स्वीकृति के अलावा अन्य प्रकार से साबित किए जाने की अपेक्षा न्यायालय स्वविवेकानुसार कर सकेगा।

[2][(2) जहां प्रतिवादी ने अभिवचन फाइल नहीं किया है वहां न्यायालय के लिए वादपत्र में अन्तर्विष्ट तथ्यों के आधार पर निर्णय सुनाना, जहां तक निर्योग्यताधीन व्यक्ति को छोड़कर किसी अन्य व्यक्ति का संबंध है, विधिपूर्ण होगा, किन्तु न्यायालय किसी ऐसे तथ्य को साबित किए जाने की अपेक्षा स्वविवेकानुसार कर सकेगा।

(3) न्यायालय उपनियम (1) के परन्तुक के अधीन या उपनियम (2) के अधीन अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करने में

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 58 द्वारा (1-2-1977 से) नियम 5 को उस नियम के उपनियम (1) के रूप में पुनः संख्यांकित किया गया।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 58 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

इस तथ्य पर सम्यक् ध्यान देगा कि क्या वादी किसी प्लीडर को नियुक्त कर सकता था या उसने किसी प्लीडर को नियुक्त किया है।

(4) इस नियम के अधीन जब कभी निर्णय सुनाया जाता है तब ऐसे निर्णय के अनुसार डिक्री तैयार की जाएगी और ऐसी डिक्री पर वही तारीख दी जाएगी जिस तारीख को निर्णय सुनाया गया था।]

6. मुजरा की विशिष्टियां लिखित कथन में दी जाएंगी—(1) जहां तक धन की वसूली के वाद में प्रतिवादी न्यायालय की अधिकारिता की धन-संबंधी सीमाओं से अनधिक धन की कोई अभिनिश्चित राशि जो वह वादी से वैध रूप से वसूल कर सकता है वादी की मांग के विरुद्ध मुजरा करने का दावा करता है और दोनों पक्षकार वही हैसियत रखते हैं जो वादी के वाद में उनकी है वहां प्रतिवादी मुजरा के लिए चाही गई ऋण की विशिष्टियां देते हुए लिखित कथन वाद की पहली सुनवाई पर उपस्थित कर सकेगा, किन्तु उसके पश्चात् तब तक उपस्थित नहीं कर सकेगा जब तक कि न्यायालय द्वारा उसे अनुज्ञा न दे दी गई हो।

(2) **मुजरा का प्रभाव** —लिखित कथन का प्रभाव प्रतीपवाद में के वादपत्र के प्रभाव के समान ही होगा जिसे न्यायालय मूल दावे और मुजरा दोनों के संबंध में अन्तिम निर्णय सुनाने के लिए समर्थ हो जाए, किन्तु डिक्रीत रकम पर प्लीडर को डिक्री के अधीन देय खर्चों के बारे में उसके धारणाधिकार पर इससे प्रभाव नहीं पड़ेगा।

(3) प्रतिवादी द्वारा दिए गए लिखित कथन संबंधी नियम मुजरा के दावे के उत्तर में दिए गए लिखित कथन को भी लागू होते हैं।

दृष्टांत

(क) ख को क 2,000 रुपए वसीयत करता है और ग को अपना निष्पादक और अवशिष्टीय वसीयतदार नियुक्त करता है। ख मर जाता है और ख की चीजबस्त का प्रशासनपत्र घ प्राप्त करता है। घ के प्रतिभू के रूप में ग 1,000 रुपए देता है। तब ग पर वसीयत के लिए घ वाद लाता है। ग वसीयत के विरुद्ध 1,000 रुपए के ऋण का मुजरा नहीं कर सकता क्योंकि वसीयत के सम्बन्ध में न तो ग और न घ की वैसी हैसियत है जैसी उनकी 1,000 रुपए के संदाय के सम्बन्ध में है।

(ख) क निर्वसीयती मर जाता है। उस समय वह ख के प्रति ऋणी है। क की चीजबस्त का प्रशासनपत्र ग प्राप्त करता है और ख चीजबस्त का भाग ग से मोल लेता है। ग के द्वारा ख के विरुद्ध लाए गए क्रय धन के वाद में ख मूल्य के मुकाबले में ऋण का मुजरा नहीं कर सकता है क्योंकि ग की दो हैसियतें हैं, एक तो ख के प्रति विक्रेता की हैसियत जिससे वह ख पर वाद लाता है और दूसरी क के प्रतिनिधि की हैसियत।

(ग) ख पर विनिमय-पत्र के आधार पर क वाद लाता है। ख अभिकथन करता है कि क ने ख के माल का बीमा कराने में सदोष उपेक्षा की है और क उसे प्रतिकर देने के लिए दायी है, जिसकी मुजराई का दावा ख करता है। यह रकम अभिनिश्चित न होने से मुजरा नहीं की जा सकती।

(घ) क 500 रुपए के विनिमय-पत्र के आधार पर ख पर वाद लाता है। क के विरुद्ध 1,000 रुपए के लिए निर्णय ख के पास है। ये दोनों दावे निश्चित धन-सम्बन्धी मांगें होने से मुजरा किए जा सकेंगे।

(ङ) क अतिचार की बाबत प्रतिकर के लिए ख पर वाद लाता है। ख के पास क का 1,000 रुपए का वचन-पत्र है और ख यह दावा करता है कि यह रकम ऐसी किसी राशि से, जो वाद में क को अधिनिर्णीत की जाए, मुजरा कर दी जाए। ख ऐसा कर सकेगा, क्योंकि जैसे ही क के हक में अधिनिर्णय हो जाता है वैसे ही दोनों राशि निश्चित धन-सम्बन्धी मांगें हो जाती हैं।

(च) क और ख 1,000 रुपए के लिए ग के विरुद्ध वाद लाते हैं। ग उस ऋण को मुजरा नहीं कर सकता जो केवल क द्वारा उसे शोध्य है।

(छ) ख और ग 1,000 रुपए के लिए क पर वाद लाता है। ख अपने उस ऋण का मुजरा नहीं कर सकता जो अकेले उसे ही क से शोध्य है।

(ज) क को ख और ग की भागीदारी फर्म को 1,000 रुपए देने हैं। ग को उत्तरजीवी छोड़कर ख मर जाता है। ग पर उसकी पृथक् हैसियत से 1,500 रुपए के एक ऋण के लिए क दावा लाता है। ग 1,000 रुपए के ऋण का मुजरा कर सकेगा।

[1][**6क. प्रतिवादी द्वारा प्रतिदावा**—(1) वाद में प्रतिवादी नियम 6 के अधीन मुजरा के अभिवचन के अपने अधिकार के अतिरिक्त वादी के दावे के विरुद्ध प्रतिदावे के रूप में किसी ऐसे अधिकार या दावे को, जो वादी के विरुद्ध प्रतिवादी को, वाद फाइल किए जाने

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 58 द्वारा (1-2-1977) अन्तःस्थापित।

के पूर्व या पश्चात् किन्तु प्रतिवादी द्वारा अपनी प्रतिरक्षा परित्यक्त किए जाने के पूर्व या अपनी प्रतिरक्षा परित्यक्त किए जाने के लिए परिसीमित समय का अवसान हो जाने के पूर्व, किसी वाद-हेतुक के बारे में प्रोद्भूत हुआ हो, उठा सकेगा चाहे ऐसा प्रतिदावा नुकसानी के दावे के रूप में हो या नहीं :

परन्तु ऐसा प्रतिदावा न्यायालय की अधिकारिता की धन-संबंधी सीमाओं से अधिक नहीं होगा।

(2) ऐसे प्रतिदावे का प्रभाव प्रतीपवाद के प्रभाव के समान ही होगा जिससे न्यायालय एक ही वाद में मूल दावे और प्रतिदावे दोनों के सम्बन्ध में अन्तिम निर्णय सुनाने के लिए समर्थ हो जाए।

(3) वादी को इस बात की स्वतंत्रता होगी कि वह प्रतिवादी के प्रतिदावे के उत्तर में लिखित कथन ऐसी अवधि के भीतर जो न्यायालय द्वारा नियत की जाए, फाइल करे।

(4) प्रतिदावे को वादपत्र के रूप में माना जाएगा और उसे वही नियम लागू होंगे जो वादपत्रों को लागू होते हैं।

6ख. प्रतिदावे का कथन किया जाना— जहां कोई प्रतिवादी, प्रतिदावे के अधिकार का समर्थन करने वाले किसी आधार पर निर्भर करता है। वहां वह अपने लिखित कथन में यह विनिर्दिष्टतः कथन करेगा कि वह ऐसा प्रतिदावे के रूप में कर रहा है।

6ग. प्रतिदावे का अपवर्जन— जहां प्रतिवादी कोई प्रतिदावा उठाता है और वादी यह दलील देता है कि उसके द्वारा उठाए गए दावे का निपटारा प्रतिदावे के रूप में नहीं वरन् स्वतंत्र वाद में किया जाना चाहिए, वहां वादी प्रतिदावे के सम्बन्ध में विवाद्यकों के तय किए जाने के पूर्व किसी भी समय न्यायालय से इस आदेश के लिए आवेदन कर सकेगा कि ऐसे प्रतिदावे का अपवर्जन किया जाए और न्यायालय ऐसे आवेदन की सुनवाई करने पर ऐसा आदेश कर सकेगा जो वह ठीक समझे।

6घ. वाद के बन्द कर दिए जाने का प्रभाव—यदि किसी ऐसे मामले में जिसमें प्रतिवादी कोई प्रतिदावा उठाता है, वादी का वाद रोक दिया जाता है, बन्द या खारिज कर दिया जाता है तो ऐसा होने पर भी प्रतिदावे पर कार्यवाही की जा सकेगी।

6ङ. प्रतिदावे का उत्तर देने में वादी द्वारा व्यतिक्रम—यदि वादी प्रतिवादी द्वारा किए गए प्रतिदावे का उत्तर प्रस्तुत करने में व्यतिक्रम करता है तो न्यायालय वादी के विरुद्ध उस प्रतिदावे के सम्बन्ध में जो उसके विरुद्ध किया गया है, निर्णय सुना सकेगा या प्रतिदावे के सम्बन्ध में ऐसा आदेश कर सकेगा जो वह ठीक समझे।

6च. जहां प्रतिदावा सफल होता है वहां प्रतिवादी को अनुतोष—जहां किसी वाद में वादी के दावे के विरुद्ध प्रतिरक्षा के रूप में मुजरा या प्रतिदावा सिद्ध कर दिया जाता है और कोई ऐसा अतिशेष पाया जाता है, यथास्थिति, वादी या प्रतिवादी को शोध्य है वहां न्यायालय ऐसे पक्षकार के पक्ष में ऐसे अतिशेष के लिए हकदार हो, निर्णय दे सकेगा।

6छ. लिखित कथन से संबंधित नियमों का लागू होना—प्रतिवादी द्वारा दिए गए लिखित कथन से संबन्धित नियम प्रतिदावे के उत्तर में फाइल किए गए लिखित कथन को भी लागू होंगे।]

7. पृथक् आधारों पर आधारित प्रतिरक्षा या मुजरा—जहां प्रतिवादी पृथक् और सुभिन्न तथ्यों पर आधारित प्रतिरक्षा के या मुजरा के [1][या प्रतिदावे के] कई सुभिन्न आधारों पर निर्भर करता है वहां उनका कथन जहां तक हो सके, पृथक्तः और सुभिन्नतः किया जाएगा।

8. प्रतिरक्षा का नया आधार—प्रतिरक्षा का कोई भी ऐसा आधार जो वाद के संस्थित किए जाने के या मुजरा का दावा करने वाले लिखित कथन के [1][या प्रतिदावे के] उपस्थित किए जाने के पश्चात् पैदा हुआ है, यथास्थिति, प्रतिवादी या वादी द्वारा अपने लिखित कथन में उठाया जा सकेगा।

[1][**8क. प्रतिवादी का उन दस्तावेजों को पेश करने का कर्तव्य जिनके आधार पर उसने अनुतोष का दावा किया है**—(1) जहां प्रतिवादी का प्रतिरक्षा का आधार ऐसी दस्तावेज है जो उसके कब्जे या शक्ति में है वहां वह न्यायालय में उसे उस समय पेश करेगा जब उसके द्वारा लिखित कथन उपस्थित किया जाता है और वह लिखित कथन के साथ फाइल की जाने वाली दस्तावेज या उसकी प्रति उसी समय परित्यक्त करेगा।

(2) ऐसी दस्तावेज जो इस नियम के अधीन प्रतिवादी द्वारा न्यायालय में पेश की जानी चाहिए, किन्तु इस प्रकार पेश नहीं की जाती है, न्यायालय की इजाजत के बिना वाद की सुनवाई में उसकी ओर से साक्ष्य में नहीं ली जाएगी।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 58 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

(3) इस नियम की कोई भी बात ऐसी दस्तावेजों को लागू नहीं होगी, जो—

(क) वादी के साक्षियों की प्रतिपरीक्षा के लिए पेश की गई हों, अथवा

(ख) वादपत्र फाइल किए जाने के पश्चात् वादी द्वारा उठाए गए किसी मामले के उत्तर में हों, अथवा

(ग) साक्षी को केवल उसकी स्मृति ताजा करने के लिए दी गई हों।]

9. पश्चात्वर्ती अभिवचन—प्रतिवादी के लिखित कथन के पश्चात् कोई भी अभिवचन जो मुजरा के [1][या प्रतिवादे के] विरुद्ध प्रतिरक्षा से भिन्न हो, न्यायालय की इजाजत से ही और ऐसे निबन्धनों पर जो न्यायालय ठीक समझे, उपस्थित किया जाएगा, अन्यथा नहीं; किन्तु न्यायालय पक्षकारों में किसी से भी लिखित कथन या अतिरिक्त लिखित कथन किसी भी समय अपेक्षित कर सकेगा और उसे उपस्थित करने के लिए कोई समय नियत कर सकेगा।

10. जब न्यायालय द्वारा अपेक्षित लिखित कथन को उपस्थित करने में पक्षकार असफल रहता है तब प्रक्रिया—जहां ऐसा कोई पक्षकार जिससे लिखित कथन [2][नियम 1 या नियम 9 के अधीन अपेक्षित किया गया है], उसे [2][न्यायालय द्वारा, यथास्थिति, अनुज्ञात या नियत समय के भीतर उपस्थित करने में असफल रहता है वहां न्यायालय उसके विरुद्ध निर्णय सुनाएगा या वाद के सम्बन्ध में ऐसा आदेश करेगा] जो वह ठीक समझे [1][और ऐसा निर्णय सुनाए जाने के पश्चात् डिक्री तैयार की जाएगी]।

आदेश 9

पक्षकारों की उपसंजाति और उनकी अनुपसंजाति का परिणाम

1. पक्षकार उस दिन उपसंजात होंगे जो प्रतिवादी के उपसंजात होने और उत्तर देने के लिए समन में नियत हैं—जो दिन प्रतिवादी के उपसंजात होने और उत्तर देने के लिए समन में नियत हैं उस दिन पक्षकार स्वयं या अपने-अपने प्लीडरों द्वारा न्याय-सदन में हाजिर रहेंगे और, तब के सिवाय जबकि सुनवाई न्यायालय द्वारा नियत किसी भविष्यवर्ती दिन के लिए स्थगित कर दी जाएगी वाद उस दिन सुना जाएगा।

2. जहां समनों की तामील, खर्चे देने में वादी के असफल रहने के परिणामस्वरूप नहीं हुई है, वहां वाद का खारिज किया जाना—जहां ऐसे नियत दिन को यह पाया जाए कि प्रतिवादी पर समन की तामील इसलिए नहीं हुई है कि न्यायालय फीस या डाक महसूल (यदि कोई हो) [3][जो ऐसी तामील के लिए प्रभारणीय है, देने में या आदेश 7 के नियम 9 द्वारा अपेक्षित वादपत्र की या संक्षिप्त कथन की प्रतियां उपस्थित करने में वादी असफल रहा है] वहां न्यायालय यह आदेश कर सकेगा कि वाद खारिज कर दिया जाए:

[4][परन्तु ऐसी असफलता के होते हुए भी, यदि प्रतिवादी उस दिन जो उसके उपसंजात होने और उत्तर देने के लिए नियत है, स्वयं (या जब वह अभिकर्ता के द्वारा उपसंजात होने के लिए अनुज्ञात है अभिकर्ता के द्वारा) उपसंजात हो जाता है तो ऐसा कोई आदेश नहीं किया जाएगा।]

3. जहां दोनों में से कोई भी पक्षकार उपसंजात नहीं होता है वहां वाद का खारिज किया जाना—जहां वाद की सुनवाई के लिए पुकार होने पर दोनों में से कोई भी पक्षकार उपसंजात नहीं होता है वहां न्यायालय यह आदेश दे सकेगा कि वाद खारिज कर दिया जाए।

4. वादी नया वाद ला सकेगा या न्यायालय वाद को फाइल पर प्रत्यावर्तित कर सकेगा—जहां वाद नियम 2 या नियम 3 के अधीन खारिज कर दिया जाता है वहां वादी नया वाद (परिसीमा विधि के अधीन रहते हुए) ला सकेगा या वह उस खारिजी

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 58 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 58 द्वारा (1-2-1977 से) कुछ शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 59 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
4. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 59 द्वारा (1-2-1977 से) पूर्ववर्ती परंतुक के स्थान पर प्रतिस्थापित।

को अपास्त कराने के आदेश के लिए आवेदन कर सकेगा और यदि वह न्यायालय का समाधान कर देता है कि, [1][यथास्थिति, नियम 2 में निर्दिष्ट असफलता के लिए] या उसकी अपनी अनुपसंजाति के लिए पर्याप्त हेतुक था तो न्यायालय खारिजी को अपास्त करने के लिए आदेश करेगा और वाद में आगे कार्यवाही करने के लिए दिन नियत करेगा।

5. जहां वादी, समन तामील के बिना लौटने के पश्चात् एक मास तक नए समन के लिए आवेदन करने में असफल रहता है वहां वाद का खारिज किया जाना—[2][(1) जहां समन प्रतिवादी या कई प्रतिवादियों में से एक के नाम निकाले जाने और तामील के बिना लौटाए जाने के पश्चात् उस तारीख से [3][एक मास] की अवधि तक, जिसकी न्यायालय को उस अधिकारी ने विवरणी दी है, जो तामील करने वाले अधिकारियों द्वारा दी जाने वाली विवरणियों को न्यायालय को मामूली तौर से प्रमाणित करता है, वादी न्यायालय से नए समन निकालने के लिए आवेदन करने में असफल रहता है वहां न्यायालय यह आदेश करेगा कि वाद ऐसे प्रतिवादी के विरुद्ध खारिज कर दिया जाए किन्तु यदि वादी ने न्यायालय का यह समाधान उक्त अवधि के भीतर कर दिया है कि—

(क) जिस प्रतिवादी पर तामील नहीं हुई है उसके निवास-स्थान का पता चलाने में वह अपने सर्वोत्तम प्रयास करने के पश्चात् असफल रहा है, अथवा

(ख) समय प्रतिवादी आदेशिका की तामील होने देने से अपने को बचा रहा है, अथवा

(ग) समय को बढ़ाने के लिए कोई अन्य पर्याप्त कारण है,

तो ऐसा आवेदन करने के लिए समय को न्यायालय इतनी अतिरिक्त अवधि के लिए बढ़ा सकेगा जितनी वह ठीक समझे।]

(2) ऐसी दशा में वादी (परिसीमा विधि के अधीन रहते हुए) नया वाद ला सकेगा।

6. जब केवल वादी उपसंजात होता है तब प्रक्रिया—(1) जहां वादी की सुनवाई के लिए पुकार होने पर वादी उपसंजात होता है और प्रतिवादी उपसंजात नहीं होता है वहां—

[4][(क) जब समन की तामील सम्यक् रूप से की गई है—यदि यह साबित हो जाता है कि समन की तामील सम्यक् रूप से की गई थी तो न्यायालय आदेश कर सकेगा कि वाद की एकपक्षीय सुनवाई की जाए;]

(ख) जब समन की तामील सम्यक् रूप से नहीं की गई है—यदि यह साबित नहीं होता है कि समन की तामील सम्यक् रूप से की गई थी तो न्यायालय आदेश देगा कि दूसरा समन निकाला जाए और उसकी तामील प्रतिवादी पर की जाए;

(ग) जब समन की तामील तो हुई हो किन्तु सम्यक् समय में नहीं हुई हो—यदि यह साबित हो जाता है कि समन की तामील तो प्रतिवादी पर हुई थी किन्तु ऐसे समय पर नहीं हुई थी कि समन में नियत दिन को उपसंजात होने और उत्तर देने को उसे समर्थ करने के लिए उसे पर्याप्त समय मिल जाता, तो न्यायालय वाद की सुनवाई को न्यायालय द्वारा नियत किए जाने वाले किसी भविष्यवर्ती दिन के लिए मुल्तवी करेगा और निदेश देगा कि ऐसे दिन की सूचना प्रतिवादी को दी जाए।

(2) जहां समन की सम्यक् रूप से तामील या पर्याप्त समय के भीतर तामील वादी के व्यतिक्रम के कारण नहीं हुई है वहां न्यायालय वादी को आदेश देगा कि मुल्तवी होने के कारण होने वाले खर्चों को वह दे।

7. जहां प्रतिवादी स्थगित सुनवाई के दिन उपसंजात होता है और पूर्व अनुपसंजाति के लिए अच्छा हेतुक दिखाता है वहां प्रक्रिया—जहां न्यायालय ने एकपक्षीय रूप में वाद की सुनवाई स्थगित कर दी है और प्रतिवादी ऐसी सुनवाई के दिन या पहले उपसंजात होता है और अपनी पूर्व अनुपसंजाति के लिए अच्छा हेतुक दिखाता है वहां ऐसे निबन्धनों पर, जो न्यायालय खर्चों और अन्य बातों के बारे में निदिष्ट करे, उसे वाद के उत्तर में उसी भांति सुना जा सकेगा मानो वह अपनी उपसंजाति के लिए नियत किए गए दिन को उपसंजात हुआ था।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 59 द्वारा (1-2-1977 से) कुछ शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1920 के अधिनियम सं० 24 की धारा 2 द्वारा मूल उपनियम (1) के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 59 द्वारा (1-2-1977 से) "तीन मास" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
4. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 59 द्वारा (1-2-1977 से) खण्ड (क) के स्थान पर प्रतिस्थापित।

(पहली अनुसूची—आदेश 9—पक्षकारों की उपसंजाति और उनकी अनुपसंजाति का परिणाम । एकपक्षीय डिक्रियों को अपास्त करना।)

8. **जहां केवल प्रतिवादी उपसंजात होता है वहां प्रक्रिया**—जहां वाद की सुनवाई के लिए पुकार होने पर प्रतिवादी उपसंजात होता है और वादी उपसंजात नहीं होता है वहां न्यायालय यह आदेश करेगा कि वाद को खारिज किया जाए। किन्तु यदि प्रतिवादी दावे या उसके भाग को स्वीकार कर लेता है तो न्यायालय ऐसी स्वीकृति पर प्रतिवादी के विरुद्ध डिक्री पारित करेगा और जहां दावे का केवल भाग ही स्वीकार किया गया हो वहां वह वाद को वहां तक खारिज करेगा जहां तक उसका सम्बन्ध अवशिष्ट दावे से है।

9. **व्यतिक्रम के कारण वादी के विरुद्ध पारित डिक्री नए वाद का वर्जन करती है**—(1) जहां वाद नियम 8 के अधीन पूर्णतः या भागतः खारिज कर दिया जाता है वहां वादी उसी वाद हेतुक के लिए नया वाद लाने से प्रवारित हो जाएगा। किन्तु वह खारिजी को अपास्त करने के आदेश के लिए आवेदन कर सकेगा और यदि वह न्यायालय का समाधान कर देता है कि जब वाद की सुनवाई के लिए पुकार पड़ी थी उस समय उसकी अनुपसंजाति के लिए पर्याप्त हेतुक था तो न्यायालय खर्चों या अन्य बातों के बारे में ऐसे निबन्धनों पर जो ठीक समझे, खारिजी को अपास्त करने का आदेश करेगा और वाद में आगे कार्यवाही करने के लिए दिन नियत करेगा।

(2) इस नियम के अधीन कोई आदेश तब तक नहीं किया जाएगा जब तक कि आवेदन की सूचना की तामील विरोधी पक्षकार पर न कर दी गई हो।

10. **कई वादियों में से एक या अधिक की गैरहाजिरी की दशा में प्रक्रिया**—जहां एक से अधिक वादी हैं और उनमें से एक या अधिक उपसंजात होते हैं और अन्य उपसंजात नहीं होते हैं वहां न्यायालय उपसंजात होने वाले वादी या वादियों की प्रेरणा पर वाद को ऐसे आगे चलने दे सकेगा मानो सभी वादी उपसंजात हुए हों, या ऐसा आदेश कर सकेगा जो वह ठीक समझे।

11. **कई प्रतिवादियों में से एक या अधिक की गैरहाजिरी की दशा में प्रक्रिया**—जहां एक से अधिक प्रतिवादी हैं और उनमें से एक या अधिक उपसंजात होते हैं और अन्य उपसंजात नहीं होते हैं वहां वाद आगे चलेगा और न्यायालय निर्णय सुनाने के समय उन प्रतिवादियों के सम्बन्ध में जो उपसंजात नहीं हुए हैं, ऐसा आदेश करेगा जो वह ठीक समझे।

12. **स्वयं उपसंजात होने के लिए आदिष्ट पक्षकार के पर्याप्त हेतुक दर्शित किए बिना गैरहाजिर रहने का परिणाम**—जहां कोई वादी या प्रतिवादी, जिसे स्वयं उपसंजात होने के लिए आदेश किया गया है, स्वयं उपसंजात नहीं होता है या ऐसे उपसंजात होने से असफल रहने के लिए पर्याप्त हेतुक न्यायालय को समाधानप्रद रूप में दर्शित नहीं करता है वहां पूर्वगामी नियमों के उन सभी उपबन्धों के अधीन होगा जो ऐसे वादियों और प्रतिवादियों को जो उपसंजात नहीं होते हैं, यथास्थिति, लागू होते हैं।

एकपक्षीय डिक्रियों को अपास्त करना

13. **प्रतिवादी के विरुद्ध एकपक्षीय डिक्री को अपास्त करना**—किसी ऐसे मामले में जिसमें डिक्री किसी प्रतिवादी के विरुद्ध एक पक्षीय पारित की गई है, वह प्रतिवादी उसे अपास्त करने के आदेश के लिए आवेदन उस न्यायालय में कर सकेगा जिसके द्वारा वह डिक्री पारित की गई थी और यदि वह न्यायालय का यह समाधान कर देता है कि समन की तामील सम्यक् रूप से नहीं की गई थी या वह वाद की सुनवाई के लिए पुकार होने पर उपसंजात होने से किसी पर्याप्त हेतुक से निवारित रहा था तो खर्चों के बारे में, न्यायालय में जमा करने के या अन्यथा ऐसे निबन्धनों पर जो वह ठीक समझे, न्यायालय यह आदेश करेगा कि जहां तक डिक्री उस प्रतिवादी के विरुद्ध है वहां तक वह अपास्त कर दी जाए, और वाद में आगे कार्यवाही करने के लिए दिन नियत करेगा:

परन्तु जहां डिक्री ऐसी है कि केवल ऐसे प्रतिवादी के विरुद्ध अपास्त नहीं की जा सकती वहां वह अन्य सभी प्रतिवादियों या उनमें से किसी या किन्हीं के विरुद्ध भी अपास्त की जा सकेगी:

[1][परन्तु यह और कि यदि किसी न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि प्रतिवादी को सुनवाई की तारीख की सूचना थी और उपसंजात होने के लिए और वादी के दावे का उत्तर देने के लिए पर्याप्त समय था तो वह एक पक्षीय पारित डिक्री को केवल इस आधार पर अपास्त नहीं करेगा कि समन की तामील में अनियमितता हुई थी।

[1][**स्पष्टीकरण**—जहां इस नियम के अधीन एकपक्षीय पारित डिक्री के विरुद्ध अपील की गई है और अपील का निपटारा इस आधार से भिन्न किसी आधार पर कर दिया गया है कि अपीलार्थी ने अपील वापस ले ली है वहां उस एकपक्षीय डिक्री को अपास्त करने के लिए इस अधिनियम के अधीन कोई आवेदन नहीं होगा।]

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 59 द्वारा (1-2-1977 से) जोड़ा गया।

(पहली अनुसूची—आदेश 9—पक्षकारों की उपसंजाति और उनकी उपसंजाति का परिणाम। एक पक्षीय डिक्रियों को अपास्त करना। आदेश 10—न्यायालय द्वारा पक्षकारों की परीक्षा। आदेश 11—प्रकटीकरण और निरीक्षण।)

14. कोई भी डिक्री विरोधी पक्षकार को सूचना के बिना अपास्त नहीं की जाएगी—कोई भी डिक्री पूर्वोक्त जैसे किसी भी आवेदन पर तब तक अपास्त नहीं की जाएगी जब तक कि उसकी सूचना की तामील विरोधी पक्षकार पर न कर दी गई हो।

आदेश 10

न्यायालय द्वारा पक्षकारों की परीक्षा

1. यह अभिनिश्चित करना कि अभिवचनों में के अभिकथन स्वीकृत हैं या प्रत्याख्यात हैं—न्यायालय हर एक पक्षकार से या उसके प्लीडर से वाद की प्रथम सुनवाई में यह अभिनिश्चित करेगा कि क्या वह तथ्य के उन अभिकथनों को जो वादपत्र में या यदि विरोधी पक्षकार का कोई लिखित कथन है तो उसमें किए गए हैं और जो उस पक्षकार द्वारा जिसके विरुद्ध वे किए गए हैं, अभिव्यक्त रूप से या आवश्यक विवक्षा से स्वीकार या प्रत्याख्यात नहीं किए गए हैं, स्वीकार करता है या प्रत्याख्यात करता है। न्यायालय ऐसी स्वीकृतियों और प्रत्याख्यानों को लेखबद्ध करेगा।

[1][**2. पक्षकार की या पक्षकार के साथी की मौखिक परीक्षा**—(1) न्यायालय वाद की प्रथम सुनवाई में—

(क) पक्षकारों में से ऐसे पक्षकारों की जो न्यायालय में स्वयं उपसंजात हैं या उपस्थित हैं, वाद में विवादग्रस्त बातों के विशदीकरण की दृष्टि से मौखिक परीक्षा करेगा जो वह ठीक समझे; और

(ख) वाद से सम्बन्धित किन्हीं तात्विक प्रश्नों के उत्तर देने में समर्थ ऐसे किसी व्यक्ति की, जो न्यायालय में स्वयं उपसंजात या उपस्थित पक्षकार या उसके प्लीडर के साथ हैं, मौखिक परीक्षा कर सकेगा।

(2) न्यायालय किसी पश्चात्वर्ती सुनवाई में, न्यायालय में स्वयं उपसंजात या उपस्थित पक्षकार की या वाद से संबंधित किन्हीं तात्विक प्रश्नों के उत्तर देने में समर्थ ऐसे किसी व्यक्ति की, जो ऐसे पक्षकार या उसके प्लीडर के साथ है, मौखिक परीक्षा कर सकेगा।

(3) यदि न्यायालय ठीक समझे तो वह दोनों पक्षकारों में से किसी के भी द्वारा सुझाए गए प्रश्नों को इस नियम के अधीन किसी परीक्षा के दौरान पूछ सकेगा।

3. परीक्षा का सार लिखा जाएगा—परीक्षा का सार न्यायधीश द्वारा लिखा जाएगा और वह अभिलेख का भाग होगा।

4. उत्तर देने से प्लीडर के इन्कार का या उत्तर देने में उसकी असमर्थता का परिणाम—(1) जहां प्लीडर द्वारा उपसंजात होने वाले पक्षकार का प्लीडर, या प्लीडर के साथ वाला ऐसा व्यक्ति जो नियम 2 में निर्दिष्ट है, वाद से संबंधित किसी ऐसे तात्विक प्रश्न का उत्तर देने से इंकार करता है या उत्तर देने में असमर्थ रहता है, जिसके बारे में न्यायालय की राय है कि उसका उत्तर उस पक्षकार को देना चाहिए जिसका वह प्रतिनिधित्व करता है और यह संभव है कि यदि स्वयं पक्षकार से परिप्रश्न किया जाए तो वह उसका उत्तर देने में समर्थ होगा, वहां न्यायालय वाद की सुनवाई किसी भविष्यवर्ती दिन के लिए मुल्तवी कर सकेगा और निदेश दे सकेगा कि ऐसा पक्षकार उस दिन स्वयं उपसंजात हो।

(2) यदि ऐसे नियत दिन पर ऐसा पक्षकार विधिपूर्ण प्रतिहेतु के बिना स्वयं उपसंजात होने में असफल रहता है तो न्यायालय उसके विरुद्ध निर्णय सुना सकेगा या वाद के सम्बन्ध में ऐसा आदेश कर सकेगा जो वह ठीक समझे।

आदेश 11

प्रकटीकरण और निरीक्षण

1. परिप्रश्नों द्वारा प्रकटीकरण कराना—किसी भी वादी में वाद या प्रतिवादी विरोधी पक्षकारों या ऐसे पक्षकारों में से किसी एक या अधिक की परीक्षा करने के लिए लिखित परिप्रश्न न्यायालय की इजाजत से परिदत्त कर सकेगा और परिदत्त किए जाते समय परिप्रश्नों में यह पाद टिप्पण होगा कि ऐसे व्यक्तियों में से हर एक ऐसे परिप्रश्नों में से किनका उत्तर देने के लिए अपेक्षित है: परन्तु कोई भी पक्षकार एक ही पक्षकार को परिप्रश्न के एक संवर्ग से अधिक उस प्रयोजन के लिए आदेश के बिना परिदत्त नहीं करेगा: परन्तु यह और भी कि वे परिप्रश्न जो वाद में प्रश्नगत किन्हीं विषयों से संबंधित नहीं हैं, इस बात के होते हुए भी विसंगत समझे जाएंगे कि साक्षी की मौखिक प्रतिपरीक्षा करने में वे ग्राह्य होते।

---

1. 1976 के अधिनियम सं॰ 104 की धारा 60 द्वारा (1-2-1977 से) नियम 2 के स्थान पर प्रतिस्थापित।

2. **विशिष्ट परिप्रश्नों का दिया जाना**—परिप्रश्नों के परिदान के लिए इजाजत के लिए आवेदन पर वे विशिष्ट परिप्रश्न जिनका परिदान किए जाने की प्रथापना है, न्यायालय के समक्ष रखे जाएंगे। ऐसे आवेदन पर विनिश्चय करने में न्यायालय किसी ऐसी प्रस्थापना पर भी विचार करेगा जो उस पक्षकार ने जिससे परिप्रश्न किया जाना है प्रश्नगत बातों या उनमें से किसी से संबंधित विशिष्टियों को परिदत्त करने या स्वीकृतियां करने या दस्तावेजें पेश करने के लिए की हों और उसके समक्ष रखे गए परिप्रश्नों में से केवल ऐसे परिप्रश्नों के संबंध में इजाजत दी जाएगी जिन्हें न्यायालय या तो वाद के ऋजु निपटारे के लिए या खर्चों में बचत करने के लिए आवश्यक समझे।

3. **परिप्रश्नों के खर्चे**—वाद के खर्चों का समायोजन करने में ऐसे परिप्रश्नों के प्रदर्शन के औचित्य के संबंध में जांच किसी पक्षकार की प्रेरणा पर की जाएगी और यदि विनिर्धारक अधिकारी या न्यायालय की राय जांच के लिए आवेदन पर या ऐसे आवेदन के बिना यह हो कि ऐसे परिप्रश्न अयुक्तियुक्ततः तंग करने के लिए या अनुचित विस्तार के साथ प्रदर्शित किए गए हैं तो उक्त परिप्रश्नों और उनके उत्तरों के कारण हुए खर्चे हर हालत में उस पक्षकार द्वारा दिए जाएंगे जिसने यह कसूर किया है।

4. **परिप्रश्नों का प्ररूप**—परिप्रश्न परिशिष्ट ग के प्ररूप संख्यांक 2 में ऐसे फेरफार के साथ होंगे जो परिस्थितियों में अपेक्षित हों।

5. **निगम**—जहां वाद का कोई पक्षकार निगम या व्यक्तियों का ऐसा निकाय है, चाहे वह निगमित हो या नहीं, जो विधि द्वारा सशक्त है कि स्वयं अपने नाम से या किसी अधिकारी के या अन्य व्यक्ति के नाम से वाद ला सके या उस पर वाद लाया जा सके वहां कोई भी विरोधी पक्षकार ऐसे निगम या निकाय के किसी भी सदस्य या अधिकारी को परिप्रश्न परिदत्त करने के लिए अपने को अनुज्ञा देने वाले आदेश के लिए आवेदन कर सकेगा और आदेश तदनुसार किया जा सकेगा।

6. **परिप्रश्नों के सम्बन्ध में उत्तर द्वारा आक्षेप**—किसी भी परिप्रश्न का उत्तर देने की बाबत इस आधार पर कि वे परिप्रश्न कलंकात्मक या विसंगत है या वाद के प्रयोजन के लिए सद्भावपूर्वक प्रदर्शित नहीं किया गया है या वे विषय जिनके बारे में पूछताछ की गई है, उस प्रक्रम में पर्याप्त रूप से तात्विक नहीं हैं [1][या विशेषाधिकार के आधार पर या किसी अन्य आधार पर] कोई भी आक्षेप उत्तर में दिए गए शपथपत्र में किया जा सकेगा।

7. **परिप्रश्नों का अपास्त किया जाना और काट दिया जाना**—कोई भी परिप्रश्न इस आधार पर अपास्त किए जा सकेंगे कि वे अयुक्तियुक्ततः या तंग करने के लिए प्रदर्शित किए गए हैं या इस आधार पर काट दिए जा सकेंगे कि वे अतिविस्तृत, पीड़ा पहुंचाने वाले, अनावश्यक या कलंकात्मक हैं और इस प्रयोजन के लिए कोई भी आवेदन परिप्रश्नों की तामील के पश्चात् सात दिन के भीतर किया जा सकेगा।

8. **उत्तर में दिए गए शपथपत्र का फाइल किया जाना**—परिप्रश्नों का उत्तर शपथपत्र द्वारा दिया जाएगा जो दस दिन के भीतर या ऐसे अन्य समय के भीतर जो न्यायालय अनुज्ञात करे, फाइल किया जाएगा।

9. **उत्तर में दिए गए शपथपत्र का प्ररूप**—परिप्रश्नों के उत्तर में दिया गया शपथपत्र परिशिष्ट ग के प्ररूप संख्यांक 3 में ऐसे फेरफार के साथ होगा जो परिस्थितियों में अपेक्षित हो।

10. **कोई आक्षेप नहीं किया जाएगा**—उत्तर में दिए गए किसी शपथपत्र पर कोई भी आक्षेप नहीं किए जाएंगे। किन्तु किसी शपथपत्र के अपर्याप्त होने का आक्षेप किए जाने पर उसका अपर्याप्त होना या न होना न्यायालय द्वारा अवधारित किया जाएगा।

11. **उत्तर देने के या अतिरिक्त उत्तर देने के लिए आदेश**—जहां-जहां कोई व्यक्ति जिससे परिप्रश्न किया गया है उत्तर देने का लोप करता है या अपर्याप्त उत्तर देता है वहां परिप्रश्न करने वाला पक्षकार न्यायालय से इस आदेश के लिए आवेदन कर सकेगा कि उस पक्षकार से यह अपेक्षा की जाए कि वह, यथास्थिति, उत्तर दे या अतिरिक्त उत्तर दे और उससे यह अपेक्षा करने वाला आदेश लिया जा सकेगा कि वह, न्यायालय द्वारा जैसे भी निदेश दिया जाए, या तो शपथपत्र द्वारा या मौखिक परीक्षा द्वारा उत्तर दे या अतिरिक्त उत्तर दे।

12. **दस्तावेजों के प्रकटीकरण के लिए आवेदन**—कोई भी पक्षकार कोई भी शपथपत्र फाइल किए बिना न्यायालय से ऐसे

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 61 द्वारा (1-2-1977 से) कुछ शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।

आदेश के लिए आवेदन कर सकेगा जो किसी वाद के किसी अन्य पक्षकार को निदेश करता हो कि वह उसमें प्रश्नगत किसी बात से संबंधित ऐसे दस्तावेजों का, जो उसके कब्जे या शक्ति में हों या रही हों, शपथपत्र पर प्रकटीकरण करे। ऐसे आवेदन की सुनवाई के पश्चात् यदि न्यायालय का समाधान हो जाता है कि ऐसा प्रकटीकरण आवश्यक नहीं है या वाद के उस प्रक्रम में आवश्यक नहीं है तो वह उसे नामंजूर कर सकेगा या स्थगित कर सकेगा अथवा या तो साधारणतः या दस्तावेजों के कुछ वर्गों तक ही सीमित ऐसा आदेश कर सकेगा जो स्वविवेक में वह ठीक समझे: परन्तु जब और जहां तक न्यायालय की यह राय है कि वाद के ऋजु निपटारे के लिए या खर्चों में बचत करने के लिए यह आवश्यक नहीं है तब और वहां तक प्रकटीकरण के लिए आदेश नहीं दिया जाएगा।

13. **दस्तावेजों संबंधी शपथपत्र**—जिस पक्षकार के विरुद्ध ऐसा आदेश किया गया है जो अन्तिम पूर्ववर्ती नियम में वर्णित है, उस पक्षकार द्वारा दिए जाने वाले शपथपत्र में यह विनिर्दिष्ट होगा कि उसमें वर्णित दस्तावेजों में से किसको (यदि कोई हो) पेश करने पर वह आक्षेप करता है और यह परिशिष्ट ग के प्ररूप संख्यांक 5 में ऐसे फेरफार के साथ होगा जो परिस्थितियों से अपेक्षित हो।

14. **दस्तावेजों का पेश किया जाना**—न्यायालय के लिए यह विधिपूर्ण होगा कि वह किसी भी वाद के लंबित रहने के दौरान किसी भी समय उसमें के किसी भी पक्षकार को यह आदेश दे कि वह शपथ पर, अपने कब्जे या शक्ति में की और ऐसे वाद में प्रश्नगत किसी विषय से सम्बन्धित दस्तावेजों में से ऐसी दस्तावेजें पेश करे जो न्यायालय ठीक समझे और जब ऐसी दस्तावेजें पेश की जाएं तब न्यायालय उनका इस प्रकार उपयोग कर सकेगा जो न्यायसंगत प्रतीत हो।

15. **अभिवचनों या शपथपत्रों में निर्दिष्ट दस्तावेजों का निरीक्षण**—वाद का हर पक्षकार किसी भी ऐसे अन्य पक्षकार को, जिसके अभिवचनों या शपथपत्रों में किसी दस्तावेज के प्रति निर्देश किया गया है [1][या जिसने अपने अभिवचनों से उपाबद्ध किसी सूची में किसी दस्तावेज की प्रविष्टि की है,] किसी भी समय यह सूचना देने का हकदार होगा कि वह कोई ऐसी दस्तावेज ऐसी सूचना देने वाले पक्षकार या उसके प्लीडर के निरीक्षण के लिए पेश करे और उसके या उन्हें इसकी प्रति लेने दे और ऐसी सूचना का अनुपालन न करने वाला कोई भी पक्षकार उसके पश्चात् ऐसी किसी भी दस्तावेज को ऐसे वाद में अपनी ओर से साक्ष्य में देने के लिए तब तक स्वतंत्र नहीं होगा जब तक कि वह न्यायालय का समाधान न कर दे कि वह वाद में प्रतिवादी है और ऐसे दस्तावेज का संबंध केवल उसके अपने हक से है या उसके पास कोई ऐसा अन्य हेतुक या प्रतिहेतु था जिससे न्यायालय ऐसी सूचना का अनुपालन न करने के लिए पर्याप्त समझे, उस दशा में न्यायालय खर्चों और अन्य बातों के बारे में ऐसे निबंधनों पर जो न्यायालय ठीक समझे, उसे साक्ष्य में रखे जाने के लिए अनुज्ञा दे सकेगा।

16. **पेश करने की सूचना**—किसी पक्षकार को उसके अभिवचन या शपथपत्रों में निर्दिष्ट किन्हीं दस्तावेजों को पेश करने की सूचना परिशिष्ट ग के प्ररूप संख्यांक 7 में ऐसे फेरफार के साथ होगी जो परिस्थितियों से अपेक्षित हो।

17. **जब सूचना दी गई है तब निरीक्षण के लिए समय**—जिस पक्षकार को ऐसी सूचना दी गई है वह ऐसी सूचना के प्राप्त होने से दस दिन के भीतर उस पक्षकार को जिसने वह सूचना दी थी, ऐसी सूचना परिदत्त करेगा जिसमें उसके परिदान से तीन दिन के भीतर आने वाला वह समय कथित होगा जब उन दस्तावेजों का या उनमें से ऐसी का जिनके पेश करने के बारे में वह आक्षेप नहीं करता है, उसके प्लीडर के कार्यालय में या बैंककार बहियों या अन्य लेखा बहियों या ऐसी बहियों की, जो किसी व्यापार या कारबार के प्रयोजन के लिए निरंतर उपयोग में रहती है, दशा में उनकी अभिरक्षा के प्राथमिक स्थान में निरीक्षण किया जा सकेगा और वह कथन होगा कि वे कौन सी दस्तावेजें हैं (यदि कोई हों) जिनके पेश करने के बारे में और किस आधार पर वह आक्षेप करता है। ऐसी सूचना परिशिष्ट ग में के प्ररूप संख्यांक 8 में ऐसे फेरफार के साथ होगी जो परिस्थितियों से अपेक्षित हो।

18. **निरीक्षण के लिए आदेश**—(1) जहां वह पक्षकार जिस पर नियम 15 के अधीन सूचना की तामील की गई है, निरीक्षण के लिए समय की ऐसी सूचना देने का लोप करता है या निरीक्षण कर देने पर आक्षेप करता है या अपने प्लीडर के कार्यालय से भिन्न स्थान पर निरीक्षण कराने की प्रस्थापना करता है वहां न्यायालय निरीक्षण चाहने वाले पक्षकार के आवेदन पर ऐसे स्थान में और इस प्रकार जो न्यायालय ठीक समझे, निरीक्षण के लिए आदेश कर सकेगा: परन्तु जब और जहां तक न्यायालय की यह राय है कि वाद के ऋजु निपटारे के लिए या खर्चों में बचत करने के लिए यह आवश्यक नहीं है तब और वहां तक ऐसा आदेश नहीं किया जाएगा।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 61 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

(2) उन दस्तावेजों को छोड़कर जो उस पक्षकार के अभिवचनों, विशिष्टियों या शपथपत्रों में निर्दिष्ट हों जिसके विरुद्ध आवेदन किया गया है या उसके दस्तावेजों संबंधी शपथपत्र में प्रकट की गई हों, दस्तावेजों के निरीक्षण के लिए कोई भी आवेदन ऐसे शपथपत्र पर आधारित होगा जो यह दर्शित करता हो कि वे दस्तावेजें कौन सी हैं जिनका निरीक्षण किया जाना है, यह कि आवेदन करने वाला पक्षकार उनका निरीक्षण करने के लिए हकदार है और यह कि वह दूसरे पक्षकार के कब्जे या शक्ति में हैं। जब और जहां तक न्यायालय की यह राय है कि वाद के ऋजु निपटारे के लिए या खर्चों में बचत करने के लिए यह आवश्यक नहीं है तब और वहां तक न्यायालय ऐसी दस्तावेजों के निरीक्षण के लिए ऐसा आदेश नहीं करेगा।

19. सत्यापित प्रतियां—(1) जहां किन्हीं कारबार की बहियों के निरीक्षण के लिए आवेदन किया गया है वहां यदि न्यायालय यह ठीक समझे तो वह मूल बहियों के निरीक्षण का आदेश देने के बजाय उनमें की किन्हीं प्रविष्टियों की प्रति देने के लिए और किसी ऐसे व्यक्ति के, जिसने मूल प्रविष्टियों से प्रति की तुलना कर ली है, शपथपत्र द्वारा उन प्रविष्टियों के सत्यापित किए जाने के लिए आदेश दे सकेगा और ऐसे शपथपत्र में यह कथन होगा कि मूल बही में कोई उद्घर्षण, अन्तरालेखन या परिवर्तन हैं या नहीं और हैं तो कौन से हैं: परन्तु ऐसी प्रति के दिए जाने पर भी न्यायालय उस बही के निरीक्षण के लिए आदेश दे सकेगा जिससे प्रति तैयार की गई थी।

(2) जहां निरीक्षण के आदेश के लिए आवेदन पर किसी दस्तावेज के बारे में विशेषाधिकार का दावा किया जाता है वहां न्यायालय के लिए यह विधिपूर्ण होगा कि वह विशेषाधिकार के दावे की विधिमान्यता का विनिश्चय करने के प्रयोजन से [1][दस्तावेज का, यदि वह राज्य के विषयों से संबंधित दस्तावेज न हों तो, निरीक्षण करे]।

(3) न्यायालय वाद के किसी पक्षकार के आवेदन पर किसी भी समय और चाहे दस्तावेजों के शपथपत्र का पहले ही आदेश किया जा दिया जा चुका हो या नहीं, किसी भी अन्य पक्षकार को शपथपत्र द्वारा यह कथन करने की उससे अपेक्षा करने वाला आदेश कर सकेगा कि विनिर्दिष्ट एक या अधिक दस्तावेज जिसे आवेदन-पत्र में विनिर्दिष्ट किया जाएगा, उसके कब्जे या शक्ति में है या है, किसी समय रही है या रही हैं और यदि अब उसके कब्जे में नहीं है तो उसे या उन्हें उसने कब अलग किया और उसका या उनका क्या हुआ। ऐसा आवेदन यह कथित करने वाले शपथपत्र द्वारा किया जाएगा कि अभिसाक्षी को विश्वास है कि जिस पक्षकार के विरुद्ध आवेदन किया गया है उसके कब्जे या शक्ति में वह दस्तावेज है या वे दस्तावेजें हैं या किसी समय थी या थीं जो आवेदन में विनिर्दिष्ट की गई है या की गई हैं, और वाद में प्रश्नगत बातों से या उनमें से कुछ से वह या वे संबंधित है या हैं।

20. समयपूर्व प्रकटीकरण—जहां कोई पक्षकार जिससे किसी प्रकार प्रकटीकरण या निरीक्षण चाहा गया है, उसके या उनके किसी भाग के बारे में आक्षेप करता है, वहां यदि न्यायालय का समाधान हो जाता है कि चाहे गए प्रकटीकरण या निरीक्षण का अधिकार वाद में विवादास्पद किसी विवाद्यक या प्रश्न के अवधारण पर निर्भर करता है या किसी अन्य कारण से यह वांछनीय है कि वाद में विवादग्रस्त किसी विवाद्यक या प्रश्न का अवधारण प्रकटीकरण या निरीक्षण के अधिकार का विनिश्चय करने से पहले किया जाना चाहिए तो वह आदेश दे सकेगा कि ऐसे विवाद्यक या प्रश्न का अवधारण पहले किया जाए और प्रकटीकरण तथा निरीक्षण के प्रश्न को आरक्षित रख सकेगा।

21. प्रकटीकरण के आदेश का अनुपालन—[2][(1)] जहां कोई पक्षकार परिप्रश्नों का उत्तर देने या दस्तावेजों के प्रकटीकरण या निरीक्षण के किसी आदेश का अनुपालन करने में असफल रहता है वहां यदि वह वादी है तो वह इस बात के लिए दायी होगा कि उसका वाद अभियोजन के अभाव में खारिज कर दिया जाए, और यदि वह प्रतिवादी है तो वह इस बात के लिए दायी होगा कि यदि उसने कोई प्रतिरक्षा की है तो वह काट दी जाए और वह ऐसी स्थिति में रख दिया जाए मानो उसकी प्रतिरक्षा न की गई हो और परिप्रश्न करने वाला या प्रकटीकरण या निरीक्षण चाहने वाला पक्षकार न्यायालय से उस भाव के आदेश के लिए आवेदन कर सकेगा; और [3][पक्षकारों को सूचना देने के पश्चात् और उनको सुनवाई के लिए युक्तियुक्त अवसर देने के पश्चात् ऐसा आदेश ऐसे आवेदन पर तद्नुसार किया जा सकेगा।]

[1][(2) जहां किसी वाद को खारिज करने का कोई आदेश उपनियम (1) के अधीन किया जाता है वहां वादी उसी वाद-हेतुक पर नया वाद लाने से प्रवारित किया जाएगा।]

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 61 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 61 द्वारा (1-2-1977 से) नियम 21 को उस नियम के उपनियम (1) के रूप में पुनःसंख्यांकित किया गया।
3. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 61 द्वारा (1-2-1977 से) "ऐसा आदेश तद्नुसार किया जाएगा" शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।

22. **परिप्रश्नों के उत्तरों का विचारण में उपयोग**—कोई भी पक्षकार परिप्रश्नों के लिए दिए गए विरोधी पक्षकार के उत्तरों में से किसी एक या अधिक या उत्तर के किसी भाग का, अन्य उत्तरों या ऐसे पूरे उत्तर को पेश किए बिना, वाद के विचारण में साक्ष्य में उपयोग कर सकेगा: परन्तु सदा ही यह कि ऐसी दशा में न्यायालय उन उत्तरों को पूर्णतः देख सकेगा और यदि उसकी यह राय है कि उनमें से कोई अन्य उत्तर, पेश किए गए उत्तरों से ऐसे संसक्त हैं कि अन्तिम वर्णित उत्तरों का उनके बिना उपयोग नहीं करना चाहिए तो वह उनके द्वारा पेश किए जाने के लिए निदेश दे सकेगा।

23. **आदेश अवयस्क को लागू होगा**—यह आदेश अवयस्क वादियों और प्रतिवादियों को और नियोग्यताधीन व्यक्तियों के वाद-मित्रों और वादार्थ संरक्षकों को लागू होगा।

आदेश 12

स्वीकृतियां

1. **मामले की स्वीकृति की सूचना**—वाद का कोई भी पक्षकार अपने लिखित अभिवचन द्वारा या अन्यथा लिखित रूप में सूचना दे सकेगा कि वह किसी अन्य पक्षकार के पूरे मामले की या उसके किसी भाग की सत्यता को स्वीकार करता है।

2. **दस्तावेजों की स्वीकृति के लिए सूचना**—दोनों पक्षकारों में से कोई भी पक्षकार दूसरे पक्षकार से यह अपेक्षा कर सकेगा कि वह [1][किसी दस्तावेज को सभी न्यायसंगत अपवादों को छोड़कर सूचना की तामील की तारीख से पन्द्रह दिन के भीतर स्वीकार कर ले] और ऐसी सूचना के पश्चात् स्वीकृत करने से इन्कार या उपेक्षा करने की दशा में, जब तक कि न्यायालय अन्यथा निदेश न करे, किसी भी ऐसी दस्तावेज को साबित करने के खर्च ऐसी उपेक्षा या इन्कार करने वाले पक्षकार द्वारा दिए जाएंगे चाहे वाद का परिणाम कुछ भी हो और जब तक कि ऐसी सूचना नहीं दे दी गई हो किसी दस्तावेज को साबित करने का कोई भी खर्च केवल तभी अनुज्ञात किया जाएगा जब ऐसी सूचना न देना न्यायालय की राय में व्यय की बचत है।

[2][2क. **यदि दस्तावेजों की स्वीकृति के लिए सूचना की तामील के पश्चात् उनसे इंकार नहीं किया जाता तो उन्हें स्वीकृत समझा जाना**—(1) ऐसी हर दस्तावेज, जिसको स्वीकार करने की मांग पक्षकार से की जाती है, उस पक्षकार द्वारा अभिवचन में या दस्तावेजों की स्वीकृति की सूचना के अपने उत्तर में विनिर्दिष्टतः या आवश्यक विवक्षा से प्रत्याख्यात नहीं की जाती है या उसको स्वीकार न किए जाने का कथन नहीं किया जाता है, सिवाय ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध जो नियोग्यताधीन है, स्वीकृत समझी जाएगी:

परन्तु न्यायालय स्वविवेकानुसार और लेखबद्ध किए जाने वाले कारणों से यह अपेक्षा कर सकेगा कि इस प्रकार स्वीकृत कोई दस्तावेज ऐसी स्वीकृति से भिन्न रूप से साबित की जाए।

(2) जहां पक्षकार दस्तावेजों की स्वीकृति की सूचना की तामील अपने पर किए जाने के पश्चात् किसी दस्तावेज को स्वीकार करने में अयुक्तियुक्त रूप से उपेक्षा करता है या इंकार करता है वहां न्यायालय उसे दूसरे पक्षकार को प्रतिकर के रूप में खर्चा देने का निदेश दे सकेगा।]

3. **सूचना का प्ररूप**—दस्तावेजों को स्वीकृत करने की सूचना परिशिष्ट ग के प्ररूप संख्यांक 9 में ऐसे फेरफार के साथ होगी जो परिस्थितियों से अपेक्षित हो।

[3][3क. **स्वीकृति के अभिलेखन की न्यायालय की शक्ति**—दस्तावेजों को स्वीकार करने के लिए सूचना नियम 2 के अधीन न दी जाने पर भी न्यायालय अपने समक्ष वाली कार्यवाही के किसी भी प्रक्रम में स्वयं अपनी प्रेरणा से किसी भी पक्षकार से कोई दस्तावेज स्वीकार करने की अपेक्षा कर सकेगा और ऐसी दशा में यह अभिलेखन करेगा कि क्या पक्षकार ऐसी दस्तावेज को स्वीकार करता है या स्वीकार करने से इंकार करता है या स्वीकार करने की उपेक्षा करता है।]

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 62 द्वारा (1-2-1977 से) "किसी दस्तावेज को सब न्यायसंगत अपवादों को छोड़कर स्वीकार कर ले" शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 62 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
3. 1956 के अधिनियम सं० 66 की धारा 14 द्वारा अन्तःस्थापित।

4. **तथ्यों को स्वीकृत करने की सूचना**—कोई भी पक्षकार किसी भी अन्य प्रकार से सुनवाई के लिए नियत दिन से कम से कम नौ दिन पहले किसी भी समय लिखित सूचना द्वारा अपेक्षा कर सकेगा कि वह ऐसी सूचना में वर्णित किसी या किन्हीं विनिर्दिष्ट तथ्य या तथ्यों को केवल वाद के प्रयोजनों के लिए स्वीकार कर ले। और ऐसी सूचना की तामील के पश्चात् छह दिन के भीतर या ऐसे अतिरिक्त समय के भीतर जो न्यायालय द्वारा अनुज्ञात किया जाए उसको या उनको स्वीकृत करने से इंकार करने या उपेक्षा करने की दशा में तथ्य या तथ्यों के साबित करने का खर्चा जब तक कि न्यायालय अन्यथा निदेश न करे, इस प्रकार उपेक्षा करने या इंकार करने वाले पक्षकार द्वारा दिया जाएगा चाहे वाद का परिणाम कुछ भी क्यों न हो: परन्तु ऐसी सूचना के अनुसरण में की गई किसी भी स्वीकृति के बारे में यह समझा जाएगा कि वह उस विशिष्ट वाद के प्रयोजनों के लिए की ही गई है और वह ऐसी स्वीकृति नहीं समझी जाएगी जिसका उस पक्षकार के विरुद्ध किसी अन्य अवसर पर या सूचना देने वाले पक्षकार से भिन्न किसी व्यक्ति के पक्ष में उपयोग किया जा सकता है: परन्तु यह और भी कि न्यायालय इस प्रकार की गई किसी भी स्वीकृति को ऐसे निबंधनों पर जो न्यायसंगत हों, संशोधित करने या प्रत्याहृत कर लेने के लिए किसी भी पक्षकार को किसी भी समय अनुज्ञा दे सकेगा।

5. **स्वीकृतियों का प्ररूप**—तथ्यों को स्वीकार करने के लिए सूचना परिशिष्ट ग के प्ररूप संख्यांक 10 में और तथ्यों की स्वीकृतियां परिशिष्ट ग के प्ररूप संख्यांक 11 में ऐसे फेरफार के साथ होंगी जो परिस्थितियों से अपेक्षित हो।

6. **स्वीकृतियों के आधार पर निर्णय**—(1) जहां अभिवचन में या अन्यथा, चाहे मौखिक रूप से या लिखित रूप में तथ्य की स्वीकृतियां की जा चुकी हैं वहां न्यायालय वाद के किसी प्रक्रम में या तो किसी पक्षकार के आवेदन पर या स्वप्रेरणा से और पक्षकारों के बीच किसी अन्य प्रश्न के अवधारण की प्रतीक्षा किए बिना ऐसी स्वीकृतियों को ध्यान में रखते हुए ऐसा आदेश या ऐसा निर्णय कर सकेगा जो वह ठीक समझे।

(2) जब कभी उपनियम (1) के अधीन निर्णय सुनाया जाता है तब निर्णय के अनुसार डिक्री तैयार की जाएगी और डिक्री में वही तारीख दी जाएगी जिस तारीख को उक्त निर्णय सुनाया गया था।]

7. **हस्ताक्षर के बारे में शपथपत्र**—यदि दस्तावेजों या तथ्यों को स्वीकार करने की किसी सूचना के अनुसरण में की गई स्वीकृतियों के सम्यक् हस्ताक्षरण की बाबत साक्ष्य की अपेक्षा की जाती है तो प्लीडर या उसके लिपिक का ऐसी स्वीकृतियों के बारे में शपथपत्र पर्याप्त साक्ष्य होगा।

8. **दस्तावेजों को पेश करने के लिए सूचना**—दस्तावेजों को पेश करने के लिए सूचना परिशिष्ट ग के प्ररूप संख्यांक 12 में ऐसे फेरफार के साथ होगी जो परिस्थितियों से अपेक्षित हो। पेश करने के लिए किसी सूचना की तामील के बारे में और उस समय के बारे में जब उसकी तामील की गई थी, प्लीडर या उसके लिपिक का शपथपत्र उसे पेश करने की सूचना की प्रति के सहित सभी दशाओं में सूचना की तामील के बारे में और उस समय के बारे में जब उसकी तामील की गई थी, पर्याप्त साक्ष्य होगा।

9. **खर्चे**—यदि स्वीकृति या पेश करने की सूचना ऐसी दस्तावेजों को विनिर्दिष्ट करती है जो आवश्यक नहीं है तो उसके कारण हुए खर्चे ऐसी सूचना देने वाले पक्षकार द्वारा वहन किए जाएंगे।

आदेश 13

दस्तावेजों का पेश किया जाना, परिबद्ध किया जाना और लौटाया जाना

1. **दस्तावेजी साक्ष्य का [2][विवाद्यकों के स्थिरीकरण के समय या उसके पूर्व] पेश किया जाना**—(1) पक्षकार या उनके प्लीडर अपने कब्जे या शक्ति में के हर भांति के ऐसे सभी दस्तावेजी साक्ष्य को, जिस पर निर्भर करने का उनका आशय है और जो न्यायालय में उस समय तक फाइल नहीं किया गया है और उन सभी दस्तावेजों को जिन्हें पेश करने के लिए न्यायालय ने आदेश दिया है, [2][विवाद्यकों के स्थिरीकरण के समय या उसके पूर्व] पेश करेंगे।

(2) न्यायालय इस प्रकार पेश की गई दस्तावेजों को ले लेगा। परन्तु यह तब जबकि उनके साथ ऐसे प्ररूप में तैयार की गई एक सही-सही सूची हो जो उच्च न्यायालय ने निर्दिष्ट किया हो।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 62 द्वारा (1-2-1977) नियम 6 के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 63 द्वारा (1-2-1977 से) कुछ शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।

(पहली अनुसूची—आदेश 13—दस्तावेजों का पेश किया जाना, परिबद्ध किया जाना और लौटाया जाना।)

2. दस्तावेजों को पेश न करने का प्रभाव—[1][(1)] किसी भी पक्षकार के कब्जे या शक्ति में का ऐसा कोई भी दस्तावेजी साक्ष्य जो नियम 1 की अपेक्षाओं के अनुसार पेश किया जाना चाहिए था किन्तु पेश नहीं किया गया है, कार्यवाहियों के किसी भी पश्चात्वर्ती प्रक्रम में केवल तभी लिया जाएगा जब उसे पेश करने के लिए ऐसा अच्छा हेतुक दिखाया गया है जो न्यायालय का समाधान करने वाला है और ऐसा साक्ष्य लेने वाला न्यायालय अपने ऐसा करने के कारणों को अभिलिखित करेगा।

[2][(2) उपनियम (1) की कोई भी बात ऐसे दस्तावेजों को लागू नहीं होगी जो,—

(क) दूसरे पक्षकारों के साक्षियों की प्रतिपरीक्षा करने के लिए पेश किए गए हैं, अथवा

(ख) किसी साक्षी को केवल उसकी स्मृति को ताजा करने के लिए दिए गए हैं।]

3. विसंगत या अग्राह्य दस्तावेजों का नामंजूर किया जाना—न्यायालय वाद के किसी भी प्रक्रम में ऐसी किसी भी दस्तावेज को, जिसे वह विसंगत या अन्यथा अग्राह्य समझता है, ऐसे नामंजूर करने के आधारों को अभिलिखित करके नामंजूर कर सकेगा।

4. साक्ष्य में गृहीत दस्तावेजों पर पृष्ठांकन—(1) ठीक आगामी उपनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए, हर ऐसी दस्तावेज पर, जो वाद में साक्ष्य में ग्रहण कर ली गई है, निम्नलिखित विशिष्टियां पृष्ठांकित की जाएंगी, अर्थात्:—

(क) वाद का संख्यांक और शीर्षक;

(ख) दस्तावेज को पेश करने वाले व्यक्ति का नाम;

(ग) वह तारीख जिसको वह पेश की गई थी; तथा

(घ) उसके इस प्रकार ग्रहण किए जा चुकने का कथन,

और पृष्ठांकन न्यायाधीश द्वारा हस्ताक्षरित या आद्यक्षरित किया जाएगा।

(2) जहां इस प्रकार गृहीत दस्तावेज किसी बही, लेखा या अभिलेख में की प्रविष्टि है और ठीक आगामी नियम के अधीन मूल प्रति के स्थान में उसकी एक प्रति रख दी गई है वहां पूर्वोक्त विशिष्टियों का पृष्ठांकन उस प्रति पर किया जाएगा और उस पर का पृष्ठांकन न्यायाधीश द्वारा हस्ताक्षरित या आद्यक्षरित किया जाएगा।

5. बहियों, लेखाओं और अभिलेखों में की गृहीत प्रविष्टियों की प्रतियों पर पृष्ठांकन—(1) वहां तक के सिवाय जहां तक कि बैंककार बही साक्ष्य अधिनियम, 1891 (1891 का 18) द्वारा अन्यथा उपबन्धित है, उस दशा में जिसमें वाद के साक्ष्य में गृहीत दस्तावेज डाकबही या दुकानबही या अन्य लेखा में की, जो चालू उपयोग में रहता है, प्रविष्टि है वह पक्षकार, जिसकी ओर से वह बही या लेखा पेश किया गया है, उस प्रविष्टि की प्रति दे सकेगा।

(2) जहां ऐसी दस्तावेज लोक कार्यालय में से या लोक अधिकारी द्वारा पेश किए गए लोक अभिलेख में की प्रविष्टि है या जिस पक्षकार की ओर से वह बही या लेखा पेश किया गया है उससे भिन्न व्यक्ति की बही या लेखा में की प्रविष्टि है वहां न्यायालय अपेक्षा कर सकेगा कि उस प्रविष्टि की प्रति—

(क) जहां वह अभिलेख, बही या लेखा पक्षकार की ओर से पेश किया गया है वहां उस पक्षकार द्वारा दी जाए, अथवा

(ख) जहां वह अभिलेख, बही या लेखा ऐसे आदेश के अनुपालन में पेश किया गया है जो स्वप्रेरणा पर कार्य करते हुए न्यायालय ने दिया है वहां दोनों पक्षकारों या किसी भी पक्षकार द्वारा दी जाए।

(3) जहां प्रविष्टि की प्रति इस नियम के पूर्वगामी उपबंधों के अधीन दे दी गई है वहां न्यायालय आदेश 7 के नियम 17 में वर्णित रीति से प्रति की परीक्षा और तुलना और प्रति को प्रमाणित कराने के पश्चात् प्रविष्टि को चिह्नित करेगा और उस बही, लेखा या अभिलेख को जिसमें वह है, उसे पेश करने वाले व्यक्ति को लौटवा देगा।

6. साक्ष्य में अग्राह्य होने के कारण नामंजूर दस्तावेजों पर पृष्ठांकन—जहां उस दस्तावेज को जिस पर साक्ष्य के रूप में दोनों पक्षकारों में से कोई निर्भर करता है, न्यायालय साक्ष्य में अग्राह्य ठहरा देता है वहां नियम 4 के उपनियम (1) के खंड (क),

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 63 द्वारा (1-2-1977 से) नियम 2 को उस नियम के उपनियम (1) के रूप में पुनः संख्यांकित किया गया।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 63 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

(पहली अनुसूची—आदेश 13—दस्तावेजों का पेश किया जाना, परिबद्ध किया जाना और लौटाया जाना।)

(ख) और (ग) में वर्णित विशिष्टियां इस कथन के सहित कि वे नामंजूर कर दी गई हैं, उस पर पृष्ठांकित की जाएंगी और पृष्ठांकन न्यायाधीश द्वारा हस्ताक्षरित या आद्यक्षरित किया जाएगा।

7. **गृहीत दस्तावेजों का अभिलेख में सम्मिलित किया जाना और नामंजूर की गई दस्तावेजों का लौटाया जाना**—(1) हर ऐसी दस्तावेज जो साक्ष्य में ग्रहण कर ली गई है या जहां नियम 5 के अधीन मूल प्रति के स्थान में उसकी प्रति रखी गई है वहां उसकी प्रति, वाद के अभिलेख का भाग होगी।

(2) दस्तावेजें जो साक्ष्य में ग्रहण नहीं की गई हैं, अभिलेख का भाग नहीं होंगी और से, यथास्थिति, उन व्यक्तियों को लौटा दी जाएंगी जिन्होंने उन्हें पेश किया था।

8. **न्यायालय किसी दस्तावेज के परिबद्ध किए जाने का आदेश दे सकेगा**—यदि न्यायालय को इस बात के लिए पर्याप्त हेतुक दिखाई दे तो वह किसी वाद में अपने समक्ष पेश की गई किसी भी दस्तावेज या बही के, इस आदेश के नियम 5 या 7 में या आदेश 7 के नियम 17 में किसी बात के होते हुए भी, ऐसी अवधि के लिए और ऐसी शर्तों के अधीन जो न्यायालय ठीक समझे, परिबद्ध किए जाने और न्यायालय के किसी अधिकारी की अभिरक्षा में रखे जाने के लिए निदेश दे सकेगा।

9. **गृहीत दस्तावेजों का लौटाया जाना**—(1) वाद में अपने द्वारा पेश की गई और अभिलेख में सम्मिलित की गई किसी दस्तावेज को वापस लेने की वांछा करने वाला कोई भी व्यक्ति, चाहे वह वाद का पक्षकार हो या न हो, उस दस्तावेज को, जब तक कि वह नियम 8 के अधीन परिबद्ध न कर दी गई हो, वापस प्राप्त करने का हकदार—

(क) जहां वाद ऐसा है जिसमें अपील अनुज्ञात नहीं है वहां उस समय होगा जब वाद का निपटारा हो गया है, तथा

(ख) जहां वाद ऐसा है कि उसमें अपील अनुज्ञात है वहां उस समय होगा जब न्यायालय का समाधान हो जाता है कि अपील करने का समय बीत चुका है और अपील नहीं की गई है या यदि अपील की गई है तो उस समय होगा जब अपील निपटा दी गई हो:

[1][परन्तु इस नियम द्वारा विहित समय से पूर्वतर किसी भी समय दस्तावेज लौटाया जा सकेगा यदि उसकी वापसी के लिए आवेदन करने वाला व्यक्ति—

(क) समुचित अधिकारी हो—

(i) वाद के पक्षकार की दशा में मूल के स्थान पर रखने के लिए प्रमाणित प्रति परिदत्त करता है, और

(ii) किसी अन्य व्यक्ति की दशा में ऐसी मामूली प्रति परिदत्त करता है, जो आदेश 7 के नियम 17 के उपनियम (2) में वर्णित रीति से परीक्षित, मिलान की गई और प्रमाणित है, और

(ख) यह वचन देता है कि यदि उससे ऐसी अपेक्षा की गई तो वह मूल को पेश कर देगा:]

परन्तु यह और भी कि ऐसी कोई दस्तावेज नहीं लौटाई जाएगी जो डिक्री के बल से पूर्णतया शून्य या निरुपयोगी हो गई है।

(2) साक्ष्य में गृहीत दस्तावेज की वापसी पर उसे प्राप्त करने वाले व्यक्ति द्वारा रसीद दी जाएगी।

10. **न्यायालय स्वयं अपने अभिलेखों में से या अन्य न्यायालयों के अभिलेख में से कागज मंगा सकेगा**—(1) न्यायालय स्वप्रेरणा से या वाद के पक्षकारों में से किसी के आवेदन पर स्वविवेकानुसार अपने अभिलेखों में से या किसी अन्य न्यायालय के अभिलेखों में से किसी अन्य वाद या कार्यवाही का अभिलेख मंगा सकेगा और उसका निरीक्षण कर सकेगा।

(2) इस नियम के अधीन किया गया हर आवेदन का (जब तक कि न्यायालय अन्यथा निदेश न करे) एक ऐसे शपथपत्र द्वारा समर्थन किया जाएगा जिसमें यह दर्शित होगा कि उस वाद में, जिसमें आवेदन किया गया है, वह अभिलेख कैसे तात्विक है और यह कि आवेदन अयुक्तियुक्त विलम्ब या व्यय के बिना उस अभिलेख की या उसके ऐसे भाग की जिसकी उसे आवश्यकता है, सम्यक् रूप से अधिप्रमाणीकृत प्रति अभिप्राप्त नहीं कर सकता है या यह कि मूल की पेशी न्याय के प्रयोजनों के लिए आवश्यक है।

(3) इस नियम की कोई भी बात किसी भी ऐसी दस्तावेज को, जो वाद में साक्ष्य की विधि के अधीन आग्राह्य होती, साक्ष्य में उपयोग करने के लिए न्यायालय को समर्थ बनाने वाली नहीं समझी जाएगी।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 63 द्वारा (1-2-1977 से) परन्तुक के स्थान पर प्रतिस्थापित।

(पहली अनुसूची—आदेश 13—दस्तावेजों का पेश किया जाना, परिबद्ध किया जाना और लौटाया जाना। आदेश 14—विवाद्यकों का स्थिरीकरण और विधि विवाद्यकों के आधार पर या उन विवाद्यकों के आधार पर जिन पर रजामंदी हो गई है वाद का अवधारण।)

11. दस्तावेजों से संबंधित उपबन्धों का भौतिक पदार्थों को लागू होना—दस्तावेजों के संबंध में इसमें अन्तर्विष्ट उपबन्ध साक्ष्य के रूप में पेश किए जाने योग्य सभी अन्य भौतिक पदार्थों को जहां तक हो सके, लागू होंगे।

आदेश 14

विवाद्यकों का स्थिरीकरण और विधि विवाद्यकों के आधार पर या उन विवाद्यकों के आधार पर जिन पर रजामन्दी हो गई है वाद का अवधारण

1. विवाद्यकों की विरचना—(1) विवाद्यक तब पैदा होते हैं जब कि तथ्य या विधि की कोई तात्त्विक प्रतिपादना एक पक्षकार द्वारा प्रतिज्ञात और दूसरे पक्षकार द्वारा प्रत्याख्यात की जाती है।

(2) तात्त्विक प्रतिपादनाएं विधि या तथ्य की वे प्रतिपादनाएं हैं जिन्हें वाद लाने का अपना अधिकार दर्शित करने के लिए वादी को अभिकथित करना होगा या अपनी प्रतिरक्षा गठित करने के लिए प्रतिवादी को अभिकथित करना होगा।

(3) एक पक्षकार द्वारा प्रतिज्ञात और दूसरे पक्षकार द्वारा प्रत्याख्यात हर एक तात्त्विक प्रतिपादना एक सुभिन्न विवाद्यक का विषय होगी।

(4) विवाद्यक दो किस्म के होते हैं :—

(क) तथ्य विवाद्यक,

(ख) विधि विवाद्यक।

(5) न्यायालय वाद की प्रथम सुनवाई में वादपत्र को और यदि कोई लिखित कथन हो तो उसे पढ़ने के पश्चात् और [1][आदेश 10 के नियम 2 के अधीन परीक्षा करने के पश्चात् तथा पक्षकारों या उनके प्लीडरों की सुनवाई करने के पश्चात्] यह अभिनिश्चित करेगा कि तथ्य की या विधि की किन तात्त्विक प्रतिपादनाओं के बारे में पक्षकारों में मतभेद है और तब वह उन विवाद्यकों की विरचना और अभिलेखन करने के लिए अग्रसर होगा जिनके बारे में यह प्रतीत होता है कि मामले का ठीक विनिश्चय उन पर निर्भर करता है।

(6) इस नियम की कोई भी बात न्यायालय से यह अपेक्षा नहीं करती कि वह उस दशा में विवाद्यक विरचित और अभिलिखित करे जब प्रतिवादी वाद की पहली सुनवाई में कोई प्रतिरक्षा नहीं करता।

[2][2. न्यायालय द्वारा सभी विवाद्यकों पर निर्णय सुनाया जाना—(1) इस बात के होते हुए भी कि वाद का निपटारा प्रारम्भिक विवाद्यक पर किया जा सकेगा। न्यायालय उपनियम (2) के उपबंधों के अधीन रहते हुए सभी विवाद्यकों पर निर्णय सुनाएगा।

(2) जहां विधि विवाद्यक और तथ्य विवाद्यक दोनों एक ही वाद में पैदा हुए हैं और न्यायालय की यह राय है कि मामले या उसके किसी भाग का निपटारा केवल विधि विवाद्यक के आधार पर किया जा सकता है वहां यदि वह विवाद्यक—

(क) न्यायालय की अधिकारिता, अथवा

(ख) तत्समय प्रवृत्त किसी विधि द्वारा सृष्ट वाद के वर्जन,

से संबंधित है तो वह पहले उस विवाद्यक का विचारण करेगा और उस प्रयोजन के लिए यदि वह ठीक समझे तो, वह अन्य विवाद्यकों का निपटारा तब तक के लिए मुल्तवी कर सकेगा जब तक कि उस विवाद्यक का अवधारण न कर दिया गया हो और उस वाद की कार्यवाही उस विवाद्यक के विनिश्चय के अनुसार कर सकेगा।]

3. वह सामग्री जिससे विवाद्यकों की विरचना की जा सकेगी—न्यायालय निम्नलिखित सभी सामग्री से या उसमें से किसी से विवाद्यकों की विरचना कर सकेगा—

(क) पक्षकारों द्वारा या उनकी ओर से उपस्थित किन्हीं व्यक्तियों द्वारा या ऐसे पक्षकारों के प्लीडरों द्वारा शपथ पर किए गए अभिकथन;

(ख) अभिवचनों या वाद में परिदत्त परिप्रश्नों के उत्तरों में किए गए अभिकथन;

(ग) दोनों पक्षकारों में से किसी के द्वारा पेश की गई दस्तावेजों की अन्तर्वस्तु।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 64 द्वारा (1-2-1977 से) कुछ शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।

2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 64 द्वारा (1-2-1977 से) नियम 2 के स्थान पर प्रतिस्थापित।

(पहली अनुसूची—आदेश 14—विवाद्यकों का स्थिरीकरण और विधि विवाद्यकों के आधार पर या उन विवाद्यकों के आधार पर जिन पर रजामंदी हो गई है वाद का अवधारण। आदेश 15—प्रथम सुनवाई में वाद का निपटारा।)

4. न्यायालय विवाद्यकों की विरचना करने के पहले साक्षियों की या दस्तावेजों की परीक्षा कर सकेगा—जहां न्यायालय की यह राय है कि किसी ऐसे व्यक्ति की परीक्षा किए बिना जो न्यायालय के सामने नहीं है, या किसी ऐसी दस्तावेज का निरीक्षण किए बिना जो वाद में पेश नहीं की गई है, विवाद्यकों की ठीक-ठीक विरचना नहीं की जा सकती है वहां वह विवाद्यकों की विरचना किसी भविष्यवर्ती दिन के लिए स्थगित कर सकेगा और (तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अधीन रहते हुए) समन या अन्य आदेशिका द्वारा विवश करके किसी व्यक्ति की हाजिरी करा सकेगा या उस व्यक्ति द्वारा किसी दस्तावेज को पेश करा सकेगा जिसके कब्जे या शक्ति में यह दस्तावेज है।

5. विवाद्यकों का संशोधन और उन्हें काट देने की शक्ति—(1) न्यायालय डिक्री पारित करने से पूर्व किसी भी समय ऐसे निबन्धनों पर जो वह ठीक समझे, विवाद्यकों में संशोधन कर सकेगा या अतिरिक्त विवाद्यकों की विरचना कर सकेगा और ऐसे सभी संशोधन या अतिरिक्त विवाद्यक जो पक्षकारों के बीच में विवादग्रस्त बातों के अवधारण के लिए आवश्यक हों, इस प्रकार किए जाएंगे या विरचित किए जाएंगे।

(2) न्यायालय डिक्री पारित करने से पूर्व किसी भी समय किन्हीं भी ऐसे विवाद्यकों को काट सकेगा जिनके बारे में उसे प्रतीत होता है कि वे गलत तौर पर विरचित या पुरःस्थापित किए गए हैं।

6. तथ्य के या विधि के प्रश्न करार द्वारा विवाद्यकों के रूप में कथित किए जा सकेंगे—जहां वाद के पक्षकार तथ्य के या विधि के ऐसे प्रश्न के बारे में रजामंद हो गए हैं जो उनके बीच विनिश्चित किया जाना है वहां वे उसका विवाद्यक के रूप में कथन कर सकेंगे और लिखित रूप में यह करार कर सकेंगे कि ऐसे विवाद्यक पर न्यायालय के सकारात्मक या नकारात्मक निष्कर्ष पर—

(क) ऐसी धनराशि जो करार में विनिर्दिष्ट है या न्यायालय द्वारा या ऐसी रीति से जो न्यायालय निदेश करे, अभिनिश्चित की जानी है, पक्षकारों में से एक द्वारा उनमें से दूसरे को संदत्त की जाएगी या उनमें से एक पक्षकार ऐसे किसी अधिकार का हकदार या ऐसे किसी दायित्व के अधीन घोषित किया जाएगा जो करार में विनिर्दिष्ट है;

(ख) कोई सम्पत्ति जो करार में विनिर्दिष्ट है और वाद में विवादग्रस्त है, पक्षकारों में से एक द्वारा उनमें से दूसरे को या ऐसे परिदत्त की जाएगी जैसे कि वह दूसरा निदेश करे, अथवा

(ग) पक्षकारों में से एक या अधिक पक्षकार करार में विनिर्दिष्ट और विवादग्रस्त बात से संबंधित कोई विशिष्ट कार्य करेंगे या करने से विरत रहेंगे।

7. यदि न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि करार का निष्पादन सद्भावपूर्वक हुआ था तो वह निर्णय सुना सकेगा—जहां न्यायालय का ऐसी जांच करने के पश्चात् जो वह उचित समझे, यह समाधान हो जाता है कि—

(क) करार पक्षकारों द्वारा सम्यक् रूप से निष्पादित किया गया था;

(ख) पूर्वोक्त प्रश्न के विनिश्चय में उनका सारवान हित है, तथा

(ग) वह इस योग्य है कि उसका विचारण और विनिश्चय किया जाए,

वहां वह उस विवाद्यक को अभिलिखित करने और उसका विचारण करने के लिए अग्रसर होगा,

और उस पर अपने निष्कर्ष या विनिश्चय का उसी रीति से कथन करेगा मानो उस विवाद्यक की विरचना न्यायालय द्वारा की गई हो; और ऐसे विवाद्यक के निष्कर्ष या विनिश्चय के आधार पर वह करार के निबन्धनों के अनुसार निर्णय सुनाएगा और इस प्रकार सुनाए गए निर्णय के अनुसरण में डिक्री होगी।

आदेश 15

प्रथम सुनवाई में वाद का निपटारा

1. जब पक्षकारों में कोई विवाद नहीं है—जहां वाद की प्रथम सुनवाई में यह प्रतीत होता है कि विधि के या तथ्य के किसी प्रश्न पर पक्षकारों में विवाद नहीं है वहां न्यायालय तुरंत ही निर्णय सुना सकेगा।

(पहली अनुसूची—आदेश 15—प्रथम सुनवाई में वाद का निपटारा। आदेश 16—साक्षियों को समन करना और उनकी हाजिरी।)

2. जब कई प्रतिवादियों में से किसी एक का विवाद नहीं है—[1][(1)] जहां एक से अधिक प्रतिवादी हैं और प्रतिवादियों में से किसी एक का विधि के या तथ्य के किसी प्रश्न पर वादी से विवाद नहीं है वहां न्यायालय ऐसे प्रतिवादी के पक्ष में या उसके विरुद्ध निर्णय तुरंत ही सुना सकेगा और वाद केवल अन्य प्रतिवादियों के विरुद्ध चलेगा।

[2][(2) जब कभी इस नियम के अधीन निर्णय सुनाया जाता है तब ऐसे निर्णय के अनुसार डिक्री तैयार की जाएगी और डिक्री में वही तारीख दी जाएगी जिस तारीख को निर्णय सुनाया गया था।]

3. जब पक्षकारों में विवाद है—(1) जहां पक्षकारों में विधि के या तथ्य के किसी प्रश्न पर विवाद है और न्यायालय ने इसमें इसके पूर्व उपबंधित रूप में विवाद्यकों की विरचना कर ली है वहां, यदि न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि विवाद्यकों में से ऐसे विवाद्यकों के लिए जो वाद के विनिश्चय के लिए पर्याप्त है, जो तर्क या साक्ष्य पक्षकार तुरंत ही दे सकते हैं उसके सिवाय कोई अतिरिक्त तर्क या साक्ष्य अपेक्षित नहीं है और वाद में तुरंत ही आगे कार्यवाही करने से कोई अन्याय नहीं होगा तो, न्यायालय ऐसे विवाद्यकों के अवधारण के लिए अग्रसर हो सकेगा और यदि उनसे संबंधित निष्कर्ष विनिश्चय के लिए पर्याप्त है तो वह तदनुसार निर्णय सुना सकेगा, चाहे समन केवल विवाद्यकों के स्थिरीकरण के लिए निकाला गया हो या वाद के अंतिम निपटारे के लिए:

परंतु जहां समन केवल विवाद्यकों के स्थिरीकरण के लिए ही निकाला गया है वहां वह तब किया जाएगा जब पक्षकार या उनके प्लीडर उपस्थित हों और उनमें से कोई आक्षेप न करता हो।

(2) जहां निष्कर्ष विनिश्चय के लिए पर्याप्त नहीं है वहां न्यायालय वाद की आगे की सुनवाई मुल्तवी करेगा और ऐसे अतिरिक्त साक्ष्य को पेश करने के लिए या ऐसे अतिरिक्त तर्क के लिए दिन नियत करेगा जो मामले में अपेक्षित हो।

4. साक्ष्य पेश करने में असफलता—जहां समन वाद के अंतिम निपटारे के लिए निकाला गया है और दोनों में से कोई भी पक्षकार वह साक्ष्य पेश करने में पर्याप्त हेतुक के बिना असफल रहता है जिस पर वह निर्भर करता है वहां न्यायालय तुरंत ही निर्णय सुना सकेगा या यदि वह ठीक समझता है तो विवाद्यकों की विरचना और अभिलेखन के पश्चात् वाद को ऐसे साक्ष्य पेश किए जाने के लिए स्थगित कर सकेगा जो ऐसे विवाद्यकों पर उसके विनिश्चय के लिए आवश्यक है।

आदेश 16

साक्षियों को समन करना और उनकी हाजिरी

[3][**1. साक्षियों की सूची और साक्षियों को समन**—(1) ऐसी तारीख को या इसके पूर्व जो न्यायालय नियत करे और जो विवाद्यकों का निपटारा कर दिए जाने से पंद्रह दिन पश्चात् न हो, पक्षकार न्यायालय में ऐसे साक्षियों की सूची पेश करेंगे जिन्हें वे या तो साक्ष्य देने के लिए या दस्तावेजों को पेश करने के लिए बुलाने की प्रस्थापना करते हैं और न्यायालय में ऐसे व्यक्तियों की हाजिरी के लिए उनके नाम समन अभिप्राप्त करेंगे।

(2) यदि कोई पक्षकार किसी व्यक्ति की हाजिरी के लिए कोई समन अभिप्राप्त करना चाहता है तो वह पक्षकार न्यायालय में आवेदन उसमें उस प्रयोजन का कथन करते हुए फाइल करेगा जिसके लिए साक्षी को समन किया जाना प्रस्थापित है।

(3) न्यायालय कारण अभिलिखित करते हुए पक्षकार को किसी ऐसे साक्षी की जो उपनियम (1) में निर्दिष्ट सूची में वर्णित नामों से भिन्न हो, चाहे न्यायालय की मार्फत समन द्वारा या अन्यथा बुलाने की अनुमति केवल तभी दे सकेगा जब ऐसा पक्षकार उक्त सूची में ऐसे साक्षी के नाम का वर्णन करने में लोप के लिए पर्याप्त कारण दर्शित कर दे।

(4) उपनियम (2) के उपबंधों के अधीन रहते हुए, इस नियम में निर्दिष्ट समन पक्षकारों द्वारा न्यायालय से या ऐसे अधिकारी से जो न्यायालय द्वारा इस निमित्त नियुक्त किया जाए, आवेदन करके अभिप्राप्त किए जा सकेंगे।

[4][**1क. समन के बिना साक्षियों का पेश किया जाना**— नियम 1 के उपनियम (3) के उपबंधों के अधीन रहते हुए,

---

1. 1976 के अधिनियम सं॰ 104 की धारा 65 द्वारा (1-2-1977 से) नियम 2 को उस नियम के उपनियम (1) के रूप में पुनःसंख्यांकित किया गया।
2. 1976 के अधिनियम सं॰ 104 की धारा 65 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
3. 1976 के अधिनियम सं॰ 104 की धारा 66 द्वारा (1-2-1977 से) नियम 1 के स्थान पर प्रतिस्थापित।
4. 1976 के अधिनियम सं॰ 104 की धारा 66 द्वारा (1-2-1977 से) नियम 1क के स्थान पर प्रतिस्थापित।

वाद का कोई पक्षकार नियम 1 के अधीन समन के लिए आवेदन किए बिना किसी साक्षी को साक्ष्य देने या दस्तावेजें पेश करने के लिए ला सकेगा।

2. **समन के लिए आवेदन करने पर, साक्षी के व्यय न्यायालय में जमा कर दिए जाएंगे**—(1) समन के लिए आवेदन करने वाला पक्षकार समन के अनुदत्त किए जाने के पहले और उस अवधि के भीतर जो नियत की जाए, ऐसी राशि न्यायालय में जमा करेगा जो समनित व्यक्ति के उस न्यायालय तक जिसमें हाजिर होने की अपेक्षा उससे की गई है, आने और वहां से जाने के यात्रा संबंधी और अन्य व्ययों और एक दिन की हाजिरी के व्ययों को चुकाने के लिए न्यायालय को पर्याप्त प्रतीत हो।

(2) **विशेषज्ञ**—इस नियम के अधीन देय रकम का अवधारण करने में न्यायालय, विशेषज्ञ के नाते साक्ष्य देने के लिए समनित किसी व्यक्ति की दशा में, उस समय के लिए युक्तियुक्त पारिश्रमिक अनुज्ञात करेगा जो साक्ष्य देने में और मामले के लिए आवश्यक विशेषज्ञीय स्वरूप के किसी कार्य के करने में लगा हो।

(3) **व्ययों का मापमान**—जहां न्यायालय उच्च न्यायालय के अधीनस्थ है वहां ऐसे व्ययों का मापमान नियत करने में उन नियमों का ध्यान रखा जाएगा जो उस निमित्त बनाए गए हैं।

[1][(4) **व्ययों का साक्षियों को सीधे संदाय किया जाना**—जहां पक्षकार द्वारा समन साक्षी पर सीधे तामील किया जाता है वहां उपनियम (1) में निर्दिष्ट व्यय साक्षी को पक्षकार या उसके अभिकर्ता द्वारा संदत्त किया जाएगा।]

3. **साक्षी को व्ययों का निविदान**—यदि समन की तामील समनित व्यक्ति पर वैयक्तिक रूप से की जा सकती है तो समन की तामील करते समय वह राशि जो न्यायालय में ऐसे जमा की गई है, समनित व्यक्ति को निविदत्त की जाएगी।

4. **जहां अपर्याप्त राशि जमा की गई है वहां प्रक्रिया**—(1) जहां न्यायालय को या ऐसे अधिकारी को जिसे वह इस निमित्त नियुक्त करता है, यह प्रतीत होता है कि न्यायालय में जमा की गई राशि ऐसे व्ययों या युक्तियुक्त पारिश्रमिक को पूरा करने के लिए पर्याप्त नहीं है वहां न्यायालय समनित व्यक्ति को ऐसी अतिरिक्त राशि के दिए जाने के लिए निदेश दे सकेगा जो उस मद्दे आवश्यक प्रतीत होती हो और संदाय करने में व्यतिक्रम की दशा में यह आदेश दे सकेगा कि ऐसी राशि समन करने वाले पक्षकार की जंगम संपत्ति की कुर्की और विक्रय के द्वारा उद्गृहीत की जाए या न्यायालय समनित व्यक्ति से साक्ष्य देने की अपेक्षा किए बिना उसे उन्मोचित कर सकेगा या ऐसे उद्ग्रहण का और ऐसे व्यक्ति के यथापूर्वोक्त उन्मोचन दोनों का आदेश दे सकेगा।

(2) **एक दिन से अधिक रोके जाने पर साक्षियों के व्यय**—जहां समनित व्यक्ति को एक दिन से अधिक अवधि के लिए रोक रखना आवश्यक है वहां न्यायालय समय-समय पर उस पक्षकार को जिसकी प्रेरणा पर वह समनित किया गया था, न्यायालय में ऐसी राशि जमा करने का आदेश दे सकेगा जो ऐसी अतिरिक्त अवधि के लिए उसके रोक रखने के व्ययों को चुकाने के लिए पर्याप्त हो और ऐसे निक्षेप करने में व्यतिक्रम होने पर आदेश दे सकेगा कि ऐसी राशि ऐसे पक्षकार की जंगम संपत्ति की कुर्की और विक्रय के द्वारा उद्गृहीत की जाए या न्यायालय समनित व्यक्ति से साक्ष्य देने की अपेक्षा किए बिना उसे उन्मोचित कर सकेगा या ऐसे उद्ग्रहण का और ऐसे व्यक्ति के यथापूर्वोक्त उन्मोचन दोनों का आदेश दे सकेगा।

5. **हाजिरी के समय, स्थान और प्रयोजन का समन में विनिर्दिष्ट किया जाना**—साक्ष्य देने या दस्तावेज पेश करने को किसी व्यक्ति की हाजिरी के लिए हर समन में वह समय और स्थान विनिर्दिष्ट होगा जिसमें वह हाजिर होने के लिए अपेक्षित है और यह भी विनिर्दिष्ट होगा कि उसकी हाजिरी साक्ष्य देने के प्रयोजन के लिए या दस्तावेज पेश करने के प्रयोजन के लिए या दोनों प्रयोजनों के लिए अपेक्षित है और ऐसी कोई विशिष्ट दस्तावेज जिसे पेश करने की समनित व्यक्ति से अपेक्षा की गई है, समन में युक्तियुक्त शुद्धता के साथ वर्णित होगी।

6. **दस्तावेज पेश करने के लिए समन**—कोई भी व्यक्ति साक्ष्य देने के लिए समन किए बिना, दस्तावेज पेश करने के लिए समन किया जा सकेगा और केवल दस्तावेज पेश करने के लिए ही समनित कोई व्यक्ति, यदि उसे पेश करने के लिए स्वयं हाजिर होने के बदले ऐसी दस्तावेज को पेश करवा देता है तो उसके बारे में यह समझा जाएगा कि उसने समन का अनुपालन कर दिया है।

7. **न्यायालय में उपस्थित व्यक्तियों को साक्ष्य देने या दस्तावेज पेश करने के लिए अपेक्षित करने की शक्ति**—न्यायालय में उपस्थित किसी भी व्यक्ति से न्यायालय यह अपेक्षा कर सकेगा कि वह व्यक्ति साक्ष्य दे या ऐसी कोई दस्तावेज पेश करे, जो उस समय और वहां उसके कब्जे या शक्ति में है।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 66 द्वारा (1-2-1977 से) अंतःस्थापित।

[1][7क. **तामील के लिए पक्षकार को समन का दिया जाना**—(1) न्यायालय किसी व्यक्ति की हाजिरी के लिए समन निकालने के लिए किसी पक्षकार के आवेदन पर, ऐसे पक्षकार को उस व्यक्ति पर समन की तामील करने के लिए अनुज्ञा दे सकेगा और ऐसी दशा में उस पक्षकार को तामील के लिए समन परिदत्त करेगा।

(2) ऐसे समन की तामील ऐसे पक्षकार द्वारा या उसकी ओर से साक्षी को वैयक्तिक रूप से उसकी प्रति जो न्यायाधीश द्वारा या न्यायालय के ऐसे अधिकारी द्वारा जिसे वह इस निमित्त नियुक्त करे, हस्ताक्षरित हो और जो न्यायालय की मुद्रा से मुद्रांकित हो, परिदत्त या निविदत्त करके की जाएगी।

(3) आदेश 5 के नियम 16 और नियम 18 के उपबंध इस अधिनियम के अधीन वैयक्तिक रूप से तामील किए गए समन को इस प्रकार लागू होंगे मानो तामील करने वाला व्यक्ति तामील करने वाला अधिकारी हो।

(4) यदि ऐसा समन निविदत्त किए जाने के समय अगृहीत कर दिया जाता है या वह व्यक्ति जिस पर तामील की गई है, तामील की अभिस्वीकृति पर हस्ताक्षर करने से इंकार कर देता है या किसी कारण से ऐसा समन वैयक्तिक रूप से तामील नहीं किया जा सकता है तो न्यायालय पक्षकार के आवेदन पर ऐसा समन उसी रीति से न्यायालय द्वारा तामील किए जाने के लिए जिससे प्रतिवादी को समन तामील किया जाता है, पुनः निकालेगा।

(5) जहां इस नियम के अधीन पक्षकार द्वारा समन तामील किया जाता है वहां पक्षकार से ऐसी फीस संदत्त करने की अपेक्षा नहीं की जाएगी जो समन की तामील के लिए अन्यथा प्रभार्य होती।]

8. **समन की तामील कैसे होगी**—[2][इस आदेश के अधीन हर समन की तामील जो नियम 7क के अधीन पक्षकार को तामील के लिए परिदत्त समन नहीं है,] जहां तक संभव हो सके, वैसी ही रीति से की जाएगी जैसी प्रतिवादी के नाम निकाले गए समन की तामील की जाती है और आदेश 5 के वे नियम जो तामील के सबूत से संबंधित हैं, उन सभी समनों की दशा में लागू होंगे जिनकी तामील इस नियम के अधीन की गई है।

9. **समन की तामील के लिए समय**—सभी दशाओं में तामील उस समय से पर्याप्त समय पूर्व की जाएगी जो समनित व्यक्ति की हाजिरी के लिए समन में विनिर्दिष्ट हो, जिससे उसे तैयारी करने के लिए और उस स्थान तक जहां पर उसकी हाजिरी अपेक्षित है, यात्रा करने के लिए युक्तियुक्त समय मिल सके।

10. **जहां साक्षी समन का अनुपालन करने में असफल रहता है वहां प्रक्रिया**—[3][(1) जहां वह व्यक्ति जिसके नाम साक्ष्य देने को हाजिर होने के लिए या दस्तावेज पेश करने के लिए समन निकाला गया है, ऐसे समन के अनुपालन में हाजिर होने या दस्तावेज पेश करने में असफल रहता है वहां न्यायालय,—

(क) यदि तामील करने वाले अधिकारी का प्रमाणपत्र शपथपत्र द्वारा सत्यापित नहीं किया गया है या यदि समन की तामील पक्षकार या उसके अभिकर्ता द्वारा कराई गई है तो, यथास्थिति, तामील करने वाले ऐसे अधिकारी या पक्षकार या उसके अभिकर्ता की जिसने शपथपत्र की तामील कराई थी, समन की तामील होने या न होने के बारे में शपथपत्र पर परीक्षा करेगा या किसी न्यायालय द्वारा उसकी इस प्रकार परीक्षा कराएगा; अथवा

(ख) यदि तामील करने वाले अधिकारी का प्रमाणपत्र इस प्रकार सत्यापित किया गया है तो, यथास्थिति, तामील करने वाले ऐसे अधिकारी या पक्षकार या उसके अभिकर्ता की जिसने शपथपत्र की तामील कराई थी, समन की तामील होने या न होने के बारे में शपथपत्र पर परीक्षा कर सकेगा या किसी न्यायालय द्वारा उसकी इस प्रकार परीक्षा करा सकेगा।]

(2) जहां न्यायालय को यह विश्वास करने के लिए कारण दिखाई देता है कि ऐसा साक्ष्य या ऐसा पेश किया जाना तात्विक है और ऐसे समन के अनुपालन में हाजिर होने या ऐसी दस्तावेज पेश करने में ऐसा व्यक्ति विधिपूर्ण प्रतिहेतु के बिना असफल रहा है या उसने तामील से अपने को साशय बचाया है वहां वह उससे यह अपेक्षा करने वाली उद्घोषणा निकाल सकेगा कि वह उसमें नामित समय और स्थान में साक्ष्य देने या दस्तावेज पेश करने के लिए हाजिर हो और ऐसी उद्घोषणा की प्रति उस गृह के बाहर द्वार पर या अन्य सहजदृश्य भाग पर लगाई जाएगी जिसमें वह मामूली तौर से निवास करता है।

---

1. 1976 के अधिनियम सं॰ 104 की धारा 66 द्वारा (1-2-1977 से) अंतःस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं॰ 104 की धारा 66 द्वारा (1-2-1977 से) कुछ शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. 1976 के अधिनियम सं॰ 104 की धारा 66 द्वारा (1-2-1977 से) उपनियम (1) के स्थान पर प्रतिस्थापित।

(3) न्यायालय ऐसे व्यक्ति की गिरफ्तारी के लिए वारंट प्रतिभूति के सहित या बिना ऐसी उद्घोषणा के बदले में या उसे निकालने के समय या तत्पश्चात् किसी भी समय, स्वविवेकानुसार निकाल सकेगा और उसकी संपत्ति की कुर्की के लिए आदेश ऐसी कुर्की के खर्चों की और नियम 12 के अधीन अधिरोपित किए जाने वाले किसी जुर्माने की रकम से अनधिक ऐसी रकम के लिए कर सकेगा जो वह ठीक समझे :

परंतु कोई भी लघुवाद न्यायालय स्थावर संपत्ति की कुर्की के लिए आदेश नहीं करेगा।

11. यदि साक्षी उपसंजात हो जाता है तो कुर्की प्रत्याहृत की जा सकेगी—जहां ऐसा व्यक्ति अपनी संपत्ति की कुर्की के पश्चात् किसी समय उपसंजात हो जाता है और—

(क) न्यायालय का समाधान कर देता है कि समन का अनुपालन करने में वह विधिपूर्ण प्रतिहेतु के बिना असफल नहीं रहा है या उसने तामील से अपने को साशय नहीं बचाया है, तथा

(ख) जहां वह अंतिम पूर्ववर्ती नियम के अधीन निकाली गई उद्घोषणा में नामित समय और स्थान में हाजिर होने में असफल रहा है वहां न्यायालय का समाधान कर देता है कि ऐसी उद्घोषणा की कोई सूचना उसे ऐसे समय पर नहीं हुई थी कि वह हाजिर हो सकता,

वहां न्यायालय यह निदेश देगा कि संपत्ति कुर्की से निर्मुक्त की जाए और कुर्की के खर्चों के संबंध में वह ऐसा आदेश करेगा जो वह ठीक समझे।

12. यदि साक्षी उपसंजात होने में असफल रहता है तो प्रक्रिया — [1][(1)] जहां ऐसा व्यक्ति उपसंजात नहीं होता है या उपसंजात तो होता है किंतु न्यायालय का समाधान करने में असफल रहता है वहां न्यायालय उसकी सांसारिक स्थिति और मामले की सभी परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए पांच सौ रुपए से अनधिक ऐसा जुर्माना उस पर अधिरोपित कर सकेगा जो वह ठीक समझे और इस प्रयोजन से कि यदि कोई युक्त जुर्माना हो तो उस जुर्माने की रकम के सहित ऐसी कुर्की के सभी खर्चों को चुकाया जा सके यह आदेश दे सकेगा कि उसकी संपत्ति या उसका कोई भाग कुर्क किया जाए और उसका विक्रय किया जाए या यदि वह पहले ही नियम 10 के अधीन कुर्क किया जा चुका है तो उसका विक्रय किया जाए :

परंतु यदि वह व्यक्ति जिसकी हाजिरी अपेक्षित है उक्त खर्चों और जुर्माने को न्यायालय में जमा कर देता है तो न्यायालय संपत्ति को कुर्की से निर्मुक्त किए जाने का आदेश देगा।

[2][(2) इस बात के होते हुए भी कि न्यायालय ने न तो नियम 10 के उपनियम (2) के अधीन उद्घोषणा निकाली है, और न उस नियम के उपनियम (3) के अधीन वारंट निकाला है और न कुर्की का आदेश किया है, न्यायालय ऐसे व्यक्ति को यह हेतुक दर्शित करने के लिए सूचना देने के पश्चात् कि जुर्माना क्यों नहीं अधिरोपित किया जाना चाहिए, इस नियम के उपनियम (1) के अधीन जुर्माना अधिरोपित कर सकेगा।]

13. कुर्की करने का ढंग—डिक्री के निष्पादन में संपत्ति की कुर्की और विक्रय के बारे में उपबंध जहां तक कि वे लागू होने योग्य हों, इस आदेश के अधीन किसी कुर्की और विक्रय को उसी प्रकार लागू समझे जाएंगे मानो वह व्यक्ति जिसकी संपत्ति इस प्रकार कुर्क की गई है, निर्णीत-ऋणी हो।

14. जो व्यक्ति वाद में परव्यक्ति हैं उन्हें न्यायालय साक्षियों के रूप में स्वप्रेरणा से समन कर सकेगा — हाजिरी और उपस्थिति के बारे में इस संहिता के उपबंधों और तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अधीन रहते हुए, जहां न्यायालय किसी भी समय यह आवश्यक समझता है कि [3][किसी ऐसे व्यक्ति की परीक्षा की जाए जिसके अंतर्गत वाद का पक्षकार भी है] और जो वाद के पक्षकार द्वारा साक्षी के रूप में नहीं बुलाया गया है वहां न्यायालय स्वप्रेरणा से ऐसे व्यक्ति को, ऐसे दिन जो नियत किया जाएगा, साक्ष्य देने के लिए या अपने कब्जे में की कोई दस्तावेज पेश करने के लिए साक्षी के रूप में समन करवा सकेगा और साक्षी के रूप में उसकी परीक्षा कर सकेगा या उससे ऐसी दस्तावेज पेश करने के लिए अपेक्षा कर सकेगा।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 66 द्वारा (1-2-1977 से) नियम 12 को उस नियम के उपनियम (1) के रूप में पुनःसंख्यांकित किया गया।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 66 द्वारा (1-2-1977 से) अंतःस्थापित।
3. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 66 द्वारा (1-2-1977 से) कुछ शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।

15. उन व्यक्तियों का कर्तव्य जो साक्ष्य देने या दस्तावेज पेश करने के लिए समन किए गए हैं—ठीक ऊपर वाले नियम के अधीन रहते हुए कोई व्यक्ति जो किसी वाद में उपसंजात होने और साक्ष्य देने के लिए समन किया जाता है वह उस प्रयोजन के लिए समन में नामित समय और स्थान में हाजिर होगा और कोई व्यक्ति जो दस्तावेज पेश करने के लिए समन किया जाता है वह ऐसे समय पर और ऐसे स्थान में या तो उसे पेश करने के लिए हाजिर होगा या उसे पेश कराएगा।

16. वे कब प्रस्थान कर सकेंगे — (1) इस प्रकार समनित और हाजिर होने वाला व्यक्ति, जब तक कि न्यायालय अन्यथा निदेश न करे, हर एक सुनवाई में तब तक हाजिर होता रहेगा जब तक कि वाद का निपटारा न हो जाए।

(2) दोनों पक्षकारों में से किसी के भी आवेदन पर और न्यायालय की मार्फत समस्त आवश्यक व्ययों के (यदि कोई हो) संदत्त किए जाने पर, न्यायालय इस प्रकार समनित और हाजिर होने वाले किसी भी व्यक्ति से अपेक्षा कर सकेगा कि वह अगली या किसी अन्य सुनवाई में या तब तक, जब तक कि वाद का निपटारा न हो जाए, हाजिर होने के लिए प्रतिभूति दे और ऐसी प्रतिभूति देने में उसके व्यतिक्रम करने पर आदेश कर सकेगा कि उसे सिविल कारागार में निरुद्ध किया जाए।

17. नियम 10 से नियम 13 तक का लागू होना—नियम 10 से नियम 13 तक के उपबंधों के बारे में जहां तक कि वे लागू होने योग्य हैं, यह समझा जाएगा कि वे किसी भी ऐसे व्यक्ति को लागू होते हैं, जो समन के अनुपालन में हाजिर होने पर, नियम 16 के उल्लंघन में विधिपूर्ण प्रतिहेतु के बिना प्रस्थान कर गया है।

18. जहां पकड़ा गया साक्षी साक्ष्य नहीं दे सकता या दस्तावेज पेश नहीं कर सकता वहां प्रक्रिया—जहां वारंट के अधीन गिरफ्तार किया गया कोई व्यक्ति न्यायालय के समक्ष अभिरक्षा में लाया जाता है और पक्षकारों की या उनमें से किसी की अनुपस्थिति के कारण वह ऐसा साक्ष्य नहीं दे सकता है या ऐसी दस्तावेज पेश नहीं कर सकता है जिसे देने या पेश करने के लिए वह समन किया गया है वहां न्यायालय उससे यह अपेक्षा कर सकेगा कि वह ऐसे समय और ऐसे स्थान में जो न्यायालय ठीक समझे, अपने उपसंजाति के लिए युक्तियुक्त जमानत या अन्य प्रतिभूति दे और ऐसी जमानत या प्रतिभूति के दिए जाने पर उसे निर्मुक्त कर सकेगा और उसके ऐसी जमानत या प्रतिभूति देने में व्यतिक्रम करने पर आदेश दे सकेगा कि उसे सिविल कारागार में निरुद्ध किया जाए।

19. जब तक कि कोई साक्षी किन्हीं निश्चित सीमाओं के भीतर का निवासी न हो वह स्वयं हाजिर होने के लिए आदिष्ट नहीं किया जाएगा—किसी भी व्यक्ति को स्वयं हाजिर होने के लिए केवल तभी आदेश किया जाएगा जब वह—

(क) न्यायालय की मामूली आरम्भिक अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर, अथवा

(ख) ऐसी सीमाओं के बाहर किन्तु ऐसे स्थान में जो न्याय-सदन से [1][एक सौ किलोमीटर] से कम था (जहां उस स्थान के जहां वह निवास करता है और उस स्थान के जहां न्यायालय स्थित है, बीच पंचषष्टांश दूरी तक रेल या स्टीमर संचार या अन्य स्थापित लोक प्रवहण है वहां) [2][पांच सौ किलोमीटर] से कम दूर है, निवास करता है:

[3][परन्तु जहां इस नियम में वर्णित दोनों स्थानों के बीच वायु मार्ग द्वारा यातायात उपलब्ध है और साक्षी को वायु मार्ग का यात्री भाड़ा संदत्त किया गया है, वहां उसे स्वयं हाजिर होने का आदेश किया जा सकेगा।]

20. न्यायालय द्वारा बुलाए जाने पर साक्ष्य देने से पक्षकार के इंकार का परिणाम—जहां वाद का ऐसा कोई पक्षकार जो न्यायालय में उपस्थित है, न्यायालय द्वारा अपेक्षा किए जाने पर, साक्ष्य देने से या ऐसे दस्तावेज को जो उस समय और वहीं उसके कब्जे या शक्ति में है, पेश करने से इंकार विधिपूर्ण प्रतिहेतु के बिना करता है वहां न्यायालय उसके विरुद्ध निर्णय सुना सकेगा या वाद के सम्बन्ध में ऐसा आदेश कर सकेगा जो वह ठीक समझे।

21. साक्षियों विषयक नियम समनित पक्षकारों को लागू होंगे—जहां वाद के किसी पक्षकार से साक्ष्य देने या दस्तावेज पेश करने के लिए अपेक्षा की गई है वहां उसे साक्षियों विषयक उपबन्ध वहां तक लागू होंगे जहां तक कि वे लागू होने योग्य हों।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 66 द्वारा (1-2-1977 से) "पचास मील" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 66 द्वारा (1-2-1977 से) "दो सौ मील" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 66 द्वारा (1-2-1977 से) अंतःस्थापित।

[1][आदेश 16क

कारागार में परिरुद्ध या निरुद्ध साक्षियों की हाजिरी

1. **परिभाषाएं**—इस आदेश में,—

(क) "निरुद्ध" के अन्तर्गत निवारक निरोध के लिए उपबंध करने वाली किसी विधि के अधीन निरुद्ध भी है;

(ख) "कारागार" के अन्तर्गत निम्नलिखित भी हैं—

(i) ऐसा कोई स्थान जिसे राज्य सरकार ने साधारण या विशेष आदेश द्वारा अतिरिक्त जेल घोषित किया है, और

(ii) कोई सुधारालय, बोर्स्टल संस्था या इसी प्रकार की कोई अन्य संस्था।

2. **साक्ष्य देने के लिए बंदियों को हाजिर करने की अपेक्षा करने की शक्ति**—जहां न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि राज्य के भीतर कारागार में परिरुद्ध या निरुद्ध व्यक्ति का साक्ष्य वाद में तात्त्विक है वहां न्यायालय कारागार के भारसाधक अधिकारी से यह अपेक्षा करने वाला आदेश कर सकेगा कि वह उस व्यक्ति को साक्ष्य देने के लिए न्यायालय के समक्ष पेश करे :

परन्तु यदि कारागार से न्याय-सदन की दूरी पच्चीस किलोमीटर से अधिक है तो ऐसा आदेश तब तक नहीं किया जाएगा जब तक न्यायालय का यह समाधान नहीं हो जाता है कि कमीशन द्वारा ऐसे व्यक्ति की परीक्षा पर्याप्त नहीं होगी।

3. **न्यायालय में व्यय का संदत्त किया जाना**—(1) न्यायालय नियम (2) के अधीन कोई आदेश करने के पूर्व उस पक्षकार से, जिसकी प्रेरणा पर या जिसके फायदे के लिए आदेश निकाला जाना है, यह अपेक्षा करेगा कि वह न्यायालय में ऐसी धनराशि संदत्त करे जो न्यायालय को आदेश के निष्पादन के व्ययों को चुकाने के लिए जिसके अन्तर्गत साक्षी को दिए गए अनुरक्षक के यात्रा व्यय और अन्य व्यय भी हैं, पर्याप्त प्रतीत होती है।

(2) जहां न्यायालय उच्च न्यायालय के अधीनस्थ है वहां ऐसे व्ययों का मापमान नियत करने में, इस निमित्त उच्च न्यायालय द्वारा बनाए गए किन्हीं नियमों को ध्यान में रखा जाएगा।

4. **नियम 2 के प्रवर्तन से कुछ व्यक्तियों को अपवर्जित करने की राज्य सरकार की शक्ति**—(1) राज्य सरकार उपनियम (2) में विनिर्दिष्ट बातों को ध्यान में रखते हुए किसी भी समय साधारण या विशेष आदेश द्वारा, यह निदेश दे सकेगी कि किसी व्यक्ति या वर्ग के व्यक्तियों को ऐसे कारागार से नहीं हटाया जाएगा जिसमें उसे या उन्हें परिरुद्ध या निरुद्ध किया गया है और जब तक आदेश प्रवृत्त रहता है तब तक नियम 2 के अधीन किया गया कोई आदेश, चाहे वह राज्य सरकार द्वारा किए गए आदेश की तारीख के पूर्व या उसके पश्चात् किया गया हो, ऐसे व्यक्ति या ऐसे वर्ग के व्यक्तियों के बारे में प्रभावी नहीं होगा।

(2) राज्य सरकार उपनियम (1) के अधीन आदेश करने से पूर्व निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखेगी, अर्थात्:—

(क) उस अपराध का स्वरूप जिसके लिए या वे आधार जिन पर उस व्यक्ति को या वर्ग के व्यक्तियों को कारागार में परिरुद्ध या निरुद्ध करने का आदेश दिया गया है;

(ख) यदि उस व्यक्ति को या उस वर्ग के व्यक्तियों को कारागार से हटाने की अनुज्ञा दी जाती है तो लोक व्यवस्था में विघ्न की संभाव्यता; और

(ग) साधारणतया लोकहित।

5. **कारागार के भारसाधक अधिकारी का कुछ मामलों में आदेश को कार्यान्वित न करना**—जहां वह व्यक्ति जिसके सम्बन्ध में नियम 2 के अधीन आदेश किया गया है,—

(क) ऐसा व्यक्ति है जिसकी बाबत कारागार से सम्बद्ध चिकित्सा अधिकारी ने यह प्रमाणित किया है कि वह बीमारी या अंग-शैथिल्य के कारण कारागार से हटाए जाने के योग्य नहीं है, अथवा

(ख) विचारण के लिए सुपुर्दगी के अधीन है या विचारण के लम्बित रहने तक के लिए या प्रारम्भिक अन्वेषण के लम्बित रहने तक के लिए प्रतिप्रेषण के अधीन है, अथवा

(ग) ऐसी अवधि के लिए अभिरक्षा में है जो आदेश का अनुपालन करने के लिए और उस कारागार में जिसमें वह

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 67 द्वारा (1-2-1977 से) अंतःस्थापित।

परिरुद्ध या निरुद्ध है वापस ले आने के लिए अपेक्षित समय के समाप्त होने के पूर्व समाप्त हो जाएगी, अथवा

(घ) ऐसा व्यक्ति है जिसको राज्य सरकार द्वारा नियम 4 के अधीन किया गया आदेश लागू होता है,

वहां कारागार का भारसाधक अधिकारी न्यायालय के आदेश को कार्यान्वित नहीं करेगा और ऐसा न करने के कारणों का विवरण न्यायालय को भेजेगा।

6. **बन्दी का न्यायालय में अभिरक्षा में लाया जाना**—कारागार का भारसाधक अधिकारी, किसी अन्य मामले में, न्यायालय का आदेश परिदत्त किए जाने पर उसमें नामित व्यक्ति को न्यायालय में भिजवाएगा जिससे वह उस आदेश में उल्लिखित समय पर उपस्थित हो सके और उसे न्यायालय में या उसके पास अभिरक्षा में तब तक रखवाएगा जब तक उसकी परीक्षा न कर ली जाए या जब तक न्यायालय उसको उस कारागार में जिसमें वह परिरुद्ध या निरुद्ध है, वापस ले जाने के लिए उसे प्राधिकृत न करे।

7. **कारागार में साक्षी की परीक्षा के लिए कमीशन निकालने की शक्ति**—(1) जहां न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि कारागार में, चाहे वह राज्य के भीतर हो या भारत में अन्यत्र हो, परिरुद्ध या निरुद्ध व्यक्ति का साक्ष्य वाद में तात्विक है, किन्तु ऐसे व्यक्ति की हाजिरी इस आदेश के पूर्ववर्ती उपबन्धों के अधीन सुनिश्चित नहीं की जा सकती है वहां न्यायालय उस व्यक्ति की परीक्षा उस कारागार में जिसमें वह परिरुद्ध या निरुद्ध है, करने के लिए कमीशन निकाल सकेगा।

(2) आदेश 26 के उपबन्ध जहां तक हो सके कारागार में ऐसे व्यक्ति की कमीशन द्वारा परीक्षा के सम्बन्ध में वैसे ही लागू होंगे जैसे वे किसी अन्य व्यक्ति की कमीशन द्वारा परीक्षा के सम्बन्ध में लागू होते हैं।]

आदेश 17

स्थगन

1. **न्यायालय समय दे सकेगा और सुनवाई स्थगित कर सकेगा**—(1) यदि वाद के किसी भी प्रक्रम में पर्याप्त हेतुक दर्शित किया जाता है तो न्यायालय पक्षकारों या उनमें से किसी को भी समय दे सकेगा और वाद की सुनवाई को समय-समय पर स्थगित कर सकेगा।

(2) **स्थगन के खर्चे**—न्यायालय ऐसे हर मामले में वाद की आगे की सुनवाई के लिए दिन नियत करेगा और ऐसे स्थगन के कारण हुए खर्चों के संबंध में ऐसा आदेश कर सकेगा जो वह ठीक समझे:

[1][परन्तु—

(क) यदि वाद की सुनवाई प्रारम्भ हो गई है तो जब तक न्यायालय उन असाधारण कारणों से जो उसके द्वारा लेखबद्ध किए जाएंगे, सुनवाई का स्थगन अगले दिन से परे के लिए करना आवश्यक न समझे, वाद की सुनवाई दिन-प्रतिदिन तब तक जारी रहेगी जब तक सभी हाजिर साक्षियों की परीक्षा न कर ली जाए;

(ख) किसी पक्षकार के अनुरोध पर कोई भी स्थगन ऐसी परिस्थितियों को छोड़कर जो उस पक्षकार के नियंत्रण के बाहर हो, मंजूर नहीं किया जाएगा;

(ग) यह तथ्य स्थगन के लिए आधार नहीं माना जाएगा कि किसी पक्षकार का प्लीडर दूसरे न्यायालय में व्यस्त है;

(घ) जहां प्लीडर की रुग्णता या दूसरे न्यायालय में उसके व्यस्त होने से भिन्न कारण से, मुकदमे का संचालन करने में उसकी असमर्थता को स्थगन के लिए एक आधार के रूप में पेश किया जाता है वहां न्यायालय तब तक स्थगन मंजूर नहीं करेगा जब तक उसका यह समाधान नहीं हो जाता है कि ऐसे स्थगन के लिए आवेदन करने वाला पक्षकार समय पर दूसरा प्लीडर मुकर्रर नहीं कर सकता था;

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 68 द्वारा (1-2-1977 से) पूर्व परन्तुक के स्थान पर प्रतिस्थापित।

(ङ) जहां कोई साक्षी न्यायालय में उपस्थित है किन्तु पक्षकार या उसका प्लीडर उपस्थित नहीं है अथवा पक्षकार या प्लीडर न्यायालय में उपस्थित होने पर भी किसी साक्षी की परीक्षा या प्रतिपरीक्षा करने के लिए तैयार नहीं है वहां न्यायालय, यदि वह ठीक समझे तो, साक्षी का कथन अभिलिखित कर सकेगा और, यथास्थिति, पक्षकार या उसके प्लीडर द्वारा जो उपस्थित न हो अथवा पूर्वोक्त रूप में तैयार न हो, साक्षी की मुख्य परीक्षा या प्रतिपरीक्षा करने को अभिमुक्त करते हुए ऐसे आदेश पारित कर सकेगा जो वह ठीक समझे।]

2. यदि पक्षकार नियत दिन पर उपसंजात होने में असफल रहते हैं तो प्रक्रिया—वाद की सुनवाई जिस दिन के लिए स्थगित हुई है यदि उस दिन पक्षकार या उनमें से कोई उपसंजात होने में असफल रहते हैं तो न्यायालय आदेश 9 द्वारा उस निमित्त निदिष्ट ढंगों में से एक से वाद का निपटारा करने के लिए अग्रसर हो सकेगा या ऐसा अन्य आदेश कर सकेगा जो वह ठीक समझे।

[1][**स्पष्टीकरण**—जहां किसी पक्षकार का साक्ष्य या साक्ष्य का पर्याप्त भाग पहले ही अभिलिखित किया जा चुका है और ऐसा पक्षकार किसी ऐसे दिन जिस दिन के लिए वाद की सुनवाई स्थगित की गई है उपसंजात होने में असफल रहता है वहां न्यायालय स्वविवेकानुसार उस मामले में इस प्रकार अग्रसर हो सकेगा मानो ऐसा पक्षकार उपस्थित हो।]

3. पक्षकारों में से किसी पक्षकार के साक्ष्य, आदि पेश करने में असफल रहने पर भी न्यायालय आगे कार्यवाही कर सकेगा—जहां वाद का कोई ऐसा पक्षकार जिसे समय अनुदत्त किया गया है, अपना साक्ष्य पेश करने में या अपने साक्षियों को हाजिर कराने में या वाद की आगे प्रगति के लिए आवश्यक कोई ऐसा अन्य कार्य करने में जिसके लिए समय अनुज्ञात किया गया है, असफल रहता है [2][वहां न्यायालय ऐसे व्यतिक्रम के होते हुए भी,—

(क) यदि पक्षकार, उपस्थित हों तो वाद को तत्क्षण विनिश्चित करने के लिए अग्रसर हो सकेगा, अथवा

(ख) यदि पक्षकार या उनमें से कोई अनुपस्थित हों तो नियम 2 के अधीन कार्यवाही कर सकेगा]।

आदेश 18

वाद की सुनवाई और साक्षियों की परीक्षा

1. आरंभ करने का अधिकार—आरम्भ करने का अधिकार वादी को तब के सिवाय है जब कि वादी द्वारा अधिकथित तथ्यों को प्रतिवादी स्वीकार कर लेता है और यह तर्क करता है कि वादी जिस अनुतोष को चाहता है, उसके किसी भाग को पाने का वह हकदार या तो विधि के प्रश्न के कारण या प्रतिवादी द्वारा अधिकथित कुछ अतिरिक्त तथ्यों के कारण नहीं है और उस दशा में आरम्भ करने का अधिकार प्रतिवादी को होता है।

2. कथन और साक्ष्य का पेश किया जाना—(1) उस दिन जो वाद की सुनवाई के लिए नियत किया गया हो, या किसी अन्य दिन जिस दिन के लिए सुनवाई स्थगित की गई हो, वह पक्षकार जिसे आरम्भ करने का अधिकार है, अपने मामले का कथन करेगा और उन विवाद्यकों के समर्थन में अपना साक्ष्य पेश करेगा जिन्हें साबित करने के लिए वह आबद्ध है।

(2) तब दूसरा पक्षकार अपने मामले का कथन करेगा और अपना साक्ष्य (यदि कोई हो) पेश करेगा और तब पूरे मामले के बारे में साधारणतया न्यायालय को संबोधित कर सकेगा।

(3) तब आरम्भ करने वाला पक्षकार साधारणतया पूरे मामले के बारे में उत्तर दे सकेगा।

[3][(4) इस नियम में किसी बात के होते हुए भी, न्यायालय ऐसे कारणों से, जो लेखबद्ध किए जाएंगे, किसी पक्षकार को किसी भी प्रक्रम पर किसी साक्षी की परीक्षा करने के लिए निदेश दे सकेगा या अनुज्ञात कर सकेगा।]

3. जहां कई विवाद्यक हैं वहां साक्ष्य—जहां कई विवाद्यक हैं जिनमें से कुछ को साबित करने का भार दूसरे पक्षकार पर है वहां आरम्भ करने वाला पक्षकार अपने विकल्प पर या तो उन विवाद्यकों के बारे में अपना साक्ष्य पेश कर सकेगा या दूसरे पक्षकार द्वारा पेश किए गए साक्ष्य के उत्तर के रूप में पेश करने के लिए उसे आरक्षित रख सकेगा और पश्चात्-कथित दशा में, आरम्भ करने वाला पक्षकार दूसरे पक्षकार द्वारा उसका समस्त साक्ष्य पेश किए जाने के पश्चात् उन विवाद्यकों पर अपना साक्ष्य पेश कर सकेगा, और तब दूसरा पक्षकार आरम्भ करने वाले पक्षकार के द्वारा इस प्रकार पेश किए गए साक्ष्य का विशेषतया उत्तर दे सकेगा, किन्तु तब आरम्भ करने वाला पक्षकार पूरे मामले के बारे में साधारणतया उत्तर देने का हकदार होगा।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 68 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 68 द्वारा (1-2-1977 से) कुछ शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 69 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

[1][3क. **पक्षकार का अन्य साक्षियों से पहले उपसंजात होना**—जहां कोई पक्षकार स्वयं कोई साक्षी के रूप में उपसंजात होना चाहता है, वहां वह उसकी ओर से किसी अन्य साक्षी की परीक्षा किए जाने के पहले उपसंजात होगा, किंतु यदि न्यायालय ऐसे कारणों से, जो लेखबद्ध किए जाएंगे, उसे पश्चात्वर्ती प्रक्रम में स्वयं अपने साक्षी के रूप में उपसंजात होने के लिए अनुज्ञात करे तो वह बाद में उपस्थित हो सकेगा।]

4. **साक्षियों की परीक्षा खुले न्यायालय में की जाएगी**—हाजिर साक्षियों का साक्ष्य खुले न्यायालय में न्यायाधीश की उपस्थिति में और उसके वैयक्तिक निदेशन और अधीक्षण में मौखिक रूप से लिखा जाएगा।

[2][5. **जिन मामलों की अपील हो सकती है उनमें साक्ष्य कैसे लिखा जाएगा**—जिन मामलों में अपील अनुज्ञात की जाती है उन मामलों में हर एक साक्षी का साक्ष्य—

(क) न्यायालय की भाषा में,—

(i) न्यायाधीश द्वारा या उसकी उपस्थिति में और उसके वैयक्तिक निदेशन और अधीक्षण में लिखा जाएगा; या

(ii) न्यायाधीश के बोलने के साथ ही टाइपराईटर पर टाईप किया जाएगा; या

(ख) यदि न्यायाधीश अभिलिखित किए जाने वाले कारणों से ऐसा निदेश दे तो न्यायाधीश की उपस्थिति में न्यायालय की भाषा में यंत्र द्वारा अभिलिखित किया जाएगा।]

6. **अभिसाक्ष्य का भाषान्तर कब किया जाएगा**—जहां साक्ष्य उस भाषा से भिन्न भाषा में लिखा गया है जिसमें वह दिया गया है और साक्षी उस भाषा को नहीं समझता जिसमें वह लिखा गया है वहां उस साक्ष्य का, जैसा कि वह लिखा गया है, उस भाषा में भाषान्तर उसे सुनाया जाएगा जिसमें वह दिया गया था।

7. **धारा 138 के अधीन साक्ष्य**—धारा 138 के अधीन लिखा गया साक्ष्य नियम 5 द्वारा विहित प्ररूप में होगा और वह पढ़कर सुनाया जाएगा और हस्ताक्षरित किया जाएगा और यदि अवसर से ऐसा अपेक्षित हो तो उसका भाषान्तर और शोधन उसी प्रकार किया जाएगा मानो वह उस नियम के अधीन लिखा गया हो।

8. **जब साक्ष्य न्यायाधीश द्वारा स्वयं नहीं लिखा गया हो तब ज्ञापन**—जहां साक्ष्य न्यायाधीश द्वारा नहीं लिखा गया है [1][या खुले न्यायालय में उसके द्वारा बोलकर नहीं लिखवाया गया है या उसकी उपस्थिति में यंत्र द्वारा अभिलिखित नहीं किया गया है] वहां जैसे-जैसे हर एक साक्षी की परीक्षा होती जाती है वैसे-वैसे हर एक साक्ष्य के अभिसाक्ष्य के सारांश का ज्ञापन बनाने के लिए न्यायाधीश आबद्ध होगा और ऐसा ज्ञापन न्यायाधीश द्वारा लिखा जाएगा और हस्ताक्षरित किया जाएगा और अभिलेख का भाग होगा।

[3][9. **साक्ष्य अंग्रेजी में कब लिखा जा सकेगा**—(1) जहां न्यायालय की भाषा अंग्रेजी नहीं है किन्तु वाद के वे सभी पक्षकार जो स्वयं उपसंजात हैं और उन पक्षकारों के जो प्लीडरों के द्वारा उपसंजात हैं, प्लीडर ऐसे साक्ष्य के जो अंग्रेजी में दिया जाता है, अंग्रेजी में लिखे जाने पर आक्षेप नहीं करते हैं वहां न्यायाधीश उसे उसी रूप में लिख सकेगा या लिखवा सकेगा।

(2) जहां साक्ष्य अंग्रेजी में नहीं दिया जाता है किन्तु वे सभी पक्षकार जो स्वयं उपसंजात हैं और उन पक्षकारों के जो प्लीडरों के द्वारा उपसंजात हैं, प्लीडर ऐसे साक्ष्य के अंग्रेजी में लिखे जाने पर आक्षेप नहीं करते हैं वहां न्यायाधीश ऐसा साक्ष्य अंग्रेजी में लिख सकेगा या लिखवा सकेगा।]

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 69 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 69 द्वारा (1-2-1977 से) प्रतिस्थापित
3. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 69 द्वारा (1-2-1977 से) पूर्ववर्ती नियम के स्थान पर प्रतिस्थापित।

10. **कोई विशिष्ट प्रश्न और उत्तर लिखा जा सकेगा**—यदि ऐसा करने के लिए कोई विशेष कारण प्रतीत होता है तो न्यायालय किसी विशिष्ट प्रश्न और उत्तर को या किसी प्रश्न के सम्बन्ध में किसी आक्षेप को स्वप्रेरणा से या किसी पक्षकार या उसके प्लीडर के आवेदन पर लिख सकेगा।

11. **वे प्रश्न जिन पर आक्षेप किया गया है और जो न्यायालय द्वारा अनुज्ञात किए गए हैं**—जहां किसी साक्षी से किए गए किसी प्रश्न पर किसी पक्षकार या उसके प्लीडर द्वारा आक्षेप किया गया है और न्यायालय उसका पूछा जाना अनुज्ञात करता है वहां न्यायाधीश उस प्रश्न, उत्तर, आक्षेप और उसे करने वाले व्यक्ति के नाम को उस पर न्यायालय के विनिश्चय के सहित लिखेगा।

12. **साक्षियों की भावभंगी के बारे में टिप्पणियां**—न्यायालय साक्षी की परीक्षा किए जाते समय उसकी भावभंगी के बारे में टिप्पणियां, जिन्हे वह तात्त्विक समझता हो, अभिलिखित कर सकेगा।

[1][13. **जिन मामलों में अपील नहीं हो सकती है उन मामलों में साक्ष्य का ज्ञापन**—ऐसे मामले में, जिनमें अपील अनुज्ञात नहीं है यह आवश्यक नहीं होगा कि साक्षियों का साक्ष्य विस्तार सहित लिखा जाए या बोलकर लिखवाया जाए या अभिलिखित किया जाए किन्तु न्यायाधीश, जैसे-जैसे हर एक साक्षी की परीक्षा होती है वैसे-वैसे, उसके अभिसाक्ष्य के सार का ज्ञापन लिखेगा या बोलने के साथ ही टाइपराइटर पर टाइप कराएगा या यंत्र द्वारा अभिलिखित कराएगा और ऐसा ज्ञापन न्यायाधीश द्वारा हस्ताक्षरित किया जाएगा या अन्यथा अधिप्रमाणित किया जाएगा और अभिलेख का भाग होगा।]

14. [**ऐसा ज्ञापन बनाने में असमर्थ न्यायाधीश अपनी असमर्थता के कारण अभिलिखित करेगा।**]—सिविल प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 1976 (1976 का 104) की धारा 69 द्वारा (1-2-1977) से निरसित।

15. **किसी अन्य न्यायाधीश के सामने लिए गए साक्ष्य का उपयोग करने की शक्ति**—(1) जहां मृत्यु, स्थानान्तरण या अन्य कारण से न्यायाधीश वाद के विचारण की समाप्ति करने से निवारित हो जाता है वहां उसका उत्तरवर्ती, पूर्वगामी नियमों के अधीन लिए गए किसी भी साक्ष्य या बनाए गए किसी भी ज्ञापन का उसी प्रकार उपयोग कर सकेगा मानो ऐसा साक्ष्य या ज्ञापन उक्त नियमों के अधीन उसी के द्वारा या उसके निदेश के अधीन लिया गया था या बनाया गया था और वह वाद में उस प्रक्रम से अग्रसर हो सकेगा जिसमें उसे उसके पूर्ववर्ती ने छोड़ा था।

(2) उपनियम (1) के उपबन्ध धारा 24 के अधीन अन्तरित वाद में लिए गए साक्ष्य को वहां तक लागू समझे जाएंगे जहां तक वे लागू किए जा सकते हैं।

16. **साक्षी की तुरन्त परीक्षा करने की शक्ति**—(1) जहां साक्षी न्यायालय की अधिकारिता से बाहर जाने वाला है या इस बात का पर्याप्त कारण न्यायालय को समाधानप्रद रूप में दर्शित कर दिया जाता है कि उसका साक्ष्य तुरन्त क्यों लिया जाना चाहिए वहां न्यायालय वाद के संस्थित किए जाने के पश्चात् किसी भी समय ऐसे साक्षी का साक्ष्य किसी भी पक्षकार या उस साक्षी के आवेदन पर उसी रीति से ले सकेगा जो इसमें इसके पूर्व उपबन्धित है।

(2) जहां ऐसा साक्ष्य तत्क्षण ही और पक्षकारों की उपस्थिति में न लिया जाए वहां परीक्षा के लिए नियत दिन की ऐसी सूचना, जो न्यायालय पर्याप्त समझे, पक्षकारों को दी जाएगी।

(3) ऐसे लिया गया साक्ष्य साक्षी को पढ़कर सुनाया जाएगा और यदि वह स्वीकार करता है कि वह शुद्ध है तो वह उसके द्वारा हस्ताक्षरित किया जाएगा और न्यायाधीश उसे यदि आवश्यक हो तो शुद्ध करेगा और हस्ताक्षरित करेगा और तब उस वाद की किसी भी सुनवाई में वह पढ़ा जा सकेगा।

17. **न्यायालय साक्षी को पुनः बुला सकेगा और उसकी परीक्षा कर सकेगा**—न्यायालय वाद के किसी भी प्रक्रम में ऐसे किसी भी साक्षी को पुनः बुला सकेगा जिसकी परीक्षा की जा चुकी है और (तत्समय प्रवृत्त साक्ष्य की विधि के अधीन रहते हुए) उससे ऐसे प्रश्न पूछ सकेगा जो न्यायालय ठीक समझे।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 69 द्वारा (1-2-1977 से) पूर्ववर्ती नियम के स्थान पर प्रतिस्थापित।

[1][17क. ऐसे साक्ष्य का पेश किया जाना जिसकी सम्यक् तत्परता के होते हुए भी पहले जानकारी नहीं थी या जो पेश नहीं किया जा सका था—जहां कोई पक्षकार न्यायालय का यह समाधान कर देता है कि सम्यक् तत्परता बरतने के पश्चात् भी किसी साक्ष्य की उसे जानकारी नहीं थी या वह उसके द्वारा उस समय जब कि वह पक्षकार अपना साक्ष्य प्रस्तुत कर रहा था, पेश नहीं किया जा सकता था वहां न्यायालय उस पक्षकार को ऐसे साक्ष्य को पश्चात्वर्ती प्रक्रम में ऐसे निबंधनों पर पेश करने की अनुज्ञा दे सकेगा जो उसे न्यायसंगत प्रतीत हों।]

18. निरीक्षण करने की न्यायालय की शक्ति—न्यायालय ऐसी किसी भी सम्पत्ति या वस्तु का निरीक्षण वाद के किसी भी प्रक्रम में कर सकेगा जिसके संबंध में कोई प्रश्न पैदा हो [1][और जहां न्यायालय किसी सम्पत्ति या वस्तु का निरीक्षण करता है वहां वह यथासाध्य शीघ्र, ऐसे निरीक्षण में देखे गए किन्हीं सुसंगत तथ्यों का ज्ञापन बनाएगा और ऐसा ज्ञापन वाद के अभिलेख का भाग होगा।]

आदेश 19
शपथपत्र

1. किसी बात के शपथपत्र द्वारा साबित किए जाने के लिए आदेश देने की शक्ति—कोई भी न्यायालय किसी भी समय पर्याप्त कारण से आदेश दे सकेगा कि किसी भी विशिष्ट तथ्य या किन्हीं भी विशिष्ट तथ्यों का शपथपत्र द्वारा साबित किया जाए या किसी साक्षी का शपथपत्र सुनवाई में ऐसी शर्तों पर पढ़ा जाए जो न्यायालय युक्तियुक्त समझे:

परन्तु जहां न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि दोनों में से कोई भी पक्षकार सद्भाव से यह चाहता है कि प्रतिपरीक्षा के लिए साक्षी को पेश किया जाए और ऐसा साक्षी पेश किया जा सकता है वहां ऐसे साक्षी का साक्ष्य शपथपत्र द्वारा दिए जाने का प्राधिकार देने वाला आदेश नहीं किया जाएगा।

2. अभिसाक्षी की प्रतिपरीक्षा के लिए हाजिर कराने का आदेश देने की शक्ति—(1) किसी भी आवेदन पर साक्ष्य शपथपत्र द्वारा दिया जा सकेगा, किन्तु न्यायालय दोनों पक्षकारों में से किसी की भी प्रेरणा पर अभिसाक्षी को आदेश दे सकेगा कि वह प्रतिपरीक्षा के लिए हाजिर हो।

(2) जब तक कि अभिसाक्षी न्यायालय में स्थायी उपसंजाति से छूट न पाया हुआ हो या न्यायालय अन्यथा निदेश न करे, ऐसी हाजिरी न्यायालय में होगी।

3. वे विषय जिन तक शपथपत्र सीमित होंगे—(1) शपथपत्र ऐसे तथ्यों तक ही सीमित होंगे जिनको अभिसाक्षी अपने निजी ज्ञान से साबित करने में समर्थ है, किन्तु अन्तर्वर्ती आवेदनों के शपथपत्रों में उसके विश्वास पर आधारित कथन ग्राह्य हो सकेंगे, परन्तु यह तब जब कि उनके लिए आधारों का कथन किया गया हो।

(2) जिस शपथपत्र में अनुश्रुत या तार्किक बातें या दस्तावेजों की प्रतियां या दस्तावेजों के उद्धरण अनावश्यक रूप से दर्ज किए गए हैं, ऐसे हर एक शपथपत्र के खर्चे (जब तक कि न्यायालय अन्यथा निदेश न करे) उन्हें फाइल करने वाले पक्षकार द्वारा दिए जाएंगे।

आदेश 20
निर्णय और डिक्री

[2][1. **निर्णय कब सुनाया जाएगा**—[3][(1)] न्यायालय मामले की सुनवाई कर लेने के पश्चात् निर्णय खुले न्यायालय में या तो तुरन्त या तत्पश्चात् यथासाध्य शीघ्र किसी भविष्यवर्ती दिन को सुनाएगा और जब निर्णय किसी भविष्यवर्ती दिन को सुनाया जाना है तब न्यायालय उस प्रयोजन के लिए कोई दिन नियत करेगा जिसकी सम्यक् सूचना पक्षकारों या उसके प्लीडरों को दी जाएगी:

[4][परन्तु जहां निर्णय तुरन्त नहीं सुनाया गया है वहां न्यायालय निर्णय, उस तारीख से, जिसको मामले की सुनवाई समाप्त हुई थी, पन्द्रह दिन के भीतर सुनाने का पूरा प्रयास करेगा किन्तु जहां ऐसा करना साध्य नहीं है वहां न्यायालय निर्णय के सुनाने के लिए

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 69 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
2. 1956 के अधिनियम सं० 66 की धारा 14 द्वारा नियम 1 के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 70 द्वारा (1-2-1977 से) उपनियम (1) के रूप में पुनःसंख्यांकित।
4. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 70 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

कोई भविष्यवर्ती दिन नियत करेगा और ऐसा दिन साधारणतः उस तारीख से, जिसको मामले की सुनवाई समाप्त हुई थी, तीस दिन के बाद का नहीं होगा और इस प्रकार नियत किए गए दिन की सम्यक् सूचना पक्षकारों या उसके प्लीडरों को दी जाएगी:

परन्तु यह और कि जहां निर्णय उस तारीख से, जिसको मामले की सुनवाई समाप्त हुई थी, तीस दिन के भीतर नहीं सुनाया जाता है वहां न्यायालय ऐसे विलम्ब के लिए जो कारण हैं उन्हें लेखबद्ध करेगा और कोई ऐसा भविष्यवर्ती दिन नियत करेगा जिसको निर्णय सुनाया जाएगा और इस प्रकार नियत किए गए दिन की सम्यक् सूचना पक्षकारों या उनके प्लीडरों को दी जाएगी।]

[1][(2) जहां लिखित निर्णय सुनाया जाना है वहां यदि प्रत्येक विवाद्यक पर न्यायालय के निष्कर्षों को और मामले में पारित अंतिम आदेश को पढ़ दिया जाता है तो वह पर्याप्त होगा और न्यायालय के लिए यह आवश्यक नहीं होगा कि वह सम्पूर्ण निर्णय को पढ़कर सुनाए किन्तु सम्पूर्ण निर्णय की एक प्रति निर्णय सुनाए जाने के तुरन्त पश्चात् पक्षकारों या प्लीडरों के परिशीलन के लिए उपलब्ध कराई जाएगी।

(3) निर्णय खुले न्यायालय में आशुलिपिक को बोलकर लिखाते हुए केवल तभी सुनाया जा सकेगा जब न्यायाधीश उच्च न्यायालय द्वारा इस निमित्त विशेष रूप से सशक्त किया गया है:

परन्तु जहां निर्णय खुले न्यायालय में बोलकर लिखते हुए सुनाया जाता है वहां इस प्रकार सुनाए गए निर्णय की अनुलिपि उसमें ऐसी शुद्धियां करने के पश्चात्, जो आवश्यक हों, न्यायाधीश द्वारा हस्ताक्षरित की जाएंगी, उस पर वह तारीख लिखी जाएगी जिसको निर्णय सुनाया गया था और वह अभिलेख का भाग होगी।]

2. **न्यायाधीश के पूर्ववर्ती द्वारा लिखे गए निर्णय को सुनाने की शक्ति**—न्यायाधीश ऐसे निर्णय को [2][सुनाएगा] जो उसके पूर्ववर्ती ने लिखा तो है किन्तु सुनाया नहीं है।

3. **निर्णय हस्ताक्षरित किया जाएगा**—निर्णय सुनाए जाने के समय न्यायाधीश उस पर खुले न्यायालय में तारीख डालेगा और हस्ताक्षर करेगा और जब उस पर एक बार हस्ताक्षर कर दिया गया है तब धारा 152 द्वारा उपबन्धित के सिवाय या पुनर्विलोकन के सिवाय उसके पश्चात् उसमें न तो कोई परिवर्तन किया जाएगा और न कोई परिवर्धन किया जाएगा।

4. **लघुवाद न्यायालयों के निर्णय**—(1) लघुवाद न्यायालयों के निर्णयों में अवधार्य प्रश्नों और उनके विनिश्चय से अधिक और कुछ अन्तर्विष्ट होना आवश्यक नहीं है।

(2) **अन्य न्यायालयों के निर्णय**—अन्य न्यायालयों के निर्णयों के मामले का संक्षिप्त कथन, अवधार्य प्रश्न, उनका विनिश्चय और ऐसे विनिश्चय के कारण अन्तर्विष्ट होंगे।

5. **न्यायालय हर एक विवाद्यक पर अपने विनिश्चय का कथन करेगा**—उन वादों में, जिनमें विवाद्यक की विरचना की गई है, जब तक कि विवाद्यकों में से किसी एक या अधिक का निष्कर्ष वाद के विनिश्चय के लिए पर्याप्त न हो, न्यायालय हर एक पृथक् विवाद्यक पर अपना निष्कर्ष या विनिश्चय उस निमित्त कारणों के सहित देगा।

[3][5क. **जिन मामलों में पक्षकारों का प्रतिनिधित्व प्लीडरों द्वारा न किया गया हो उनमें न्यायालय द्वारा पक्षकारों को इस बात की इत्तिला दिया जाना कि अपील कहां की जा सकेगी**—उस दशा के सिवाय जिसमें दोनों पक्षकारों का प्रतिनिधित्व प्लीडरों द्वारा किया गया है, न्यायालय ऐसे मामलों में जिनकी अपील हो सकती है, अपना निर्णय सुनाते समय न्यायालय में उपस्थित पक्षकारों को यह इत्तिला देगा कि किस न्यायालय में अपील की जा सकती है और ऐसी अपील फाइल करने के लिए परिसीमा काल कितना है और पक्षकारों को इस प्रकार दी गई इत्तिला को अभिलेख में रखेगा।

6. **डिक्री की अन्तर्वस्तु**—(1) डिक्री निर्णय के अनुरूप होगी, उसमें वाद का संख्यांक, [3][पक्षकारों के नाम और वर्णन, उनके रजिस्ट्रीकृत पते] और दावे की विशिष्टियां अन्तर्विष्ट होंगी और अनुदत्त अनुतोष या वाद का अन्य अवधारण उसमें स्पष्टतया विनिर्दिष्ट होगा।

(2) वाद में उपगत प्रश्नों की रकम भी और यह बात भी कि ऐसे खर्चे किसके द्वारा या किस सम्पत्ति में से और किस अनुपात में संदत्त किए जाने हैं, डिक्री में कथित होगी।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 70 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 70 द्वारा (1-2-1977 से) "सुना सकेगा" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 70 द्वारा (1-2-1977 से) "पक्षकारों के नाम और वर्णन" के स्थान प्रतिस्थापित।

(3) न्यायालय निदेश दे सकेगा कि एक पक्षकार को दूसरे पक्षकार द्वारा देय खर्चे किसी ऐसी राशि के विरुद्ध मुजरा किए जाएं जिसके बारे में यह स्वीकार किया गया है या पाया गया है कि वह एक दूसरे को शोध्य है।

[1][6क. **दिए गए अनुतोष का निर्णय के अन्तिम पैरा में प्रमित शब्दों में उल्लिखित होना**—(1) उस अनुतोष का कथन जो ऐसे निर्णय द्वारा दिया गया है, निर्णय के अन्तिम पैरा में प्रमित शब्दों में किया जाएगा।

(2) यह सुनिश्चित करने का पूरा प्रयास किया जाएगा कि डिक्री यथासंभव शीघ्र और हर दशा में उस तारीख से जिसको निर्णय सुनाया जाता है, पन्द्रह दिन के भीतर तैयार की जाए किन्तु जहां डिक्री पूर्वोक्त समय के भीतर तैयार नहीं की जाती है वहां न्यायालय, यदि डिक्री के विरुद्ध अपील करने के इच्छुक पक्षकार द्वारा ऐसा करने का अनुरोध किया जाए तो, प्रमाणित करेगा कि डिक्री तैयार नहीं की गई है, और उस विलम्ब के लिए जो कारण हैं उन्हें प्रमाणपत्र में उल्लिखित करेगा और तब—

(क) डिक्री की प्रति फाइल किए बिना डिक्री के विरुद्ध अपील की जा सकेगी और ऐसे मामले में निर्णय का अन्तिम पैरा, आदेश 41 के नियम 1 के प्रयोजनों के लिए डिक्री माना जाएगा; और

(ख) जब तक डिक्री तैयार नहीं की जाती है तब तक निर्णय का अन्तिम पैरा निष्पादन के प्रयोजनों के लिए डिक्री समझा जाएगा और हितबद्ध पक्षकार केवल उसी पैरा की प्रति के लिए आवेदन करने का हकदार होगा और उससे सम्पूर्ण निर्णय की प्रति के लिए आवेदन करने की अपेक्षा नहीं की जाएगी, किन्तु जैसे ही डिक्री तैयार हो जाती है, निर्णय का अन्तिम पैरा निष्पादन के प्रयोजनों के लिए या किसी अन्य प्रयोजनों के लिए डिक्री के रूप में प्रभावी नहीं रहेगा:

परन्तु जहां आवेदन निर्णय के केवल अन्तिम पैरा की प्रति अभिप्राप्त करने के लिए किया गया है वहां ऐसी प्रति में वाद के सभी पक्षकारों का नाम और पता उल्लिखित किया जाएगा।

6ख. **टाइप किए हुए निर्णयों की प्रतियां कब उपलब्ध की जाएंगी**—जहां निर्णय टाइप किया हुआ है वहां टाइप किए हुए निर्णय की प्रतियां, यदि ऐसा करना साध्य हो तो, निर्णय सुनाने के तुरन्त पश्चात् पक्षकारों को ऐसी प्रति के लिए आवेदन करने वाले पक्षकारों द्वारा उतने प्रभार का जो उच्च न्यायालय द्वारा बनाए गए नियमों में विनिर्दिष्ट हो, संदाय किए जाने पर उपलब्ध की जाएंगी।]

7. **डिक्री की तारीख**—डिक्री में उस दिन की तारीख होगी जिस दिन निर्णय सुनाया गया था और न्यायाधीश अपना समाधान कर लेने पर कि डिक्री निर्णय के अनुसार तैयार की गई है डिक्री पर हस्ताक्षर करेगा।

8. **जहां न्यायाधीश ने डिक्री पर हस्ताक्षर करने से पूर्व अपना पद रिक्त कर दिया है वहां प्रक्रिया**—जहां न्यायाधीश के निर्णय सुनाने के पश्चात् किन्तु डिक्री पर हस्ताक्षर किए बिना अपना पद रिक्त कर दिया है वहां ऐसे निर्णय के अनुसार तैयार की गई डिक्री पर उसका उत्तरवर्ती या यदि उस न्यायालय का अस्तित्व ही समाप्त हो गया है तो ऐसे किसी न्यायालय का न्यायाधीश जिसके अधीनस्थ ऐसा न्यायालय था, हस्ताक्षर करेगा।

9. **स्थावर सम्पत्ति के प्रत्युद्धरण के लिए डिक्री**—जहां वाद की विषयवस्तु स्थावर सम्पत्ति है वहां डिक्री में ऐसी सम्पत्ति का ऐसा वर्णन अन्तर्विष्ट होगा जो उसकी पहचान करने के लिए पर्याप्त हो और जहां ऐसी सम्पत्ति सीमाओं द्वारा या भू-व्यवस्थापन या सर्वेक्षण के अभिलेख के संख्यांकों द्वारा पहचानी जा सके वहां डिक्री में ऐसी सीमाएं या संख्यांक विनिर्दिष्ट होंगे।

10. **जंगम सम्पत्ति के परिदान के लिए डिक्री**—जहां वाद जंगम सम्पत्ति के लिए है और डिक्री ऐसी सम्पत्ति के परिदान के लिए है वहां यदि परिदान नहीं कराया जा सकता है तो डिक्री में धन के उस परिमाण का भी कथन किया जाएगा जो अनुकल्पतः दिया जाएगा।

11. **डिक्री किस्तों द्वारा संदाय के लिए निदेश दे सकेगी**—(1) यदि और जहां तक कोई डिक्री धन के संदाय के लिए है तो और वहां तक न्यायालय उस संविदा में, जिसके अधीन धन संदेय है, अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी [2][उन पक्षकारों को जो अन्तिम सुनवाई में स्वयं या प्लीडर द्वारा उपसंजात थे, सुनने के पश्चात्, निर्णय के पूर्व डिक्री में किसी पर्याप्त कारण से यह आदेश सम्मिलित कर सकेगा] कि डिक्रीत रकम का संदाय ब्याज के सहित या बिना, मुल्तवी किया जाए या किस्तों में किया जाए।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 70 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 70 द्वारा (1-2-1977 से) कुछ शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।

(2) **डिक्री के पश्चात् किस्तों में संदाय का आदेश**—ऐसी किसी डिक्री के पारित किए जाने के पश्चात् न्यायालय निर्णीत-ऋणी के आवेदन पर और डिक्रीदार की अनुमति से आदेश दे सकेगा कि ब्याज के संदाय संबंधी, निर्णीत-ऋणी की सम्पत्ति की कुर्की-सम्बन्धी, उससे प्रतिभूति लेने सम्बन्धी या अन्य ऐसे निबन्धनों पर जो वह ठीक समझे, डिक्रीत रकम का संदाय मुल्तवी किया जाए या किस्तों में किया जाए।

12. **कब्जा और अन्तःकालीन लाभों के लिए डिक्री**—(1) जहां वाद स्थावर सम्पत्ति के कब्जे का प्रत्युद्धरण करने और भाटक या अन्तःकालीन लाभों के लिए है वहां न्यायालय ऐसी डिक्री पारित कर सकेगा जो—

(क) सम्पत्ति के कब्जे के लिए हो;

[1][(ख) ऐसे भाटकों के लिए हो जो वाद के संस्थित किए जाने के पूर्व की किसी अवधि में सम्पत्ति पर प्रोद्भूत हुए हों या ऐसे भाटक के बारे में जांच करने का निदेश देती हो;

(खक) अन्तःकालीन लाभों के लिए हो या ऐसे अन्तःकालीन लाभों के बारे में जांच करने का निदेश देती हो;]

(ग) वाद के संस्थित किए जाने से लेकर निम्नलिखित में से, अर्थात्:—

(i) डिक्रीदार को कब्जे का परिदान,

(ii) डिक्रीदार को न्यायालय की मार्फत सूचना सहित निर्णीत-ऋणी द्वारा कब्जे का त्याग, अथवा

(iii) डिक्री की तारीख से तीन वर्षों की समाप्ति,

इनमें से जो भी कोई घटना पहले घटित हो या उस तक के भाटक या अन्तःकालीन लाभों के बारे में जांच का निदेश देती हो।

(2) जहां खण्ड (ख) या खण्ड (ग) के अधीन जांच का निदेश दिया गया है वहां भाटक या अन्तःकालीन लाभों के सम्बन्ध में अन्तिम डिक्री ऐसी जांच के परिणाम के अनुसार पारित की जाएगी।

[2][12क. **स्थावर संपत्ति के विक्रय या पट्टे की संविदा के विनिर्दिष्ट पालन के लिए डिक्री**—जहां स्थावर सम्पत्ति के विक्रय या पट्टे की किसी संविदा के विनिर्दिष्ट पालन के लिए किसी डिक्री में यह आदेश है कि क्रय-धन या अन्य राशि क्रेता या पट्टेदार द्वारा संदत्त की जाए वहां उसमें वह अवधि विनिर्दिष्ट की जाएगी जिसके भीतर संदाय करना होगा।]

13. **प्रशासन-वाद में डिक्री**—(1) जहां वाद किसी सम्पत्ति के लेखा के लिए और न्यायालय की डिक्री के अधीन उसके सम्यक् प्रशासन के लिए है वहां न्यायालय अन्तिम डिक्री पारित करने के पूर्व ऐसे लेखाओं के लिए जाने और जांचों के किए जाने का आदेश देने वाली और ऐसे अन्य निदेश देने वाली जो न्यायालय ठीक समझे, प्रारम्भिक डिक्री पारित करेगा।

(2) किसी मृत व्यक्ति की सम्पत्ति का न्यायालय द्वारा प्रशासन किए जाने में, यदि ऐसी सम्पत्ति उसके ऋणों और दायित्वों के पूरे संदाय के लिए अपर्याप्त साबित हो तो, प्रतिभूत और अप्रतिभूत लेनदारों के अपने-अपने अधिकारों के बारे में और ऐसे ऋणों और दायित्वों के बारे में जो साबित किए जा सकते हैं और वार्षिकियों के और भावी और समाश्रित दायित्वों के मूल्यांकन के बारे में क्रमशः उन्हीं नियमों का अनुपालन किया जाएगा जो न्यायनिर्णीत या घोषित दिवालिया व्यक्तियों की सम्पदाओं के बारे में उस न्यायालय की स्थानीय सीमाओं के भीतर तत्समय प्रवृत्त हों जिनमें प्रशासन-वाद लम्बित है और वे सभी व्यक्ति जो ऐसे किसी मामले में ऐसी सम्पत्ति में से संदाय पाने के हकदार होंगे, प्रारम्भिक डिक्री के अधीन आ सकेंगे और उस सम्पत्ति के विरुद्ध ऐसे दावे कर सकेंगे जिनके लिए वे इस संहिता के आधार पर क्रमशः हकदार हैं।

14. **शुफा के दावे में डिक्री**—(1) जहां न्यायालय सम्पत्ति के किसी विशिष्ट विक्रय के बारे में शुफा के दावे की डिक्री देता है और क्रय-धन ऐसे न्यायालय में जमा नहीं किया गया है वहां डिक्री में—

(क) ऐसा दिन विनिर्दिष्ट होगा जिस दिन या जिसके पूर्व क्रय-धन ऐसे जमा किया जाएगा, तथा

(ख) यह निदेश होगा कि वादी के विरुद्ध डिक्रीत खर्चों के सहित (यदि कोई हों) ऐसे क्रय-धन को न्यायालय में उस दिन या उस दिन के पूर्व, जो खण्ड (क) में निर्दिष्ट किया गया है, जमा कर दिए जाने पर प्रतिवादी सम्पत्ति का कब्जा वादी

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 70 द्वारा (1-2-1977 से) खण्ड (ख) के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 70 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

को परिदत्त कर देगा जिसका हक ऐसे जमा करने की तारीख से उस पर प्रोद्भूत हुआ समझा जाएगा; किन्तु यदि क्रय-धन और खर्चे (यदि कोई हों), ऐसे जमा नहीं किए जाएंगे तो वाद खर्चों के सहित खारिज कर दिया जाएगा।

(2) जहां न्यायालय ने शुफा के परस्पर विरोधी दावों का न्यायनिर्णयन कर दिया है वहां डिक्री में यह निर्दिष्ट होगा कि—

(क) यदि और जहां तक डिक्री दावे समान कोटि के हैं तो और वहां तक उपनियम (1) के उपबन्धों का अनुपालन करने वाले हर एक शुफाधिकारी का दावा उस सम्पत्ति के अनुपातिक अंश के बारे में प्रभावी होगा, जिस सम्पत्ति के अन्तर्गत ऐसा कोई आनुपातिक अंश भी होगा जिसके बारे में किसी ऐसे शुफाधिकारी का, जो उक्त उपबन्धों का अनुपालन करने में असफल रहा है, दावा ऐसा व्यतिक्रम न होने पर प्रभावी होता; तथा

(ख) यदि और जहां तक डिक्रीत दावे विभिन्न कोटि के हैं तो और वहां तक अवर शुफाधिकारी का दावा तब तक प्रभावी नहीं होगा जब तक वरिष्ठ शुफाधिकारी उक्त उपबंधों का अनुपालन करने में असफल न हो गया हो।

15. भागीदारी के विघटन के लिए वाद में डिक्री—जहां तक वाद भागीदारी के विघटन के लिए या भागीदारी के लेखाओं के लिए जाने के लिए है वहां न्यायालय अन्तिम डिक्री देने के पूर्व ऐसी प्रारम्भिक डिक्री पारित कर सकेगा जिसमें पक्षकारों के आनुपातिक अंश घोषित होंगे, वह दिन नियत होगा जिसको भागीदारी विघटित हो जाएगी या विघटित हुई समझी जाएगी, और ऐसे लेखाओं के लिए जाने का और अन्य ऐसे कार्य के, जो वह न्यायालय ठीक समझे, किए जाने का निदेश होगा।

16. मालिक और अभिकर्ता के बीच लेखा के लिए लाए गए वाद में डिक्री—मालिक और अभिकर्ता के बीच धन-संबंधी संव्यवहारों की बाबत लेखा के लिए वाद में, और ऐसे किसी अन्य वाद में, जिसके लिए इसमें इसके पूर्व उपबन्ध नहीं किया गया है, जहां यह आवश्यक हो कि उस धन की रकम को, जो किसी पक्षकार को या पक्षकार से शोध्य है, अभिनिश्चित करने के लिए लेखा लिया जाना चाहिए, न्यायालय अपनी अन्तिम डिक्री पारित करने के पूर्व ऐसी प्रारम्भिक डिक्री पारित कर सकेगा जिसमें ऐसे लेखाओं के लिए जाने का निदेश होगा जिनका लिया जाना वह ठीक समझे।

17. लेखाओं के संबंध में विशेष निदेश—न्यायालय या तो लेखा लिए जाने के लिए निदेश देने वाली डिक्री द्वारा या किसी पश्चात्वर्ती आदेश द्वारा उस ढंग के बारे में विशेष निदेश दे सकेगा जिसमें लेखा लिया जाना है या प्रमाणित किया जाना है और विशिष्टतः यह निदेश दे सकेगा कि लेखा लेने में उन लेखा बहियों को, जिनमें प्रश्नगत लेखा रखे गए हों, उन बातों की सत्यता के प्रथमदृष्टया साक्ष्य के रूप में लिया जाएगा जो उनमें अन्तर्विष्ट है। किन्तु हितबद्ध पक्षकारों को यह स्वतंत्रता होगी कि वे उन पर ऐसे आक्षेप कर सकेंगे जो वे ठीक समझें।

18. सम्पत्ति के विभाजन के लिए या उसमें के अंश पर पृथक् कब्जे के लिए वाद में डिक्री—जब न्यायालय सम्पत्ति के विभाजन के लिए या उसमें के अंश पर पृथक् कब्जे के लिए डिक्री पारित करता है तब—

(1) यदि और जहां तक डिक्री ऐसी सम्पदा से सम्बन्धित है जिस पर सरकार को संदेय राजस्व निर्धारित है तो और वहां तक डिक्री सम्पत्ति में हितबद्ध विभिन्न पक्षकारों के अधिकारों की घोषणा करेगी, किन्तु वह यह निदेश देगी कि ऐसा विभाजन या पृथक्करण ऐसी घोषणा और धारा 54 के उपबन्धों के अनुसार कलक्टर द्वारा या उसके द्वारा इस निमित्त प्रतिनियुक्त उसके किसी ऐसे अधीनस्थ द्वारा किया जाए जो राजपत्रित हो;

(2) यदि और जहां तक ऐसी डिक्री किसी अन्य स्थावर सम्पत्ति से या जंगम सम्पत्ति से सम्बन्धित है तो और वहां तक न्यायालय यदि विभाजन या पृथक्करण अतिरिक्त जांच के बिना सुविधापूर्वक नहीं किया जा सकता तो सम्पत्ति में हितबद्ध विभिन्न पक्षकारों के अधिकारों की घोषणा करने वाली और ऐसे अतिरिक्त निदेश देने वाली जो अपेक्षित हो, प्रारम्भिक डिक्री पारित कर सकेगा।

19. जब मुजरा या प्रतिदावा अनुज्ञात किया जाए तब डिक्री—(1) जहां प्रतिवादी को वादी के दावे के विरुद्ध मुजरा [1][या प्रतिदावा] अनुज्ञात किया गया है वहां डिक्री में यह कथन होगा कि वादी को कितनी रकम शोध्य है और प्रतिवादी को कितनी रकम शोध्य है और वह किसी ऐसी राशि की वसूली के लिए होगी जो दोनों पक्षकारों में से किसी को शोध्य प्रतीत हो।

(2) **मुजरा या प्रतिदावा सम्बन्धी डिक्री की अपील**—किसी ऐसे वाद में, जिसमें मुजरा का दावा [1][या प्रतिदावा] किया

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 70 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

गया है मानो कोई भी डिक्री अपील के बारे में उन्हीं उपबंधों के अधीन होगी जिनके अधीन वह होती यदि किसी मुजरा का दावा [1][या प्रतिदावा] न किया गया होता।

(3) इस नियम के उपबन्ध लागू होंगे चाहे मुजरा, आदेश 8 के नियम 6 के अधीन या अन्यथा अनुज्ञेय हो।

20. निर्णय और डिक्री की प्रमाणित प्रतियों का दिया जाना—निर्णय और डिक्री की प्रमाणित प्रतियां पक्षकारों को न्यायालय से आवेदन करने पर और उनके खर्च पर दी जाएंगी।

[2][आदेश 20क

खर्चे

1. कुछ मदों के बारे में उपबन्ध—खर्चों के बारे में इस संहिता के उपबन्धों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, न्यायालय निम्नलिखित के सम्बन्ध में खर्चे अधिनिर्णीत कर सकेगा, अर्थात्:—

(क) वाद संस्थित करने से पूर्व किसी ऐसी सूचना के, जो विधि द्वारा दी जाने के लिए अपेक्षित है, दिए जाने के लिए उपगत व्यय;

(ख) किसी ऐसी सूचना पर उपगत व्यय जो विधि द्वारा दी जाने के लिए अपेक्षित न होने पर भी वाद के किसी पक्षकार द्वारा किसी दूसरे पक्षकार को वाद संस्थित करने से पूर्व दी गई हो;

(ग) किसी पक्षकार द्वारा फाइल किए गए अभिवचनों को टाइप कराने, लिखने या मुद्रित कराने पर उपगत व्यय;

(घ) वाद के प्रयोजनों के लिए न्यायालय के अभिलेखों के निरीक्षण के लिए किसी पक्षकार द्वारा संदत्त प्रभार;

(ङ) किसी पक्षकार द्वारा साक्षियों को पेश करने के लिए उपगत व्यय चाहे वे न्यायालय के माध्यम से समन न किए गए हों; और

(च) अपीलों की दशा में किसी पक्षकार द्वारा निर्णयों और डिक्रियों की प्रतियां प्राप्त करने में उपगत प्रभार, जो अपील के ज्ञापन के साथ फाइल की जाने के लिए अपेक्षित है।

2. उच्च न्यायालय द्वारा बनाए गए नियमों के अनुसार खर्चों का अधिनिर्णीत किया जाना—इस नियम के अधीन खर्चे ऐसे नियमों के अनुसार अधिनिर्णीत किए जाएंगे जो उच्च न्यायालय द्वारा इस निमित्त बनाएं जाएं।]

आदेश 21

डिक्रियों और आदेशों का निष्पादन

डिक्री के अधीन संदाय

[3][1. **डिक्री के अधीन धन के संदाय की रीतियां**—(1) डिक्री के अधीन संदेय सभी धन का निम्नलिखित रीति से संदाय किया जाएगा, अर्थात्:—

(क) उस न्यायालय में, जिसका कर्तव्य उस डिक्री का निष्पादन करना है, जमा करके या उस न्यायालय को मनीआर्डर द्वारा अथवा बैंक के माध्यम से भेजकर; या

(ख) न्यायालय के बाहर डिक्रीदार को मनीआर्डर द्वारा या किसी बैंक के माध्यम से या किसी अन्य रीति से जिसमें संदाय का लिखित साक्ष्य हो; या

(ग) अन्य रीति से जो वह न्यायालय जिसने डिक्री दी, निदेश दे।

(2) जहां संदाय उपनियम (1) के खण्ड (क) या खण्ड (ग) के अधीन किया जाता है वहां निर्णीत-ऋणी डिक्रीदार को उसकी सूचना न्यायालय के माध्यम से देगा या रसीदी रजिस्ट्री डाक द्वारा सीधे देगा।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 70 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 71 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
3. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) नियम 1 के स्थान पर प्रतिस्थापित।

(3) जहां धन का संदाय उपनियम (1) के खण्ड (क) या खण्ड (ख) के अधीन मनीआर्डर द्वारा या बैंक के माध्यम से किया जाता है वहां, यथास्थिति, मनीआर्डर में या बैंक के माध्यम से किए गए संदाय में निम्नलिखित विशिष्टियों का स्पष्ट रूप से कथन होगा, अर्थात्:—

(क) मूल वाद का संख्यांक;

(ख) पक्षकारों के या जहां दो से अधिक वादी या दो से अधिक प्रतिवादी हैं वहां, यथास्थिति, पहले दो वादियों और दो प्रतिवादियों के नाम;

(ग) प्रेषित धन का समायोजन किस प्रकार किया जाना है, अर्थात् वह संदाय मूल के प्रति, ब्याज के प्रति या खर्चों के प्रति है;

(घ) न्यायालय के निष्पादन मामले का संख्यांक जहां ऐसा मामला लंबित है; और

(ङ) संदाय कर्ता का नाम और पता।

(4) उपनियम (1) के खण्ड (क) या खण्ड (ग) के अधीन संदत्त किसी रकम पर ब्याज, यदि कोई हो, उपनियम (2) में निर्दिष्ट सूचना की तामील की तारीख से नहीं लगेगा।

(5) उपनियम (1) के खण्ड (ख) के अधीन संदत्त किसी रकम पर ब्याज, यदि कोई हो, ऐसे संदाय की तारीख से नहीं लगेगा :

परन्तु जहां डिक्रीदार मनीआर्डर या बैंक के माध्यम से संदाय स्वीकार करने से इंकार करता है वहां ब्याज, उस तारीख से, जिसको धन उसे निविदत्त किया गया था, नहीं लगेगा अथवा जहां वह मनीआर्डर या बैंक के माध्यम से किए गए संदाय को स्वीकार करने से बचता है, वहां ब्याज उस तारीख से, जिसको धन उसे, यथास्थिति, डाक प्राधिकारियों के या बैंक के कारबार के मामूली अनुक्रम में दिया गया होता, नहीं लगेगा।]

2. **डिक्रीदार को न्यायालय के बाहर संदाय**—(1) जहां किसी प्रकार की डिक्री के अधीन संदेय कोई धन न्यायालय के बाहर संदत्त किया गया है [1][या किसी प्रकार की पूरी डिक्री या उसके किसी भाग का समायोजन डिक्रीदार को समाधानप्रद रूप में अन्यथा कर दिया गया है] वहां डिक्रीदार उस न्यायालय को, जिसका कर्तव्य डिक्री का निष्पादन करना है, यह प्रमाणित करेगा कि ऐसा संदाय या समायोजन कर दिया गया है और न्यायालय उसे तदनुसार अभिलिखित करेगा।

(2) [2][निर्णीत-ऋणी या कोई ऐसा व्यक्ति भी जो निर्णीत-ऋणी के लिए प्रतिभू है,] ऐसे संदाय या समायोजन की इत्तिला न्यायालय को दे सकेगा और न्यायालय से आवेदन कर सकेगा कि न्यायालय अपने द्वारा नियत किए जाने वाले दिन को वह हेतुक दर्शित करने के लिए सूचना डिक्रीदार के नाम निकाले कि ऐसे संदाय या समायोजन के बारे में यह क्यों न अभिलिखित कर लिया जाए कि वह प्रमाणित है, और यदि डिक्रीदार ऐसी सूचना की तामील के पश्चात् यह हेतुक दर्शित करने में असफल रहता है कि संदाय या समायोजन के बारे में यह अभिलिखित नहीं किया जाना चाहिए कि वह प्रमाणित है तो न्यायालय उसे तदनुसार अभिलिखित करेगा।

[3][(2क) निर्णीत-ऋणी की प्रेरणा पर कोई भी संदाय या समायोजन तब तक अभिलिखित नहीं किया जाएगा जब तक—

(क) वह संदाय नियम 1 में उपबन्धित रीति से न किया गया हो; या

(ख) वह संदाय या समायोजन दस्तावेजी साक्ष्य द्वारा साबित न हो; या

(ग) वह संदाय या समायोजन डिक्रीदार द्वारा या उसकी ओर से उस सूचना के उसके उत्तर में जो नियम 1 के उपनियम (2) के अधीन दी गई है या न्यायालय के समक्ष स्वीकार न किया गया हो।]

(3) वह संदाय या समायोजन जो पूर्वोक्त रीति से प्रमाणित या अभिलिखित नहीं किया गया है, डिक्री निष्पादन करने वाले किसी न्यायालय द्वारा मान्य नहीं किया जाएगा।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) कुछ शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) "निर्णीत-ऋणी भी" शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) अंतःस्थापित।

डिक्रियां निष्पादन करने वाले न्यायालय

3. एक से अधिक अधिकारिता में स्थित भूमि—जहां स्थावर सम्पत्ति दो या अधिक न्यायालयों की अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर स्थित एक सम्पदा या भूधृति के रूप में है वहां पूरी सम्पदा या भूधृति को ऐसे न्यायालयों में से कोई भी एक न्यायालय कुर्क कर सकेगा और उसका विक्रय कर सकेगा।

4. लघुवाद न्यायालय को अन्तरण—जहां डिक्री किसी ऐसे वाद में पारित की गई है, जिसका वादपत्र में उपवर्णित मूल्य दो हजार रुपए से अधिक नहीं है और जहां तक उसकी विषय-वस्तु का सम्बन्ध है वह या तो प्रेसिडेन्सी या प्रान्तीय लघुवाद न्यायालयों के संज्ञान से तत्समय प्रवृत्त विधि द्वारा अपवादित नहीं है और वह न्यायालय जिसने उसे पारित किया था यह चाहता है कि वह कलकत्ता, मद्रास [1][या मुम्बई] में निष्पादित की जाए वहां ऐसा न्यायालय, यथास्थिति, कलकत्ता, मद्रास [1][या मुम्बई] में के लघुवाद न्यायालय को नियम 6 में वर्णित प्रतियां और प्रमाणपत्र भेज सकेगा और तब ऐसा लघुवाद न्यायालय उस डिक्री का निष्पादन ऐसे करेगा मानो वह स्वयं उसके द्वारा पारित की गई हो।

[2][**5. अन्तरण की रीति**—जहां डिक्री निष्पादन के लिए दूसरे न्यायालय को भेजी जानी है वहां वह न्यायालय जिसने ऐसी डिक्री पारित की है डिक्री को सीधे ऐसे दूसरे न्यायालय को भेजेगा चाहे ऐसा दूसरा न्यायालय उसी राज्य में स्थित हो या नहीं, किन्तु वह न्यायालय जिसको डिक्री निष्पादन के लिए भेजी गई है उस दशा में जिसमें उसे डिक्री को निष्पादित करने की अधिकारिता नहीं है ऐसे न्यायालय को भेजेगा जिसे ऐसी अधिकारिता है।]

6. जहां न्यायालय यह चाहता है कि उसकी अपनी डिक्री किसी अन्य न्यायालय द्वारा निष्पादित की जाए वहां प्रक्रिया—डिक्री को निष्पादन के लिए भेजने वाला न्यायालय निम्नलिखित भेजेगा, अर्थात्:—

(क) डिक्री की प्रति;

(ख) यह उपवर्णित करने वाला प्रमाणपत्र कि डिक्री की तुष्टि उस न्यायालय की अधिकारिता के भीतर जिसने उसे पारित किया था निष्पादन द्वारा अभिप्राप्त नहीं की गई है या जहां डिक्री का निष्पादन भागतः हुआ है वहां वह विस्तार जिस तक तुष्टि अभिप्राप्त कर ली गई है और डिक्री का जो भाग अतुष्ट रहा है वह भाग उपवर्णित करने वाला प्रमाणपत्र; तथा

(ग) डिक्री के निष्पादन के किसी आदेश की प्रति या यदि ऐसा कोई भी आदेश नहीं किया गया है तो उस भाव का प्रमाणपत्र।

7. डिक्री आदि की प्रतियां प्राप्त करने वाला न्यायालय उन्हें सबूत के बिना फाइल कर लेगा—वह न्यायालय जिसे डिक्री ऐसे भेजी गई है, ऐसी प्रतियों और प्रमाणपत्रों को उस डिक्री या आदेश के जो निष्पादन के लिए है या उसकी प्रतियों के किसी अतिरिक्त सबूत के बिना, फाइल कर लेगा यदि वह उन विशेष कारणों से, जो लेखबद्ध किए जाएंगे और जिन पर न्यायाधीश के हस्ताक्षर होंगे, ऐसे सबूत की अपेक्षा न करे।

8. डिक्री या आदेश का उस न्यायालय द्वारा निष्पादन जिसे वह भेजा गया है—जहां ऐसी प्रतियां इस प्रकार फाइल कर ली गई हैं वहां यदि वह न्यायालय जिसे वह डिक्री या आदेश भेजा गया है, जिला न्यायालय है तो वह ऐसे न्यायालय द्वारा निष्पादित किया जा सकेगा या सक्षम अधिकारिता वाले किसी अधीनस्थ न्यायालय को निष्पादन के लिए अन्तरित किया जा सकेगा।

9. अन्य न्यायालय द्वारा अन्तरित डिक्री का उच्च न्यायालय द्वारा निष्पादन—जहां वह न्यायालय जिसे डिक्री निष्पादन के लिए भेजी गई है उच्च न्यायालय है वहां डिक्री ऐसी न्यायालय द्वारा उसी रीति से निष्पादित की जाएगी मानो वह ऐसे न्यायालय द्वारा अपनी मामूली आरंभिक सिविल अधिकारिता के प्रयोग में पारित की गई थी।

---

1. भारत शासन (भारतीय विधि अनुकूलन) आदेश, 1937 द्वारा "मुम्बई या रंगून" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं॰ 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) नियम 5 के स्थान पर प्रतिस्थापित।

निष्पादन के लिए आवेदन

10. निष्पादन के लिए आवेदन—जहां डिक्री का धारक उसका निष्पादन कराना चाहता है वहां वह डिक्री पारित करने वाले न्यायालय से या इस निमित्त नियुक्त अधिकारी से (यदि कोई हो) या यदि डिक्री किसी अन्य न्यायालय को इसमें इसके पूर्व अन्तर्विष्ट उपबंधों के अधीन भेजी गई है तो उस न्यायालय से या उसके उचित अधिकारी से आवेदन करेगा।

11. मौखिक आवेदन—(1) जहां डिक्री धन के संदाय के लिए है वहां, यदि निर्णीत-ऋणी न्यायालय की परिसीमाओं के भीतर है तो, न्यायालय डिक्री पारित करने के समय डिक्रीदार द्वारा किए गए मौखिक आवेदन पर आदेश दे सकेगा कि वारण्ट की तैयारी के पूर्व ही डिक्री का अविलम्ब निष्पादन निर्णीत-ऋणी की गिरफ्तारी द्वारा किया जाए।

(2) **लिखित आवेदन**—उसके सिवाय जैसा उपनियम (1) द्वारा उपबन्धित है, डिक्री के निष्पादन के लिए हर आवेदन लिखा हुआ और आवेदक या किसी अन्य ऐसे व्यक्ति द्वारा, जिसके बारे में न्यायालय को समाधानप्रद रूप में साबित कर दिया गया है कि वह मामले के तथ्यों से परिचित है, हस्ताक्षरित और सत्यापित होगा और उसमें सारणीबद्ध रूप में निम्न विशिष्टियां होंगी, अर्थात्:—

(क) वाद का संख्यांक;

(ख) पक्षकारों के नाम;

(ग) डिक्री की तारीख;

(घ) क्या डिक्री के विरुद्ध कोई अपील की गई है;

(ङ) क्या डिक्री के पश्चात् पक्षकारों के बीच कोई संदाय या विवादग्रस्त बात का कोई अन्य समायोजन हुआ है और (यदि कोई हुआ है तो) कितना या क्या;

(च) क्या डिक्री के निष्पादन के लिए कोई आवेदन पहले किए गए हैं और (यदि कोई किए गए है तो) कौन से हैं और ऐसे आवेदनों की तारीखें और उनके परिणाम;

(छ) डिक्री मद्धे शोध्य रकम, यदि कोई ब्याज हो तो उसके सहित, या उसके द्वारा अनुदत्त अन्य अनुतोष, किसी प्रति डिक्री की विशिष्टियों के सहित चाहे वह उस डिक्री की तारीख के पूर्व या पश्चात् पारित की गई हो जिसका निष्पादन चाहा गया है;

(ज) अधिनिर्णीत खर्चों की (यदि कोई हों) रकम;

(झ) उस व्यक्ति का नाम जिसके विरुद्ध डिक्री का निष्पादन चाहा गया है; तथा

(ञ) वह ढंग जिसमें न्यायालय की सहायता अपेक्षित है अर्थात् क्या:—

(i) किसी विनिर्दिष्टतः डिक्री सम्पत्ति के परिदान द्वारा;

[1][(ii) किसी सम्पत्ति की कुर्की द्वारा या कुर्की और विक्रय द्वारा या कुर्की के बिना विक्रय द्वारा;]

(iii) किसी व्यक्ति की गिरफ्तारी और कारागार में निरोध द्वारा;

(iv) रिसीवर की नियुक्ति द्वारा;

(v) अन्यथा, जो अनुदत्त अनुतोष की प्रकृति से अपेक्षित है।

(3) जिस न्यायालय से उपनियम (2) के अधीन आवेदन किया गया है, वह आवेदक से यह अपेक्षा कर सकेगा कि वह डिक्री की एक प्रमाणित प्रति पेश करे।

[2][**11क. गिरफ्तारी के लिए आवेदन में आधारों का कथित होना**—जहां निर्णीत-ऋणी की गिरफ्तारी और कारागार में निरोध के लिए आवेदन किया जाता है वहां उसमें उन आधारों का जिन पर गिरफ्तारी के लिए आवेदन किया गया है, कथन होगा या उसके साथ एक शपथपत्र होगा जिसमें उन आधारों का जिन पर गिरफ्तारी के लिए आवेदन किया गया है, कथन होगा।]

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) उपखण्ड (ii) के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

12. ऐसी जंगम सम्पत्ति की कुर्की के लिए आवेदन जो निर्णीत-ऋणी के कब्जे में नहीं है—जहां किसी ऐसी जंगम सम्पत्ति की कुर्की के लिए आवेदन किया गया है जो निर्णीत-ऋणी की है किन्तु उसके कब्जे में नहीं है वहां डिक्रीदार उस सम्पत्ति का जिसकी कुर्की की जानी है युक्तियुक्त रूप से यथार्थ वर्णन अन्तर्विष्ट करने वाली एक सम्पत्ति तालिका आवेदन के साथ उपाबद्ध करेगा।

13. स्थावर सम्पत्ति की कुर्की के आवेदन में कुछ विशिष्टियों का अन्तर्विष्ट होना—जहां निर्णीत-ऋणी की किसी स्थावर सम्पत्ति की कुर्की के लिए आवेदन किया जाता है वहां उस आवेदन के पाद-भाग में निम्नलिखित बातें अन्तर्विष्ट होंगी, अर्थात्:—

(क) ऐसी सम्पत्ति का ऐसा वर्णन जो उसे पहचानने के लिए पर्याप्त है और उस दशा में जिसमें ऐसी सम्पत्ति सीमाओं द्वारा या भू-व्यवस्थापन या सर्वेक्षण के अभिलेख के संख्यांकों के द्वारा पहचानी जा सकती है, ऐसी सीमाओं या संख्यांक का विनिर्देश; तथा

(ख) निर्णीत-ऋणी का ऐसी सम्पत्ति में, जो अंश या हित आवेदक के सर्वोत्तम विश्वास के अनुसार है और जहां तक वह उसका अभिनिश्चय कर पाया हो वहां तक उस अंश या हित का विनिर्देश।

14. कलक्टर के रजिस्टर में से प्रमाणित उद्धरणों की कुछ दशाओं में अपेक्षा करने की शक्ति—जहां किसी ऐसी भूमि की कुर्की के लिए आवेदन किया जाता है जो कलक्टर के कार्यालय में रजिस्ट्रीकृत है वहां न्यायालय आवेदक से अपेक्षा कर सकेगा कि वह उस भूमि के स्वत्वधारी के रूप में या उस भूमि में या उसके राजस्व में कोई अन्तरणीय हित रखने वाले के रूप में या उस भूमि के लिए राजस्व देने के दायी के रूप में रजिस्टर में दर्ज व्यक्तियों का और रजिस्टर में दर्ज स्वत्वधारियों के अंशों को विनिर्दिष्ट करने वाला प्रमाणित उद्धरण ऐसे कार्यालय के रजिस्टर में से पेश करे।

15. संयुक्त डिक्रीदार द्वारा निष्पादन के लिए आवेदन—(1) जहां डिक्री एक से अधिक व्यक्तियों के पक्ष में संयुक्त रूप से पारित की गई है वहां, जब तक कि डिक्री में इसके प्रतिकूल कोई शर्त अधिरोपित न हो, पूरी डिक्री के निष्पादन के लिए आवेदन ऐसे व्यक्तियों में से कोई एक या अधिक अपने सभी के फायदे के लिए या जहां उनमें से किसी की मृत्यु हो गई है वहां मृतक के उत्तरजीवियों और विधिक प्रतिनिधियों के फायदे के लिए कर सकेगा।

(2) जहां न्यायालय डिक्री का निष्पादन इस नियम के अधीन किए गए आवेदन पर अनुज्ञात करने के लिए पर्याप्त हेतुक देखे वहां वह ऐसा आदेश करेगा जो वह उन व्यक्तियों के जो आवेदन करने में सम्मिलित नहीं हुए हैं, हितों के संरक्षण के लिए आवश्यक समझे।

16. डिक्री के अन्तरिती द्वारा निष्पादन के लिए आवेदन—जहां किसी डिक्री का या, यदि कोई डिक्री दो या अधिक व्यक्तियों के पक्ष में संयुक्त रूप से पारित की गई है तो डिक्री में किसी डिक्रीकार के हित का अन्तरण लिखित समनुदेशन द्वारा या विधि की क्रिया द्वारा हो गया है वहां अन्तरिती उस न्यायालय से, जिसने डिक्री पारित की थी डिक्री के निष्पादन के लिए आवेदन कर सकेगा और डिक्री उसी रीति से और उन्हीं शर्तों के अधीन रहते हुए इस प्रकार निष्पादित की जा सकेगी मानो आवेदन ऐसे डिक्रीदार के द्वारा किया गया हो:

परन्तु जहां डिक्री के पूर्वोक्त जैसे हित का अन्तरण समनुदेशन द्वारा किया गया है वहां ऐसे आवेदन की सूचना अन्तरक और निर्णीत-ऋणी को दी जाएगी और जब तक न्यायालय ने डिक्री के निष्पादन के बारे में उनके आक्षेपों को (यदि कोई हो) न सुन लिया हो तब तक वह निष्पादित नहीं की जाएगी:

परन्तु यह और भी कि जहां दो या अधिक व्यक्तियों के विरुद्ध धन के संदाय की डिक्री उनमें से एक को अन्तरित की गई है वहां वह अन्य व्यक्तियों के विरुद्ध निष्पादित नहीं की जाएगी।

[1][**स्पष्टीकरण**—इस नियम की कोई बात धारा 146 के उपबन्धों पर प्रभाव नहीं डालेगी और उस सम्पत्ति में जो वाद की विषय-वस्तु है, अधिकारों का कोई अन्तरिती डिक्री के निष्पादन के लिए आवेदन, इस नियम द्वारा यथा अपेक्षित डिक्री के पृथक् समनुदेशन के बिना, कर सकेगा।]

17. डिक्री के निष्पादन के लिए आवेदन प्राप्त होने पर प्रक्रिया—(1) डिक्री के निष्पादन के लिए आवेदन नियम 11

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

के उपनियम (2) द्वारा उपबन्धित रूप में प्राप्त होने पर न्यायालय यह अभिनिश्चित करेगा कि क्या नियम 11 से 14 तक की अपेक्षाओं में से उनका जो उस मामले में लागू है, अनुपालन किया जा चुका है और यदि उनका अनुपालन नहीं किया गया है [1][तो न्यायालय त्रुटि का तभी और वहां ही या उस समय के भीतर, जो उसके द्वारा नियत किया जाएगा, दूर किया जाना अनुज्ञात करेगा।]

[2][(1क) यदि त्रुटि इस प्रकार दूर नहीं की जाती है तो न्यायालय आवेदन को नामंजूर करेगा:

परन्तु जहां न्यायालय की राय में, नियम 11 के उपनियम (2) के खण्ड (छ) और (ज) में निर्दिष्ट रकम के बारे में कोई अशुद्धि हो वहां न्यायालय आवेदन को नामंजूर करने के बजाय (कार्यवाहियों के दौरान रकम को अन्तिम रूप से विनिश्चित कराने के पक्षकारों के अधिकार पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना) अनन्तिम रूप से रकम विनिश्चित करेगा और इस प्रकार अनन्तिम रूप से विनिश्चित रकम वाली डिक्री के निष्पादन के लिए आदेश करेगा।]

(2) जहां आवेदन उपनियम (1) के उपबन्धों के अधीन संशोधित किया जाता है वहां वह विधि के अनुसार और उस तारीख को, जिसको वह पहले पेश किया गया था, पेश किया गया समझा जाएगा।

(3) इस नियम के अधीन किया गया हर संशोधन न्यायाधीश द्वारा हस्ताक्षरित या आद्यक्षरित किया जाएगा।

(4) जब आदेश ग्रहण कर लिया जाए तब न्यायालय उचित रजिस्टर में आवेदन का टिप्पण और वह तारीख जिस दिन वह दिया गया था, प्रविष्ट करेगा और इसमें इसके पश्चात् अन्तर्विष्ट उपबन्धों के अधीन रहते हुए, आवेदन की प्रकृति के अनुसार डिक्री के निष्पादन के लिए आदेश देगा:

परन्तु धन के संदाय के लिए डिक्री की दशा में कुर्क की गई सम्पत्ति का मूल्य डिक्री के अधीन शोध्य रकम के यथाशक्य लगभग बराबर होगा।

18. **प्रति-डिक्रियों की दशा में निष्पादन**—(1) जहां न्यायालय से आवेदन ऐसी प्रति-डिक्रियों के निष्पादन के लिए किए जाते हैं जो दो राशियों के संदाय के लिए पृथक्-पृथक् वादों में उन्हीं पक्षकारों के बीच पारित की गई हैं और ऐसे न्यायालय द्वारा एक ही समय निष्पादनीय हैं, वहां—

(क) यदि दोनों राशियां बराबर हैं तो दोनों डिक्रियों में तुष्टि की प्रविष्टि कर दी जाएगी; तथा

(ख) यदि दोनों राशियां बराबर नहीं हैं तो बड़ी राशि वाली डिक्री के धारक द्वारा ही और केवल उतनी ही राशि के लिए जो छोटी राशि को घटाने के पश्चात् शेष रहती है, निष्पादन कराया जा सकेगा और बड़ी राशि वाली डिक्री में छोटी राशि की तुष्टि की प्रविष्टि कर दी जाएगी और साथ ही साथ छोटी राशि वाली डिक्री में भी तुष्टि की प्रविष्टि कर दी जाएगी।

(2) इस नियम के बारे में यह समझा जाएगा कि ये वहां लागू हैं जहां दोनों में से कोई पक्षकार उन डिक्रियों में से एक का समनुदेशिती है और मूल समनुदेशक द्वारा शोध्य निर्णीत-ऋणों के बारे में भी वैसे ही लागू हैं जैसे स्वयं समनुदेशिती द्वारा शोध्य निर्णीत-ऋणों को।

(3) इस नियम के बारे में यह नहीं समझा जाएगा कि यह लागू है जब तक कि—

(क) उन वादों में से, जिनमें डिक्रियां की गई हैं एक में का डिक्रीदार दूसरे में का निर्णीत-ऋणी न हो और हर एक पक्षकार दोनों वादों में एक सी ही हैसियत न रखता हो; तथा

(ख) डिक्रियों के अधीन शोध्य राशियां निश्चित न हों।

(4) **कई व्यक्तियों के विरुद्ध संयुक्ततः और पृथक्ततः** पारित डिक्री का धारक अपनी डिक्री को ऐसी डिक्री के संबंध में जो ऐसे व्यक्तियों में एक या अधिक के पक्ष में अकेले उसके विरुद्ध पारित की गई हो प्रति-डिक्री के रूप में बरत सकेगा।

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) कुछ शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

दृष्टांत

(क) ख के विरुद्ध 1,000 रुपए की डिक्री क के पास है। क के विरुद्ध 1,000 रुपए के संदाय के लिए एक डिक्री ख के पास है जो तब संदेय होगी जबकि क कतिपय माल किसी भविष्यवर्ती दिन को परिदान करने में असफल रहे। ख अपनी डिक्री को प्रति-डिक्री के रूप में इस नियम के अधीन नहीं बरत सकता।

(ख) सहवादी ख और क 1,000 रुपए की डिक्री ग के विरुद्ध अभिप्राप्त करते हैं और ख के विरुद्ध ग 1,000 रुपए की डिक्री अभिप्राप्त करता है। इस नियम के अधीन ग अपनी डिक्री को प्रति-डिक्री के रूप में नहीं बरत सकता।

(ग) क 1,000 रुपए की डिक्री ख के विरुद्ध अभिप्राप्त कर सकता है ग जो ख का न्यासी है ख की ओर से क के विरुद्ध 1,000 रुपए की डिक्री अभिप्राप्त करता है। ख इस नियम के अधीन ग की डिक्री को प्रति-डिक्री के रूप में नहीं बरत सकता।

(घ) क, ख, ग, घ और ङ संयुक्ततः और पृथकतः च द्वारा अभिप्राप्त डिक्री के अधीन 1,000 रुपए के देनदार हैं। क अकेला च के विरुद्ध 100 रुपए की डिक्री अभिप्राप्त करता है और उस न्यायालय से निष्पादन के लिए आवेदन करता है जिसमें वह संयुक्त डिक्री निष्पादित की जा रही है। च इस नियम के अधीन अपनी संयुक्त डिक्री को प्रति-डिक्री के रूप में बरत सकेगा।

19. एक ही डिक्री के अधीन प्रति दावों की दशा में निष्पादन—जहां न्यायालय से आवेदन ऐसी डिक्री के निष्पादन के लिए किया गया है जिसके अधीन दो पक्षकार एक दूसरे से धन की राशियां वसूल करने के हकदार हैं, वहां—

(क) यदि दोनों राशियां बराबर हैं तो दोनों के लिए तुष्टि की प्रविष्टि डिक्री में कर दी जाएगी; तथा

(ख) यदि दोनों राशियां बराबर नहीं हैं तो बड़ी राशि के हकदार पक्षकार द्वारा ही और केवल उतनी ही राशि के लिए जो छोटी राशि के घटाने के पश्चात् शेष रहती है, निष्पादन कराया जा सकेगा, और छोटी राशि की तुष्टि की प्रविष्टि डिक्री में कर दी जाएगी।

20. बंधक-वादों में प्रति-डिक्रियां और प्रतिदावे—नियम 18 और नियम 19 में अन्तर्विष्ट उपबंध, बंधक या भार का प्रवर्तन कराने में विक्रय की डिक्रियों को लागू होंगे।

21. एक साथ निष्पादन—न्यायालय निर्णीत-ऋणी के शरीर और सम्पत्ति के विरुद्ध एक साथ निष्पादन करने से इंकार स्वविवेकानुसार कर सकेगा।

22. कुछ दशाओं में निष्पादन के विरुद्ध हेतुक दर्शित करने की सूचना—(1) जहां निष्पादन के लिए आवेदन—

(क) डिक्री की तारीख के [1][दो वर्ष] के पश्चात् किया गया है, अथवा

(ख) डिक्री के पक्षकार के विधिक प्रतिनिधि के विरुद्ध किया गया है, [2][अथवा जहां धारा 44क के उपबंधों के अधीन फाइल की गई डिक्री की गई डिक्री के निष्पादन के लिए आवेदन किया गया है], [3][अथवा]

[3][(ग) जहां डिक्री का पक्षकार दिवालिया न्यायनिर्णीत किया गया है वहां दिवाले में समनुदेशिती या रिसीवर के विरुद्ध किया गया है,]

वहां डिक्री निष्पादन करने वाला न्यायालय उस व्यक्ति के प्रति, जिसके विरुद्ध निष्पादन के लिए आवेदन किया गया है, यह अपेक्षा करने वाली सूचना निकालेगा कि वह उस तारीख को जो नियत की जाएगी, हेतुक दर्शित करे कि डिक्री उसके विरुद्ध निष्पादित क्यों न की जाए :

परन्तु ऐसी कोई सूचना न तो डिक्री की तारीख और निष्पादन के लिए आवेदन की तारीख के बीच [1][दो वर्ष] से अधिक बीत जाने के परिणामस्वरूप उस दशा में आवश्यक होगी जिसमें कि निष्पादन के लिए किसी पूर्वतन आवेदन पर उस पक्षकार के विरुद्ध, जिसके विरुद्ध निष्पादन के लिए आवेदन किया गया है, किए गए अन्तिम आदेश की तारीख [1][दो वर्ष] के भीतर ही निष्पादन के लिए आवेदन कर दिया गया है और न निर्णीत-ऋणी के विधिक प्रतिनिधि के विरुद्ध आवेदन किए जाने के परिणामस्वरूप उस दशा में आवश्यक होगी जिसमें कि उसी व्यक्ति के विरुद्ध निष्पादन के लिए पूर्वतन आवेदन पर न्यायालय उसके विरुद्ध निष्पादन चालू करने का आदेश दे चुका है।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) "एक वर्ष" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1937 के अधिनियम सं० 8 की धारा 3 द्वारा अन्तःस्थापित।
3. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

(2) पूर्वगामी उपनियम की कोई भी बात उस उपनियम द्वारा विहित सूचना निकाले बिना डिक्री के निष्पादन में कोई आदेशिका निकालने से न्यायालय को प्रवारित करने वाली नहीं समझी जाएगी, यदि उन कारणों से जो लेखबद्ध किए जाएंगे, उसका विचार हो कि ऐसी सूचना निकालने से अयुक्तियुक्त विलम्ब होगा या न्याय के उद्देश्य विफल हो जाएंगे।

[1][22क. विक्रय से पूर्व किन्तु विक्रय की उद्घोषणा की तामील के पश्चात् निर्णीत-ऋणी की मृत्यु पर विक्रय का अपास्त न किया जाना—जहां किसी सम्पत्ति का किसी डिक्री के निष्पादन में विक्रय किया जाता है वहां केवल इस कारण कि विक्रय की उद्घोषणा के जारी किए जाने की तारीख और विक्रय की तारीख के बीच निर्णीत-ऋणी की मृत्यु हो गई है और इस बात के होते हुए भी विक्रय अपास्त नहीं किया जाएगा कि डिक्रीदार ऐसे मृत निर्णीत-ऋणी के विधिक प्रतिनिधि को उसके स्थान पर रखने में असफल रहा है, किन्तु ऐसी असफलता की दशा में न्यायालय विक्रय को उस दशा में अपास्त कर सकेगा जिसमें उसका समाधान हो जाता है कि विक्रय का मृत निर्णीत-ऋणी के विधिक प्रतिनिधि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है।]

23. सूचना के निकाले जाने के पश्चात् प्रक्रिया—(1) जहां वह व्यक्ति, जिसके नाम [2][नियम 22] के अधीन सूचना निकाली गई है, उपसंजात नहीं होता है या न्यायालय को समाधानप्रद रूप में हेतुक दर्शित नहीं करता है कि डिक्री का निष्पादन क्यों न किया जाए वहां न्यायालय आदेश देगा कि डिक्री का निष्पादन किया जाए।

(2) जहां ऐसा व्यक्ति डिक्री के निष्पादन के विरुद्ध कोई आक्षेप पेश करता है वहां न्यायालय ऐसे आक्षेप पर विचार करेगा और ऐसा आदेश करेगा जो ठीक समझे।

निष्पादन के लिए आदेशिका

24. निष्पादन के लिए आदेशिका—(1) जब पूर्वगामी नियमों द्वारा अपेक्षित उपाय (यदि कोई हो) किए जा चुके हों तब, जब तक कि न्यायालय को इसके प्रतिकूल हेतुक दिखाई न दे, वह उस डिक्री के निष्पादन के लिए अपनी आदेशिका निकालेगा।

(2) हर ऐसी आदेशिका में उस दिन की तारीख लिखी जाएगी जिस दिन वह निकाली गई है और वह न्यायाधीश द्वारा या ऐसे अधिकारी द्वारा जो न्यायालय इस निमित्त नियुक्त करे, हस्ताक्षरित की जाएगी और न्यायालय की मुद्रा से मुद्रांकित की जाएगी और निष्पादित किए जाने के लिए उचित अधिकारी को परिदत्त की जाएगी।

[3][(3) हर ऐसी आदेशिका में वह दिन विनिर्दिष्ट किया जाएगा जिस दिन या जिसके पूर्व वह निष्पादित की जाएगी और वह दिन भी विनिर्दिष्ट किया जाएगा जिस दिन या जिसके पूर्व वह न्यायालय को वापस की जाएगी, किन्तु कोई भी आदेशिका उस दशा में शून्य नहीं समझी जाएगी जिसमें उसके लौटाए जाने के लिए कोई दिन उसमें विनिर्दिष्ट नहीं किया गया हो।]

25. आदेशिका पर पृष्ठांकन—(1) वह अधिकारी जिसे आदेशिका का निष्पादन सौंपा गया है, उस पर वह दिन जब, और वह रीति, जिससे वह निष्पादित की गई है, और यदि उसके लौटाए जाने के लिए आदेशिका में विनिर्दिष्ट अन्तिम दिन से अधिक समय निकल गया है तो विलम्ब का कारण या यदि वह निष्पादित नहीं की गई थी तो वह कारण जिससे उसका निष्पादन नहीं किया गया, पृष्ठांकित करेगा और उस आदेशिका को ऐसे पृष्ठांकन के साथ न्यायालय को लौटाएगा।

(2) जहां पृष्ठांकन इस भाव का है कि ऐसा अधिकारी आदेशिका का निष्पादन करने में असमर्थ है वहां न्यायालय उसकी अभिकथित असमर्थता के बारे में उसकी परीक्षा करेगा और यदि वह ऐसा करना ठीक समझे तो ऐसी असमर्थता के बारे में साक्षियों को समन और उनकी परीक्षा कर सकेगा और परिणाम को अभिलिखित करेगा।

निष्पादन का रोका जाना

26. न्यायालय निष्पादन को कब रोक सकेगा—वह न्यायालय, जिसे डिक्री निष्पादन के लिए भेजी गई है, ऐसी डिक्री का निष्पादन पर्याप्त हेतुक दर्शित किए जाने पर युक्तियुक्त समय के लिए इसलिए रोकेगा कि निर्णीत-ऋणी समर्थ हो सके कि वह डिक्री पारित करने वाले न्यायालय से या डिक्री के या उसके निष्पादन के बारे में अपीली अधिकारिता रखने वाले किसी न्यायालय से

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
2. 1978 के अधिनियम सं० 38 की धारा 3 और दूसरी अनुसूची द्वारा "इसके ठीक पहले के नियम" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) उपनियम (3) के स्थान पर प्रतिस्थापित।

निष्पादन रोक देने के आदेश के लिए आवेदन कर ले या डिक्री या निष्पादन से संबंधित किसी ऐसे अन्य आदेश के लिए आवेदन कर ले जो प्रथम बार के न्यायालय द्वारा या अपील न्यायालय द्वारा किया जाता यदि निष्पादन उसके द्वारा जारी किया गया होता या यदि निष्पादन के लिए आवेदन उससे किया गया होता।

(2) जहां निर्णीत-ऋणी की सम्पत्ति या शरीर निष्पादन के अधीन अभिगृहीत कर लिया गया है वहां वह न्यायालय, जिसने निष्पादन जारी किया है, ऐसे आवेदन का परिणाम लम्बित रहने तक ऐसी सम्पत्ति के प्रत्यास्थापन या ऐसे व्यक्ति के उन्मोचन के लिए आदेश कर सकेगा।

(3) **निर्णीत-ऋणी से प्रतिभूति अपेक्षित करने या उस पर शर्तें अधिरोपित करने की शक्ति**—न्यायालय निष्पादन को रोकने के लिए या सम्पत्ति के प्रत्यास्थापन के लिए या निर्णीत-ऋणी के उन्मोचन के लिए आदेश करने से पहले निर्णीत-ऋणी से [1][ऐसी प्रतिभूति अपेक्षित करेगा या उस पर ऐसी शर्तें अधिरोपित करेगा जो वह ठीक समझे]।

27. **उन्मोचित निर्णीत-ऋणी का दायित्व**—नियम 26 के अधीन प्रत्यास्थापन या उन्मोचन का कोई भी आदेश निष्पादन के लिए भेजी गई डिक्री के निष्पादन में निर्णीत-ऋणी की सम्पत्ति या शरीर को फिर से अभिगृहीत किए जाने से निवारित नहीं करेगा।

28. **डिक्री पारित करने वाले न्यायालय का या अपील न्यायालय का आदेश उस न्यायालय के लिए आबद्धकर होगा जिससे आवेदन किया गया है**—डिक्री पारित करने वाले न्यायालय का या पूर्वोक्त जैसी अपील न्यायालय का ऐसी डिक्री के निष्पादन के संबंध में कोई आदेश उस न्यायालय के लिए आबद्धकर होगा जिसे डिक्री निष्पादन के लिए भेजी गई है।

29. **डिक्रीदार और निर्णीत-ऋणी के बीच वाद लम्बित रहने तक निष्पादन का रोका जाना**—जहां उस व्यक्ति की ओर से, जिसके विरुद्ध डिक्री पारित की गई थी, कोई वाद ऐसे न्यायालय की डिक्री के धारक के [2][या ऐसी डिक्री के जो ऐसे न्यायालय द्वारा निष्पादित की जा रही है धारक के] विरुद्ध किसी न्यायालय में लंबित है वहां न्यायालय प्रतिभूति के बारे में या अन्यथा ऐसे निबन्धनों पर, जो वह ठीक समझे, डिक्री के निष्पादन को तब तक के लिए रोक सकेगा जब तक लम्बित वाद का विनिश्चय न हो जाए:

[2][परन्तु यदि डिक्री धन के संदाय के लिए है तो न्यायालय उस दशा में जिसमें वह प्रतिभूति अपेक्षित किए बिना उसका रोकना मंजूर करता है, ऐसा करने के अपने कारणों को लेखबद्ध करेगा।]

निष्पादन की रीति

30. **धन के संदाय की डिक्री**—धन के संदाय की हर डिक्री, जिसके अन्तर्गत किसी अन्य अनुतोष के अनुकल्प के रूप में धन के संदाय की डिक्री भी आती है, निर्णीत-ऋणी से सिविल कारागार में निरोध द्वारा या उसकी सम्पत्ति की कुर्की और विक्रय द्वारा या दोनों रीति से निष्पादित की जा सकेगी।

31. **विनिर्दिष्ट जंगम सम्पत्ति के लिए डिक्री**—(1) जहां डिक्री किसी विनिर्दिष्ट जंगम वस्तु के, या किसी विनिर्दिष्ट जंगम वस्तु में के अंश के लिए है वहां यदि जंगम वस्तु या अंश का अभिग्रहण साध्य हो तो उस जंगम वस्तु के या अंश के अभिग्रहण द्वारा और उस पक्षकार को जिसके पक्ष में वह न्याय-निर्णीत किया गया है या ऐसे व्यक्ति को, जिसे वह अपनी ओर से परिदान प्राप्त करने के लिए नियुक्त करे, परिदान द्वारा या निर्णीत-ऋणी के सिविल कारागार में निरोध द्वारा या उसकी सम्पत्ति की कुर्की द्वारा या दोनों रीति से निष्पादित की जा सकेगी ।

(2) जहां उपनियम (1) के अधीन की गई कोई कुर्की [3][तीन मास] के लिए प्रवृत्त रह चुकी है वहां यदि निर्णीत-ऋणी ने डिक्री का आज्ञानुवर्तन नहीं किया है और डिक्रीदार ने कुर्क की गई सम्पत्ति के विक्रय किए जाने के लिए आवेदन किया है तो ऐसी सम्पत्ति का विक्रय किया जा सकेगा और आगमों में से न्यायालय डिक्रीदार को उन दशाओं में, जहां जंगम सम्पत्ति के परिदान के अनुकल्पस्वरूप दिए जाने के लिए कोई रकम डिक्री द्वारा निश्चित की गई है, ऐसी रकम और अन्य दशाओं में ऐसा प्रतिकर, जो वह ठीक समझे, दे सकेगा और बाकी (यदि कोई हो) निर्णीत-ऋणी के आवेदन पर उसे देगा।

(3) जहां निर्णीत-ऋणी ने डिक्री का आज्ञानुवर्तन कर दिया गया है और उसका निष्पादन करने के लिए सभी खर्चों का संदाय

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) कुछ शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
3. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977) से "छह मास" के स्थान पर प्रतिस्थापित।

कर दिया गया है जिनका संदाय करने के लिए वह आबद्ध है या जहां कुर्की की तारीख से [1][तीन मास] का अंत होने तक सम्पत्ति के विक्रय किए जाने के लिए कोई आवेदन नहीं किया गया है या यदि किया गया है तो नामंजूर कर दिया गया है वहां कुर्की समाप्त हो जाएगी

32. विनिर्दिष्ट पालन के लिए दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए या व्यादेश के लिए डिक्री—(1) जहां उस पक्षकार को, जिसके विरुद्ध संविदा के विनिर्दिष्ट पालन के लिए या दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए या व्यादेश के लिए कोई डिक्री पारित की गई है, उस डिक्री के आज्ञानुवर्तन के लिए अवसर मिल चुका है और उसका आज्ञानुवर्तन करने में वह जानबूझकर असफल रहा है वहां वह डिक्री [2][दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए डिक्री की दशा में, उसकी सम्पत्ति की कुर्की के द्वारा या संविदा के विनिर्दिष्ट पालन के लिए या व्यादेश के लिए डिक्री की दशा में] सिविल कारागार में उसके निरोध द्वारा या उसकी सम्पत्ति की कुर्की द्वारा, या दोनों रीति से प्रवृत्त की जा सकेगी।

(2) जहां वह पक्षकार जिसके विरुद्ध विनिर्दिष्ट पालने के लिए या व्यादेश के लिए डिक्री पारित की गई है, कोई निगम है वहां डिक्री उस निगम की सम्पत्ति की कुर्की द्वारा या न्यायालय की इजाजत से उसके निदेशकों या अन्य प्रधान अधिकारियों के सिविल कारागार में निरोध द्वारा या कुर्की और निरोध दोनों रीति से प्रवृत्त की जा सकेगी।

(3) जहां उपनियम (1) या उपनियम (2) के अधीन की गई कोई कुर्की [3][छह मास] के लिए प्रवृत्त रह चुकी है वहां यदि निर्णीत-ऋणी ने डिक्री का आज्ञानुवर्तन नहीं किया है और डिक्रीदार ने कुर्क की गई सम्पत्ति के विक्रय किए जाने के लिए आवेदन किया है तो ऐसी सम्पत्ति का विक्रय किए जाने के लिए आवेदन किया है तो ऐसी सम्पत्ति का विक्रय किया जा सकेगा और आगमों में से न्यायालय डिक्रीदार को ऐसा प्रतिकर दे सकेगा जो वह ठीक समझे और बाकी (यदि कोई हो) निर्णीत-ऋणी के आवेदन पर उसे देगा।

(4) जहां निर्णीत-ऋणी ने डिक्री का आज्ञानुवर्तन कर दिया है और उसका निष्पादन करने के लिए सभी खर्चों का संदाय करने के लिए वह आबद्ध है या जहां कुर्की की तारीख से [3][छह मास] का अन्त होने तक सम्पत्ति के विक्रय किए जाने के लिए कोई आवेदन नहीं किया गया है या यदि किया या है तो नामंजूर कर दिया गया है वहां कुर्की नहीं रह जाएगी।

(5) जहां संविदा के विनिर्दिष्ट पालन की या व्यादेश की किसी डिक्री का आज्ञानुवर्तन नहीं किया गया है वहां न्यायालय पूर्वोक्त सभी आदेशिकाओं के या उनमें से किसी के भी बदले में या उनके साथ-साथ निदेश दे सकेगा कि वह कार्य, जिसके किए जाने की अपेक्षा की गई थी, जहां तक हो सके, डिक्रीदार या न्यायालय द्वारा नियुक्त किए गए किसी अन्य व्यक्ति द्वारा निर्णीत-ऋणी के खर्चे पर किया जा सकेगा और कार्य कर दिए जाने पर जो व्यय उपगत हुए हों वे ऐसी रीति से अभिनिश्चित किए जा सकेंगे जो न्यायालय निदिष्ट करे और इस प्रकार वसूल किए जा सकेंगे मानो वे डिक्री में ही सम्मिलित हों।

दृष्टांत

क, जो बहुत कम सम्पत्ति वाला व्यक्ति है, एक ऐसा निर्माण खड़ा करता है जो ख की कौटुम्बिक हवेली को मानव निवास के अयोग्य बना देता है। क, कारागार में निरुद्ध किए जाने और अपनी सम्पत्ति के कुर्क होने पर भी ख के द्वारा उसके विरुद्ध अधिप्राप्त की गई और अपना निर्माण हटाने के लिए उसे निर्दिष्ट करने वाली डिक्री का आज्ञानुवर्तन करने से इंकार करता है। न्यायालय की यह राय क की सम्पत्ति के विक्रय द्वारा प्राप्त होने वाली कोई भी राशि इतनी न होगी कि वह ख की हवेली के मूल्य में अवक्षयण के लिए उसको उसके लिए पर्याप्त प्रतिकर हो। ख, न्यायालय से आवेदन कर सकेगा कि वह निर्माण हटा दिया जाए और उसे हटाने के खर्चे को निष्पादन कार्यवाहियों में क से वसूल कर सकेगा।

33. दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्रियों का निष्पादन करने में न्यायालय का विवेकाधिकार—(1) नियम 32 में किसी बात के होते हुए भी, न्यायालय दाम्पत्य अधिकार के प्रत्यास्थापन की डिक्री [4][पति के विरुद्ध] पारित करते समय या तत्पश्चात् किसी भी समय, यह आदेश कर सकेगा कि डिक्री [5][इस नियम में उपबन्धित रीति से निष्पादित की जाएगी]।

(2) जहां न्यायालय ने उपनियम (1) के अधीन कोई आदेश किया है [6]*** वहां यह आदेश कर सकेगा कि डिक्री या

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977) से "छह मास" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1923 के अधिनियम सं० 29 की धारा 2 द्वारा अन्तःस्थापित।
3. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) "एक वर्ष" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
4. 1923 के अधिनियम सं० 29 की धारा 3 द्वारा अन्तःस्थापित।
5. 1923 के अधिनियम सं० 29 की धारा 3 द्वारा "कारागार में निरोध द्वारा निष्पादित नहीं की जाएगी" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
6. 1923 के अधिनियम सं० 29 की धारा 3 द्वारा "और डिक्रीदार पत्नी है" शब्दों का लोप किया गया।

आज्ञानुवर्तन ऐसी अवधि के भीतर न किए जाने की दशा में जो इस निमित्त नियत की जाए, निर्णीत-ऋणी डिक्रीदार को ऐसे कालिक संदाय करेगा जो न्यायसंगत हों और यदि न्यायालय यह ठीक समझे तो वह निर्णीत-ऋणी से अपेक्षा करेगा कि वह न्यायालय के समाधानप्रद रूप में डिक्रीदार को ऐसे कालिक संदाय प्रतिभूत करे।

(3) न्यायालय धन के कालिक संदाय के लिए उपनियम (2) के अधीन किए गए किसी भी आदेश में फेरफार या उपान्तर संदाय के समयों को परिवर्तित करके या रकम को बढ़ा या घटा करके समय-समय पर कर सकेगा या इस प्रकार संदाय किए जाने के लिए आदिष्ट पूरे धन या उसके किसी भी भाग की बाबत उसे अस्थायी रूप से निलम्बित कर सकेगा और उसे पूर्णतः या भागतः ऐसे पुनः प्रवर्तित कर सकेगा जो वह न्यायसंगत समझे।

(4) इस नियम के अधीन संदत्त किए जाने के लिए आदिष्ट कोई भी धन इस प्रकार वसूल किया जा सकेगा मानो वह धन के संदाय की डिक्री के अधीन संदेय हो।

34. **दस्तावेज के निष्पादन या परक्राम्य लिखत के पृष्ठांकन के लिए डिक्री**—(1) जहां डिक्री किसी दस्तावेज के निष्पादन के लिए या किसी परक्राम्य लिखत के पृष्ठांकन के लिए है और निर्णीत-ऋणी डिक्री का आज्ञानुवर्तन करने में उपेक्षा करता है या उसका आज्ञानुवर्तन करने से इंकार करता है वहां डिक्रीदार डिक्री के निबन्धनों के अनुसार दस्तावेज या पृष्ठांकन का प्रारूप तैयार कर सकेगा और उसे न्यायालय को परिदत्त कर सकेगा।

(2) तब न्यायालय निर्णीत-ऋणी से यह अपेक्षा करने वाली सूचना के साथ प्रारूप की तामील निर्णीत-ऋणी पर कराएगा कि वह अपने आक्षेप (यदि कोई हों) इतने समय के भीतर करे जितना न्यायालय इस निमित्त नियत करे।

(3) जहां निर्णीत-ऋणी प्रारूप के संबंध में आक्षेप करता है वहां उसके आक्षेप ऐसे समय के भीतर लिखित रूप में कथित किए जाएंगे और न्यायालय प्रारूप को अनुमोदित या परिवर्तित करने वाला ऐसा आदेश करेगा जो वह ठीक समझे।

(4) डिक्रीदार प्रारूप की एक प्रति ऐसे परिवर्तनों सहित (यदि कोई हों), जो न्यायालय ने निर्दिष्ट किए हों, उचित स्टाम्प-पत्र पर, यदि तत्समय प्रवृत्त विधि द्वारा ऐसा स्टाम्प अपेक्षित हो, न्यायालय को परिदत्त करेगा, और न्यायाधीश या ऐसा अधिकारी जो इस निमित्त नियुक्त किया जाए, ऐसे परिदत्त दस्तावेज को निष्पादित करेगा।

(5) इस नियम के अधीन दस्तावेज का निष्पादन या परक्राम्य लिखत का पृष्ठांकन निम्नलिखित प्ररूप में हो सकेगा, अर्थात्:—

"ङ च द्वारा क ख के विरुद्ध वाद में क ख की ओर से.....न्यायालय का न्यायाधीश (या यथास्थिति) ग घ", और उसका वही प्रभाव होगा जो उसे निष्पादन करने या पृष्ठांकन करने के लिए आदिष्ट पक्षकार द्वारा दस्तावेज से निष्पादन या परक्राम्य लिखत के पृष्ठांकन का होता।

[1][(6) (क) जहां दस्तावेज का रजिस्ट्रीकरण तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अधीन अपेक्षित है वहां न्यायालय या न्यायालय का ऐसा अधिकारी जो न्यायालय द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत किया जाए, ऐसी विधि के अनुसार दस्तावेज का रजिस्ट्रीकरण कराएगा।

(ख) जहां दस्तावेज का रजिस्ट्रीकरण इस प्रकार अपेक्षित नहीं है किंतु डिक्रीदार उसका रजिस्ट्रीकरण कराना चाहता है वहां न्यायालय ऐसा आदेश कर सकेगा जो वह ठीक समझे।

(ग) जहां न्यायालय किसी दस्तावेज के रजिस्ट्रीकरण के लिए कोई आदेश करता है वहां वह रजिस्ट्रीकरण के व्ययों के बारे में ऐसा आदेश कर सकेगा जो वह ठीक समझे।]

35. **स्थावर सम्पत्ति के लिए डिक्री**—(1) जहां डिक्री किसी स्थावर सम्पत्ति के परिदान के लिए है वहां उसका कब्जा उस पक्षकार को जिसे वह न्यायनिर्णीत किया गया है या ऐसे व्यक्ति को जिसे वह अपनी ओर से परिदान प्राप्त करने के लिए नियुक्त करे, और यदि आवश्यक हो तो डिक्री द्वारा आबद्ध किसी ऐसे व्यक्ति को जो सम्पत्ति को खाली करने से इंकार करता है, हटा करके परिदत्त किया जाएगा।

(2) जहां डिक्री स्थावर सम्पत्ति के संयुक्त कब्जे के लिए है वहां सम्पत्ति में के किसी सहजदृश्य स्थान पर वारण्ट की प्रति को लगाकर और डिक्री के सार को किसी सुविधाजनक स्थान पर डोंडी पिटवा कर या अन्य रूढ़िक ढंग से उद्घोषित करके ऐसे कब्जे का परिदान किया जाएगा।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) उपनियम (6) के स्थान पर प्रतिस्थापित।

(3) जहां किसी निर्माण या अहाते के कब्जे का परिदान किया जाना है और कब्जा रखने वाला व्यक्ति डिक्री द्वारा आबद्ध होते हुए वहां तक अबाध पहुंच नहीं होने देता है वहां न्यायालय देश की रूढ़ियों के अनुसार लोगों के सामने न आने वाली स्त्री को युक्तियुक्त चेतावनी देकर और हट जाने की सुविधा देने के पश्चात् अपने अधिकारियों के माध्यम से किसी ताले या चटकनी को हटा सकेगा या खोल सकेगा या किसी द्वार को तोड़ कर खोल सकेगा या डिक्रीदार को कब्जा देने के लिए आवश्यक किसी भी अन्य कार्य को कर सकेगा।

36. जब स्थावर सम्पत्ति अधिधारी के अधिभोग में है तब ऐसी सम्पत्ति के परिदान के लिए डिक्री—जहां डिक्री किसी ऐसी स्थावर सम्पत्ति के परिदान के लिए है जो ऐसे अधिधारी या अन्य व्यक्ति के अधिभोग में है जो उस पर अधिभोग रखने का हकदार है और डिक्री द्वारा इस बात के लिए आबद्ध नहीं है कि ऐसा अधिभोग त्याग दे वहां न्यायालय यह आदेश देगा कि सम्पत्ति में के किसी सहजदृश्य स्थान पर वारण्ट की प्रति को लगाकर और सम्पत्ति के संबंध में डिक्री के सार को किसी सुविधाजनक स्थान पर डोंडी पिटवा कर या अन्य रूढ़िक ढंग से अधिभोगी को उद्घोषित करके परिदान किया जाए।

गिरफ्तारी और सिविल कारागार में निरोध

37. कारागार में निरुद्ध किए जाने के विरुद्ध हेतुक दर्शित करने के लिए निर्णीत-ऋणी को अनुज्ञा देने की वैवेकिक शक्ति—(1) इन नियमों में किसी बात के होते हुए भी, जहां धन के संदाय के लिए डिक्री का निष्पादन ऐसे निर्णीत-ऋणी की जो आवेदन के अनुसरण में गिरफ्तार किए जाने के दायित्व के अधीन है, गिरफ्तारी और सिविल कारागार में निरोध के द्वारा करने के लिए, आवेदन है वहां न्यायालय उसकी गिरफ्तारी के लिए वारण्ट निकालने के बदले उससे यह अपेक्षा करने वाली सूचना उसके नाम [1][निकालेगा] कि उस दिन को जो उस सूचना में विनिर्दिष्ट किया जाएगा, वह न्यायालय में उपसंजात हो और हेतुक दर्शित करे कि सिविल कारागार को उसे क्यों न सुपुर्द कर दिया जाए:

[2][परंतु यदि न्यायालय का शपथपत्र द्वारा या अन्यथा यह समाधान हो जाता है कि यह सम्भाव्यता है कि निर्णीत-ऋणी डिक्री के निष्पादन में विलम्ब करने के उद्देश्य से फरार हो जाए या न्यायालय की अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं को छोड़ दे या उसे ऐसा करने का परिणाम यह होगा कि डिक्री के निष्पादन में विलम्ब होगा तो ऐसी सूचना देना आवश्यक नहीं होगा।]

(2) जहां सूचना के आज्ञानुवर्तन में उपसंजाति न की जाए वहां यदि डिक्रीदार ऐसा अपेक्षित करे तो न्यायालय निर्णीत-ऋणी की गिरफ्तारी के लिए वारण्ट निकालेगा।

38. गिरफ्तारी के वारण्ट में निर्णीत-ऋणी के लाए जाने के लिए निदेश होगा—निर्णीत-ऋणी की गिरफ्तारी के वारण्ट में उस अधिकारी को जिसे उसका निष्पादन न्यस्त किया गया है, यह निदेश होगा कि वह उसे न्यायालय के समक्ष सुविधानुसार पूर्ण शीघ्रता से लाए यदि निर्णीत-ऋणी वह रकम जिसे देने के लिए वह आदिष्ट किया गया है, उस पर ऐसे ब्याज के और यदि कोई खर्चा हो तो ऐसे खर्चे के सहित, जिसके लिए वह दायी है, पहले ही संदत्त नहीं कर देता है।

39. जीवन-निर्वाह भत्ता—(1) जब तक और जिस समय तक डिक्रीदार ने न्यायालय में ऐसी राशि जमा न कर दी हो, जो न्यायाधीश निर्णीत-ऋणी की गिरफ्तारी से लेकर उसके न्यायालय के समक्ष लाए जा सकने तक उसके जीवन-निर्वाह के लिए पर्याप्त समझता है, तब तक कोई निर्णीत-ऋणी डिक्री को निष्पादन में गिरफ्तार नहीं किया जाएगा।

(2) जहां निर्णीत-ऋणी डिक्री के निष्पादन में सिविल कारागार को सुपुर्द किया जाता है वहां न्यायालय उसके जीवन-निर्वाह के लिए ऐसा मासिक भत्ता नियत करेगा जितने के लिए वह धारा 57 के अधीन नियत मापमानों के अनुसार हकदार है या जहां ऐसे कोई मापमान नियत नहीं किए गए हैं वहां जितना उसके विचार में उस वर्ग के बारे में पर्याप्त हो जिस वर्ग का निर्णीत-ऋणी है।

(3) न्यायालय द्वारा नियत किया गया मासिक भत्ता उस पक्षकार द्वारा, जिसके आवेदन पर निर्णीत-ऋणी गिरफ्तार किया गया है, अग्रिम मासिक संदायों द्वारा हर एक मास के प्रथम दिन के पूर्व दिया जाएगा।

(4) पहला संदाय न्यायालय के उचित अधिकारी को चालू मास के ऐसे भाग के लिए किया जाएगा जो निर्णीत-ऋणी के सिविल कारागार को सुपुर्द किए जाने के पूर्व शेष है और पश्चात्वर्ती संदाय (यदि कोई हो) सिविल कारागार के भारसाधक अधिकारी को किए जाएंगे।

---

1. 1936 के अधिनियम सं० 21 की धारा 3 द्वारा "निकाल सकेगा" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1936 के अधिनियम सं० 21 की धारा 3 द्वारा अन्तःस्थापित।

(5) सिविल कारागार में निर्णीत-ऋणी के जीवन-निर्वाह के लिए डिक्रीदार द्वारा संवितरित की गई राशियां वाद के खर्चे समझी जाएंगी:

परंतु निर्णीत-ऋणी ऐसे संवितरित की गई किसी भी राशि के लिए न तो सिविल कारागार में निरुद्ध किया जाएगा और न गिरफ्तार किया जाएगा।

[1][40. सूचना के आज्ञानुवर्तन में या गिरफ्तारी के पश्चात् निर्णीत-ऋणी के उपसंजात होने पर कार्यवाहियां—(1) जब निर्णीत-ऋणी नियम 37 के अधीन निकाली गई सूचना के आज्ञानुवर्तन में न्यायालय के सामने उपसंजात होता है या धन के संदाय की डिक्री के निष्पादन में गिरफ्तार किए जाने के पश्चात् न्यायालय के सामने लाया जाता है तब न्यायालय डिक्रीदार को सुनने के लिए अग्रसर होगा और ऐसा सभी साक्ष्य लेगा जो निष्पादन के लिए अपने आवेदन के समर्थन में उसके द्वारा पेश किया जाए और तब निर्णीत-ऋणी को हेतुक दर्शित करने का अवसर देगा कि वह सिविल कारागार को क्यों न सुपुर्द कर दिया जाए।

(2) उपनियम (1) के अधीन या तो जांच की समाप्ति लम्बित रहने तक न्यायालय स्वविवेकानुसार आदेश कर सकेगा कि निर्णीत-ऋणी न्यायालय के अधिकारी की अभिरक्षा में निरुद्ध किया जाए या उसके द्वारा न्यायालय को समाधानप्रद रूप में इस बात की प्रतिभूति दिये जाने पर कि अपेक्षित किए जाने पर वह उपसंजात होगा न्यायालय उसे छोड़ सकेगा।

(3) उपनियम (1) के अधीन जांच की समाप्ति पर न्यायालय धारा 51 के उपबंधों और इस संहिता के अन्य उपबंधों के अधीन रहते हुए निर्णीत-ऋणी के सिविल कारागार में निरुद्ध किए जाने का आदेश कर सकेगा और इस दशा में जब वह पहले से ही गिरफ्तारी में नहीं है उसे गिरफ्तार कराएगा:

परंतु निर्णीत-ऋणी को डिक्री की तुष्टि करने का अवसर देने के लिए न्यायालय निरोध का आदेश करने के पहले निर्णीत-ऋणी को न्यायालय के अधिकारी की अभिरक्षा में पन्द्रह दिन से अनधिक विनिर्दिष्ट अवधि के लिए रहने दे सकेगा या उसके विनिर्दिष्ट अवधि के अवसान पर उपसंजात होने के लिए, यदि डिक्री की तुष्टि उससे पहले ही न कर दी गई हो तो, उसके द्वारा न्यायालय को समाधानप्रद रूप में प्रतिभूति दिए जाने पर उसे छोड़ सकेगा।

(4) इस नियम के अधीन छोड़ा गया निर्णीत-ऋणी पुनः गिरफ्तार किया जा सकेगा।

(5) जब न्यायालय उपनियम (3) के अधीन निरोध का आदेश न करे तब वह आवेदन को नामंजूर करेगा और यदि निर्णीत-ऋणी गिरफ्तारी में हो तो उसको छोड़े जाने का निदेश देगा।]

सम्पत्ति की कुर्की

41. निर्णीत-ऋणी की अपनी सम्पत्ति के बारे में उसकी परीक्षा—[2][(1)] जहां डिक्री धन के संदाय के लिए है वहां डिक्रीदार न्यायालय से इस आदेश के लिए आवेदन कर सकेगा कि—

(क) निर्णीत-ऋणी की, अथवा

(ख) [3][उस दशा में जिसमें निर्णीत-ऋणी निगम हो] उसके किसी अधिकारी की, अथवा

(ग) किसी भी अन्य व्यक्ति की,

यह मौखिक परीक्षा की जाए कि क्या निर्णीत-ऋणी को कोई ऋण शोध्य हैं और हैं तो कौन से हैं और क्या निर्णीत-ऋणी की ऐसी कोई अन्य सम्पत्ति या साधन हैं जिनसे डिक्री की तुष्टि की जा सके और हैं तो कौन से हैं और न्यायालय ऐसे निर्णीत-ऋणी या अधिकारी या अन्य व्यक्ति की हाजिरी और उसकी परीक्षा के लिए और किन्हीं बहियों या दस्तावेजों के पेश किए जाने के लिए आदेश कर सकेगा।

[4][(2) जहां धन के संदाय के लिए कोई डिक्री तीस दिन की अवधि तक अतुष्ट रही है वहां न्यायालय, डिक्रीदार के आवेदन

---

1. 1936 के अधिनियम सं० 21 की धारा 4 द्वारा मूल नियम 40 के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) नियम 41 को उस नियम के उपनियम (1) के रूप में पुनःसंख्यांकित किया गया।
3. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) "निगम की दशा में" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
4. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

पर और उपनियम (1) के अधीन अपनी शक्तियों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, आदेश द्वारा, निर्णीत-ऋणी से या जहां निर्णीत-ऋणी निगम है वहां उसके किसी अधिकारी से यह अपेक्षा कर सकेगा कि वह निर्णीत-ऋणी की आस्तियों की विशिष्टियों का कथन करने वाला एक शपथ पत्र दे।

(3) उपनियम (2) के अधीन दिए गए किसी आदेश की अवज्ञा की दशा में, आदेश देने वाला न्यायालय या कोई ऐसा न्यायालय जिसे कार्यवाही अन्तरित की गई है, निदेश दे सकेगा कि आदेश की अवज्ञा करने वाले व्यक्ति को सिविल कारागार में उतनी अवधि के लिए जो तीन मास से अनधिक की हो सकेगी, तब तक निरुद्ध किया जाए जब तक कि ऐसी अवधि के अवसान से पूर्व न्यायालय उसको छोड़े जाने का निदेश न दे।]

42. भाटक या अन्तःकालीन लाभों या तत्पश्चात् अन्य बातों के लिए, जिसकी रकम बाद में अवधारित होनी है, डिक्री की दशा में कुर्की—जहां डिक्री भाटक या अंतःकालीन लाभों या किसी अन्य बात के लिए जांच निदिष्ट करती है वहां निर्णीत-ऋणी की सम्पत्ति इसके पूर्व कि निर्णीत-ऋणी द्वारा शोध्य रकम अभिनिश्चित कर ली गई हो ऐसे कुर्क की जा सकेगी जैसे धन के संदाय की मामूली डिक्री की दशा में कुर्क की जा सकती है।

43. निर्णीत-ऋणी के कब्जे में की ऐसी जंगम सम्पत्ति की कुर्की जो कृषि उपज से भिन्न है—जहां कुर्क की जाने वाली सम्पत्ति निर्णीत-ऋणी के कब्जे में की कृषि उपज से भिन्न जंगम संपत्ति है वहां कुर्की वास्तविक अभिग्रहण के द्वारा की जाएगी और कुर्की करने वाला अधिकारी सम्पत्ति को स्वयं अपनी अभिरक्षा में या अपने अधीनस्थों में से एक की अभिरक्षा में रखेगा और उसकी सम्यक् अभिरक्षा के लिए उत्तरदायी होगा:

परंतु जब अभिगृहीत सम्पत्ति शीघ्रतया और प्रकृत्या क्षयशील है या जब उसे अभिरक्षा में रखने का व्यय उसके मूल्य से ज्यादा होना संभाव्य है तब कुर्क करने वाला अधिकारी उसका तुरंत ही विक्रय कर सकेगा।

[1][43क. **जंगम सम्पत्ति की अभिरक्षा**—(1) जहां कुर्क की गई सम्पत्ति पशुधन, कृषि उपकरण या अन्य ऐसी चीजें हैं जो सुविधापूर्वक हटाई नहीं जा सकतीं और कुर्क करने वाला अधिकारी नियम 43 के परन्तुक के अधीन कार्य नहीं कर सकता है वहां वह, निर्णीत-ऋणी की या डिक्रीदार की या ऐसी सम्पत्ति में हितबद्ध होने का दावा करने वाले किसी अन्य व्यक्ति की प्रेरणा पर उसे उस गांव या स्थान में जहां उसकी कुर्की की गई है, किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति की अभिरक्षा में (जिसे इसमें इसके पश्चात् "अभिरक्षक" कहा गया है) छोड़ सकेगा।

(2) यदि अभिरक्षक, सम्यक् सूचना के पश्चात्, ऐसी सम्पत्ति को न्यायालय द्वारा बताए गए स्थान पर उस अधिकारी के समक्ष जो उस प्रयोजन के लिए प्रतिनियुक्त किया जाए, पेश करने में या उसे उस व्यक्ति को, जिसके पक्ष में न्यायालय द्वारा प्रत्यावर्तन का आदेश किया गया है, प्रत्यावर्तित करने में असफल रहता है या यदि वह सम्पत्ति इस प्रकार पेश या प्रत्यावर्तित किए जाने पर वैसी ही दशा में नहीं है जिस दशा में वह न्यस्त किए जाने के समय थी तो—

(क) अभिरक्षक उस हानि या नुकसान के लिए जो उसके व्यतिक्रम से हुआ हो, डिक्रीदार, निर्णीत-ऋणी या किसी अन्य व्यक्ति को जो उसके प्रत्यावर्तन का हकदार पाया जाए, प्रतिकर संदत्त करने के दायित्व के अधीन होगा; और

(ख) ऐसे दायित्व का प्रवर्तन—

(i) डिक्रीकर की प्रेरणा पर इस प्रकार किया जा सकेगा मानो अभिरक्षक धारा 145 के अधीन प्रतिभू हो;

(ii) निर्णीत-ऋणी या ऐसे अन्य व्यक्ति की प्रेरणा पर, निष्पादन के लिए आवेदन किए जाने पर, किया जा सकेगा; तथा

(ग) ऐसे दायित्व का अवधारण करने वाला कोई आदेश डिक्री की तरह अपीलनीय होगा।]

44. कृषि उपज की कुर्की—जहां कुर्क की जाने वाली सम्पत्ति कृषि उपज है वहां कुर्की के वारण्ट की एक प्रति—

(क) उस दशा में, जिसमें ऐसी उपज उगती फसल है, उस भूमि पर लगाकर जिसमें ऐसी फसल उगी है, अथवा

(ख) उस दशा में, जिसमें ऐसी उपज काटी जा चुकी है या इकट्ठी की जा चुकी है, खलिहान में या अनाज गाहने के स्थान में या तदरूप स्थान में या चारे के ढेर पर, जिस पर या जिसमें वह निक्षिप्त की गई है,

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

लगाकर और एक अन्य प्रति उस गृह के, जिसमें निर्णीत-ऋणी मामूली तौर से निवास करता है, बाहरी द्वार पर या किसी अन्य सहजदृश्य भाग पर लगाकर, या न्यायालय की इजाजत से उस गृह के, जिसमें वह कारबार करता है या अभिलाभ के लिए स्वयं काम करता है या जिसके बारे में यह ज्ञात है कि वहां वह अंतिम बार निवास करता था या कारबार करता था या अभिलाभ के लिए स्वयं काम करता था, बाहरी द्वार पर या उसके किसी अन्य सहजदृश्य भाग पर लगाकर कुर्क की जाएगी और तब यह समझा जाएगा कि उपज न्यायालय के कब्जे में आ गई है।

45. **कुर्क की गई कृषि उपज के बारे में उपबंध**—(1) जहां कृषि उपज की कुर्की की गई है वहां न्यायालय उसकी अभिरक्षा के लिए ऐसा इंतजाम करेगा जो वह पर्याप्त समझे और उगती फसल की कुर्की के लिए हर आवेदन में न्यायालय को ऐसे इन्तजाम करने के लिए समर्थ करने के प्रयोजन से वह समय विनिर्दिष्ट होगा जब यह संभाव्यता है कि वह काटे जाने या इकट्ठी की जाने के योग्य हो जाएगी।

(2) ऐसी शर्तों के अधीन रहते हुए जो कुर्की के आदेश में या किसी पश्चात्वर्ती आदेश में न्यायालय द्वारा इस निमित्त अधिरोपित की जाए, निर्णीत-ऋणी उपज की देखभाल कर सकेगा, उसे काट सकेगा, इकट्ठी कर सकेगा, भण्डार में रख सकेगा और उसके पकाने या परिरक्षण के लिए आवश्यक कोई अन्य कार्य कर सकेगा और यदि निर्णीत-ऋणी ऐसे सभी कार्यों को या उनमें से किसी को करने में असफल रहता है तो डिक्रीदार न्यायालय की अनुज्ञा से और ऐसी ही शर्तों के अधीन रहते हुए सभी कार्यों या उनमें से किसी को या तो स्वयं कर सकेगा या अपने द्वारा इस निमित्त नियुक्त किसी व्यक्ति द्वारा करा सकेगा और डिक्रीदार द्वारा उपगत खर्चे निर्णीत-ऋणी से ऐसे वसूल किए जा सकेंगे मानो वे डिक्री के अंतर्गत हों या उसके भागरूप हों।

(3) उगती फसल के रूप में कुर्क की गई उपज के बारे में केवल इस कारण कि वह काट कर धरती से अलग कर ली गई है यह न समझा जाएगा कि वह कुर्की के अधीन नहीं रह गई है और न उसके बारे में समझा जाएगा कि उसकी पुनः कुर्की करना अपेक्षित है।

(4) जहां उगती फसल की कुर्की के लिए आदेश फसल के काटे जाने या इकट्ठे किए जाने के योग्य होने की संभाव्यता के बहुत समय पूर्व दिया गया है वहां न्यायालय आदेश का निष्पादन ऐसे समय के लिए निलम्बित कर सकेगा जो वह ठीक समझे और कुर्की के आदेश के निष्पादन के लम्बित रहने तक फसल के हटाने को प्रतिषिद्ध करने वाला अतिरिक्त आदेश स्वविवेकानुसार कर सकेगा।

(5) वह उगती फसल जो अपनी प्रकृति के कारण भण्डार में रखने योग्य नहीं है, किसी ऐसे समय पर इस नियम के अधीन कुर्क नहीं की जाएगी जो उस समय से पूर्व बीस दिन से कम का हो जिस समय पर उसके काटे जाने या इकट्ठी किए जाने के योग्य होने की संभाव्यता है।

46. **ऐसे ऋण, अंश या अन्य सम्पत्ति की कुर्की जो निर्णीत-ऋणी के कब्जे में नहीं है**—(1) (क) ऐसे ऋण की दशा में जो परक्राम्य लिखत के द्वारा प्रतिभूत नहीं है,

(ख) किसी निगम की पूंजी में के अंश की दशा में,

(ग) किसी न्यायालय में निक्षिप्त या उसकी अभिरक्षा में की सम्पत्ति के सिवाय किसी अन्य ऐसी जंगम सम्पत्ति की दशा में जो निर्णीत-ऋणी के कब्जे नहीं है,

कुर्की—

(i) ऋण की दशा में जब तक कि न्यायालय का अतिरिक्त आदेश न हो, तब तक लेनदार को ऋण की वसूली करने से और ऋणी को उस ऋण को चुकाने से;

(ii) अंश की दशा में उस व्यक्ति को, जिसके नाम में अंश उस समय दर्ज है उसे अन्तरित करने से या उस पर के किसी लाभांश को प्राप्त करने से;

(iii) पूर्वोक्त को छोड़कर अन्य जंगम सम्पत्ति की दशा में उस पर कब्जा रखने वाले व्यक्ति को उसे निर्णीत-ऋणी को देने से, प्रतिषिद्ध करने वाले लिखित आदेश द्वारा की जाएगी।

(2) ऐसे आदेश की एक प्रति न्याय-सदन के किसी सहजदृश्य भाग पर लगाई जाएगी और एक अन्य प्रति ऋण की दशा में

ऋणी को, अंश की दशा में निगम के उचित अधिकारी को, और (पूर्वोक्त को छोड़कर) अन्य जंगम सम्पत्ति की दशा में उस पर कब्जा रखने वाले व्यक्ति को भेजी जाएगी।

(3) उपनियम (1) के खण्ड (i) के अधीन प्रतिषिद्ध ऋणी अपने ऋण की रकम न्यायालय में जमा कर सकेगा और ऐसे जमा करने से वह वैसे ही प्रभावी तौर पर उन्मोचित हो जाएगा जैसे वह उसे पाने के हकदार पक्षकार को संदाय करने से उन्मोचित हो जाता।

[1][46क. **गारनिशी को सूचना**—(1) न्यायालय (बन्धक या प्रभार द्वारा प्रतिभूत ऋण से भिन्न) ऐसे ऋण की दशा में, जिसकी नियम 46 के अधीन कुर्की की गई है, कुर्की कराने वाले लेनदार के आवेदन पर ऐसे ऋण का संदाय करने के दायित्वाधीन गारनिशी को सूचना दे सकेगा जिसमें उससे यह अपेक्षा की जाएगी कि वह निर्णीत-ऋणी को उसके द्वारा शोध्य ऋण या उसका इतना भाग जितना डिक्री और निष्पादन के खर्चों को चुकाने के लिए पर्याप्त हो, न्यायालय में जमा करे या उपसंजात हो तथा कारण दर्शित करे कि उसे वैसा क्यों नहीं करना चाहिए।

(2) उपनियम (1) के अधीन कोई आवेदन शपथपत्र पर किया जाएगा जिसमें अभिकथित तथ्य स्थापित होंगे और यह कथित होगा कि अभिसाक्षी को विश्वास है कि गारनिशी निर्णीत-ऋणी का ऋणी है।

(3) जहां गारनिशी निर्णीत-ऋणी को उसके द्वारा शोध्य रकम या उसका इतना भाग जितना डिक्री और निष्पादन के खर्चों को चुकाने के लिए पर्याप्त है, न्यायालय में जमा कर देता है वहां न्यायालय निदेश दे सकेगा कि वह रकम डिक्री की तुष्टि और निष्पादन के खर्चों को चुकाने के लिए, डिक्रीदार को संदत्त कर दी जाए।

46ख. गारनिशी के विरुद्ध आदेश—जहां गारनिशी निर्णीत-ऋणी को उसके द्वारा शोध्य रकम या उसका इतना भाग जितना डिक्री की तुष्टि और निष्पादन के खर्चों को चुकाने के लिए पर्याप्त है तुरन्त न्यायालय में जमा नहीं करता है और उपसंजात नहीं होता है तथा सूचना के अनुसरण में कारण दर्शित नहीं करता है वहां न्यायालय गारनिशी को आदेश दे सकेगा कि वह ऐसी सूचना के निबन्धनों का अनुपालन करे और ऐसे आदेश पर निष्पादन इस प्रकार किया जा सकेगा मानो ऐसा आदेश उसके विरुद्ध डिक्री हो।

46ग. विवादग्रस्त प्रश्नों का विचारण—जहां गारनिशी दायित्व के बारे में विवाद करता है वहां न्यायालय आदेश कर सकेगा कि दायित्व के अवधारण के लिए किसी विवाद्यक या आवश्यक प्रश्न का विचारण इस प्रकार किया जाएगा मानो वह वाद में का विवाद्यक हो और ऐसे विवाद्यक के अवधारण पर ऐसा आदेश या ऐसे आदेश करेगा जो वह ठीक समझे:

परन्तु यदि वह ऋण, जिसके सम्बन्ध में नियम 46क के अधीन आवेदन किया गया है, इतनी धनराशि के बारे में है जो न्यायालय की धनसंबंधी अधिकारिता के बाहर है तो न्यायालय निष्पादन के मामले को उस जिला न्यायाधीश के न्यायालय को भेजेगा जिसके उक्त न्यायालय अधीनस्थ है और तब जिला न्यायाधीश का न्यायालय या कोई अन्य सक्षम न्यायालय जिसे वह जिला न्यायाधीश द्वारा अंतरित किया जाए, उसे उसी प्रकार निपटाएगा मानो वह मामला प्रारम्भ में उसी न्यायालय में संस्थित किया गया हो।

46घ. जहां ऋण अन्य व्यक्ति का हो वहां प्रक्रिया—जहां यह सुझाया जाता है या संभाव्य प्रतीत होता है कि ऋण किसी अन्य व्यक्ति का है या ऐसे ऋण पर किसी अन्य व्यक्ति का धारणाधिकार या प्रभार अथवा उसमें अन्य हित है वहां न्यायालय ऐसे अन्य व्यक्ति को आदेश दे सकेगा कि वह उपसंजात हो और ऐसे ऋण के बारे में अपने दावे की प्रकृति और विशिष्टियां, यदि कोई हों, कथित करे और उसे साबित करे।

46ङ. अन्य व्यक्ति के बारे में आदेश—ऐसे अन्य व्यक्ति और किसी ऐसे व्यक्ति या व्यक्तियों को जिन्हें तत्पश्चात् उपसंजात होने का आदेश दिया जाए, या जहां ऐसा अन्य या दूसरा व्यक्ति या दूसरे व्यक्ति ऐसा आदेश दिए जाने पर उपसंजात नहीं होते हैं वहां न्यायालय ऐसा आदेश कर सकेगा जो इसमें इसके पूर्व उपबंधित है या ऐसे अन्य अथवा दूसरे व्यक्ति या व्यक्तियों के, यथास्थिति, धारणाधिकार, प्रभार या हित के सम्बन्ध में, ऐसे निबन्धनों पर, यदि कोई हों, ऐसा अन्य आदेश या ऐसे अन्य आदेश दे सकेगा जो वह ठीक और उचित समझे।

46च. गारनिशी द्वारा किया गया संदाय विधिमान्य उन्मोचन होगा—नियम 46क के अधीन सूचना पर या पूर्वोक्त किसी आदेश के अधीन गारनिशी द्वारा किया गया संदाय निर्णीत-ऋणी और पूर्वोक्त रूप से उपसंजात होने के लिए आदिष्ट किसी अन्य व्यक्ति के विरुद्ध उस रकम के लिए जो संदत्त की गई हो या उद्गृहीत की गई हो उसका विधिमान्य उन्मोचन होगा चाहे वह डिक्री

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) नियम 46क से 46झ तक अन्तःस्थापित।

जिसके निष्पादन में नियम 46क के अधीन आवेदन किया गया था, या ऐसे आवेदन पर की गई कार्यवाहियों में पारित आदेश अपास्त कर दिया जाए या उलट दिया जाए।

46छ. **खर्चे**—नियम 46क के अधीन किए गए किसी आवेदन के और उससे होने वाली किसी कार्यवाही के अथवा उसके आनुषंगिक खर्चे न्यायालय के विवेक के अधीन होंगे।

46ज. **अपीलें**—नियम 46ख, नियम 46ग या नियम 46ङ के अधीन किया गया कोई आदेश डिक्री के रूप में अपीलनीय होगा।

46झ. **परक्राम्य लिखतों को लागू होना**—नियम 46क से 46ज तक के (जिनके अन्तर्गत ये दोनों नियम भी हैं) उपबन्ध नियम 51 के अधीन कुर्क की गई परक्राम्य लिखतों के सम्बन्ध में जहां तक हो सके वैसे ही लागू होंगे जैसे वे ऋणों के सम्बन्ध में लागू होते हैं।]

47. **जंगम सम्पत्ति में अंश की कुर्की**—जहां कुर्क की जाने वाली सम्पत्ति ऐसी जंगम सम्पत्ति में निर्णीत-ऋणी के अंश या हित के रूप में है जो सहस्वामियों के रूप में उसकी और किसी अन्य की है वहां कुर्की निर्णीत-ऋणी को अपने अंश या हित का अन्तरण करने से या उसे किसी भी रूप में भारित करने से प्रतिषिद्ध करने वाली सूचना द्वारा की जाएगी।

48. **सरकार या रेल कम्पनी या स्थानीय प्राधिकारी के सेवक के वेतन या भत्तों की कुर्की**—(1) जहां कुर्क की जाने वाली संपत्ति [1][सरकार के सेवक] या रेल कम्पनी या स्थानीय प्राधिकारी के सेवक का [2][या किसी व्यापार या उद्योग में लगे किसी निगम के जो केन्द्रीय, प्रान्तीय या राज्य अधिनियम द्वारा स्थापित किया गया हो, सेवक का या कम्पनी अधिनियम, 1956 (1956 का 1) की धारा 617 में यथापरिभाषित किसी सरकारी कम्पनी के सेवक का] वेतन या भत्ता है वहां न्यायालय, चाहे निर्णीत-ऋणी या संवितरक अधिकारी ऐसे न्यायालय की अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर हो या नहीं, यह आदेश कर सकेगा कि वह रकम, धारा 60 के उपबन्धों के अधीन रहते हुए, ऐसे वेतन या भत्तों में से या तो एक संदाय में या मासिक किस्तों में जैसा न्यायालय निर्दिष्ट करे, विधारित की जाएगी और ऐसे अधिकारी को, जो [3][समुचित सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा,] [4][इस निमित्त] नियुक्त करे, इस आदेश की सूचना हो जाने पर—

[4][(क) जहां ऐसा वेतन या भत्ते उन स्थानीय सीमाओं के भीतर संवितरित किए जाते हैं, जिन पर इस संहिता का तत्समय विस्तार है वहां वह अधिकारी या अन्य व्यक्ति जिसका कर्तव्य उसका संवितरण करना है, यथास्थिति, आदेश के अधीन शोध्य रकम या मासिक किस्तें विधारित करेगा और न्यायालय के पास भेजेगा;

(ख) जहां ऐसा वेतन या ऐसे भत्ते उक्त सीमाओं से परे संवितरित किए जाते हैं वहां उन सीमाओं के भीतर वाला वह अधिकारी या अन्य व्यक्ति, जिसका कर्तव्य संवितरित किए जाने वाले वेतन या भत्तों की रकम की बाबत संवितरक प्राधिकारी को देना हो, यथास्थिति, आदेश के अधीन शोध्य रकम या मासिक किस्तें न्यायालय के पास भेजेगा और संवितरक प्राधिकारी को निदेश देगा कि वह समय-समय पर संवितरित की जाने वाली रकमों के योग में से उन रकमों के योग को घटा दे जो न्यायालय के पास समय-समय पर भेजी गई हों]।

(2) जहां ऐसे वेतन या भत्तों का कुर्की योग्य भाग कुर्की के किसी पूर्वतन और अतुष्ट आदेश के अनुसरण में पहले से ही विधारित किया जा रहा है और किसी न्यायालय के पास भेजा जा रहा है वहां [5][समुचित सरकार] द्वारा इस निमित्त नियुक्त अधिकारी पश्चात्वर्ती आदेश को तत्काल उस न्यायालय को जिसने उसे निकाला है, विद्यमान कुर्की की सभी विशिष्टियों के पूरे कथन के सहित लौटा देगा।

[6][(3) इस नियम के अधीन किया गया हर आदेश, जब तक कि वह उपनियम (2) के उपबन्धों के अनुसरण

---

1. 1943 के अधिनियम सं० 5 की धारा 3 द्वारा "लोक अधिकारी" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
3. 1942 के अधिनियम सं० 25 की धारा 3 और अनुसूची 2 द्वारा "केन्द्रीय सरकार या प्रान्तीय सरकार उनके राजपत्र में अधिसूचना द्वारा" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
4. 1939 के अधिनियम सं० 26 की धारा 2 द्वारा कुछ मूल शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।
5. 1942 के अधिनियम सं० 25 की धारा 3 और अनुसूची 2 द्वारा "यथास्थिति, केन्द्रीय सरकार या प्रान्तीय सरकार" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
6. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) उपनियम (3) के स्थान पर प्रतिस्थापित।

में लौटा न दिया जाए, अतिरिक्त सूचना या अन्य आदेशिका के बिना, उस समय तक जब तक कि निर्णीत-ऋणी उन स्थानीय सीमाओं के भीतर है जिन पर इस संहिता का तत्समय विस्तार है और यदि वह भारत की संचित निधि में से या राज्य की संचित निधि में से या भारत में किसी रेल कम्पनी या स्थानीय प्राधिकारी या निगम या सरकारी कम्पनी की निधि में से संदेय कोई वेतन या भत्ते पा रहा है तो उस समय तक भी, जब तक कि वह उन सीमाओं के परे है, यथास्थिति, समुचित सरकार या रेल कम्पनी या स्थानीय प्राधिकारी या निगम या सरकारी कम्पनी को आबद्ध करेगा और, यथास्थिति, समुचित सरकार या रेल कंपनी या स्थानीय प्राधिकारी या निगम या सरकारी कम्पनी इस नियम के उल्लंघन में संदत्त की गई किसी भी राशि के लिए दायी होगी।

[1][स्पष्टीकरण—इस नियम में "समुचित सरकार" से अभिप्रेत है,—

(i) केन्द्रीय सरकार की सेवा में के किसी व्यक्ति के या रेल प्रशासन के या छावनी प्राधिकारी के या महापत्तन के पत्तन प्राधिकारी के किसी सेवक के या किसी व्यापार या उद्योग में लगे किसी निगम के जो केन्द्रीय अधिनियम द्वारा स्थापित किया गया हो, किसी सेवक के या ऐसी सरकारी कम्पनी के जिसमें शेयर पूंजी का कोई भाग केन्द्रीय सरकार द्वारा या एक से अधिक राज्य सरकारों द्वारा या भागतः केन्द्रीय सरकार और भागतः एक या अधिक राज्य सरकारों द्वारा धारित हो किसी सेवक के सम्बन्ध में, केन्द्रीय सरकार;

(ii) सरकार के किसी अन्य सेवक के या किसी अन्य स्थानीय प्राधिकारी के किसी सेवक के या किसी व्यापार या उद्योग में लगे किसी निगम के जो प्रान्तीय या राज्य अधिनियम द्वारा स्थापित किया गया हो, किसी सेवक के या किसी अन्य सरकारी कम्पनी के किसी सेवक के सम्बन्ध में, राज्य सरकार।]

[2][48क. **प्राइवेट कर्मचारियों के वेतन या भत्तों की कुर्की**—(1) जहां कुर्क की जाने वाली सम्पत्ति ऐसे सेवक से जिसको नियम 48 लागू होता है, भिन्न किसी सेवक का वेतन या भत्ता है वहां न्यायालय उस दशा में जिसमें उस कर्मचारी का संवितरक अधिकारी न्यायालय की अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर है, यह आदेश कर सकेगा कि वह रकम, धारा 60 के उपबन्धों के अधीन रहते हुए, ऐसे वेतन या भत्तों में से या तो एक संदाय में या मासिक किस्तों में, जैसा न्यायालय निर्दिष्ट करे, विधारित की जाएगी और ऐसे संवितरक अधिकारी को इस आदेश की सूचना हो जाने पर, ऐसा संवितरक अधिकारी, यथास्थिति, आदेश के अधीन शोध्य रकम या मासिक किस्तें न्यायालय के पास भेजेगा।

(2) जहां ऐसे वेतन या भत्तों का कुर्की योग्य भाग कुर्की के किसी पूर्वतन और अनुष्ट आदेश के अनुसरण में पहले से ही विधारित किया जा रहा है या न्यायालय के पास भेजा जा रहा है वहां संवितरक अधिकारी पश्चात्वर्ती आदेश को तत्काल उस न्यायालय को जिसने उसे निकाला है, विद्यमान कुर्की की सभी विशिष्टियों के पूरे कथन के सहित लौटा देगा।

(3) इस नियम के अधीन किया गया हर आदेश जब तक कि वह उपनियम (2) के उपबन्धों के अनुसरण में लौटा न दिया जाए, अतिरिक्त सूचना या अन्य आदेशिका के बिना, उस समय तक जब तक कि निर्णीत-ऋणी उन स्थानीय सीमाओं के भीतर है जिन पर इस संहिता का तत्समय विस्तार है और यदि वह भारत के किसी भाग में के किसी नियोजक की निधि में से संदेय कोई वेतन या भत्ते पर रहा है तो उस समय तक भी जब तक कि वह उन सीमाओं से परे है, नियोजक को आबद्ध करेगा और नियोजन इस नियम के उल्लंघन में संदत्त की गई किसी भी राशि के लिए दायी होगा।

49. **भागीदारी की सम्पत्ति की कुर्की**—(1) इस नियम द्वारा अन्यथा उपबन्धित के सिवाय, किसी भागीदारी की सम्पत्ति उस फर्म के विरुद्ध या उस फर्म के भागीदारों के विरुद्ध उनकी उस हैसियत में पारित डिक्री से भिन्न डिक्री के निष्पादन में कुर्क नहीं की जाएगी और न उसका विक्रय किया जाएगा।

(2) न्यायालय किसी भागीदार के विरुद्ध डिक्री के धारक के आवेदन पर आदेश कर सकेगा कि डिक्री के अधीन शोध्य रकम के संदाय का भार भागीदारी की सम्पत्ति में ऐसे भागीदार के हित और लाभ पर डाल दिया जाए और उसी या पश्चात्वर्ती आदेश से उन लाभों में (चाहे वे पहले ही घोषित किए जा चुके हों या प्रोद्भूत हो रहे हों) ऐसे भागीदारों के अंश का और ऐसे किसी अन्य धन का, जो भागीदारी मद्दे उसे मिलता हो, रिसीवर नियुक्त कर सकेगा और लेखाओं और जांचों के लिए निदेश दे सकेगा और ऐसे हित के विक्रय के लिए आदेश कर सकेगा या ऐसे अन्य आदेश कर सकेगा जो किए जाते या निर्दिष्ट किए जाते यदि ऐसे भागीदार ने अपने

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) स्पष्टीकरण के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

हित को डिक्रीदार के पक्ष में भारित कर दिया होता या जैसे मामले की परिस्थितियां अपेक्षित करें।

(3) अन्य भागीदार या भागीदारों को यह स्वतंत्रता होगी कि वे भारित हित का मोचन किसी भी समय कर लें या विक्रय के लिए निदेशित किए जाने की दशा में उसे क्रय कर लें।

(4) उपनियम (2) के अधीन आदेश के लिए हर आवेदन की तामील निर्णीत-ऋणी पर और उसके भागीदारों पर या उनमें से ऐसों पर, जो [1][भारत] के भीतर हों, की जाएगी।

(5) निर्णीत-ऋणी के किसी भी भागीदार द्वारा उपनियम (3) के अधीन किए गए हर आवेदन की तामील डिक्रीदार पर और निर्णीत-ऋणी पर और अन्य भागीदारों में से ऐसों पर, जो आवेदन में सम्मिलित नहीं हुए हों और जो [1][भारत] के भीतर हों, की जाएगी।

(6) उपनियम (4) या उपनियम (5) के अधीन की गई तामील सभी भागीदारों पर तामील समझी जाएगी और ऐसे आवेदनों पर किए गए सभी आदेशों की तामील उसी प्रकार होगी।

50. **फर्म के विरुद्ध डिक्री का निष्पादन**—(1) जहां डिक्री किसी फर्म के विरुद्ध पारित की गई है वहां निष्पादन—

(क) भागीदारों की किसी सम्पत्ति के विरुद्ध;

(ख) किसी ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध जो आदेश 30 के नियम 6 या नियम 7 के अधीन स्वयं अपने नाम में उपसंजात हुआ है या जिसने अपने अभिवचन में यह स्वीकार किया है कि वह भागीदार है या जो भागीदार न्यायनिर्णीत किया जा चुका है;

(ग) किसी ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध जिस पर समन द्वारा भागीदार के रूप में व्यक्तिगत तामील की गई है और जो उपसंजात होने में असफल रहा है,

अनुदत्त किया जा सकेगा:

परन्तु इस उपनियम की कोई भी बात [2][भारतीय भागीदारी अधिनियम, 1932 (1932 का 9) की धारा 30] के उपबन्धों को परिसीमित करने वाली या उन पर अन्यथा प्रभाव डालने वाली नहीं समझी जाएगी।

(2) जहां डिक्रीदार डिक्री का निष्पादन किसी ऐसे व्यक्ति से भिन्न जो उपनियम (1) के खण्ड (ख) और (ग) में निर्दिष्ट है, किसी व्यक्ति के विरुद्ध उसके फर्म में भागीदार होने के नाते कराने का हकदार होने का दावा करता है वहां वह डिक्री पारित करने वाले न्यायालय से इस इजाजत के लिए आवेदन कर सकेगा और जहां ऐसे दायित्व के बारे में विवाद नहीं किया जाता है वहां ऐसा न्यायालय ऐसी इजाजत दे सकेगा या जहां ऐसे दायित्व के बारे में विवाद किया जाता है वहां आदेश कर सकेगा कि ऐसे व्यक्ति के दायित्व का विचारण और अवधारण किसी ऐसी रीति से किया जाए जिससे वाद का कोई विवाद्यक विचारित और अवधारित किया जा सकता है।

(3) जहां किसी व्यक्ति के दायित्व का विचारण और अवधारण उपनियम (2) के अधीन किया गया है वहां उस पर किए गए आदेश का वही बल होगा और वह अपील के बारे में या अन्यथा उन्हीं शर्तों के अधीन रहेगा मानो वह डिक्री हो।

(4) भागीदार की किसी सम्पत्ति के विरुद्ध हुई डिक्री को छोड़कर, किसी फर्म के विरुद्ध डिक्री उस फर्म में के किसी भागीदार को तभी निर्मुक्त करेगी, दायी बनाएगी, या उसमें के किसी भागीदार पर प्रभाव डालेगी जब कि उपसंजात होने और उत्तर देने के लिए समन की तामील उस पर हो चुकी हो।

[3][(5) इस नियम की कोई बात आदेश 30 के नियम 10 के उपबन्धों के आधार पर किसी हिन्दू अविभक्त कुटुम्ब के विरुद्ध पारित किसी डिक्री को लागू नहीं होगी।]

51. **परक्राम्य लिखतों की कुर्की**—जहां सम्पत्ति ऐसी परक्राम्य लिखत है जो न्यायालय में निक्षिप्त नहीं है और न लोक अधिकारी की अभिरक्षा में है वहां कुर्की वास्तविक अभिग्रहण द्वारा की जाएगी और लिखत न्यायालय में लाई जाएगी और आगे न्यायालय जो आदेश करे उसके अधीन धारण की जाएगी।

52. **न्यायालय या लोक अधिकारी की अभिरक्षा में की सम्पत्ति की कुर्की**—जहां कुर्क की जाने वाली सम्पत्ति किसी

---

1. 1951 के अधिनियम सं० 2 की धारा 3 द्वारा "राज्यों" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) कुछ शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

न्यायालय या लोक अधिकारी की अभिरक्षा में है वहां वह कुर्की ऐसे न्यायालय या अधिकारी से यह अनुरोध करने वाली सूचना द्वारा की जाएगी कि ऐसी सम्पत्ति और उस पर संदेय होने वाला कोई ब्याज या लाभांश उस न्यायालय के जिसने वह सूचना निकाली है, आगे किए जाने वाले आदेशों के अधीन धारण की जाए:

परन्तु जहां ऐसी सम्पत्ति किसी न्यायालय की अभिरक्षा में है वहां हक या पूर्विकता के बारे में कोई ऐसा प्रश्न जो डिक्रीदार के और किसी समनुदेशन के या कुर्की के आधार पर या अन्यथा ऐसी सम्पत्ति में हितबद्ध होने का दावा करने वाले ऐसे अन्य व्यक्ति के बीच पैदा हो जो निर्णीत-ऋणी नहीं है, ऐसे न्यायालय द्वारा अवधारित किया जाएगा।

53. **डिक्रियों की कुर्की**—(1) जहां कुर्क की जाने वाली सम्पत्ति या तो धन के संदाय की या बन्धक या भार के प्रवर्तन में विक्रय की डिक्री है वहां कुर्की—

(क) यदि डिक्रियां उसी न्यायालय के द्वारा पारित की गई थीं तो, ऐसे न्यायालय के आदेश द्वारा की जाएगी, तथा

(ख) यदि वह डिक्री जिसकी कुर्की चाही गई है, किसी अन्य न्यायालय द्वारा पारित की गई थी तो उस डिक्री को जिसका निष्पादन चाहा गया है, पारित करने वाले अन्य न्यायालय द्वारा ऐसे न्यायालय को यह अनुरोध करने वाली सूचना देकर की जाएगी कि वह अपनी डिक्री का निष्पादन तब तक के लिए रोक दे जब तक कि—

(i) जिस डिक्री का निष्पादन चाहा गया है उस डिक्री को पारित करने वाला न्यायालय सूचना को रद्द न कर दे, अथवा

[1][(ii) (क) जिस डिक्री का निष्पादन चाहा गया है उस डिक्री का धारक, या

(ख) ऐसे डिक्रीदार की लिखित पूर्व सहमति से या कुर्क करने वाले न्यायालय की अनुज्ञा से उसका निर्णीत-ऋणी,

ऐसी सूचना प्राप्त करने वाले न्यायालय से यह आवेदन न करे कि वह कुर्क की गई डिक्री का निष्पादन करे।]

(2) जहां न्यायालय उपनियम (1) के खण्ड (क) के अधीन आदेश करता है या उक्त उपनियम के खण्ड (ख) के उपशीर्ष (ii) के अधीन आवेदन प्राप्त करता है वहां उस लेनदार के जिसने डिक्री कुर्क कराई है या उसके निर्णीत-ऋणी के आवेदन पर वह कुर्क की गई डिक्री का निष्पादन करने के लिए अग्रसर होगा और शुद्ध आगमों को उस डिक्री की तुष्टि में लगाएगा जिसका निष्पादन चाहा गया है।

(3) जिस डिक्री का निष्पादन उपनियम (1) में विनिर्दिष्ट प्रकृति की उस अन्य डिक्री की कुर्की द्वारा चाहा गया है उस डिक्री के धारक के बारे में यह समझा जाएगा कि वह कुर्क की गई डिक्री के धारक का प्रतिनिधि है और कुर्क की गई ऐसी डिक्री का निष्पादन ऐसी किसी भी रीति से कराने का हकदार है जो उस डिक्री के धारक के लिए विधिपूर्ण हो।

(4) जहां डिक्री के निष्पादन में कुर्क की जाने वाली सम्पत्ति उपनियम (1) में निर्दिष्ट प्रकृति की डिक्री से भिन्न डिक्री है, वहां कुर्की, उस डिक्री को जिसका निष्पादन चाहा गया है, पारित करने वाले न्यायालय द्वारा उस डिक्री के धारक को जिसकी कुर्की चाही गई है, ऐसी सूचना देकर कि वह उसे किसी भी प्रकार अन्तरित या भारित न करे और जहां ऐसी डिक्री किसी अन्य न्यायालय द्वारा पारित की गई वहां ऐसे अन्य न्यायालय को भी यह सूचना भेजकर कि वह उस डिक्री का जिसकी कुर्की चाही गई है, निष्पादन करने से तब तक प्रविरत रहे जब तक ऐसी सूचना को वह न्यायालय रद्द न कर दे जिसने उसे भेजा है, की जाएगी।

(5) इस नियम के अधीन कुर्क की गई डिक्री का धारक डिक्री का निष्पादन करने वाले न्यायालय को ऐसी जानकारी और सहायता देगा जो युक्तियुक्त रूप से अपेक्षित की जाए।

(6) जिस डिक्री का निष्पादन किसी अन्य डिक्री की कुर्की द्वारा चाहा गया है उस डिक्री के धारक के आवेदन पर वह न्यायालय जो इस नियम के अधीन कुर्की का आदेश करे, ऐसे आदेश की सूचना उस निर्णीत-ऋणी को देगा जो कुर्क की गई डिक्री से आबद्ध है, और कुर्क की गई डिक्री का कोई भी ऐसा संदाय या समायोजन जो ऐसे आदेश का उल्लंघन करके निर्णीत-ऋणी [2][उसकी जानकारी रखते हुए या] ऐसे आदेश की सूचना की प्राप्ति के पश्चात् या तो न्यायालय की मार्फत या अन्यथा करता है, किसी भी न्यायालय द्वारा उस समय तक मान्य नहीं किया जाएगा जब तक कुर्की प्रवृत्त रहती है।

54. **स्थावर सम्पत्ति की कुर्की**—(1) जहां सम्पत्ति स्थावर है, वहां कुर्की ऐसे आदेश द्वारा की जाएगी जो सम्पत्ति को किसी

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) उपखण्ड (ii) के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

भी प्रकार से अन्तरित या भारित करने से निर्णीत-ऋणी को और ऐसे अन्तरण या भार से कोई भी फायदा उठाने से सभी व्यक्तियों को प्रतिषिद्ध करता है।

[1][(1क) आदेश में निर्णीत-ऋणी से यह अपेक्षा की जाएगी कि वह विक्रय की उद्घोषणा के निबन्धनों को तय करने के लिए नियत की जाने वाली तारीख की सूचना प्राप्त करने के लिए किसी विनिर्दिष्ट तारीख को न्यायालय में हाजिर हो।]

(2) वह आदेश ऐसी सम्पत्ति में के या उसके पार्श्वस्थ किसी स्थान पर डोंडी पिटवा कर या अन्य रूढ़िक ढंग से उद्घोषित किया जाएगा और ऐसे आदेश की प्रति सम्पत्ति के किसी सहजदृश्य भाग पर और तब न्यायसदन के किसी सहजदृश्य भाग पर और जहां सम्पत्ति सरकार को राजस्व देने वाली भूमि है वहां उस जिले के जिसमें वह भूमि स्थित है, कलक्टर के कार्यालय में भी लगाई जाएगी [1][और जहां सम्पत्ति किसी गांव में स्थित भूमि है वहां उस गांव पर अधिकारिता रखने वाली ग्राम पंचायत के, यदि कोई हो, कार्यालय में भी लगाई जाएगी]।

55. डिक्री की तुष्टि पर कुर्की का उठाया जाना—जहां—

(क) डिक्रीत रकम खर्चों और किसी संपत्ति की कुर्की के पारिणामिक प्रभारों और व्ययों के साथ न्यायालय में जमा कर दी जाती है, अथवा

(ख) डिक्री की तुष्टि अन्यथा न्यायालय की मार्फत कर दी जाती है या न्यायालय को प्रमाणित कर दी जाती है, अथवा

(ग) डिक्री अपास्त कर दी जाती है या उलट दी जाती है,

वहां कुर्की प्रत्याहृत समझी जाएगी और स्थावर सम्पत्ति की दशा में यदि निर्णीत-ऋणी ऐसा चाहे तो प्रत्याहरण उसके व्यय पर उद्घोषित किया जाएगा और उद्घोषणा की एक प्रति अन्तिम पूर्ववर्ती नियम द्वारा विहित रीति से लगाई जाएगी।

56. डिक्री के अधीन हकदार पक्षकार को सिक्के या करेन्सी नोटों का संदाय किए जाने का आदेश—जहां कुर्क की गई सम्पत्ति चालू सिक्का है या करेन्सी नोट है वहां न्यायालय कुर्की के चालू रहने के दौरान किसी भी समय निदेश दे सकेगा कि ऐसा सिक्का या ऐसे नोट या उनका उतना भाग जितना डिक्री की तुष्टि के लिए पर्याप्त हो, उस पक्षकार को दे दिया जाए जो डिक्री के अधीन उसे पाने का हकदार है।

[2][57. **कुर्की का पर्यवसान**—(1) जहां कोई सम्पत्ति किसी डिक्री के निष्पादन में कुर्क कर ली गई है और न्यायालय किसी कारण से डिक्री के निष्पादन के लिए आवेदन को खारिज करने का आदेश पारित करता है वहां न्यायालय यह निदेश देगा कि कुर्की जारी रहेगी या समाप्त हो जाएगी और वह अवधि जिस तक ऐसी कुर्की जारी रहेगी और वह तारीख जिसको कुर्की समाप्त हो जाएगी, भी उपदर्शित करेगा।

(2) यदि न्यायालय ऐसा निदेश देने में लोप करता है तो यह समझा जाएगा कि कुर्की समाप्त हो गई है।]

[3][दावों और आक्षेपों का न्यायनिर्णयन

58. कुर्क की गई संपत्ति पर दावों का और ऐसी संपत्ति की कुर्की के बारे में आक्षेपों का न्यायनिर्णयन—(1) जहां डिक्री के निष्पादन में कुर्क की गई किसी संपत्ति पर कोई दावा या उसकी कुर्की के बारे में कोई आक्षेप इस आधार पर किया जाता है कि ऐसी संपत्ति ऐसे कुर्क किए जाने के दायित्व के अधीन नहीं है वहां न्यायालय ऐसे दावे या आक्षेप का न्यायनिर्णयन करने के लिए इसमें अंतर्विष्ट उपबंधों के अनुसार अग्रसर होगा:

परंतु कोई ऐसा दावा या आक्षेप उस दशा में ग्रहण नहीं किया जाएगा जिसमें—

(क) दावा या आक्षेप करने से पूर्व कुर्क की गई संपत्ति का विक्रय कर दिया गया है; या

(ख) न्यायालय का यह विचार है कि दावा या आक्षेप करने में परिकल्पनापूर्वक या अनावश्यक रूप से विलम्ब किया गया है।

(2) इस नियम के अधीन कार्यवाही के पक्षकारों के बीच या उनके प्रतिनिधियों के बीच पैदा होने वाले तथा दावे या आक्षेप न्यायनिर्णयन से सुसंगत सभी प्रश्न (जिनके अंतर्गत कुर्क की गई संपत्ति में अधिकार, हक या हित से संबंधित प्रश्न भी हैं) दावे या आक्षेप के संबंध में कार्यवाहियां करने वाले न्यायालय द्वारा अवधारित किए जाएंगे, न कि पृथक् वाद द्वारा।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) नियम 57 के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) शीर्ष और नियम 58 से 63 तक के स्थान पर प्रतिस्थापित।

(3) उपनियम (2) में विनिर्दिष्ट प्रश्नों के अवधारण पर, न्यायालय ऐसे अवधारण के अनुसार, —

(क) दावे या आक्षेप को अनुज्ञात करेगा और संपत्ति या तो पूर्णतः या उस विस्तार तक जो वह ठीक समझे, कुर्की से निर्मुक्त कर देगा; या

(ख) दावे या आक्षेप को अनुज्ञात करेगा; या

(ग) कुर्की को किसी व्यक्ति के पक्ष में किसी बंधक, भार या अन्य हित के अधीन जारी रखेगा; या

(घ) ऐसा आदेश पारित करेगा जो वह मामले की परिस्थितियों में ठीक समझे।

(4) जहां किसी दावे या आक्षेप पर न्यायनिर्णयन इस नियम के अधीन किया गया है वहां उस पर किए गए आदेश का वही बल होगा और वह अपील या अन्य बातों के बारे में वैसी ही शर्तों के अधीन होगा मानो वह डिक्री हो।

(5) जहां कोई दावा या आक्षेप किया जाता है और न्यायालय उपनियम (1) के परन्तुक के अधीन उसे ग्रहण करने से इन्कार करता है वहां वह पक्षकार जिसके विरुद्ध ऐसा आदेश किया जाता है उस अधिकार को सिद्ध करने के लिए जिसके लिए वह विवादग्रस्त संपत्ति में दावा करता है, वाद संस्थित कर सकेगा; किन्तु ऐसे वाद के, यदि कोई हो, परिणाम के अधीन रहते हुए दावे या आक्षेप को ग्रहण करने से इस प्रकार इन्कार करने वाला आदेश निश्चयाक होगा।

59. **विक्रय को रोकना**—जहां कुर्क की गई संपत्ति दावे या आक्षेप के किए जाने से पूर्व विक्रय के लिए विज्ञापित की जा चुकी है, वहां न्यायालय—

(क) यदि संपत्ति,जंगम है तो दावे या आक्षेप न्यायनिर्णयन तक के लिए विक्रय को मुल्तवी करने का आदेश दे सकेगा; या

(ख) यदि संपत्ति स्थावर है तो यह आदेश दे सकेगा कि दावे या आक्षेप के न्यायनिर्णयन तक संपत्ति का विक्रय नहीं किया जाएगा या ऐसे न्यायनिर्णयन तक संपत्ति का विक्रय किया जा सकता है किंतु विक्रय को पुष्ट नहीं किया जाएगा, और ऐसा कोई आदेश प्रतिभूति या अन्य बातों के बारे में ऐसे निबन्धनों और शर्तों के अधीन किया जा सकेगा जो न्यायालय ठीक समझे।]

विक्रय साधारणतः

64. **कुर्क की गई संपत्ति के विक्रय किए जाने और उसके आगम हकदार व्यक्ति को दिए जाने के लिए आदेश करने की शक्ति**—डिक्री का निष्पादन करने वाला कोई भी न्यायालय आदेश कर सकेगा कि उसके द्वारा कुर्क की गई और विक्रय के दायित्व के अधीन किसी भी संपत्ति या उसके ऐसे भाग का जो डिक्री की तुष्टि के लिए आवश्यक प्रतीत हो, विक्रय किया जाए और ऐसे विक्रय के आगम या उनका पर्याप्त भाग उस पक्षकार को दे दिया जाए जो डिक्री के अधीन उन्हें पाने का हकदार है।

65. **विक्रय किसके द्वारा संचालित किए जाएं और कैसे किए जाएं**—जैसा अन्यथा विहित है उसे छोड़कर, डिक्री के निष्पादन में किया जाने वाला हर विक्रय न्यायालय के अधिकारी द्वारा या किसी ऐसे अन्य व्यक्ति द्वारा जिसे न्यायालय इस निमित्त नियुक्त करे, संचालित किया जाएगा और विहित रीति से लोक नीलाम द्वारा किया जाएगा।

66. **लोक नीलाम द्वारा किए जाने वाले विक्रयों की उद्घोषणा**—(1) जहां किसी संपत्ति का किसी डिक्री के निष्पादन में लोक नीलाम द्वारा विक्रय किए जाने का आदेश किया गया है वहां न्यायालय आशयित विक्रय की उद्घोषणा उस न्यायालय की भाषा में कराएगा।

(2) ऐसी उद्घोषणा डिक्रीदार और निर्णीत-ऋणी को सूचना दिए जाने के पश्चात् तैयार की जाएगी और उसमें विक्रय का समय और स्थान कथित होगा और निम्नलिखित बातें यथासंभव ऋजुता और यथार्थता से विनिर्दिष्ट होंगी —

(क) वह सम्पत्ति जिसका विक्रय किया जाना है [1][या जहां संपत्ति का कोई भाग डिक्री की तुष्टि के लिए पर्याप्त होगा वहां वह भाग];

(ख) जहां वह संपत्ति जिसका विक्रय किया जाना है, सरकार को राजस्व देने वाली किसी सम्पदा में या सम्पदा के भाग में कोई हित है वहां उस सम्पदा पर या सम्पदा के भाग पर निर्धारित राजस्व;

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) अंतःस्थापित।

(ग) कोई विल्लंगम जिसके लिए वह संपत्ति दायी हो;

(घ) वह रकम जिसकी वसूली के लिए विक्रय आदिष्ट किया गया है; तथा

(ङ) हर अन्य बात जिसके बारे में न्यायालय का विचार है कि संपत्ति की प्रकृति और मूल्य का निर्णय करने के लिए उसकी जानकारी क्रेता के लिए तात्विक है:

[1][परंतु जहां उद्घोषणा के निबन्धनों को तय करने की तारीख की सूचना नियम 54 के अधीन किसी आदेश के माध्यम से निर्णीत-ऋणी को दी गई है वहां जब तक कि न्यायालय अन्यथा निदेश न दे निर्णीत-ऋणी को इस नियम के अधीन सूचना देना आवश्यक नहीं होगा:

परंतु यह और कि इस नियम की किसी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह न्यायालय से यह अपेक्षा करती है कि वह विक्रय की उद्घोषणा में संपत्ति के मूल्य की बाबत अपने प्राक्कलन प्रविष्ट करें, किन्तु उद्घोषणा के अंतर्गत दोनों पक्षकारों या उनमें से किसी के द्वारा दिया गया प्राक्कलन, यदि कोई हो, होगा।]

(3) इस नियम के अधीन विक्रय के आदेश के लिए हर आवेदन के साथ एक ऐसा कथन होगा अभिवचनों के हस्ताक्षर और सत्यापन के लिए इसमें इसके पूर्व विहित रीति से हस्ताक्षरित और सत्यापित किया गया हो और उद्घोषणा में विनिर्दिष्ट किए जाने के लिए उपनियम (2) द्वारा अपेक्षित बातें उसमें वहां तक अंतर्विष्ट होंगी जहां तक कि सत्यापन करने वाले व्यक्ति को वे ज्ञात हों या उसके द्वारा अभिनिश्चित की जा सकती हों।

(4) न्यायालय उन बातों को अभिनिश्चित करने के प्रयोजन से जो उद्घोषणा में विनिर्दिष्ट की जानी है, किसी भी ऐसे व्यक्ति को समन कर सकेगा जिसे वह समन करना आवश्यक समझे और वैसी किन्हीं भी बातों के बारे में उसकी परीक्षा कर सकेगा और उससे अपेक्षा कर सकेगा कि वह उससे संबंधित अपने कब्जे या शक्ति में की किसी दस्तावेज को पेश करे।

67. उद्घोषणा करने की रीति —(1) हर उद्घोषणा, जहां तक हो सके, ऐसी रीति से की जाएगी और प्रकाशित की जाएगी जो नियम 54 के उपनियम (2) द्वारा विहित है।

(2) जहां न्यायालय ऐसा निदेश देता है वहां ऐसी उद्घोषणा राजपत्र या स्थानीय समाचारपत्र में भी या दोनों में प्रकाशित की जाएगी और ऐसे प्रकाशन के खर्चे समझे जाएंगे

(3) जहां संपत्ति पृथक् रूप से विक्रय किए जाने के प्रयोजन से लाटों में विभाजित की गई है वहां हर एक लाट के लिए पृथक् उद्घोषणा करना तब तक आवश्यक नहीं होगा जब तक कि न्यायालय की यह राय न हो कि विक्रय की उचित सूचना अन्यथा नहीं दी जा सकती।

68. विक्रय का समय—नियम 43 के परन्तुक में वर्णित किस्म की संपत्ति की दशा में के सिवाय, इसके अधीन कोई भी विक्रय निर्णीत-ऋणी की लिखित सहमति के बिना तब तक न होगा जब तक कि उस तारीख से जिसको उद्घोषणा की प्रति विक्रय का आदेश देने वाले न्यायाधीश के न्याय-सदन में लगाई गई है, गणना करके स्थावर संपत्ति की दशा में कम से कम [2][पन्द्रह दिन] का और जंगम संपत्ति की दशा में कम से कम [3][सात दिन] का अवसान न हो गया हो।

69. विक्रय का स्थगन या रोका जाना—(1) न्यायालय इसके अधीन विक्रय को किसी भी विनिर्दिष्ट दिन और घण्टे तक के लिए स्वविवेकानुसार स्थगित कर सकेगा और ऐसे किसी विक्रय का संचालन करने वाला अधिकारी स्थगन के अपने कारणों को लेखबद्ध करते हुए विक्रय को स्वविवेकानुसार स्थगित कर सकेगा:

परन्तु जहां विक्रय न्याय-सदन में या उसकी प्रसीमाओं के भीतर किया जाता है वहां ऐसा कोई भी स्थगन न्यायालय की इजाजत के बिना नहीं किया जाएगा।

(2) जहां विक्रय [4][तीस दिन] से अधिक की अवधि के लिए उपनियम (1) के अधीन स्थगित किया जाता है वहां, तब के सिवाय जबकि निर्णीत-ऋणी उसका अधित्यजन करने के लिए अपनी सहमति दे दे, नियम 67 के अधीन नई उद्घोषणा की जाएगी।

---

1. 1976 के अधिनियम सं॰ 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) अंतःस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं॰ 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) "तीस दिन" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. 1976 के अधिनियम सं॰ 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) "पन्द्रह दिन" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
4. 1976 के अधिनियम सं॰ 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) "सात दिन" के स्थान पर प्रतिस्थापित।

(3) यदि लाट के लिए बोली के समाप्त होने से पहले ही ऋण और खर्चे (विक्रय के खर्चों के सहित) विक्रय का संचालन करने वाले अधिकारी को निविदत्त कर दिए जाते हैं या उसको समाधानप्रद रूप में यह सबूत दे दिया जाता है कि ऐसे ऋण की रकम और खर्चे उस न्यायालय में जमा कर दिए गए हैं जिसने विक्रय के लिए आदेश दिया था तो ऐसा हर विक्रय रोक दिया जाएगा।

70. [कुछ विक्रयों की व्यावृत्ति।]—सिविल प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 1956 (1956 का 66) की धारा 14 द्वारा निरसित।

71. **व्यतिक्रम करने वाला क्रेता पुनर्विक्रय में हुई हानि के लिए उत्तरदायी होगा**—क्रेता के व्यतिक्रम के कारण होने वाले पुनर्विक्रय में जो कमी कीमत में हो जाए, वह और ऐसे पुनर्विक्रय में हुए सब व्यय उस अधिकारी या अन्य व्यक्ति द्वारा जो विक्रय करता है, न्यायालय [1]*** को प्रमाणित किए जाएंगे और वह व्यतिक्रम करने वाले क्रेता से या तो डिक्रीदार या निर्णीत-ऋणी की प्रेरणा पर उन उपबंधों के अधीन वसूलीय होंगे जो धन के संदाय की डिक्री के निष्पादन से संबंधित हैं।

72. **अनुज्ञा के बिना डिक्रीदार संपत्ति के लिए न बोली लगाएगा और न उसका क्रय करेगा**—(1) जिस डिक्री के निष्पादन में संपत्ति का विक्रय किया जाता है उस डिक्री का कोई भी धारक न्यायालय की अभिव्यक्त अनुज्ञा के बिना संपत्ति के लिए न तो बोली लगाएगा और न उसका क्रय करेगा।

(2) **जहां डिक्रीदार क्रय करता है वहां डिक्री की रकम संदाय मानी जा सकेगी**—जहां डिक्रीदार ऐसी अनुज्ञा से क्रय करता है वहां क्रयधन और डिक्री मद्धे शोध्य राशि, धारा 73 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, एक दूसरे के विरुद्ध मुजरा की जा सकेगी और डिक्री का निष्पादन करने वाला न्यायालय डिक्री की पूर्णतः या भागतः तुष्टि की प्रविष्टि तदनुसार करेगा।

(3) जहां डिक्रीदार ऐसी अनुज्ञा के बिना स्वयं या किसी अन्य व्यक्ति के माध्यम से क्रय करता है वहां यदि न्यायालय निर्णीत-ऋणी के या किसी अन्य व्यक्ति के जिसके हित विक्रय से प्रभावित होते हैं, आवेदन पर ऐसा करना ठीक समझे तो वह विक्रय को आदेश द्वारा अपास्त कर सकेगा, और ऐसे आवेदन और आदेश के खर्चे और कीमत में की कोई कमी जो पुनर्विक्रय पर हो, और ऐसे पुनर्विक्रय में हुए सभी व्यय डिक्रीदार द्वारा दिए जाएंगे।

[2][72क. **बंधकदार द्वारा न्यायालय की इजाजत के बिना विक्रय में बोली का न लगाया जाना**—(1) नियम 72 में किसी बात के होते हुए भी, स्थावर संपत्ति का कोई बंधकदार, बंधक पर डिक्री के निष्पादन में विक्रीत संपत्ति के लिए बोली नहीं लगाएगा या उसे क्रय नहीं करेगा जब तक कि न्यायालय उसे उस संपत्ति के लिए बोली लगाने या उसे क्रय करने की इजाजत न दे दे।

(2) यदि ऐसे बंधकदार को बोली लगाने की इजाजत दी जाती है तो न्यायालय बंधकदार के संबंध में कोई आरक्षित कीमत नियत करेगा और जब तक कि न्यायालय अन्यथा निदेश न दे आरक्षित कीमत —

(क) यदि संपत्ति का विक्रय एक लाट में किया जाता है तो बंधक के संबंध में मूलधन, ब्याज और खर्चे मद्धे उस समय शोध्य रकम से कम नहीं होगी; और

(ख) किसी संपत्ति का विक्रय लाटों में किए जाने की दशा में उतनी राशि से कम नहीं होगी जितनी प्रत्येक लाट के संबंध में न्यायालय को यह प्रतीत हो कि वह बंधक पर मूल धन, ब्याज और खर्चे मद्धे उस समय शोध्य रकम के संबंध में उस लाट के लिए उचित मानी जा सकती है।

(3) अन्य मामलों में, नियम 72 के उपनियम (2) और (3) के उपबंध उस नियम के अधीन डिक्रीदार द्वारा क्रय के संबंध में लागू होंगे।]

73. **अधिकारियों द्वारा बोली लगाने या क्रय करने पर निर्बन्धन**—कोई भी अधिकारी या अन्य व्यक्ति जिसे किसी विक्रय के संबंध में किसी कर्तव्य का पालन करना हो, विक्रय की गई संपत्ति में के किसी हित के लिए न तो प्रत्यक्ष और न अप्रत्यक्ष रूप से बोली लगाएगा और न उसे अर्जित करेगा और न अर्जित करने का प्रयत्न करेगा।

---

1. 1956 के अधिनियम सं० 66 की धारा 14 द्वारा "या, यथास्थिति, कलेक्टर या कलेक्टर के अधीनस्थ अधिकारी" शब्दों का लोप किया गया।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) अंतःस्थापित।

जंगम संपत्ति का विक्रय

74. कृषि उपज का विक्रय—(1) जहां विक्रय की जाने वाली संपत्ति कृषि उपज है वहां विक्रय—

(क) यदि ऐसी उपज उगती फसल है तो उस भूमि पर या उसके पास किया जाएगा जिसमें ऐसी फसल उगी है, अथवा

(ख) यदि ऐसी उपज काटी जा चुकी है या इकट्ठी की जा चुकी है तो उस खलिहान पर या अनाज गाहने के स्थान या तद्रूप स्थान या चारे के ढेर पर या उसके पास जिस पर या जिसमें वह निक्षिप्त की गई है, किया जाएगा:

परंतु यदि न्यायालय की यह राय है कि वैसा करने से उपज का अधिक फायदे पर विक्रय किया जा सकता है तो वह यह निदेश दे सकेगा कि विक्रय लोक समागम के निकटतम स्थान पर किया जाए।

(2) जहां उपज विक्रय के लिए पुरोधृत किए जाने पर—

(क) विक्रय करने वाले व्यक्ति के अनुमान से उसके लिए ऋजु मूल्य की बोली नहीं लगाई गई है, तथा

(ख) उस उपज का स्वामी या उसकी ओर से कार्य करने के लिए प्राधिकृत व्यक्ति विक्रय को आगामी दिन तक या यदि विक्रय के स्थान पर हाट लगती हो तो अगली हाट लगने के दिन तक के लिए मुल्तवी करने के लिए आवेदन करता है,

वहां विक्रय तदनुसार मुल्तवी कर दिया जाएगा और तत्पश्चात् उपज के लिए चाहे कोई भी कीमत लगे विक्रय पूरा कर दिया जाएगा।

75. उगती फसलों के संबंध में विशेष उपबंध—(1) जहां विक्रय की जाने वाली संपत्ति उगती फसल है और फसल अपनी प्रकृति से ऐसी है जो भण्डार में रखने के योग्य है किंतु तब तक भण्डार में नहीं रखी गई है वहां विक्रय का दिन ऐसे नियत किया जाएगा कि उस दिन के आने से पहले वह भण्डार में रखने के योग्य हो जाए और विक्रय तब तक नहीं किया जाएगा जब तक फसल काट नहीं ली गई है या इकट्ठी नहीं कर ली गई है और भण्डार में रखने के योग्य नहीं हो गई है।

(2) जहां फसल अपनी प्रकृति से ऐसी नहीं है जो भण्डार में रखने के योग्य है वहां उसका काटी जाने और इकट्ठी की जाने से पहले विक्रय किया जा सकेगा और क्रेता भूमि पर प्रवेश करने और उसकी देखभाल करने और काटने या इकट्ठी करने के प्रयोजन से सभी आवश्यक बातें करने का हकदार होगा।

76. परक्राम्य लिखतें और निगमों के अंश—जहां विक्रय की जाने वाली संपत्ति परक्राम्य लिखत या निगम-अंश है वहां न्यायालय लोक नीलाम द्वारा विक्रय किए जाने के लिए निदेश देने के बजाय यह प्राधिकृत कर सकेगा कि ऐसी लिखत या अंश का विक्रय किसी दलाल की मार्फत किया जाए।

77. लोक नीलाम द्वारा विक्रय—(1) जहां जंगम संपत्ति का लोक नीलाम द्वारा विक्रय किया जाता है वहां हर एक लाट का मूल्य विक्रय के समय पर संदत्त किया जाएगा या उसके पश्चात् शीघ्र ही ऐसे समय पर संदत्त किया जाएगा जो वह अधिकारी या अन्य व्यक्ति निदिष्ट करे जो विक्रय कर रहा है, और संदाय में व्यतिक्रम होने पर संपत्ति का तत्क्षण ही फिर विक्रय किया जाएगा।

(2) क्रयधन का संदाय कर दिए जाने पर उसके लिए रसीद वह अधिकारी या अन्य व्यक्ति देगा जो विक्रय कर रहा है और विक्रय आत्यन्तिक हो जाएगा।

(3) जहां विक्रय की जाने वाली जंगम संपत्ति ऐसे माल में अंश है जो माल निर्णीत-ऋणी और किसी सह-स्वामी का है, और दो या अधिक व्यक्ति जिनमें से एक ऐसा सह-स्वामी है, क्रमशः ऐसी संपत्ति या उसके किसी लाट के लिए एक सी ही राशि की बोली लगाते हैं वह बोली उस सह-स्वामी की बोली समझी जाएगी।

78. अनियमितता विक्रय को दूषित नहीं करेगी किन्तु कोई भी व्यक्ति, जिसे क्षति हुई है, वाद ला सकेगा—जंगम संपत्ति के विक्रय के प्रकाशन या संचालन में की कोई भी अनियमितता विक्रय को दूषित नहीं करेगी किन्तु जिस किसी व्यक्ति को कोई क्षति ऐसी अनियमितता के कारण किसी अन्य व्यक्ति द्वारा हुई है वह उसके विरुद्ध प्रतिकर के लिए या (यदि वह अन्य व्यक्ति क्रेता है) तो उसी विनिर्दिष्ट संपत्ति के प्रत्युद्धरण के लिए और ऐसे प्रत्युद्धरण में व्यतिक्रम होने पर प्रतिकर के लिए वाद ला सकेगा।

79. जंगम संपत्ति, ऋणी और अंशों का परिदान—(1) जहां विक्रय की गई संपत्ति ऐसी जंगम संपत्ति है जिसका वास्तविक अभिग्रहण कर लिया गया है वहां वह क्रेता को परिदत्त की जाएगी।

(2) जहां विक्रय की गई संपत्ति निर्णीत-ऋणी से भिन्न किसी व्यक्ति के कब्जे में की जंगम संपत्ति है वहां क्रेता को उसका परिदान कब्जा रखने वाले व्यक्ति को यह प्रतिषेध करने वाली सूचना देकर किया जाएगा कि वह उस पर कब्जा क्रेता के सिवाय किसी अन्य व्यक्ति को न दे।

(3) जहां विक्रय की गई संपत्ति ऐसा ऋण है जो किसी परक्राम्य लिखत द्वारा प्रतिभूत नहीं है या निगम-अंश है वहां उसका परिदान न्यायालय के ऐसे लिखत आदेश द्वारा किया जाएगा जो उस ऋण को या उस मद्धे किसी ब्याज को लेने से लेनदार को और उसका संदाय क्रेता को करने के सिवाय किसी अन्य व्यक्ति को करने से ऋणी को प्रतिषिद्ध करता है या जो उस व्यक्ति को जिसके नाम वह अंश उस समय है, अंश का कोई भी अंतरण क्रेता को करने के सिवाय किसी अन्य व्यक्ति को करने से या उस मद्धे किसी भी लाभांश या ब्याज का संदाय प्राप्त करने से और उस निगम के प्रबंधक, सचिव या अन्य उचित अधिकारी को ऐसे किसी भी अन्तरण के लिए अनुज्ञा या ऐसा कोई भी संदाय क्रेता को देने या करने के सिवाय किसी भी अन्य व्यक्ति को देने या करने से प्रतिषिद्ध करता है।

80. **परक्राम्य लिखतों और अंशों का अन्तरण**—(1) जहां दस्तावेज का निष्पादन या उस पक्षकार द्वारा पृष्ठांकन जिसके नाम में वह परक्राम्य लिखत या निगम-अंश उस समय है, ऐसी परक्राम्य लिखत के या अंश के अन्तरण के लिए अपेक्षित है वहां न्यायाधीश या ऐसा अधिकारी जिससे वह इस निमित्त नियुक्त करे, ऐसी दस्तावेज का निष्पादन कर सकेगा या ऐसा पृष्ठांकन कर सकेगा जो आवश्यक हो और ऐसे निष्पादन या पृष्ठांकन का वही प्रभाव होगा जो पक्षकार द्वारा किए गए निष्पादन या पृष्ठांकन का होता है।

(2) ऐसा निष्पादन या पृष्ठांकन निम्नलिखित प्ररूप में किया जा सकेगा, अर्थात्:—

क ख, के विरुद्ध ङ च द्वारा लाए गए वाद में क ख की ओर से ..... न्यायालय का न्यायाधीश (या यथास्थिति)

ग घ।

(3) न्यायालय ऐसी परक्राम्य लिखत या ऐसे अंश का अन्तरण होने तक आदेश द्वारा किसी व्यक्ति को इसलिए नियुक्त कर सकेगा कि वह उस पर शोध्य किसी ब्याज या लाभांश को प्राप्त करे और उसके लिए रसीद पर हस्ताक्षर करे और इस प्रकार हस्ताक्षरित कोई भी रसीद सभी प्रयोजनों के लिए ऐसे ही मान्य और प्रभावी होगी मानो स्वयं पक्षकार ने उस पर हस्ताक्षर किए हों।

81. **अन्य संपत्ति की दशा में निहित करने वाला आदेश**—किसी ऐसी जंगम संपत्ति की दशा में जिसके लिए इसमें इसके पूर्व उपबंध नहीं किया गया है, न्यायालय ऐसी संपत्ति को क्रेता में या जैसा निदेश क्रेता दे उसके अनुसार निहित करने वाले आदेश कर सकेगा और ऐसी संपत्ति तदनुसार निहित होगी।

स्थावर संपत्ति का विक्रय

82. **कौन से न्यायालय विक्रयों के लिए आदेश कर सकेंगे**—डिक्रियों का निष्पादन करने में स्थावर संपत्ति के विक्रयों के लिए आदेश लघुवाद न्यायालय से भिन्न किसी भी न्यायालय द्वारा किया जा सकेगा।

83. **विक्रय का इसलिए मुल्तवी किया जाना कि निर्णीत-ऋणी डिक्री की रकम जुटा सके**—(1) जहां स्थावर संपत्ति के विक्रय के लिए आदेश किया जा चुका है वहां यदि निर्णीत-ऋणी न्यायालय का समाधान कर सके कि यह विश्वास करने के लिए कारण है कि डिक्री का धन ऐसी संपत्ति या उसके किसी भाग के, या निर्णीत-ऋणी की किसी अन्य स्थावर संपत्ति के, बंधक या पट्टे या प्राइवेट विक्रय द्वारा जुटाया जा सकता है तो उसके आवेदन करने पर न्यायालय विक्रय के आदेश में समाविष्ट संपत्ति के विक्रय को ऐसे निबंधनों पर और ऐसी अवधि के लिए जो वह उचित समझे, इसलिए मुल्तवी कर सकेगा कि उस रकम को जुटाने में वह समर्थ हो जाए।

(2) ऐसी दशा में न्यायालय निर्णीत-ऋणी को ऐसा प्रमाणपत्र देगा जो उसमें वर्णित अवधि के भीतर और धारा 64 में किसी बात के होते हुए भी प्रस्थापित बंधक, पट्टा या विक्रय करने के लिए उसे प्राधिकृत करता है:

परंतु ऐसे बंधक, पट्टे या विक्रय के अधीन संदेय सभी धन वहां तक के सिवाय जहां तक कि डिक्रीदार ऐसे धन को नियम 72 के उपबंधों के अधीन मुजरा करने का हकदार है न्यायालय को दिए जाएंगे, न कि निर्णीत-ऋणी को:

परंतु यह और भी कि इस नियम के अधीन कोई भी बंधक, पट्टा या विक्रय तब तक आत्यन्तिक नहीं होगा जब तक कि वह न्यायालय द्वारा पुष्ट न कर दिया जाए।

(3) इस नियम की किसी भी बात के बारे में यह नहीं समझा जाएगा कि वह ऐसी संपत्ति के विक्रय को लागू होती है जिसके बारे

में ऐसी संपत्ति के बंधक या उस संपत्ति पर के भार का प्रवर्तन कराने के लिए विक्रय की डिक्री के निष्पादन में विक्रय किए जाने का निदेश दिया गया है।

84. **क्रेता द्वारा निक्षेप और उसके व्यतिक्रम पर पुनर्विक्रय**—(1) स्थावर संपत्ति के हर विक्रय पर वह व्यक्ति जिसका क्रेता होना घोषित किया गया है, अपने क्रयधन की रकम के पच्चीस प्रतिशत का निक्षेप विक्रय का संचालन करने वाले अधिकारी या अन्य व्यक्ति को ऐसी घोषणा के तुरंत पश्चात् देगा और ऐसा निक्षेप करने में व्यतिक्रम होने पर उस संपत्ति का तत्क्षण फिर विक्रय किया जाएगा।

(2) जहां डिक्रीदार क्रेता है और क्रयधन को नियम 72 के अधीन मुजरा करने का हकदार है वहां न्यायालय इस नियम की अपेक्षाओं से अभिमुक्ति दे सकेगा।

85. **क्रय धन के पूरे संदाय के लिए समय**—क्रयधन की संदेय पूरी रकम को क्रेता इसके पूर्व की सम्पत्ति के विक्रय से पन्द्रहवें दिन न्यायालय बन्द हो, न्यायालय में जमा कर देगा:

परन्तु न्यायालय में ऐसे जमा की जाने वाली रकम की गणना करने में क्रेता किसी भी ऐसे मुजरा का फायदा उठा सकेगा जिसका वह नियम 72 के अधीन हकदार हो।

86. **संदाय में व्यतिक्रम होने पर प्रक्रिया**—अंतिम पूर्ववर्ती नियम में वर्णित अवधि के भीतर संदाय करने में व्यतिक्रम होने पर निक्षेप, यदि न्यायालय ठीक समझे तो विक्रय के व्ययों को काटने के पश्चात् सरकार को समपहृत किया जा सकेगा और सम्पत्ति का फिर से विक्रय किया जाएगा और उस संपत्ति पर या जिस राशि के लिए उसका तत्पश्चात् विक्रय किया जाए उसके किसी भाग पर व्यतिक्रम करने वाले क्रेता के सभी दावे समपहृत हो जाएंगे।

87. **पुनर्विक्रय पर अधिसूचना**—स्थावर सम्पत्ति का हर पुनर्विक्रय जो क्रयधन का संदाय उस अवधि के भीतर करने में जो ऐसे संदाय के लिए अनुज्ञात है, व्यतिक्रम के कारण होना हो, ऐसी रीति से और ऐसी अवधि के लिए जो विक्रय के लिए इसमें इसके पूर्व विहित की गई है, नई उद्घोषणा निकालने के पश्चात् किया जाएगा।

88. **सह-अंशधारी की बोली को अधिमान प्राप्त होगा**—जहां विक्रीत सम्पत्ति अविभक्त स्थावर सम्पत्ति का अंश है, और दो या अधिक व्यक्ति जिनमें से एक ऐसा सह-अंशधारी है, क्रमशः ऐसी सम्पत्ति या उसके किसी लाट के लिए एक सी ही राशि की बोली लगाते हैं वहां वह बोली उस सह-अंशधारी की बोली समझी जाएगी।

89. **निक्षेप करने पर विक्रय को अपास्त कराने के लिए आवेदन**—(1) जहां स्थावर सम्पत्ति का किसी डिक्री के निष्पादन में विक्रय किया गया है [1][वहां विक्रीत सम्पत्ति में विक्रय के समय या आवेदन करने के समय किसी हित का दावा करने वाला अथवा ऐसे व्यक्ति के लिए या उसके हित में कार्य करने वाला कोई व्यक्ति]—

(क) क्रयधन के पांच प्रतिशत के बराबर रकम क्रेता को संदत्त किए जाने के लिए, तथा

(ख) विक्रय की उद्घोषणा में ऐसी रकम के रूप में जिसकी वसूली के लिए विक्रय का आदेश दिया गया था, विनिर्दिष्ट रकम उसमें से वह रकम घटाकर जो विक्रय की उद्घोषणा की तारीख से लेकर तब तक डिक्रीदार को प्राप्त हो चुकी है, डिक्रीदार को संदत्त किए जाने के लिए,

न्यायालय में निक्षिप्त करने पर विक्रय को अपास्त कराने के लिए आवेदन कर सकेगा।

(2) जहां कोई व्यक्ति अपनी स्थावर सम्पत्ति के विक्रय को अपास्त कराने के लिए आवेदन नियम 90 के अधीन करता है वहां, जब तक कि वह अपना आवेदन लौटा न ले, वह इस नियम के अधीन आवेदन देने का या उसको आगे चलाने का हकदार नहीं होगा।

(3) इस नियम की कोई भी बात निर्णीत-ऋणी को ऐसे किसी दायित्व से अवमुक्त नहीं करेगी जिसके अधीन वह उन खर्चों और ब्याज के सम्बन्ध में हो जो विक्रय की उद्घोषणा के अन्तर्गत नहीं आते।

[2][90. **विक्रय को अनियमितता या कपट के आधार पर अपास्त कराने के लिए आवेदन**—(1) जहां किसी डिक्री के निष्पादन में किसी स्थावर सम्पत्ति का विक्रय किया गया है वहां डिक्रीदार, या क्रेता, या ऐसा कोई अन्य व्यक्ति जो

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) कुछ शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) नियम 90 के स्थान पर प्रतिस्थापित।

आस्तियों के आनुपातिक वितरण में अंश पाने का हकदार है या जिसके हित विक्रय के द्वारा प्रभावित हुए हैं, विक्रय को उसके प्रकाशन या संचालन में हुई तात्विक अनियमितता या कपट के आधार पर अपास्त कराने के लिए न्यायालय से आवेदन कर सकेगा।

(2) उसके प्रकाशन या संचालन में हुई अनियमितता या कपट के आधार पर कोई भी विक्रय तब तक अपास्त नहीं किया जाएगा जब तक साबित किए गए तथ्यों के आधार पर न्यायालय का यह समाधान नहीं हो जाता है कि ऐसी अनियमितता या कपट के कारण आवेदक को सारवान् क्षति हुई है।

(3) इस नियम के अधीन विक्रय को अपास्त कराने के लिए कोई आवेदन ऐसे किसी आधार पर ग्रहण नहीं किया जाएगा जिसे आवेदक उस तारीख को या उससे पूर्व आधार मान सकता था जिसको कि विक्रय की उद्घोषणा तैयार की गई थी।

स्पष्टीकरण—विक्रीत सम्पत्ति की कुर्की का न होना या कुर्की में त्रुटि अपने आप में इस नियम के अधीन किसी विक्रय को अपास्त करने के लिए कोई आधार नहीं होगी।]

91. **विक्रय का इस आधार पर अपास्त कराने के लिए क्रेता द्वारा आवेदन कि उसमें निर्णीत-ऋणी का कोई विक्रय हित नहीं था**—डिक्री के निष्पादन में ऐसे किसी भी विक्रय में का क्रेता, विक्रय को अपास्त कराने के लिए आवेदन न्यायालय से इस आधार पर कर सकेगा कि विक्रय की गई सम्पत्ति में निर्णीत-ऋणी का कोई विक्रय हित नहीं था।

92. **विक्रय कब आत्यन्तिक हो जाएगा या अपास्त कर दिया जाएगा**—(1) जहां नियम 89, नियम 90 या नियम 91 के अधीन कोई भी आवेदन नहीं किया गया है या जहां ऐसा आवेदन किया गया है और अननुज्ञात कर दिया गया है वहां न्यायालय विक्रय को पुष्ट करने वाला आदेश करेगा और तब विक्रय आत्यन्तिक हो जाएगा:

[1][परन्तु जहां किसी संपत्ति का, ऐसी संपत्ति के किसी दावे का अन्तिम निपटारा होने तक या उसकी कुर्की के लिए आक्षेप के लंबित रहने तक डिक्री के निष्पादन में विक्रय किया गया है वहां न्यायालय ऐसे विक्रय को ऐसे दावे या आक्षेप के अंतिम निपटारे तक पुष्ट नहीं करेगा।]

(2) जहां ऐसा आवेदन किया गया है और अनुज्ञात कर दिया गया है और जहां नियम 89 के अधीन आवेदन की दशा में वह निक्षेप जो उस नियम द्वारा अपेक्षित है, विक्रय की तारीख से तीस दिन के भीतर कर दिया है [2][या उस दशा में जिसमें नियम 89 के अधीन निक्षिप्त रकम, निक्षेपकर्ता की ओर से हुई किसी लिपिकीय या गणित संबंधी भूल के कारण कम पाई जाती है और ऐसी कमी इतने समय के भीतर पूरी कर दी जाती है जितना न्यायालय द्वारा नियत किया जाए वहां न्यायालय विक्रय को अपास्त करने वाला आदेश करेगा]:

परन्तु जब तक कि आवेदन की सूचना उसके द्वारा प्रभावित सभी व्यक्तियों को न दे दी गई हो, ऐसा कोई आदेश नहीं किया जाएगा।

(3) इस नियम के अधीन किए गए आदेश को अपास्त कराने के लिए कोई भी वाद ऐसे किसी व्यक्ति द्वारा नहीं लाया जाएगा जिसके विरुद्ध ऐसा आदेश किया गया है।

[1][(4) जहां कोई अन्य पक्षकार नीलाम-क्रेता के विरुद्ध वाद फाइल करके निर्णीत-ऋणी के हक को चुनौती देता है वहां डिक्रीदार और निर्णीत-ऋणी वाद के आवश्यक पक्षकार होंगे।

(5) यदि उपनियम (4) में निर्दिष्ट वाद की डिक्री दे दी जाती है तो न्यायालय डिक्रीदार को निदेश देगा कि वह नीलाम-क्रेता को धन वापस कर दे और जहां ऐसा आदेश पारित किया जाता है वहां निष्पादन की कार्यवाहियां जिनमें विक्रय किया गया था, उस दशा के सिवाय जिसमें न्यायालय अन्यथा निदेश देता है, उस प्रक्रम पर पुनः प्रवर्तित की जाएंगी जिस पर विक्रय का आदेश किया गया था।]

93. **कुछ दशाओं में क्रयधन की वापसी**—जहां स्थावर सम्पत्ति का विक्रय नियम 92 के अधीन अपास्त कर दिया जाता है वहां क्रेता अपना क्रयधन ब्याज के सहित या रहित, जैसे भी न्यायालय निर्दिष्ट करे, वापस पाने का आदेश उस व्यक्ति के विरुद्ध प्राप्त करने का हकदार होगा जिसे क्रयधन दे दिया गया है।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) अंतःस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) "वहां न्यायालय विक्रय को अपास्त करने वाला आदेश करेगा" के स्थान पर प्रतिस्थापित।

94. क्रेता को प्रमाणपत्र—जहां स्थावर सम्पत्ति का विक्रय आत्यन्तिक हो गया है वहां न्यायालय विक्रीत सम्पत्ति को और विक्रय के समय जिस व्यक्ति को क्रेता घोषित किया गया है उसके नाम को विनिर्दिष्ट करने वाला प्रमाणपत्र देगा। ऐसे प्रमाणपत्र में उस दिन की तारीख होगी उस दिन विक्रय आत्यन्तिक हुआ था।

95. निर्णीत-ऋणी के अधिभोग में की सम्पत्ति का परिदान—जहां विक्रीत स्थावर सम्पत्ति निर्णीत-ऋणी के या उसकी ओर से किसी व्यक्ति के या ऐसे हक के अधीन जिसे निर्णीत-ऋणी ने ऐसी सम्पत्ति की कुर्की हो जाने के पश्चात् सृष्ट किया है, दावा करने वाले किसी व्यक्ति के अधिभोग में है और उसके बारे में प्रमाणपत्र नियम 94 के अधीन दिया गया है वहां न्यायालय क्रेता के आवेदन पर यह आदेश करेगा कि उस सम्पत्ति पर ऐसे क्रेता का या ऐसे किसी व्यक्ति का जिसे क्रेता अपनी ओर से परिदान पाने के लिए नियुक्त करे, कब्जा करा कर और यदि आवश्यक हो तो ऐसे व्यक्ति को हटाकर जो उस सम्पत्ति को रिक्त करने से इन्कार करता है, परिदान किया जाए।

96. अभिधारी के अधिभोग में की सम्पत्ति का परिदान—जहां विक्रीत सम्पत्ति अभिधारी के या उस पर अधिभोग रखने के हकदार अन्य व्यक्ति के अधिभोग में है और उसके सम्बन्ध में प्रमाणपत्र नियम 94 के अधीन दिया गया है वहां न्यायालय क्रेता के आवेदन पर आदेश करेगा कि विक्रय के प्रमाणपत्र की एक प्रति सम्पत्ति के किसी सहजदृश्य स्थान पर लगा कर और किसी सुविधापूर्ण स्थान पर डोंडी पिटवा कर या अन्य रूढ़िक ढंग से यह बात अधिभोगी को उद्घोषित करके कि निर्णीत-ऋणी का हित क्रेता को अंतरित हो गया है, परिदान किया जाए।

डिक्रीदार या क्रेता को कब्जा परिदत्त किए जाने में प्रतिरोध

97. स्थावर सम्पत्ति पर कब्जा करने में प्रतिरोध या बाधा—(1) जहां स्थावर सम्पत्ति के कब्जे के डिक्री के धारक का या डिक्री के निष्पादन में विक्रय की गई ऐसी किसी सम्पत्ति के क्रेता का ऐसी सम्पत्ति पर कब्जा अभिप्राप्त करने में किसी व्यक्ति द्वारा प्रतिरोध किया जाता है या उसे बाधा डाली जाती है वहां वह ऐसे प्रतिरोध या बाधा का परिवाद करते हुए आवेदन न्यायालय से कर सकेगा।

[1][(2) जहां कोई आवेदन उपनियम (1) के अधीन किया जाता है वहां न्यायालय उस आवेदन पर न्यायनिर्णयन इसमें अन्तर्विष्ट उपबंधों के अनुसार करने के लिए अग्रसर होगा।]

[2][98. न्यायनिर्णयन के पश्चात् आदेश—(1) नियम 101 में निर्दिष्ट प्रश्नों के अवधारण पर, न्यायालय ऐसे अवधारण के अनुसार और उपनियम (2) के उपबंधों के अधीन रहते हुए,—

(क) आवेदन को मंजूर करते हुए और यह निदेश देते हुए कि आवेदन को सम्पत्ति का कब्जा दे दिया जाए या आवेदन को खारिज करते हुए, आदेश करेगा; या

(ख) ऐसा अन्य आदेश पारित करेगा जो वह मामले की परिस्थितियों में ठीक समझे।

(2) जहां ऐसे अवधारण पर, न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि निर्णीत-ऋणी उसके उकसाने पर किसी अन्य व्यक्ति द्वारा या उसकी ओर से या किसी अन्तरिती द्वारा, उस दशा में जिसमें ऐसा अन्तरण वाद या निष्पादन की कार्यवाही के लम्बित रहने के दौरान किया गया था, प्रतिरोध किया गया था या बाधा डाली गई थी वहां वह निदेश देगा कि आवेदक को सम्पत्ति पर कब्जा दिलाया जाए और जहां इस पर भी कब्जा अभिप्राप्त करने में आवेदक का प्रतिरोध किया जाता है या उसे बाधा डाली जाती है वहां न्यायालय निर्णीत-ऋणी को या उसके उकसाने पर या उसकी ओर से कार्य करने वाले व्यक्ति को ऐसी अवधि के लिए, जो तीस दिन तक की हो सकेगी, सिविल कारागार में निरुद्ध किए जाने का आदेश भी आवेदक की प्रेरणा पर दे सकेगा।

99. डिक्रीदार या क्रेता द्वारा बेकब्जा किया जाना—(1) जहां निर्णीत-ऋणी से भिन्न कोई व्यक्ति स्थावर सम्पत्ति पर कब्जे की डिक्री के धारक द्वारा या जहां ऐसी सम्पत्ति का डिक्री के निष्पादन में विक्रय किया गया है वहां, उसके क्रेता द्वारा ऐसी सम्पत्ति पर से बेकब्जा कर दिया गया हो वहां वह ऐसे बेकब्जा किए जाने का परिवाद करते हुए न्यायालय से आवेदन कर सकेगा।

(2) जहां ऐसा कोई आवेदन किया जाता है वहां न्यायालय उस आवेदन पर न्यायनिर्णयन इसमें अन्तर्विष्ट उपबन्धों के अनुसार करने के लिए अग्रसर होगा।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) उपनियम (2) के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) नियम 98 से 103 के स्थान पर प्रतिस्थापित।

(पहली अनुसूची—आदेश 21— डिक्रियों और आदेशों का निष्पादन। डिक्रीदार या क्रेता को कब्जा परिदत्त किए जाने में प्रतिरोध।)

100. बेकब्जा किए जाने का परिवाद करने वाले आवेदन पर पारित किया जाने वाला आदेश—नियम 101 में निर्दिष्ट प्रश्नों के अवधारण पर, न्यायालय ऐसे अवधारण के अनुसार—

(क) आवेदन को मंजूर करते हुए और यह निदेश देते हुए कि आवेदक को संपत्ति का कब्जा दे दिया जाए या आवेदन को खारिज करते हुए आदेश करेगा; या

(ख) ऐसा अन्य आदेश पारित करेगा जो वह मामले की परिस्थितियों में ठीक समझे।

101. अवधारित किए जाने वाले प्रश्न—नियम 97 या नियम 99 के अधीन किसी आवेदन पर किसी कार्यवाही के पक्षकारों के बीच या उनके प्रतिनिधियों के बीच पैदा होने वाले और आवेदन के न्यायनिर्णयन से सुसंगत सभी प्रश्न (जिनके अन्तर्गत सम्पत्ति में अधिकार, हक या हित से संबंधित प्रश्न भी हैं), आवेदन के संबंध में कार्यवाही करने वाले न्यायालय द्वारा अवधारित किए जाएंगे, न कि पृथक वाद द्वारा और इस प्रयोजन के लिए न्यायालय, तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी प्रतिकूल बात के होते हुए भी ऐसे प्रश्नों का विनिश्चय करने की अधिकारिता रखने वाला समझा जाएगा।

102. वादकालीन अंतरिती को इन नियमों का लागू न होना—नियम 98 और नियम 100 में की कोई भी बात स्थावर सम्पत्ति के कब्जे की डिक्री के निष्पादन में उस व्यक्ति द्वारा किए गए प्रतिरोध या डाली गई बाधा को या किसी व्यक्ति के बेकब्जा किए जाने को लागू नहीं होगी जिसे निर्णीत-ऋणी ने वह सम्पत्ति उस वाद के जिसमें डिक्री पारित की गई थी, संस्थित किए जाने के पश्चात् अन्तरित की है।

स्पष्टीकरण—इस नियम में, "अन्तरण" के अन्तर्गत विधि के प्रवर्तन द्वारा अन्तरण भी है।

103. आदेशों को डिक्री माना जाना—जहां किसी आवेदन पर न्यायनिर्णयन नियम 98 या नियम 100 के अधीन किया गया है वहां उस पर किए गए आदेश का वही बल होगा और वह अपील या अन्य बातों के बारे में वैसी ही शर्तों के अधीन होगा मानो वह डिक्री हो।]

[1]104. नियम 101 या नियम 103 के अधीन आदेश लम्बित वाद के परिणाम के अधीन होगा—नियम 101 या नियम 103 के अधीन किया गया प्रत्येक आदेश, उस कार्यवाही के जिसमें ऐसा आदेश किया जाता है प्रारंभ की तारीख को लम्बित किसी वाद के परिणाम के अधीन उस दशा में होगा जिसमें उस वाद में ऐसे पक्षकार द्वारा जिसके विरुद्ध नियम 101 या नियम 103 के अधीन आदेश किया जाता है, ऐसा अधिकार स्थापित करना चाहा गया है जिसका कि वह उस सम्पत्ति के वर्तमान कब्जे की बाबत दावा करता है।

105. आवेदन की सुनवाई—(1) वह न्यायालय जिसके समक्ष इस आदेश के पूर्वगामी नियमों में से किसी नियम के अधीन कोई आवेदन लम्बित है, उसकी सुनवाई के लिए दिन नियत कर सकेगा।

(2) जहां नियत दिन या किसी अन्य दिन जिस तक सुनवाई स्थगित की जाए मामले की सुनवाई के लिए पुकार होने पर आवेदक उपसंजात नहीं होता है वहां न्यायालय आदेश कर सकेगा कि आवेदन खारिज कर दिया जाए।

(3) जहां आवेदक उपसंजात होता है और विरोधी पक्षकार जिसको न्यायालय द्वारा सूचना दी गई है, उपसंजात नहीं होता है वहां न्यायालय आवेदन को एकपक्षीय रूप से सुन सकेगा और ऐसा आदेश पारित कर सकेगा जो वह ठीक समझे।

स्पष्टीकरण— उपनियम (1) में निर्दिष्ट किसी आवेदन के अन्तर्गत नियम 58 के अधीन किया गया कोई दावा या आक्षेप भी है।

106. एकपक्षीय रूप से पारित आदेशों, आदि का अपास्त किया जाना—(1) आवेदक जिसके विरुद्ध नियम 105 के उपनियम (2) के अधीन कोई आदेश किया जाता है अथवा विरोधी पक्षकार जिसके विरुद्ध उस नियम के उपनियम (3) के अधीन या नियम 23 के उपनियम (1) के अधीन कोई एकपक्षीय आदेश पारित किया जाता है, उस आदेश को अपास्त करने के लिए न्यायालय से आवेदन कर सकेगा और यदि वह न्यायालय का समाधान कर देता है कि आवेदन की सुनवाई के लिए पुकार होने पर उसके उपसंजात न होने के लिए पर्याप्त कारण था तो न्यायालय खर्चों या अन्य बातों के बारे में ऐसे निबंधनों पर जो वह ठीक समझे, आदेश अपास्त करेगा और आवेदन की आगे सुनवाई के लिए दिन नियत करेगा।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 72 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

(पहली अनुसूची—आदेश 21— डिक्रियों और आदेशों का निष्पादन। डिक्रीदार या क्रेता को कब्जा परिदत्त किए जाने में प्रतिरोध। आदेश 22—पक्षकारों की मृत्यु, उनका विवाह और दिवाला।

(2) उपनियम (1) के अधीन आवेदन पर कोई आदेश तब तक नहीं किया जाएगा जब तक उस आवेदन की सूचना की तामील दूसरे पक्षकार पर न कर दी गई हो।

(3) उपनियम (1) के अधीन आवेदन आदेश की तारीख से तीस दिन के भीतर किया जाएगा या जहां एकपक्षीय आदेश की दशा में, सूचना की सम्यक् रूप से तामील नहीं हुई थी वहां उस तारीख से जब आवेदक को आदेश की जानकारी हुई थी, तीस दिन के भीतर किया जाएगा।]

आदेश 22

पक्षकारों की मृत्यु, उनका विवाह और दिवाला

1. यदि वाद लाने का अधिकार बचा रहता है तो पक्षकार की मृत्यु से उसका उपशमन नहीं हो जाता—यदि वाद लाने का अधिकार बचा रहता है तो वादी या प्रतिवादी की मृत्यु से वाद का उपशमन नहीं होगा।

2. जहां कई वादियों या प्रतिवादियों में से एक की मृत्यु हो जाती है और वाद लाने का अधिकार बचा रहता है वहां प्रक्रिया—जहां एक से अधिक वादी या प्रतिवादी हैं और उनमें से किसी की मृत्यु हो जाती है और जहां वाद लाने का अधिकार अकेले उत्तरजीवी वादी या वादियों को या अकेले उत्तरजीवी प्रतिवादी या प्रतिवादियों के विरुद्ध बचा रहता है वहां न्यायालय अभिलेख में उस भाग की एक प्रविष्टि कराएगा और वाद उत्तरजीवी वादी या वादियों की प्रेरणा पर या उत्तरजीवी प्रतिवादी या प्रतिवादियों के विरुद्ध आगे चलेगा।

3. कई वादियों में से एक या एकमात्र वादी की मृत्यु की दशा में प्रक्रिया—(1) यहां दो या अधिक वादियों में से एक की मृत्यु हो जाती है और वाद लाने का अधिकार अकेले उत्तरजीवी वादी को या अकेले उत्तरजीवी वादियों को बचा नहीं रहता है, या एकमात्र वादी या एकमात्र उत्तरजीवी वादी की मृत्यु हो जाती है, और वाद लाने का अधिकार बचा रहता है वहां इस निमित्त आवेदन किए जाने पर न्यायालय मृत वादी के विधिक प्रतिनिधि को पक्षकार बनवाएगा और वाद में अग्रसर होगा।

(2) जहां विधि द्वारा परिसीमित समय-समय के भीतर कोई आवेदन उपनियम (1) के अधीन नहीं किया जाता है वहां वाद का उपशमन वहां तक हो जाएगा जहां तक मृत वादी का संबंध है और प्रतिवादी के आवेदन पर न्यायालय उन खर्चों को उसके पक्ष में अधिनिर्णीत कर सकेगा जो उसने वाद की प्रतिरक्षा में उपगत किए हों और वे मृत वादी की सम्पदा से वसूल किए जाएंगे।

4. कई प्रतिवादियों में से एक या एकमात्र प्रतिवादी की मृत्यु की दशा में प्रक्रिया—(1) जहां दो या अधिक प्रतिवादियों में से एक की मृत्यु हो जाती है और वाद लाने का अधिकार अकेले उत्तरजीवी प्रतिवादी के या अकेले उत्तरजीवी प्रतिवादियों के विरुद्ध बचा नहीं रहता है या एकमात्र प्रतिवादी या एकमात्र उत्तरजीवी प्रतिवादी की मृत्यु हो जाती है और वाद लाने का अधिकार बचा रहता है वहां उस निमित्त किए गए आवेदन पर न्यायालय मृत प्रतिवादी के विधिक प्रतिनिधि को पक्षकार बनवाएगा और वाद में अग्रसर होगा।

(2) इस प्रकार पक्षकार बनाया गया कोई भी व्यक्ति जो मृत प्रतिवादी के विधिक प्रतिनिधि के नाते अपनी हैसियत के लिए समुचित प्रतिरक्षा कर सकेगा।

(3) जहां विधि द्वारा परिसीमित समय के भीतर कोई आवेदन उपनियम (1) के अधीन नहीं किया जाता है वहां वाद का, जहां तक वह मृत प्रतिवादी के विरुद्ध है, उपशमन हो जाएगा।

[1][(4) जब कभी वह ठीक समझे, वादी को किसी ऐसे प्रतिवादी के जो लिखित कथन फाइल करने में असफल रहा है या जो उसे फाइल कर देने पर, सुनवाई के समय उपसंजात होने में और प्रतिवाद करने में असफल रहा है, विधिक प्रतिनिधि को प्रतिस्थापित करने की आवश्यकता से छूट दे सकेगा और ऐसे मामले में निर्णय उक्त प्रतिवादी के विरुद्ध उस प्रतिवादी की मृत्यु हो जाने पर भी सुनाया जा सकेगा और उसका वही बल और प्रभाव होगा मानो वह मृत्यु होने के पूर्व सुनाया गया हो।

(5) जहां—

(क) वादी, प्रतिवादी की मृत्यु से अनभिज्ञ था और उस कारण से वह इस नियम के अधीन प्रतिवादी की विधिक

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 73 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

प्रतिनिधि का प्रतिस्थापन करने के लिए आवेदन, परिसीमा अधिनियम, 1963 (1963 का 36) में विनिर्दिष्ट अवधि के भीतर नहीं कर सकता था और जिसके परिणामस्वरूप वाद का उपशमन हो गया है; और

(ख) वादी, परिसीमा अधिनियम, 1963 (1963 का 36) में इसके लिए विनिर्दिष्ट अवधि के अवसान के पश्चात् उपशमन अपास्त करने के लिए आवेदन करता है और उस अधिनियम की धारा 5 के अधीन उस आवेदन को इस आधार पर ग्रहण किए जाने के लिए भी आवेदन करता है कि ऐसी अनभिज्ञता के कारण उक्त अधिनियम में विनिर्दिष्ट अवधि के भीतर उसके आवेदन न करने के लिए उसके पास पर्याप्त कारण था,

वह न्यायालय उक्त धारा 5 के अधीन आवेदन पर विचार करते समय ऐसी अनभिज्ञता के तथ्य पर, यदि साबित हो जाता है तो, सम्यक् ध्यान देगा।]

[1][4क. विधिक प्रतिनिधि न होने की दशा में प्रक्रिया—(1) यदि किसी वाद में न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि ऐसे किसी पक्षकार का जिसकी मृत्यु वाद के लम्बित रहने के दौरान हो गई है, कोई विधिक प्रतिनिधि नहीं है तो न्यायालय वाद के किसी पक्षकार के आवेदन पर, मृत व्यक्ति की सम्पदा का प्रतिनिधित्व करने वाले व्यक्ति की अनुपस्थिति में कार्यवाही कर सकेगा या आदेश द्वारा, महाप्रशासक या न्यायालय के किसी अधिकारी या किसी ऐसे अन्य व्यक्ति को जिसको वह मृत व्यक्ति की सम्पदा का प्रतिनिधित्व करने के लिए ठीक समझता है, वाद के प्रयोजन के लिए नियुक्त कर सकेगा, और वाद में तत्पश्चात् दिया गया कोई निर्णय या किया गया कोई आदेश मृत व्यक्ति की सम्पदा को उसी सीमा तक आबद्ध करेगा जितना कि वह तब करता जब मृत व्यक्ति का निजी प्रतिनिधि वाद में पक्षकार रहा होता है।

(2) न्यायालय इस अधिनियम के अधीन आदेश करने के पूर्व,—

(क) यह अपेक्षा कर सकेगा कि मृत व्यक्ति की सम्पदा में हित रखने वाले ऐसे व्यक्तियों को (यदि कोई हो) जिनको न्यायालय ठीक समझता है, आदेश के लिए आवेदन की सूचना दी जाए; और

(ख) यह अभिनिश्चित करेगा कि जिस व्यक्ति को मृत व्यक्ति की सम्पदा का प्रतिनिधित्व करने के लिए नियुक्त किया जाना प्रस्थापित है, वह इस प्रकार नियुक्त किए जाने के लिए रजामंद है और वह मृत व्यक्ति के हित के प्रतिकूल कोई हित नहीं रखता है।]

5. विधिक प्रतिनिधि के बारे में प्रश्न का अवधारण—जहां इस सम्बन्ध में प्रश्न उद्भूत होता है कि कोई व्यक्ति मृत वादी या मृत प्रतिवादी का विधिक प्रतिनिधि है या नहीं वहां ऐसे प्रश्न का अवधारण न्यायालय द्वारा किया जाएगा:

[1][परन्तु जहां ऐसा प्रश्न अपील न्यायालय के समक्ष उद्भूत होता है वहां वह न्यायालय प्रश्न का अवधारण करने के पूर्व किसी अधीनस्थ न्यायालय को यह निदेश दे सकेगा कि वह उस प्रश्न का विचारण करे और अभिलेखों को, जो ऐसे विचारण के समय अभिलिखित किए गए साक्ष्य के, यदि कोई हो, अपने निष्कर्ष के और उसके कारणों के साथ वापस करे, और अपील न्यायालय उस प्रश्न का अवधारण करने में उन्हें ध्यान में रख सकेगा।]

6. सुनवाई के पश्चात् मृत्यु हो जाने से उपशमन न होना—पूर्वगामी नियमों में किसी बात के होते हुए भी, चाहे वाद हेतुक बचा हो या न बचा हो, सुनवाई की समाप्ति और निर्णय के सुनाने के बीच वाले समय में किसी भी पक्षकार की मृत्यु के कारण कोई भी उपशमन नहीं होगा, किन्तु ऐसी दशा में मृत्यु हो जाने पर भी, निर्णय सुनाया जा सकेगा और उसका वही बल और प्रभाव होगा मानो वह मृत्यु होने के पूर्व सुनाया गया हो।

7. स्त्री पक्षकार के विवाह के कारण वाद का उपशमन न होना—(1) स्त्री वादी या स्त्री प्रतिवादी का विवाह वाद का उपशमन नहीं करेगा, किन्तु ऐसा हो जाने पर भी वाद निर्णय तक अग्रसर किया जा सकेगा और जहां स्त्री प्रतिवादी के विरुद्ध डिक्री है वहां वह उस अकेली के विरुद्ध निष्पादित की जा सकेगी।

(2) जहां पति अपनी पत्नी के ऋणों के लिए विधि द्वारा दायी है वहां डिक्री न्यायालय की अनुज्ञा से पति के विरुद्ध भी निष्पादित की जा सकेगी और पत्नी के पक्ष में हुए निर्णय की दशा में डिक्री का निष्पादन उस दशा में जिसमें कि पति डिक्री की विषयवस्तु के लिए विधि द्वारा हकदार है, ऐसी अनुज्ञा से पति के आवेदन पर किया जा सकेगा।

8. वादी का दिवाला कब वाद का वर्जन कर देता है— (1) किसी ऐसे वाद में जिसे समनुदेशिती या रिसीवर वादी के

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 73 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

लेनदारों के फायदे के लिए चला सकता है, वाद का उपशमन वादी के दिवाले से उस दशा में के सिवाय नहीं होगा जिसमें कि ऐसा समनुदेशिती या रिसीवर ऐसे वाद को चालू रखने से इन्कार कर दे या (जब तक कि न्यायालय किसी विशेष कारण से अन्यथा निदिष्ट न करे) उस वाद के खर्चों के लिए प्रतिभूति ऐसे समय के भीतर जो न्यायालय निदिष्ट करे, देने से इन्कार कर दे।

(2) जहां समनुदेशिती वाद चालू रखने या प्रतिभूति देने में असफल रहता है वहां प्रक्रिया—जहां समनुदेशिती या रिसीवर वाद चालू रखने और ऐसे आदिष्ट समय के भीतर ऐसी प्रतिभूति देने की उपेक्षा करता है या देने से इन्कार करता है वहां प्रतिवादी वाद को वादी के दिवाले के आधार पर खारिज कराने के लिए आवेदन कर सकेगा और न्यायालय वाद को खारिज करने वाला और प्रतिवादी को वे खर्चे जिन्हें उसने अपनी प्रतिरक्षा करने में उपगत किया है, अधिनिर्णीत करने वाला आदेश कर सकेगा और ये खर्चे ऋण के तौर पर वादी सम्पदा के विरुद्ध साबित किए जाएंगे।

9. उपशमन या खारिज होने का प्रभाव—(1) जहां वाद का इस आदेश के अधीन उपशमन हो जाता है या वह खारिज किया जाता है वहां कोई भी नया वाद, उसी वाद हेतुक पर नहीं लाया जाएगा।

(2) वादी या मृत वादी का विधिक प्रतिनिधि होने का दावा करने वाला व्यक्ति या दिवालिया वादी की दशा में उसका समनुदेशिती या रिसीवर, उपशमन या खारिजी अपास्त करने वाले आदेश के लिए आवेदन कर सकेगा और यदि यह साबित कर दिया जाता है कि वाद चालू रखने से वह किसी पर्याप्त हेतुक से निवारित रहा था तो न्यायालय खर्चे के बारे में ऐसे निबन्धनों पर या अन्यथा जो वह ठीक समझे, उपशमन या खारिजी अपास्त करेगा।

(3) [1][इण्डियन लिमिटेशन ऐक्ट, 1877 (1877 का 15)] की धारा 5 के उपबन्ध उपनियम (2) के अधीन आवेदनों को लागू होंगे।

[2][स्पष्टीकरण—इस नियम की किसी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह किसी पश्चात्वर्ती वाद में ऐसे तथ्यों पर आधारित प्रतिरक्षा का वर्जन करती है जो उस वाद में वाद हेतुक बनते थे जिसका इस आदेश के अधीन उपशमन हो गया है या जो खारिज कर दिया गया है।]

10. वाद में अन्तिम आदेश होने के पूर्व समनुदेशन की दशा में प्रक्रिया—(1) वाद के लम्बित रहने के दौरान किसी हित के समनुदेशन, सृजन या न्यागमन की अन्य दशाओं में, वाद न्यायालय की इजाजत से उस व्यक्ति द्वारा या उसके विरुद्ध चालू रखा जा सकेगा जिसको ऐसा हित प्राप्त या न्यागत हुआ है।

(2) किसी डिक्री की अपील के लम्बित रहने के दौरान उस डिक्री की कुर्की के बारे में यह समझा जाएगा कि वह ऐसा हित है जिससे वह व्यक्ति जिसने ऐसी कुर्की कराई थी, उपनियम (1) का फायदा उठाने का हकदार हो गया है।

[2][10क. न्यायालय को किसी पक्षकार की मृत्यु संसूचित करने के लिए प्लीडर का कर्तव्य—वाद में पक्षकार की ओर से उपसंजात होने वाले प्लीडर को जब कभी यह जानकारी प्राप्त हो कि उस पक्षकार की मृत्यु हो गई है तो वह न्यायालय को इसकी इत्तिला देगा और तब न्यायालय ऐसी मृत्यु की सूचना दूसरे पक्षकार को देगा और इस प्रयोजन के लिए प्लीडर और मृत पक्षकार के बीच हुई संविदा अस्तित्व में मानी जाएगी।]

11. आदेश का अपीलों को लागू होना—इस आदेश को अपीलों को लागू करने में जहां तक हो सके, "वादी" शब्द के अन्तर्गत अपीलार्थी, "प्रतिवादी" शब्द के अन्तर्गत प्रत्यर्थी और "वाद" शब्द के अंतर्गत अपील समझी जाएगी।

12. आदेश का कार्यवाहियों को लागू होना—नियम 3, नियम 4 और नियम 8 की कोई भी बात किसी डिक्री या आदेश के निष्पादन की कार्यवाहियों को लागू नहीं होगी।

आदेश 23
वादों का प्रत्याहरण और समायोजन

[3][1. वाद का प्रत्याहरण या दावे के भाग का परित्याग—(1) वाद संस्थित किए जाने के पश्चात् किसी भी समय वादी सभी प्रतिवादियों या उनमें से किसी के विरुद्ध अपने वाद का परित्याग या अपने दावे के भाग का परित्याग कर सकेगा:

परन्तु जहां वादी अवयस्क है या ऐसा व्यक्ति है, जिसे आदेश 32 के नियम 1 से नियम 14 तक के उपबन्ध लागू होते हैं वहां न्यायालय की इजाजत बिना न तो वाद का और न दावे के किसी भाग का परित्याग किया जाएगा।

(2) उपनियम (1) के परन्तुक के अधीन इजाजत के लिए आवेदन के साथ वाद-मित्र का शपथपत्र देना होगा और यदि अवयस्क या ऐसे अन्य व्यक्ति का प्रतिनिधित्व प्लीडर द्वारा किया जाता है तो, प्लीडर को इस आशय का प्रमाणपत्र भी देना होगा कि प्रतिस्थापित परित्याग उसकी राय में अवयस्क या ऐसे अन्य व्यक्ति के फायदे के लिए है।

---

1. अब परिसीमा अधिनियम, 1963 (1963 का 36) की धारा 4 और 5 देखिए।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 73 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
3. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 74 द्वारा (1-2-1977 से) नियम 1 के स्थान पर प्रतिस्थापित।

(3) जहां न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि—

(क) वाद किसी प्ररूपिक त्रुटि के कारण विफल हो जाएगा, अथवा

(ख) वाद की विषय-वस्तु या दावे के भाग के लिए नया वाद संस्थित करने के लिए वादी को अनुज्ञात करने के पर्याप्त आधार हैं,

वहां वह ऐसे निबन्धनों पर जिन्हें वह ठीक समझे, वादी को ऐसे वाद की विषय-वस्तु या दावे के ऐसे भाग के संबंध में नया वाद संस्थित करने की स्वतंत्रता रखते हुए ऐसे वाद से या दावे के ऐसे भाग से अपने को प्रत्याहृत करने की अनुज्ञा दे सकेगा।

(4) जहां वादी,—

(क) उपनियम (1) के अधीन किसी वाद का या दावे के भाग का परित्याग करता है, अथवा

(ख) उपनियम (3) में निर्दिष्ट अनुज्ञा के बिना वाद से या दावे के भाग से प्रत्याहृत कर लेता है,

वहां वह ऐसे खर्चे के लिए दायी होगा जो न्यायालय अधिनिर्णीत करे और वह ऐसी विषय-वस्तु या दावे के ऐसे भाग के बारे में कोई नया वाद संस्थित करने से प्रवारित होगा।

(5) इस नियम की किसी बात के बारे में यह नहीं समझा जाएगा कि वह न्यायालय को अनेक वादियों में से एक वादी को उपनियम (1) के अधीन वाद या दावे के किसी भाग का परित्याग करने या किसी वाद या दावे का अन्य वादियों की सहमति के बिना उपनियम (3) के अधीन प्रत्याहरण करने की अनुज्ञा देने के लिए प्राधिकृत करती है।

[1][1क. प्रतिवादियों को वादियों के रूप में पक्षान्तरण करने की अनुज्ञा कब दी जाएगी—जहां नियम 1 के अधीन वादी द्वारा वाद का प्रत्याहरण या परित्याग किया जाता है और प्रतिवादी आदेश 1 के नियम 10 के अधीन वादी के रूप में पक्षान्तरित किए जाने के लिए आवेदन करता है वहां न्यायालय, ऐसे आवेदन पर विचार करते समय इस प्रश्न पर सम्यक् ध्यान देगा कि क्या आवेदक का कोई ऐसा सारवान् प्रश्न है जो अन्य प्रतिवादियों में से किसी के विरुद्ध विनिश्चय किया जाना है।]

2. परिसीमा विधि पर पहले वाद का प्रभाव नहीं पड़ेगा—अन्तिम पूर्ववर्ती नियम के अधीन दी गई अनुज्ञा पर संस्थित किसी भी नए वाद में वादी परिसीमा विधि द्वारा उसी रीति से आबद्ध होगा मानो प्रथम वाद संस्थित नहीं किया गया हो।

3. वाद में समझौता—जहां न्यायालय को समाधानप्रद रूप में यह साबित कर दिया जाता है कि वाद [2][पक्षकारों द्वारा लिखित और हस्ताक्षरित किसी विधिपूर्ण करार या समझौते के द्वारा] पूर्णतः या भागतः समायोजित किया जा चुका है या जहां प्रतिवादी वाद की पूरी विषय-वस्तु के या उसके किसी भाग के सम्बन्ध में वादी की तुष्टि कर देता है वहां न्यायालय ऐसे करार, समझौते या तुष्टि के अभिलिखित किए जाने का आदेश करेगा और [2][जहां तक कि वह वाद के पक्षकारों से सम्बन्धित है, चाहे करार, समझौते या तुष्टि की विषय-वस्तु वही हो या न हो जो कि वाद की विषय-वस्तु है वहां तक तदनुसार डिक्री पारित करेगा :]

[1][परन्तु जहां एक पक्षकार द्वारा यह अभिकथन किया जाता है और दूसरे पक्षकार द्वारा यह इंकार किया जाता है कि कोई समायोजन या तुष्टि तय हुई थी वहां न्यायालय इस प्रश्न का विनिश्चय करेगा, किन्तु इस प्रश्न के विनिश्चय के प्रयोजन के लिए किसी स्थगन की मंजूरी तब तक नहीं दी जाएगी जब तक कि न्यायालय, ऐसे कारणों से जो लेखबद्ध किए जाएंगे, ऐसा स्थगन मंजूर करना ठीक न समझे।]

[1][स्पष्टीकरण—कोई ऐसा करार या समझौता जो भारतीय संविदा अधिनियम, 1872 (1872 का 9) के अधीन शून्य या शून्यकरणीय है, इस नियम के अर्थ में, विधिपूर्ण नहीं समझा जाएगा।]

[1][3क. वाद का वर्जन—कोई डिक्री अपास्त करने के लिए कोई वाद इस आधार पर नहीं लाया जाएगा कि वह समझौता जिस पर डिक्री आधारित है, विधिपूर्ण नहीं था।

3ख. प्रतिनिधि वाद में कोई करार या समझौता न्यायालय की इजाजत के बिना प्रविष्ट न किया जाना—(1) प्रतिनिधि वाद में कोई करार या समझौता न्यायालय की ऐसी इजाजत के बिना जो कार्यवाही में अभिव्यक्त रूप से अभिलिखित हो, नहीं किया जाएगा और न्यायालय की इस प्रकार से अभिलिखित इजाजत के बिना किया गया ऐसा कोई करार या समझौता शून्य होगा।

---

1. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 74 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 74 द्वारा (1-2-1977 से) कुछ शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।

(पहली अनुसूची—आदेश 23—वादों का प्रत्याहरण और समायोजन। आदेश 24—न्यायालय में जमा करना।)

(2) ऐसी इजाजत मंजूर करने के पूर्व न्यायालय ऐसी रीति से सूचना जिसे वह ठीक समझे, ऐसे व्यक्तियों को देगा जिनके बारे में उसे यह प्रतीत हो कि वे वाद में हितबद्ध हैं।

स्पष्टीकरण—इस नियम में "प्रतिनिधि वाद" से अभिप्रेत है,—

(क) धारा 91 या धारा 92 के अधीन वाद,

(ख) आदेश 1 के नियम 8 के अधीन वाद,

(ग) वह वाद जिसे हिन्दू अविभक्त कुटुम्ब का कर्ता, कुटुम्ब के अन्य सदस्यों का प्रतिनिधित्व करते हुए चलाता है उसके विरुद्ध चलाया जाता है,

(घ) कोई अन्य वाद जिसमें पारित डिक्री इस संहिता के या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि के उपबन्धों के आधार पर किसी ऐसे व्यक्ति को, जो वाद में पक्षकार के रूप में नामित नहीं है, आबद्ध करती हो।]

4. डिक्रियों के निष्पादन की कार्यवाहियों पर प्रभाव न पड़ना—इस आदेश की कोई भी बात डिक्री या आदेश के निष्पादन की कार्यवाहियों को लागू नहीं होगी।

आदेश 24

न्यायालय में जमा करना

1. दावे की तुष्टि में प्रतिवादी द्वारा रकम का निक्षेप—ऋण या नुकसान की वसूली के किसी भी वाद में प्रतिवादी वाद की किसी भी प्रक्रम में न्यायालय में धन की ऐसी राशि का निक्षेप कर सकेगा जो उसके विचार में दावे की पूर्ण तुष्टि हो।

2. निक्षेप की सूचना—निक्षेप की सूचना प्रतिवादी न्यायालय की मार्फत वादी को देगा और निक्षेप की रकम (जब तक कि न्यायालय अन्यथा निदिष्ट न करे) वादी को उसके आवेदन पर दी जाएगी।

3. निक्षेप पर ब्याज सूचना के पश्चात् वादी को अनुज्ञात नहीं किया जाएगा—प्रतिवादी द्वारा निक्षिप्त की गई किसी भी राशि पर वादी को कोई भी ब्याज ऐसी सूचना की प्राप्ति की तारीख से अनुज्ञात नहीं किया जाएगा चाहे निक्षिप्त की गई राशि दावे की पूर्ण तुष्टि करती हो या उससे कम हो।

4. जहां वादी निक्षेप को भागतः तुष्टि के तौर पर प्रतिगृहीत करता है वहां प्रक्रिया—(1) जहां वादी ऐसी रकम को अपने दावे के केवल भाग की तुष्टि के तौर पर प्रतिगृहीत करता है वहां वह बाकी के लिए अपना वाद आगे चला सकेगा और यदि न्यायालय यह विनिश्चय करता है कि प्रतिवादी द्वारा किया गया निक्षेप वादी की दावे की पूर्ण तुष्टि करता था तो निक्षेप के पश्चात् वाद में उपगत खर्चों को और उससे पूर्व उपगत खर्चों को वहां तक वादी देगा जहां तक कि वे वादी के दावे में आधिक्य के कारण हुए हैं।

(2) जहां वह उसे पूर्ण तुष्टि के तौर पर प्रतिगृहीत करता है वहां प्रक्रिया—जहां वादी ऐसी रकम को अपने दावे की पूर्ण तुष्टि के तौर पर प्रतिगृहीत करता है वहां वह न्यायालय के समक्ष उस भाव का कथन उपस्थित करेगा और ऐसा कथन फाइल किया जाएगा और न्यायालय तदनुसार निर्णय सुनाएगा और यह निर्दिष्ट करने में कि हर एक पक्षकार के खर्चे किसके द्वारा दिए जाने हैं न्यायालय इस पर विचार करेगा कि पक्षकारों में से कौन सा पक्षकार मुकदमे के लिए सर्वाधिक दोष का भागी है।

दृष्टांत

(क) क को ख के 100 रुपए देने हैं। ख ने संदाय के लिए कोई मांग नहीं की है और वह यह विश्वास करने का कारण न रखते हुए कि मांग करने से जो देरी होगी उससे वह अहितकर स्थिति में पड़ जाएगा, क पर ख उस रकम के लिए वाद लाता है। वादपत्र फाइल किए जाने पर क न्यायालय में धन जमा कर देता है। ख उसे अपने दावे की पूर्ण तुष्टि के तौर पर प्रतिगृहीत करता है किन्तु न्यायालय को उसे कोई खर्चे अनुज्ञात नहीं करने चाहिएं, क्योंकि यह उपधारणा की जा सकती है कि उसकी ओर से वह मुकदमा निराधार था।

(ख) दृष्टांत (क) में वर्णित परिस्थितियों के अधीन ख पर क वाद लाता है। वादपत्र के फाइल किए जाने पर क दावे के विरुद्ध विवाद करता है उसके पश्चात् क न्यायालय में धन जमा करता है। ख उसे अपने दावे की पूर्ण तुष्टि के तौर प्रतिगृहीत करता है। न्यायालय को चाहिए कि वह ख को उसके वाद के खर्चे दिलाए, क्योंकि क के आचरण से दर्शित है कि मुकदमा आवश्यक था।

(ग) क को ख के 100 रुपए देने हैं और वह वाद के बिना वह राशि उसे देने को तैयार है। ख 150 रुपए का दावा करता है और क पर उस रकम

के लिए वाद लाता है। वादपत्र के फाइल किए जाने पर क 100 रुपए न्यायालय में जमा कर देता है और शेष 50 रुपए देने के अपने दायित्व के बारे में ही विवाद करता है। ख अपने दावे की पूर्ण तुष्टि के तौर पर 100 रुपए प्रतिगृहीत करता है। न्यायालय को चाहिए कि वह उसे क के खर्चे देने के लिए आदेश दे।

आदेश 25
खर्चों के लिए प्रतिभूति

[1. **वादी से खर्चों के लिए प्रतिभूति कब अपेक्षित की जा सकती है**—(1) वाद के किसी प्रक्रम में न्यायालय या तो स्वय अपनी प्रेरणा से या किसी प्रतिवादी के आवेदन पर, ऐसे कारणों से जो लेखबद्ध किए जाएंगे, यह आदेश वादी को दे सकेगा कि वह किसी भी प्रतिवादी द्वारा उपगत और संभवतः उपगत किए जाने वाले सभी खर्चों के संदाय के लिए प्रतिभूति न्यायालय द्वारा निश्चित समय के भीतर दे:

परन्तु ऐसा आदेश उन सभी मामलों मे किया जाएगा जिनमें न्यायालय को यह प्रतीत हो कि एकमात्र वादी या (जहां एक से अधिक वादी हों वहां) सभी वादी भारत के बाहर निवास करते हैं और ऐसे वादी के पास या ऐसे वादियों में से किसी के भी पास भारत के भीतर वादान्तर्गत संपत्ति से भिन्न कोई भी पर्याप्त स्थावर संपत्ति नहीं है।

(2) जो कोई भारत से ऐसी परिस्थितियों में चला जाता है जिनसे यह युक्तियुक्त अधिसंभाव्यता है कि जब कभी उसे खर्चे देने के लिए बुलाया जाएगा वह नहीं मिलेगा तो उसके बारे में यह समझा जाएगा कि वह उपनियम (1) के परन्तुक के अर्थ में भारत के बाहर निवास करता है।]

2. **प्रतिभूति देने में असफल रहने का प्रभाव**—(1) उस दशा में, जिसमें कि नियम समय के भीतर ऐसी प्रतिभूति नहीं दी जाती है न्यायालय वाद को खारिज करने वाला आदेश करेगा, जब तक कि वादी या वादियों को उससे प्रत्याहृत हो जाने के लिए अनुज्ञा न दे दी गई हो।

(2) जहां वाद इस नियम के अधीन खारिज कर दिया गया है वहां वादी खारिजी अपास्त कराने के आदेश के लिए आवेदन कर सकेगा और यदि न्यायालय को समाधानप्रद रूप में यह साबित कर दिया जाता है कि वह अनुज्ञात समय के भीतर प्रतिभूति देने से किसी पर्याप्त हेतक से निवारित रहा है तो न्यायालय प्रतिभूति और खर्चे संबंधी ऐसे निबन्धनों पर या अन्यथा, जो वह ठीक समझे, खारिजी अपास्त करेगा और वाद में अग्रसर होने के लिए दिन नियत करेगा।

(3) जब तक कि ऐसे आवेदन की सूचना की तामील प्रतिवादी पर न कर दी गई हो खारिजी अपास्त नहीं की जाएगी।

आदेश 26
कमीशन

साक्षियों की परीक्षा करने के लिए कमीशन

1. **वे मामले जिनमें न्यायालय साक्षी की परीक्षा करने के लिए कमीशन निकाल सकेगा**—कोई भी न्यायालय किसी भी वाद में अपनी अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर निवास करने वाले किसी ऐसे व्यक्ति की परिप्रश्नों द्वारा या अन्यथा परीक्षा करने के लिए कमीशन निकाल सकेगा जिसे न्यायालय में हाजिर होने से इस संहिता के अधीन छूट मिली हो या जो बीमारी या अंगशैथिल्य के कारण उसमें हाजिर होने में असमर्थ हो:

[2][परन्तु परिप्रश्नों द्वारा परीक्षा के लिए कमीशन तब तक नहीं निकाला जाएगा जब तक कि न्यायालय ऐसे कारणों से जो लेखबद्ध किए जाएंगे, ऐसा करना आवश्यक न समझे।

स्पष्टीकरण—न्यायालय इस नियम के प्रयोजन के लिए, ऐस प्रमाणपत्र को जो किसी व्यक्ति की बीमारी या अंगशैथिल्य के साक्ष्य के रूप में किसी रजिस्ट्रीकृत चिकित्सा व्यवसायी द्वारा हस्ताक्षर किया गया तात्पर्यित है, चिकित्सा व्यवसायी को साक्षी के रूप में आहूत किए बिना स्वीकार कर सकेगा।]

2. **कमीशन के लिए आदेश**—साक्षी की परीक्षा करने के लिए कमीशन निकाले जाने के लिए आदेश न्यायालय या तो

---

1. 1956 के अधिनियम सं० 66 की धारा 14 द्वारा नियम 1 के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 75 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

(पहली अनुसूची—आदेश 26—कमीशन। साक्षियों की परीक्षा करने के लिए कमीशन।)

स्वप्रेरणा से या वाद के किसी पक्षकार के या उस साक्षी के जिसकी परीक्षा की जानी है, ऐसे आवेदन पर जो शपथपत्र द्वारा या अन्यथा समर्थित हो, किया जा सकेगा।

3. **जहाँ साक्षी न्यायालय की अधिकारिता के भीतर निवास करता है**—जो व्यक्ति कमीशन निकालने वाले न्यायालय की अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर निवास करता है उसकी परीक्षा करने के लिए कमीशन किसी ऐसे व्यक्ति के नाम निकाला जा सकेगा जिसे न्यायालय उसका निष्पादन करने के लिए ठीक समझे।

4. **वे व्यक्ति जिनकी परीक्षा करने के लिए कमीशन निकाला जा सकेगा**—(1) कोई भी न्यायालय—

(क) अपनी अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं से परे निवासी किसी भी व्यक्ति की;

(ख) किसी भी ऐसे व्यक्ति की जो ऐसी सीमाओं को उस तारीख से पहले छोड़ने वाला है जिसको न्यायालय में परीक्षा की जाने के लिए वह अपेक्षित है; तथा

(ग) [1][सरकार की सेवा के किसी भी ऐसे व्यक्ति] की जिसके बारे में न्यायालय की राय है कि वह लोक सेवा का अपाय किए बिना हाजिर नहीं हो सकता,

[2][परिप्रश्नों द्वारा या अन्यथा परीक्षा करने के लिए] कमीशन किसी भी वाद में निकाल सकेगा:

[3][परन्तु जहां किसी व्यक्ति को आदेश 16 के नियम 19 के अधीन न्यायालय में स्वयं हाजिर होने के लिए मजबूर नहीं किया जा सकता है वहां, उसका यदि साक्ष्य न्याय के हित में आवश्यक समझा जाए तो, उसकी परीक्षा के लिए कमीशन निकाला जाएगा:

परन्तु यह और कि परिप्रश्नों द्वारा ऐसे व्यक्ति की परीक्षा के लिए कमीशन तब तक नहीं निकाला जाएगा जब तक कि न्यायालय ऐसे कारणों से जो लेखबद्ध किए जाएंगे ऐसा करना आवश्यक न समझे।]

(2) ऐसा कमीशन उच्च न्यायालय से भिन्न किसी भी ऐसे न्यायालय के नाम जिसकी अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर ऐसा व्यक्ति निवास करता है या किसी भी प्लीडर या अन्य व्यक्ति के नाम, जिसे कमीशन निकालने वाला न्यायालय नियुक्त करे, निकाला जा सकेगा।

(3) न्यायालय कोई भी कमीशन इस नियम के अधीन निकालने पर यह निदेश देगा कि कमीशन उस न्यायालय को या किसी अधीनस्थ न्यायालय को लौटाया जाएगा।

5. **जो साक्षी भारत के भीतर नहीं है उसकी परीक्षा करने के लिए कमीशन या अनुरोधपत्र**—जहां किसी ऐसे न्यायालय का जिसको किसी ऐसे स्थान में निवास करने वाले व्यक्ति की जो [4][भारत] के भीतर का स्थान नहीं है, परीक्षा करने का कमीशन निकालने के लिए आवेदन किया गया है, समाधान हो जाता है कि ऐसे व्यक्ति का साक्ष्य आवश्यक है वहां न्यायालय ऐसा कमीशन निकाल सकेगा या अनुरोधपत्र भेज सकेगा।

6. **कमीशन के अनुसरण में न्यायालय साक्षी की परीक्षा करेगा**—किसी व्यक्ति की परीक्षा करने के लिए कमीशन प्राप्त करने वाला हर न्यायालय उसके अनुसरण में उस व्यक्ति की परीक्षा करेगा या कराएगा।

7. **साक्षियों के अभिसाक्ष्य के साथ कमीशन का लौटाया जाना**—जहां कमीशन का सम्यक् रूप से निष्पादन कर दिया गया है वहां वह उसके अधीन लिए गए साक्ष्य सहित उस न्यायालय को जिसने उसे निकाला था, उस दशा के सिवाय लौटा दिया जाएगा जिसमें कि कमीशन निकालने वाले आदेश द्वारा अन्यथा निर्दिष्ट किया गया हो और उस दशा में कमीशन ऐसे आदेश के निबंधनों के अनुसार लौटाया जाएगा और कमीशन और उसके साथ वाली विवरणी और उसके अधीन दिया गया साक्ष्य [5][नियम 8 के उपबन्धों के अधीन रहते हुए)] वाद के अभिलेख का भाग होंगे।

8. **अभिसाक्ष्य कब साक्ष्य में ग्रहण किया जा सकेगा**—कमीशन के अधीन लिया गया साक्ष्य वाद में साक्ष्य के तौर पर

---

1. भारत शासन (भारतीय विधि अनुकूलन) आदेश, 1937 द्वारा "सरकार के किसी ऐसे सिविल या सैनिक अधिकारी" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 75 द्वारा (1-2-1977 से) "परीक्षा करने के लिए" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
3. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 75 द्वारा (1-2-1977) से अन्तःस्थापित।
4. 1951 के अधिनियम सं० 2 की धारा 3 द्वारा "राज्यों" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
5. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 75 द्वारा (1-2-1977 से) कुछ शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित।

(पहली अनुसूची—आदेश 26—कमीशन। साक्षियों की परीक्षा के लिए कमीशन। स्थानीय अन्वेषणों के लिए कमीशन। वैज्ञानिक अन्वेषण, अनुसचिवीय कार्य करने और जंगम सम्पत्ति के विक्रय के लिए कमीशन।)

उस पक्षकार की सहमति के बिना जिसके विरुद्ध वह दिया गया है, उस दशा के सिवाय ग्रहण नहीं किया जाएगा, जिसमें कि—

(क) वह व्यक्ति जिसने साक्ष्य दिया है, न्यायालय की अधिकारिता के परे है या उसकी मृत्यु हो गई है या वह बिमारी या अंगशैथिल्य के कारण वैयक्तिक रूप से परीक्षा की जाने के लिए हाजिर होने में असमर्थ है या न्यायालय में स्वीय उपसंजाति से छूट पाया हुआ है या [1][सरकार की सेवा में का ऐसा व्यक्ति] है जिसके बारे में न्यायालय की राय है कि वह लोक सेवा का उपाय किए बिना हाजिर नहीं हो सकता, अथवा

(ख) न्यायालय खण्ड (क) में वर्णित परिस्थितियों में से किसी के साबित किए जाने से अभिमुक्ति स्वविवेकानुसार दे देता है और किसी व्यक्ति के साक्ष्य को वाद में साक्ष्य के तौर पर ग्रहण किया जाना, इस सबूत के होते हुए भी कि कमीशन के माध्यम द्वारा ऐसा साक्ष्य लेने का हेतुक उसके ग्रहण किए जाने के समय जाता रहा है, प्राधिकृत कर देता है।

स्थानीय अन्वेषणों के लिए कमीशन

9. स्थानीय अन्वेषण करने के लिए कमीशन—किसी भी वाद में जिसमें न्यायालय विवाद में के किसी विषय के विशदीकरण के या किसी संपत्ति के बाजार-मूल्य के या किन्ही अन्तःकालीन लाभों या नुकसानी या वार्षिक शुद्ध लाभों की रकम के अभिनिश्चयन के प्रयोजन के लिए स्थानीय अन्वेषण करना, अपेक्षणीय या उचित समझता है, न्यायालय ऐसे व्यक्ति के नाम जिसे वह ठीक समझे, ऐसा अन्वेषण करने के लिए और उस पर न्यायालय को रिपोर्ट देने के लिए उसे निदेश देते हुए कमीशन निकाल सकेगा:

परन्तु जहां राज्य सरकार ने उन व्यक्तियों के बारे में नियम बना दिए हैं जिनके नाम ऐसा कमीशन निकाला जा सकेगा वहां न्यायालय ऐसे नियमों से आबद्ध होगा।

10. कमिश्नर के लिए प्रक्रिया—(1) कमिश्नर ऐसे स्थानीय निरीक्षण के पश्चात् जो वह आवश्यक समझे और अपने द्वारा लिए गए साक्ष्य को लेखबद्ध करने के पश्चात् अपने द्वारा हस्ताक्षरित अपनी लिखित रिपोर्ट सहित ऐसे साक्ष्य को न्यायालय को लौटाएगा।

(2) रिपोर्ट और अभिसाक्ष्य वाद में साक्ष्य होंगे। कमिश्नर की वैयक्तिक रूप से परीक्षा की जा सकेगी—कमिश्नर की रिपोर्ट और उसके द्वारा लिया गया साक्ष्य (न कि साक्ष्य रिपोर्ट के बिना) वाद में साक्ष्य होगा। और अभिलेख का भाग होगा। किन्तु न्यायालय या न्यायालय की अनुज्ञा से वाद में के पक्षकारों में से कोई भी पक्षकार, कमीश्नर की वैयक्तिक रूप से परीक्षा खुले न्यायालय में उन बातों में से किसी के बारे जो उसे निर्देशित की गई थी या जिनका वर्णन उनकी रिपोर्ट में है या उसकी रिपोर्ट के बारे में या उस रीति के बारे में जिसमें उसने अन्वेषण किया है, कर सकेगा।

(3) जहां न्यायालय किसी कारण से कमिश्नर की कार्यवाहियों से असंतुष्ट है वहां वह ऐसी अतिरिक्त जांच करने के लिए निदेश दे सकेगा जो वह ठीक समझे।

[2][वैज्ञानिक अन्वेषण, अनुसचिवीय कार्य करने और जंगम सम्पत्ति के विक्रय के लिए कमीशन]

[2]10क. वैज्ञानिक अन्वेषण के लिए कमीशन—(1) जहां वाद में उद्भूत होने वाले किसी प्रश्न में कोई ऐसा वैज्ञानिक अन्वेषण अन्तर्ग्रस्त है जो न्यायालय की राय में न्यायालय के समक्ष सुविधापूर्वक नहीं किया जा सकता है वहां न्यायालय, यदि वह न्याय के हित में ऐसा करना आवश्यक या समीचीन समझे तो ऐसे व्यक्ति के नाम जिसे वह ठीक समझे, कमीशन उसे यह निदेश देते हुए निकाल सकेगा कि वह ऐसे प्रश्न की जांच करे और उसकी रिपोर्ट न्यायालय को दे।

(2) इस आदेश के नियम 10 के उपबन्ध इस नियम के अधीन नियुक्त कमिश्नर के सम्बन्ध में जहां तक हो सके उसी प्रकार लागू होंगे जिस प्रकार वे नियम 9 के अधीन नियुक्त कमिश्नर के संबंध में लागू होते हैं।

10ख. अनुसचिवीय कार्य करने के लिए कमीशन—(1) जहां वाद में उद्भूत होने वाले किसी प्रश्न में कोई ऐसा अनुसचिवीय कार्य करना अन्तर्ग्रस्त है जो न्यायालय की राय में न्यायालय के समक्ष सुविधापूर्वक नहीं किया जा सकता है, वहां न्यायालय, ऐसे कारणों से जो लेखबद्ध किए जाएंगे, यदि न्यायालय की यह राय हो कि न्याय के हित में ऐसा करना आवश्यक या समीचीन है तो, ऐसे व्यक्ति के नाम जिसे वह ठीक समझे, कमीशन उसे यह निदेश देते हुए निकाल सकेगा कि वह उस अनुसचिवीय कार्य को करे और उसकी रिपोर्ट न्यायालय को दे।

---

1. भारत शासन (भारतीय विधि अनुकूलन) आदेश, 1937 द्वारा "सरकार का कोई ऐसा सिविल या सैनिक अधिकारी" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. 1976 के अधिनियम सं० 104 की धारा 75 द्वारा (1-2-1977 से) अन्तःस्थापित।

(पहली अनुसूची—आदेश 26—कमीशन। वैज्ञानिक अन्वेषण, अनुसचिवीय कार्य करने और जंगम सम्पत्ति के विक्रय के लिए कमीशन। लेखाओं की परीक्षा के लिए कमीशन। विभाजन करने के लिए कमीशन।)

(2) इस आदेश के नियम 10 के उपबन्ध इस नियम के अधीन नियुक्त कमिश्नर के संबंध में उसी प्रकार लागू होंगे जिस प्रकार वे नियम 9 के अधीन नियुक्त कमिश्नर के संबंध में लागू होते हैं।

10ग. जंगम संपत्ति के विक्रय के लिए कमीशन—(1) जहां किसी वाद में किसी ऐसी जंगम संपत्ति का जो वाद के अवधारण के लम्बित रहने के दौरान न्यायालय की अभिरक्षा में है और जो सुविधापूर्वक परिरक्षित नहीं की जा सकती है विक्रय करना आवश्यक हो जाता है, वहां न्यायालय ऐसे कारणों से जो लेखबद्ध किए जाएंगे यदि न्यायालय की यह राय हो कि न्याय के हित में ऐसा करना आवश्यक या समीचीन है तो, ऐसे व्यक्ति के नाम जिसे वह ठीक समझे, कमीशन उसे यह निदेश देते हुए निकाल सकेगा कि वह ऐसे विक्रय का संचालन करे और उसके रिपोर्ट न्यायालय को दे।

(2) इस आदेश के नियम 10 के उपबन्ध इस नियम के अधीन नियुक्त कमिश्नर के संबंध में उसी प्रकार लागू होंगे जिस प्रकार वे नियम 9 अधीन नियुक्त कमिश्नर के संबंध में लागू होते हैं।

(3) ऐसा प्रत्येक विक्रय जहां तक हो सके डिक्री के निष्पादन में जंगम संपत्ति के विक्रय के लिए विहित प्रक्रिया के अनुसार किया जाएगा।]

लेखाओं की परीक्षा करने के लिए कमीशन

11. लेखाओं की परीक्षा या समायोजन करने के लिए कमीशन—न्यायालय ऐसे किसी भी वाद में जिसमें लेखाओं की परीक्षा या समायोजन आवश्यक है, ऐसी परीक्षा या समायोजन करने के लिए ऐसे व्यक्ति के नाम उसे निदेश देते हुए जिसे वह ठीक समझे कमीशन निकाल सकेगा।

12. न्यायालय कमिश्नर को आवश्यक अनुदेश देगा—(1) न्यायालय कमिश्नर को कार्यवाहियों का ऐसा भाग और ऐसे अनुदेश देगा जो आवश्यक हो और ऐसे अनुदेशों में यह स्पष्टतया विनिर्दिष्ट होगा कि क्या कमिश्नर केवल उन कार्यवाहियों को पारेषित करे जिन्हें वह ऐसी जांच में करता है या उस बात के बारे में अपनी राय की भी रिपोर्ट करे जो उसकी परीक्षा के लिए निर्देशित की गई है।

(2) कार्यवाहियां और रिपोर्ट साक्ष्य होंगी। न्यायालय अतिरिक्त जांच निर्दिष्ट कर सकेगा—कमिश्नर की कार्यवाहियां और रिपोर्ट (यदि कोई हो) वाद में साक्ष्य होंगी, किन्तु जहां न्यायालय के पास उनसे असन्तुष्ट होने के लिए कारण है वहां वह ऐसी अतिरिक्त जांच निर्दिष्ट कर सकेगा जो वह ठीक समझे।

विभाजन करने के लिए कमीशन

13. स्थावर संपत्ति का विभाजन करने के लिए कमीशन—जहां विभाजन करने के लिए प्रारम्भिक डिक्री पारित की गई है वहां न्यायालय किसी भी मामले में जिसके लिए धारा 54 द्वारा उपबन्ध नहीं किया गया है, ऐसी डिक्री में घोषित अधिकारों के अनुसार विभाजन या पृथक्करण करने के लिए ऐसे व्यक्ति के नाम जिसे वह ठीक समझे कमीशन निकाल सकेगा।

14. कमिश्नर की प्रक्रिया—(1) कमिश्नर ऐसी जांच करने के पश्चात् जो आवश्यक हो, संपत्ति को उतने अंशों में विभाजित करेगा जितने उस आदेश द्वारा निर्दिष्ट हों जिसके अधीन कमीशन निकाला गया था और ऐसे अंशों का पक्षकारों में आवंटन कर देगा और यदि उसे उक्त आदेश द्वारा ऐसा करने के लिए प्राधिकृत किया जाता है तो वह अंशों के मूल्य को बराबर करने के प्रयोजन के लिए दी जाने वाली राशियां अधिनिर्णीत कर सकेगा।

(2) तब हर एक पक्षकार का अंश नियत करके और (यदि उक्त आदेश द्वारा ऐसा करने के लिए निदेश दिया जाता है) तो हर एक अंश को माप और सीमांकन करके कमिश्नर अपनी रिपोर्ट तैयार और हस्ताक्षरित करेगा या (जहां कमीशन एक से अधिक व्यक्तियों के नाम निकाला गया था और वे परस्पर सहमत नहीं हो सके हैं वहां) कमिश्नर पृथक्-पृथक् रिपोर्ट तैयार और हस्ताक्षरित करेंगे। ऐसी रिपोर्ट या ऐसी रिपोर्टें कमीशन के साथ उपाबद्ध की जाएंगी न्यायालय को पारेषित की जाएंगी और पक्षकार जो कोई आक्षेप रिपोर्ट या रिपोर्टों पर करे, न्यायालय उन्हें सुनने के पश्चात् उसे या उन्हें पुष्ट, उसमें या उनमें फेरफार या उसे या उन्हें अपास्त करेगा।

(3) जहां न्यायालय रिपोर्ट या रिपोर्टों को पुष्ट करता है या उसमें या उनमें फेरफार करता है वहां वह उसके पुष्ट या फेरफार किए गए रूप के अनुसार डिक्री पारित करेगा किन्तु जहां न्यायालय रिपोर्ट या रिपोर्टों को अपास्त कर देता है वहां वह या तो नया कमीशन निकालेगा या ऐसा अन्य आदेश करेगा जो वह ठीक समझे।